जन्म कुण्डलियों का होना क्या साधारण बात समझी जा सकती है ? कदापि नहीं।

इस स्थान पर मेरा यह कहना अनुचित न होगा कि भारतेन्दु जी के इतिहास सम्बन्धी समस्त लेख तथा संग्रह मुझे अभी तक प्राप्त नहीं हुए। जहां लों लब्ध हुए मुद्रित किये और शेष के परिशोध में हूं क्योंकि बाबू साहिब के संग्रहों का हाल सुन सुन कर चित्त आकुल हो जाता है कि कैसे और कहां से उन को पाऊं। संवत् १९४५ में जो ऐतिहासिक विषय छप चुके हैं उस के अनन्तर भारतेन्दु जी के स्नेह भाजन श्री बाबू राधाकृष्ण दास जी से "कालचक्र" नाम का एक ग्रन्थ प्राप्त हुआ है और इसी प्रकार से एक सज्जन के पास दो अल्बम् भारतेन्दु जी के चुने गये जिन में शाही फार्सी पत्रों का संग्रह है, अतः उन को अधिक द्रव्य दे कर दोनों अल्बम् ले लिये गये। देखने पर ज्ञात हुआ कि उन में से बहुतेरे पुरातन पत्र निकल गये तथापि इतनी लिपियां उन में हैं कि उन के संग्रह का एक असाधारण ग्रन्थ बन सकता है। एक मित्र ने मुझ से कहा है कि किसी के यहां बाबू साहिब की संग्रह की हुई २०० से अधिक प्रशस्तियां हैं, उन को भी ला दूंगा, निदान इसी भांति जहां कहीं उस सर्वसंग्रही के भण्डार का पता लगता है उस की प्राप्ति का यत्न किया जाता है और आशा है कि कालक्रम से अनेक अलभ्य वस्तुएं हाथ आ जायंगी।

ऊर्ध्वोक्त ग्रथों के मुद्रण होने के पश्चात् जो विषय प्राप्त हुए उन को इसलिये इस खण्ड में प्रकाशित नहीं किया कि जब सब स्फुट

लेख एकत्रित हो जायं तो सर्व-संग्रह का एक भाग पृथक् ही छाप दिया जाय।

श्रीमान् भारतेन्दु के ग्रन्थों के विषय में यथार्थ प्रशंसा का दम भरना झख मारना है क्योंकि जो कुछ हम लोग न कह सकेंगे वह सब ग्रन्थ ही आप से आप पुकारेंगे, परन्तु जिन अनुरक्त महानुभावों ने अपने हृदय का उद्गार प्रकटित किया है उस का गोपन करना भी कृतघ्नता है अतः निज सम्मति कुछ न लिख कर चन्द्रकला की जहां लों समालोचनायें प्राप्त हुई हैं उन को इस ग्रन्थ के अन्त में (६ ठे खण्ड के अन्त में) एकत्रित कर के रख दिया है, सहृदय सज्जनों को उन के पढ़ने से अधिक आनन्द होगा।

प्रकाशक।

ग्रन्थ सूची।



KASHMIR FLOWER

CONTAINING

A Short History of Kashmir, A Genealogical Table of Rajas with Dates &c, Sri Harsa, A Review of Kalhana's Rajatarangini, and a Short History of The Present Jamboo Raj Family

BY

BHARATENDU HARISHCHANDRA.



PRINTED BY CHANDI PRASAD SINHA,
AT THE KHADGA VILAS PRESS,
BANKIPUR.
1916.

काश्मीर कुसुम

अथवा

राजतरंगिणी कमल

(कश्मीर का संक्षिप्त इतिहास, राजाओं के नाम और समय का सविस्तर चक्र, राजतरंगिणी की समालोचना, श्रीहर्ष और वर्तमान महाराज कश्मीर के वंश का छोटा इतिहास।)

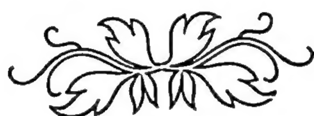
भारतेन्दु हरिश्चन्द्र लिखित।

'कोऽन्यः कालमतिक्रान्तं नेतुं प्रत्यक्षतां क्षमः।
कवीन् प्रजापतींस्त्यक्त्वा रम्यनिर्माणशालिनः' ॥
'भुजतरुवनच्छायां येषां निषेव्य महौजसां।
जलधिरसनामेदिन्यासीदसावकुतोभया ॥
स्मृतिमपि न ते यान्ति क्ष्मापा विना यदनुग्रहं।
प्रकृतिमहते कुर्मस्तस्मै नमः कविकर्मणे' ॥

खड्गविलास प्रेस, बांकीपुर.
बाबू चण्डी प्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित।

सन १९१६ ईस्वी। विक्रमाब्द १९७३। हरिश्चन्द्र सम्वत् ३२।

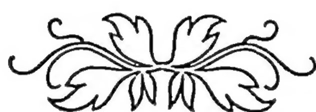
दूसरी बार



DEDICATION

हे सौभाग्य काश्मीर,

केवल ग्रन्थकर्त्ता ही से नहीं इस ग्रन्थ से भी तुम से अनेक सम्बन्ध हैं। तुम कुसुम जाति हो, यह ग्रन्थ भी। काश्मीर के क्षेत्र से दर्शकों का मन प्रसन्न होता है, तुम्हारे दर्शन से हमारा। कश्मीर इस पृथ्वी का स्वर्ग है, तुम हमारे हेतु इस पृथ्वी में स्वर्ग हो। यह ग्रन्थ राजतरंगिणी कमल है, तुम वर्ण से राजतरंगिणी कमला ही नहीं हमारी आशाराजतरंगिणी में कमल हो। तरंगिणी गण की रानी भोगवती भागीरथी है, तुम हमारी हृदयपातालबाहिनी राजतरंगिणी हो। कश्मीरभू स्वर्णमयी नीलमणि प्रभवा है, तुम भी इन्हीं अनेक सम्बन्धों से समझो या केवल हमारे हृदय सम्बन्ध से यह ग्रन्थ तुम को समर्पित है।



भूमिका

भारतवर्ष के निर्मल आकाश मे इतिहासचन्द्रमा का दर्शन नहीं होता, क्योंकि भारतवर्ष की प्राचीन विद्याओं के साथ इतिहास का भी लोप हो गया। कुछ तो पूर्व समय में शृङ्खलावद्ध इतिहास लिखने की चाल ही न थी और जो कुछ बचा बचाया था वह भी कराल काल के गाल में चला गया। जैनो ने वैदिको के ग्रन्थ नाश किए और वैदिकों ने जैनो के। एक राजधानी मे एक वंश राज्य करता था। जब दूसरे वंश ने उस को जीता तो पहले वंश की संपूर्ण वंशावली के ग्रन्थ जला दिए। कवियों ने अपने अन्नदाता की झूठी प्रशंसा की कहानी जोड़ ली और उन के जो शत्रु थे उन की सब कीर्ति लोप कर दीं। यह सब तो था ही, अन्त में मुसलमानों ने आकर जो कुछ बचे बचाये ग्रन्थ थे जला दिए। चलिए छुट्टी हुई। ऐसी काली घटा छाई कि भारतवर्ष के कीर्तिचन्द्रमा का प्रकाश ही छिप गया। हरिश्चन्द्र, राम, युधिष्ठिर ऐसे महानुभावों की कीर्ति का प्रकाश अति उत्कट था इसी से घनपटल को वेध कर अब तक हम लोगों के अंधेरे हृश्य को आलोक पहुंचाता है। किन्तु ब्रह्मा से ले कर आज तक और जितने बड़े बड़े राजा या वीर या पंडित या महानुभाव हुए किसी का समाचार ठीक ठीक नहीं मिलता। पुराणादिकों में नाम मिलता है तो समय नहीं मिलता।

ऐसे अंधेरे में कश्मीर के राजाओं के इतिहास का एक तारा जो हम लोगों को दिखलाई पड़ता है इसी को हम कई सूर्य से बढ़ कर समझते हैं। सिद्धान्त यह कि भारतवर्ष में यही एक देश है जिस का इतिहास शृङ्खलावद्ध देखने में आता है और यही कारण है कि इस इतिहास पर हमारा ऐसा आदर और आग्रह है।

कश्मीर के इतिहास में कल्हण कवि की राजतरंगिणी ही मुख्य

है। यद्यपि कल्हण के पहले सुव्रत, क्षेमेन्द्र, हेलाराज, नीलमुनि, पद्ममिहिर और श्री छविल्लभट्ट आदि ग्रन्थकार हुए हैं, किन्तु किसी के ग्रन्थ अब नहीं मिलते। कल्हण ने लिखा है कि हेलाराज ने बारह हजार ग्रन्थ कश्मीर के राजाओं के वर्णन के एकत्र किए थे। नीलमुनि ने इस इतिहास में एक बड़ा सा पुराण ही बनाया था। किन्तु हाय! अब वे ग्रन्थ कहीं नहीं मिलते। कश्मीर के बचे बचाए जितने ग्रन्थ थे सब दुष्टों ने जला दिए। आर्य्यों की मन्दिर मूर्ति आदि में कारीगरी, कीर्तिस्तम्भादिकों के लेख और पुस्तकों का इन दुष्टों के हाथ से समूल नाश हो गया। परशुराम जी ने राजाओं का शरीरमात्र नाश किया, किन्तु इन्हों ने देह बल विद्या धन प्राण की कौन कहै कीर्ति का भी नाश कर दिया।

कल्हण ने जयसिंह के काल में सन् ११४८ ई० मे राजतरंगिणी बनाई। यह कश्मीर के अमात्य चम्पक का पुत्र था और इसी कारण से इस को इस ग्रन्थ के बनाने में बहुत सा विषय सहज ही में मिला था।

इस के पीछे जोन राज ने १४१२ में राजावली बना कर कल्हण से लेकर अपने काल तक के राजाओं का उस में वर्णन किया। फिर उस के शिष्य श्री वरराज ने १४७७ में एक ग्रन्थ और बनाया। अकबर के समय में प्राज्यभट्ट ने इस इतिहास का चतुर्थ खंड लिखा। इस प्रकार चार खंडों में यह कश्मीर का इतिहास संस्कृत में श्लोकबद्ध विद्यमान है।

महाराज रणजीत सिंह के काल में जान मैकफेयर नामक एक यूरोपीय विद्वान ने कश्मीर से पहिले पहल इस ग्रन्थ का संग्रह किया। विलसन साहब ने एशियाटिक रिसर्चेज़ में इस के प्रथम छ सर्ग का अनुवाद भी किया था।

इसी राजतरंगिणी ही से यह इतिहास मैं ने लिखा है। इस में केवल राजाओं के समय और बड़ी बड़ी घटनाओं का वर्णन है।

आशा है कि कोई इस को सविस्तर भी निर्माण कर के प्रकाश करैगा।

राजतरंगिणी छोड़ कर और और भी कई ग्रन्थों और लेखों से इस में संग्रह किया है। यथा आइने अकबरी, ·· ···· का फारसी इतिहास, एशियाटिक सोसाइटी के पत्र; विल्सन, विलफर्ड, प्रिंसिप, कार्निंगहम, टाड, विलिअम्स, गोशेन और ट्रायर आदि के लेख, बाबू जोगेशचन्द्रदत्त की अङ्गरेजी तवारीख, दीवान-कृपाराम जी की फारसी तवारीख आदि।

बहुतों का मत है कि कश्मीर शब्द कश्यपमेरु का अपभ्रंश है। पहले पहल कश्यप मुनि ने अपने तपोबल से इस प्रदेश का पानी सुखा कर इस को बसाया था। इन के पीछे गोनर्द तक अर्थात् कलियुग के प्रारम्भ तक राजाओं का कुछ पता नहीं है। गोनर्द से ही राजाओं का नाम शृङ्खलाबद्ध मिलता है। मुसलमान लेखकों ने इस के पूर्व के भी कई नाम लिखे हैं, किन्तु वे सब ऐसे अशुद्ध और प्रति शब्द में खां उपाधि विशिष्ट है कि उन नामों पर श्रद्धा नहीं होती।

गोनर्द से लेकर सहदेव तक पूर्व में सैंतीस सौ बरस के लगभग डेढ़ सौ हिन्दू राजाओं ने कश्मीर भोगा, फिर पूरे पांच सौ बरस मुसलमानों ने इस का उत्पीड़न किया। (बीच में बागी हो कर यद्यपि राजा सुखजीवन ने ८ बरस राज्य किया था पर उस की कोई गिनती नहीं) फिर नाममात्र को कश्मीर कृस्तानी राज्य-भुक्त होकर आज चौंसठ बरस से फिर हिन्दुओं के अधिकार में आया है। अब ईश्वर सर्वदा इस को उपद्रवों से बचावै। एवमस्तु।

कश्मीर के वर्तमान महाराज की संक्षिप्त वंशपरम्परा यों है। ये लोग कछवाहे क्षत्री हैं। जैपुर प्रान्त से सूर्यदेव नामक एक राजकुमार ने आकर जम्बू में राज्य का आरम्भ किया। उस के वंश में भुजदेव, अवतारदेव, यशदेव, कृपालुदेव, चक्रदेव, विजयदेव, नृसिंहदेव, अर्जुनदेव और जयदेव ये क्रम से हुए। जयदेव का पुत्र मालदेव बड़ा बली और पराक्रमी हुआ। इस ने हँसी हँसी में पचास पचास मन के जो पत्थर उठाए हैं वह उस की अचल कीर्त्ति बन कर अब भी जम्बू में पड़े हैं। उस के पीछे हम्बीरदेव, अजेब्यदेव, वीरदेव, घोगड़देव, कर्पूरदेव और सुमहलदेव क्रम से राजा हुए। सुमहलदेव के पुत्र संग्रामदेव ने फिर बड़ा नाम किया। आलमगीर इन की वीरता से ऐसा प्रसन्न हुआ कि महाराजगी का पद छत्र चंवर सब कुछ दिया। ये दक्षिण की लड़ाई में मारे गए। इन के पुत्र हरिदेव ने और उन के पुत्र गजसिंह ने राज को बहुत ही बसाया। सब प्रकार के नियम बांधे और महल बनवाए। गजसिंह के पुत्र ध्रुवदेव ने बहुत दिन तक ऐश्वर्यपूर्वक राज्य किया। ध्रुवदेव के रणजीतदेव और सूरतसिंह पुत्र थे। रणजीतदेव को ब्रजराजदेव और उन को निजपरम्परासम्पूर्णकारी सम्पूर्णदेव हुए। सम्पूर्णदेव को सन्तति न होने के कारण रणजीतदेव के दूसरे पुत्र दलेलसिंह के पुत्र जैतसिंह ने राज्य पाया। महाराज रणजीतसिंह लाहोरवाले के प्रताप के समय में जैतसिंह को पिनशिन मिली और जम्बू का राज्य लाहोर में मिल गया। जैतसिंह के पुत्र

महाराज गुलाबसिंह ने महाराजाधिराज रणजीतसिंह से जम्बू का राज्य फिर पाया। सुचेतसिंह का वंश नहीं रहा। राजा ध्यानसिंह को हीरासिंह, जवाहरसिंह और मोतीसिंह हुए, जिन मे राजा मोतीसिंह का वंश है। महाराज गुलाबसिंह के उद्धवसिंह, रणधीरसिंह और रणवीरसिंह तीन पुत्र हुए। प्रथम दोनो नौनिहालसिंह और राजा हीरासिंह के साथ क्रम से मर गए इस से महाराज रणवीरसिंह वर्त्तमान जम्बू और कश्मीर के महाराज ने राज्य पाया। इन के एक वैमात्रेय भाई मियां हट्ठसिंह हैं जिन को महाराज ने कैद कर रक्खा था, पर सुनते हैं कि आज कल वह कैद से निकल कर नैपाल प्रान्त में चले गए हैं। सन् १८६१ में महाराज को जी० सी० एस० आई० का पद सर्कार ने दिया और १८६२ मे दत्तक लेने का आज्ञापत्र भी दिया। इन को २१ तोप की सलामी है। दिल्ली दरबार में इन को और भी अनेक आदरसूचक पद मिले हैं। ये संस्कृत विद्या और धर्म के अनुरागी हैं। इन को तीन पुत्र हैं यथा युवराज प्रतापसिंह, कुमार रामसिंह और कुमार अमरसिंह *।

राजतरङ्गिणी की समालोचना।

जिस महाग्रन्थ के कारण हम लोग आज दिन कश्मीर का इतिहास प्रत्यक्ष करते हैं उस के विषय में भी कुछ कहना यहां

* वर्त्तमान महाराज के पारिषदवर्ग भी उत्तम हे। इन के एक बडे शुभचिन्तक पण्डित रामकृष्ण जी को कई वर्ष हुए लोगो ने षड्चक्र कर के राज्य से अलग कर दिया था और अब उन के पुत्र पण्डित रघुनाथ जी काशी मे रहते हैं। महाराज के अमात्य दीवान ज्वाला सहाय के पौत्र दीवान कृपाराम के पुत्र दीवान अनन्तराम जी हैं, जो अङ्गरेजी फारसी आदि पढे और सुचतुर हैं। बाबू नीलाम्बर मुकुर्जी, बाबू गणेशचौबे प्रभृति और भी कई चतुर लोग राज्यकार्य में दक्ष हैं।

बहुत आवश्यक है। इस ग्रन्थ को कल्हण कवि ने शाके एक हजार सत्तर १०७० में बनाया था। उस समय तीसरे गोनर्द से तेईस सौ तीस बरस बीत चुके थे। इस ग्रन्थ की संस्कृत क्लिष्ट और एक विचित्र शैली की है। कवि के स्वभाव का जहां तक परिचय मिला है ऐसा जाना जाता है कि वह उद्धत और अभिमानी था, किन्तु साथ ही यह भी है कि उस की गवेषणा अत्यन्त गम्भीर थी। नीलपुराण छोड़ कर ग्यारह प्राचीन ग्रन्थ इस ने इतिहास के देखे थे। केवल इन्हीं ग्रन्थों के भरोसे इस ने यह ग्रन्थ नहीं बनाया वरंच आजकल के पुरातत्ववेत्ता (Antiquarians) की भांति प्राचीन राजाओं के शासनपत्र, दानपत्र तथा शिवालय आदि की लिपि भी इस ने देखी थीं। (प्रथम तरंग १५ श्लोक देखो) यह मन्त्री का पुत्र था, इस से सम्भव है कि इन वस्तुओं को देखने में इस को इतना परिश्रम न पड़ा होगा जितना यदि कोई साधारण कवि बनाता तो उस को पड़ता। इस ग्रन्थ मे आठ हजार श्लोक हैं। साढ़े छ सौ बरस कलियुग बीते कौरव पांडवों का युद्ध हुआ था, यह बात इसी ने प्रचलित की है। जरासन्ध के युद्ध में कश्मीर का पहला राजा गोनर्द मारा गया। यहां से कथा का आरम्भ है *। इसी आदि गोनर्द के पुत्र को श्रीकृष्ण

---

* इस ग्रन्थकर्त्ता के पिता श्रीयुत कविवर गिरिधरदास जी ने अपने जरासन्धवध नामक महाकाव्य में जरासन्ध की सैना मे कश्मीर के आदि गोनर्द के वर्णन में कई एक छन्द लिखा है वह भी प्रकाश किया जाता है। (३ सर्ग ४० छन्द)

चलेउ भूप गोनर्द वर्दवाहन समान बल,
सग लिये वहु मर्द सर्द लखि होत अपर दल ।
फेंटा सीस लपेटा गल मुकुता की माला,
सिर केसर को पुड़ू धरे पचरङ्ग दुसाला ।

ने गान्धार देश के स्वयम्बर में मारा और उस की सगर्भा रानी को राज्य पर बैठाया। उस समय श्रीकृष्ण ने कश्मीर की महिमा में एक पुराण का श्लोक कहा। (१ त० ३२ श्लोक) यही प्रकरण इस बात का प्रमाण है कि कश्मीर का राज्य बहुत दिन से प्रतिष्ठित है। इस रानी के पुत्र का नाम द्वितीय गोनर्द हुआ, जो महाभारत के युद्ध में मारा गया। इसी से स्पष्ट है कि पूर्वोक्त तीनों राजा जवानी ही में मरे, क्योंकि एक पांडवों के काल में तीनों का वर्णन आया है। इन लोगों के अनेक काल पीछे अशोक राजा जैनी हुआ। इसी ने श्रीनगर बसाया। इस के पीछे जलौकराजा प्रतापी हुआ जिस ने कान्यकुब्जादि देश जीता। यह शैव था। (भारतवर्ष में मूर्तिपूजा और शैव वैष्णवादि मत बहुत ही थोड़े काल से चले हैं यह कहने वाले महात्मागण इस प्रसंग को आंख खोल कर पढ़ें)(१ त० ११३ श्लो०) फिर हुष्क जुष्क और कनिष्क ये तीन

रथ चारु जराऊ सोहतो रूप सबन मन मोहतो,
कश्मीर भूप भरि रिसि लसी मथुरापुर दिसि जोहतो ॥

(६ सर्ग २५ छन्द)

छप्पय—मद्रक सुम्भक पनस किंपुरुस द्रुमनृप कोसल,
सोमदत्त वाल्हीक भूरि सह भूरिस्रवा सल ।
युधामन्यु गोनर्द अनामय पुनि . उतमौजा,
चेकितान अरु अङ्ग वङ्ग कालिङ्ग महौजा।
नृपवृहत छत्र केसिक सुहित आहुति सहित भुआल सब
चढि लरैं द्वार पश्चिम जबर, अरि गति देन ढब ॥

(१० सर्ग ११ छन्द)

कैसिक नृप अति विक्रमवन्त, अरिमरदन सगाभिरयो तुरन्त ।
धरम वृद्ध गोनर्द महीप, करन लगे रथ जोरि समीप ।
हरिगीत छन्द—तह काश्मीरी भूमिपति गोनर्द धनु टकारि के ।

विदेशी (Bactro-Indian tribe) राजा हुए। इन के समय मे शाक्य सिंह को हुए डेढ़ सौ बरस हए थे। (१ त० १७२ श्लोक) इस से स्पष्ट होता है कि राजतरंगिणी के हिसाब से शाक्यसिंह को हुए पचास सौ वरस हुए। इसी समय में नागार्जुन नामक सिद्ध भी हुआ। इन के पीछे अभिमन्यु के समय में चन्द्राचार्य ने व्याकरण के महाभाष्य का प्रचार किया और एक दूसरे चन्द्रदेव ने बौद्धों को जीता। कुछ काल पीछे मिहिरकुल नामक एक राजा हुआ। इस के समय की एक घटना विचारने के योग्य है। वह यह कि इस की रानी सिंहल का बना रेशमी कपड़ा पहने थी उस पर वहां के राजा के पैर की सोनहली छाप थी। इस पर कश्मीर के राजा ने बड़ा क्रोध किया और लङ्का जीतने चला।

भट धर्म्म वृद्धहि छाय दीनो मारु मारु पुकारि कै।
सुफलक सुवन धनु धरि निज अहि सरिस बान प्रहारिकै।
सब काटिकै दुसमन विसिख महि मध्य दीनो डारिकै॥ ९५॥
गोनर्द तब बोलत भयो तू ज्वान प्रगट लखात है।
क्यों धर्म्म वृद्ध कहात है आचरज यह अधिकात है।
पै एक बात विचारि करि सदेह मेरो जात है।
रन धरम वृद्धन को धरे अति सिथिल तेरो गात है॥ ९६॥
जदुवीर अब बोलत भयो नृप साच तोहि बातै कहैं।
हम धर्म्म वृद्ध कहात हैं पै करम वृद्ध नहीं अहैं।
अरु धर्म्म वृख को नाम है सो वृद्ध वहु दिन को भयो।
गोनरद तू रद रहित बूढो पतिहि क्यों चाहे नयो॥ ९७॥
इमि वचन सुनि सुफलक सुवन के कासमीरी कोपि कै।
नह बरखि आयुध वारिधर सम दियो पर रथ लोपि कै।
तिमि धर्म्म वृद्धि बजाय धनु सर त्याग कीने चोपि कै।
गोनर्द सस्त्र उडायके गरज्यो विजय पन रोपि कै॥ ९८॥

तब लङ्कावालों ने ' यमुषदेव ' नामक सूर्य के बिम्ब के छापे का कपड़ा दे कर उस से मेल किया। (१ त० ३०० श्लोक) इस से स्पष्ट होता है कि चांदी सोने से कपड़ा छापना लङ्का में तभी से प्रचलित था। अद्यापि दक्षिण हैदराबाद में (लङ्का के समीप) छापा अच्छा होता है। उस समय तक भट्टि (Bhatti) दारद (Dardareans) और गांधार (Kandharians) ब्राह्मण होते थे।

फिर तुंजीन नामक राजा के समय में चन्द्रक कवि ने नाटक बनाया। (२ त० १६ श्लो०) इस के समय में एक बात और आश्चर्य की लिखी है कि एक समय बड़ा काल पड़ा था तो परमेश्वर ने कबूतर बरसाये थे। (२ त० ५१ श्लो०) और हर्ष नामक एक कोई और राजा उस काल में हुआ था। इस राजा के कुछ काल पीछे सन्धिमान राजा की कथा भी बड़ी आश्चर्य की लिखी है कि वह सूली दिया गया था और फिर जी गया इत्यादि। विक्रमादित्य के मरने के थोड़े ही समय पीछे प्रवरसेन राजा ने नाव का पुल बांधा और वह ललाट में त्रिशूल की भांति तिलक देता था। ३ त० ३५६ और ३६७ श्लो०)।

जयापीड़ राजा का समय फिर ध्यान देने के योग्य है, क्योंकि इस के समय मे कई पण्डित हुए हैं, जिन में शंकु नामक कवि ने मम्म और उत्पल की लड़ाई में भुवनाभ्युदय नामक काव्य बनाया था। (४ त० २५ श्लो०) इसी के समय में वामन नामक वैयाकरण पण्डित हुआ है जिस की कारिका प्रसिद्ध है। (४ त० ४८७ से ४९४ श्लो० तक) इसी वामन का वोपदेव ने खण्डन किया है। (वोपदेव महाग्राहग्रस्तो वामने कुंजरः) इस से वोपदेव जयापीड़ के समय (७५ ई०) के पीछे हुए हैं यह सिद्ध होता है। जयापीड़ ने द्वारका फिर से बसा कर मन्दिर बन-

वाए। (४ त० ५६० श्लो०) और उस समय नैपाल का राजा अरमुड़ि था (४ त० ५२१ श्लो०)।

राजा शंकरवर्मा का समय भी दृष्टि देने के योग्य है। इस के पास ३०० हाथी, लाख घोड़े और नौ लाख प्यादे थे। उस समय गुज़रात में 'खालान खान' का जोर था। दरद और तुरुष्क देश के राजा भारत में बड़ा उपद्रव मचाए हुए थे। लल्लियशाह खानालखान का सर्दार था (५ त० १५३ से १६० श्लो० तक)। इस ग्रंथ में मुसलमानों का वर्णन पहले यहीं आया है। इस से स्पष्ट होता है कि ईस्वी नवीं शताब्दी के अन्त तक जो मुसलमान चढ़ाई करते थे वे गुजरात की राह से करते थे, उत्तर पच्छिम की राह नहीं खुली थी। इस तरंग में कायस्थों की बड़ी निन्दा की है (४ त० ६२५ श्लो० से और ५ त० १७१ श्लो० आदि)।

चतुर्थ और पञ्चम तरङ्ग में कई बात और दृष्टि देने के योग्य है। जैसे तांबे की 'दीनार' पर राजाओं का नाम खुदा रहना। (४ त० ६२० श्लो०) जहां पथिक टिकें उस स्थान का नाम गंज (४ त० ५६२ श्लो०)। रुपयों की हुण्डिका (हुण्डी) का प्रचार। (५ त० १५६ श्लो०) मेष के ताज़े चमड़े पर खड़े होकर तलवार ढाल हाथ में लेकर शपथ खाना इत्यादि (५ त० ३३० श्लो०)। इसी तरङ्ग में गानेवालों का नाम डोम लिखा है। (५ त० ३५८ श्लो०) यह दीनार गंज हुण्डी और डोम शब्द अब तक भाषा में प्रचलित है, वरंच मीरहसन ने भी 'बडोमनपना' लिखा है। जैसा इस काल में रंडी और इन की बुढ़िया तथा भंडुओं के समझने की और साधारण लोग जिस में न समझें * ऐसी एक

* वर्तमान काल में रडियों की भाशा का कुछ उदाहरण दिखाते हैं। नगर की वारवधूगण की सकेत भाषा यथा—लूरा-पुरुष, लूरी रडी, चीसा-अच्छा बोला, बुरा, भीमटा, रुपया, आदि। ग्राम्य राडियों की भाषा यथा-सेरुआ पुरुष, सेरुइ-स्त्री, कनेरी-रुपया, सेमिल-अच्छा है और छौलिआयल्य अर्थात् रुपया सब ठग लो।

भाषा प्रचलित है वैसी ही उस काल में भी थी। गानेवाले को हेलू गांव दिया गया। इस की उस काल की भाषा हुई 'रंगस्सहल्लुदिराणा' (५ त० ४०२ श्लो०)।

षष्ठतरंग में दिद्दारानी का उपद्रव और बहुत से राजाओं के नाम के पूर्व में शाहिपद ध्यान देने के योग्य है।

सप्तमतरंग (५३ श्लो०) में हम्मीर नाम का एक राजा तुंग के समय मे और (१६० श्लो०) अनन्त के समय मे भोज का राजा होना लिखा है। मान के हेतु लोगों को ठाकुर की पदवी दी जाती थी। (७ त० २६ श्लो०) तुरुष्क देश से सोने का मुलम्मा करने की विद्या हर्ष के समय में आई। (७ त० ५३ श्लो०) इसी के काल में खस लोगों ने पहले पहल बन्दूक का युद्ध किया (७ त० ६८४ श्लो०) कालिंजर के राजा, राजा उदय सिंह आदि कई राजाओं के प्रसंग से (१३०० श्लो० के आसपास) नाम आए हैं। युद्ध हारने के समय क्षत्रानियां राजपुताने की भांति यहां भी जल जाती थी। (७ त० १५०० श्लो०)

अष्टमतरंग में भी कायस्थों की बहुत निन्दा की है। (८ त० ८६ श्लो० आदि) कैदियों को भांग से रंग कर कपड़ा पहनाते थे। (८ त० ६३ श्लो०) कल्याण के हेतु लोग भीष्मस्तवराज, गजेन्द्रमोक्ष, दुर्गापाठ आदि का पाठ करते थे (८ त० १०६ श्लो०) टकसाल का नाम टंकशाला। (८ त० १५२ श्लो०) उस समय में भी राजाओं को इस बात का आग्रह होता था कि उन्हीं के नाम के सिक्के का प्रचार विशेष हो। इस समय (बारहवीं शताब्दी के मध्य में) कालिंजर का राजा कल्ह था। (८ त० २०५ श्लो०) कटार को कट्टार कहते थे। (८ त० ५१५ श्लो०) हर्ष का सिर काट कर लोगों ने भाले पर चढ़ाया. किन्तु इस के पहले किसी राजा के सिर काटने की चाल नहीं थी। हर्ष का व्याख्यान इस तरंग में अवश्य पढ़ने के योग्य है, जिस से शृङ्गार वीर आदि

रसों का हृदय में उदय हो कर अन्त में वैराग्य आता है।

राजतरंगिणी में रामलक्ष्मण की मूर्त्ति का पृथ्वी के भीतर से निकलना इस बात का प्रमाण है कि मूर्त्तिपूजा यहां बहुत दिन से प्रचलित है।

इस में देवी, देवता, भूत प्रेत और नागों की अनेक प्रकार की आश्चर्य कथा हैं जिन को ग्रन्थ बढ़ने के भय से यहां नहीं लिखा। और भी वृक्ष, शस्त्र औषधि और मणि आदिकों के अनेक प्रकार के वर्णन हैं। कोई महात्मा इस का पूरा अनुवाद करेंगे तो साधारण पाठकों को इस का पूर्ण आनन्द मिलेगा।

इस में एक मणि का वर्णन बड़ा आश्चर्यजनक है। एक बेर राजा नदी पार होना चाहता था किन्तु कोई सामान उस समय नहीं था। एक सिद्ध मनुष्य ने जल में एक मणि फेंक दी, उस से जल हट गया और सेना पार उतर गई। फिर दूसरी मणि के बल से इस मणि को उठा लिया। एक कहानी ऐसी और भी प्रसिद्ध है कि किसी राजा की अंगूठी पानी में गिर पड़ी। राजा को उस अमूल्य रत्न का बड़ा शोच हुआ। यह देख कर मंत्री ने अपनी अंगूठी डोरे में बांध कर पानी में डाली। मंत्री के अंगूठी के रत्न में ऐसी शक्ति थी कि अन्य रत्नों को वह खींच लेती थी, इस से राजा की अंगूठी मिल गई।



हर्षदेव।

हर्षदेव के विषय में यद्यपि राजतरंगिणी में कुछ विशेष नहीं लिखा है किन्तु इस राजा का नाम भारतवर्ष में बहुत प्रसिद्ध है और एक इस बात की प्रसिद्धि पर कि रत्नावली इत्यादि काव्य-ग्रन्थ उस के समय में बने थे इस राजा पर मेरी विशेष दृष्टि पड़ी। इस का समय विक्रम और कालिदास के समय के

वहुत पीछे स्पष्ट होने से इस वात की मुझ को बड़ी चिन्ता हुई कि वह कौन पुण्यात्मा श्री हर्ष है धावक ने जिस की कीर्ति आ-चन्द्रार्क स्थिर रक्खी है। वह श्री हर्ष निश्चय मम्मट कालिदासादि के पूर्व और वत्सराज के पश्चात् हुआ है। वंशावलियों में खोजने से कई हर्ष मिले। यथा मालवा के राजाओं में एक हर्षमेघ १९१ ई० पू० हुआ है। यह युद्ध में मारा गया और कोई विशेष कथा इस की नहीं है। छतरपुर में एक लिपि में श्री हर्ष नाम का एक राजा विहल का पुत्र यशोधर्मदेव का पिता लिखा है। और यह लिपि श्री हर्ष के प्रपौत्र की सं० १०१९ की है। एक श्री हर्ष नैपाल का राजा ३६३१ ई० पू० हुआ है। एक विक्रमादित्य जिस का दूसरा नाम हर्ष था मातृगुप्त के समय में हुआ। शक १००० में एक विक्रम और इस के कुछ ही पूर्व कान्यकुब्ज में एक हर्ष नामक राजा हुआ। कालिदास और श्री हर्ष कवि भी इसी काल में थे। जैन लोगों ने लिखा है कि वाराणसी के जयन्तीचन्द्र नामक राजा के दरबार में श्री हर्ष कवि था। (१०८९ शक) यह जैनों का भ्रम है। और हर्षों को छोड़ कर कान्यकुब्ज के हर्ष को यदि धावक कवि का स्वामी मानें तभी कुछ लड़ सब वातों की मिलैगी। जैसा रत्नावली में जिस वत्सराज का चरित है वह कलियुग के प्रारम्भ में उरुक्षेप का पुत्र वत्स था। शुनकवंश का प्रथम राजा एक प्रद्योत हुआ है। [२००० ई० पू०] सम्भव है कि इसी प्रद्योत की वेटी वत्स को व्याही हो। धावक ने एक उदयन का भी वर्णन किया है वह पांडवों के वंश की अन्तावस्था में हुआ था। यह सव अति प्राचीन है। इस से ३६३१ ई० पू० के नैपालवाले श्रीहर्ष के हेतु धावक ने काव्य वनाया है यह नहीं हो सकता। कन्नौज में जो श्रीहर्ष नामक राजा था जिस की सभा में श्रीहर्ष नामक कवि का पिता रहता था वही श्रीहर्ष धावक का स्वामी था। छतरपुर

की लिपि का काल १०१६ है। चार पुश्त पहले यह काल ८५० संवत् में जा पड़ेगा। यशोविग्रह के पहले कदाचित् राजविप्लव हुआ हो और श्रीहर्ष से यशोविग्रह तक दो एक राजे और हो गए हों तो आश्चर्य नहीं। प्रशस्ति के 'क्ष्मापालमाला सुदिवंगतासु' इस पद से ऐसा झलकता भी है। यशोविग्रह से लेकर जयचन्द्र तक नामों मे जितनी प्रशस्ति मिली हैं उन में बड़ा ही अन्तर है। जो ताम्रपत्र मैं ने देखा है उस का क्रम यह है—यशोविग्रह, महीचन्द्र, चन्द्रदेव, मदनपाल, गोविन्देन्द्र और जयचन्द्र। जैनों ने इसी जयचन्द्र को जयन्तीचन्द्र लिखा है और काशी का राजा लिखने का हेतु यह है कि 'तीर्थानि काशीकुशिकोत्तरकौशलेन्द्रस्थानीयकानि परिपालयताभिगम्य' इस पद से स्पष्ट है कि काशी भी उस समय कन्नौजवालो के अधिकार मे थी इसी से काशी का राजा लिखा। और जयचन्द्र के प्रपितामह या उस के भी पिता के काल में जो श्रीहर्ष कवि था उस को जयचन्द्र के काल में लिख दिया। छतरपुर की लिपि में जो श्रीहर्ष राजा का पुत्र यशोधर्म वा वर्म लिखा है वही यशोविग्रह मान लिया जाय और जयचन्द्र उस के बड़े पुत्र का वंश और छतरपुर की लिपि वाले छोटे पुत्र के वंश में हैं ऐसा मान लीजिए तो विरोध मिट जायगा। चन्द्रदेव ने 'श्रीमद्गाधिपुराधिराज्यमखिलं दोर्विक्रमेनार्जितम्' इस पद से कान्यकुब्ज का राज्य अपने बल से पाया यह भी झलकता है। इस से यह भी सम्भव है कि श्रीहर्ष का राज्य कन्नौज में शेष न रहा हो और चन्द्रदेव ने नए सिरे से राज्य किया हो। यशोविग्रह के वंश की कई शाखा हैं इस का प्रमाण प्रशस्तियों के भिन्न भिन्न नामों ही से है। इस से ऐसा निश्चय होता है कि सम्वत् ६०० के लगभग जो श्रीहर्ष नामक कान्यकुब्ज का राजा था उसी के हेतु रत्नावली आदि ग्रन्थ बने

हैं *। कालिदास, विक्रम, भोज सब इस काल के सौ बरस के आस पास पीछे उत्पन्न हुए हैं और इसी से कालिदास ने मालविकाग्निमित्र में धावक का परिचय दिया है। कल्हण कवि ने जो राजतरंगिणी में कालिदास या इस श्रीहर्ष का नाम नहीं दिया उस का कारण यही है कल्हण का स्वभाव असहिष्णु था और कालिदास से कश्मीर के राजा भीमगुप्त से (जो ९७५ ई० के काल में राज्य करता था) महा वैर था, इस से उस ने कालिदास का या उस के स्वामी विक्रम का नाम नहीं लिखा। कल्हण प्रायः सभी राजाओं की कुछ कुछ निन्दा कर देता है जैसा इसी हर्षदेव की जिस की और स्थानो में बड़ी स्तुति है कल्हण ने निन्दा की है। और ग्रन्थकारों के मत में श्रीहर्ष बड़ा न्यायपरायण स्वयं महा कवि अति उदार था। पुकार सुनने के हेतु महल की भित्तियों पर घंटियां लटकती थीं। रात दिन गुणियों से घिरा रहता था और अन्त में संसार को असार जानकर त्यागी हो गया। कल्हण से हर्ष राज से द्वेष का यह कारण है कि इस के स्वामी जयसिंह का बाप सुम्सल हर्ष के पोते भिक्षाचर को मार कर राज्य पर बैठा था।

---

* पूर्व मे तुजीन के काल में एक हर्ष हुआ है यह लिख भी आए हैं।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत काल	डायर के मत से समय	कनिंहम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्य काल	विशेष वर्णन ।
१	आदि गोनर्द	६८८॥	०	०	१४०० ई पूर्व	३५ । ६	२४४८ ईस्वी पूर्व, जरामन्ध के युद्ध में बलदेव जी ने मारा, प्रिन्सप के मत से १०४५ ई पू, नामान्तर गोनन्द वा अगद, फारसीवालों के मत से राज्य १७ बरस, मुसल्मानो का नाम आदि गद ।
२	दामोदर	७२४	०	०	०	३५ । ६	गन्धार देश के स्वयम्बर में श्री कृष्ण ने इस को मारा और इस की यशवती रानी को जो सगर्भा थी राज्य पर बैठाया ।
३	बालगोनर्द*	७५४	०	०	०	३०	श्री कृष्ण ने आप आकर राज पर बैठाया महाभारत के युद्ध में विद्यमान था ।
३८	पैंतीस राजे*	१४६४	०	०	०	वि. ७१०	इन के नाम कर्म कुछ भी विदित नही मुसल्मानों के मत से ये पैंतीस नही छैतीस थे और पाडव वश में थे ।
३९	लव	१४९९	०	०	५७०	३५	लोलूर बसाया नामान्तर बाललव मुसल्मानो का लू, लोलूर में बीस लाख अस्सी हजार मनुष्यों की बस्ती थी १७०९ पू ।
४०	कुशेशय	१५०२।८	०	०	०	३ । ८	नामान्तर कुश १६६४ ई पू मुसल्मानो का किशन।

इस चक्र में राजाओं के नाम पर जहां* ऐसा चिन्ह दिया है वहां समझना चाहिये कि पूर्व वश समाप्त होकर आगे से नया वश चला ।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत काल	द्वापर के गत से समय	कलियुग के गत से समय	विक्रम के गत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन ।
४१	खगेन्द्र	१५६२।८	०	०	०	६०	१-*० ई० पू० मुसलमानो के मत से काकापुर और कथ नामक नगर बसाए मुसलमाना का गुलकन्द ।
४२	सुरेन्द्र*	१५६३।२	०	०	०	३० । ६	मुसलमानो का सुन्दर १:०० ई०पू० ईरान से माचास्प नामक हकीम को बुलवाया, ईरान के बादशाह बहमन को जीता निस्सनान मरा मुसलमानो के मत से इस की बेटी बहमन को व्याही थी।
४३	गोधर	१६२८।६	०	०	०	३५।७	१५७३ ई० पू० ।
४४	सुवर्ण	१६८८।६	०	०	०	६०	स्वर्णनदी नाम की नदी पहाड़ खोद कर लाया मुसलमानो का बसरन ।
४५	जनक	१६६४।६	०	०	०	६	१४७७ ई० पू ।
४६	शनीचर	१७६५।६	०	०	०	७१	मुसलमानो का सजीनरायन । १४७१ ई० पू ।
४७	अशोक	१८२७।६	०	०	०	६२	१३६४ ई० पू यह शचीनर का भतीजा था श्रीनगर इसी ने बसाया और जैन मत का प्रचार किया, मुसलमानो ने इस को शुकराज वा शकुनी का बेटा लिखा है उस काल में श्रीनगर में छ लाख मनुष्य थे।

[१६] ४८	जलोक	१८५७।६	०	०	०	३०	जाति विभाग किया सम प्रकृति स्थापन किया। नन्दिपुराण सुना इसी को और ग्रन्थकारों ने पटने के अशोक का पोता लिखा है यवनराजा यूथिदेयुस को हराया अन्तिओकस के साथ सुलहनामा किया बड़ा प्रतापी था १३३२ ई० पू मुसल्मानो का चक्रवक।
४६	दामोदरद्वितीय*	१८८२।६	०	०	०	२५	१३०० ई० पू शैवमत का प्रचार हुआ।
५२	हुष्क, जुष्क और कनिष्क*	१६४२।६	०	०	०	६०	१२७७ ई पू य तीनों तुर्क (किंवा तातार) थे किन्तु बौद्ध थे शाक्यसिंह को १५० वर्ष हुए थे नागार्जुन सिद्ध इन्ही के समय में हुआ औ बौद्धमत को फैलाया।
५३	अभिमन्यु	१६७७।६	०	०	०	३५	मुसल्मानो का अभिगुन वा अभिवलन १२१७ ई पू विल्फर्ड के मत से ८२३ ई पू प्रिन्सिप के मत से ७३ ई पू बौद्धो का उपद्रव हुआ हिम बहुत पड़ा चन्द्रदेव ब्राह्मण ने बौद्धो को जीता नीलपुराण सुना महाभाष्य का प्रचार हुआ।
५४	गोनर्द (३)	२०१२।६	११८२ ई. पूर्व	५३।२ ई. सन	११८२ ई पूर्व	३५	प्रिन्सिप के मत से १०८ ई पू, मुसल्मानो ने इस का नाम कृष्ण लिखा है। विल्फर्ड के मत से ३८८ ई पू नागपूजा चलाया।
५५	विभीषण	२०५८।३	११४७	६१।६	११४७	४५।६	विल्फर्ड के मत से ३७० ई पू मुसल्मानो के मत से पशुपति नाम राज्यकाल ५३।६।७।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	टायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विलसन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन ।
५६	इन्द्रजित	२०८८।६	१०६३।६	७३।१	१०६६	३०।६	वि ३५२ मुसल्मान लेखकों ने इन्द्रजित रावण इन दोनो का राज्य ३६ वर्ष लिखा है।
५७	रावण	२११६।३	१०५८	७३।१	१०६०।६	३०।६	वि ३३४ मुसल्मानो ने इस के बेटे बरचाल का नाम और लिखा है और उस का राज्य भी ३५ बरस लिखा है।
५८	विभीषण (२)	२१५४।३	१०२८	८०।८	१०३०।६	३५	वि ३१६ मुसल्मानों ने लिखा है कि यह त्यागी था इस का नाम परानपन था यह अजाद राजा का बेटा और बडा कवि था। पहले इस का ज्येष्ठ पुत्र इन्द्रायन गद्दी पर बैठा किन्तु उस के दुष्कर्मों से दुखी होकर लोगो ने उस को मार डाला और इस को गद्दी पर बैठाया ।
५९	किन्नर	२१९४	९९२।६	८९।२	९९३	३९।९	वि २९८, नामान्तर नर, बौद्ध था, मुसल्मानो ने इस को बडा क्रूर लिखा है और लिखा है कि २ वर्ष मात्र राज्य किया फिर राज्य कुछ दिन शून्य रहा ।
६०	सिद्ध	२२५४	९५२।९	९९।२	९५३ । ३	६०	वि २८०, मुसल्मानो ने लिखा है कि धाय इस को छिपाये हुए थी ।

६१	उत्पल	२२८४।६	८६१२।६	११४।२	८६३।३	३०।६	वि २१२, ग्राईनेगकबरी में उस का नाम ग्रादित्य वल्लभ लिखा है नामान्तर उत्पलाक्ष, मुसलमानो का गुरुदत्त वा पलाशन यह ग्राग का राजा था।
६२	हिरण्य	२३२२।१	८६२।३	१२२।६	८६२।६	३७।७	वि २८८, नामान्तर हिरण्याक्ष मुसल्मानो का निरन्म
६३	हिरण्यकुल	२३८२।१	८२४।८	१३१।२	८२५।२	६०	वि २२६, मुसल्मानो का हिरण्यकुल।
६४	वसुकुल	२४४२।१	७६४।८	१४६।२	७६५।२	६०	वि २१८, गाईने ग्रकबरी का एविशाक वडा विषयी था
६५	मिहिरकुल	२५१२।१	७०४।८	१६३।८	७०५।२	७०	वि २००, ट्रायर के मत से नाम मुकुल लका पर चढाई की वडा क्रूर था दारद गान्धरो ग्रौर भाटियो का प्रावल्य हुग्रा पहाड तोड कर हाथियो से ढोंकि हटाकर एक नदी निकलवाई लका में राजा का पैर छपा कपडा होता था यह ऐसा क्रूर था कि एक वेर हाथी का पहाड पर से गिरना उस को ग्रच्छा मालूम हुग्रा इस से सौ हाथी पहाड पर से गिरवा दिए बहुत सी स्त्रियों को भी इसने मारडाला।
६६	बक	२५४८।१	६३४।८	१७४।८	६३५।२	३६	वि १८२, मुसल्मानो का जग इस को एक स्त्री ने बलि दे दिया।
६७	क्षितिनन्दन	२५७८।१	५७१।८	१८७।८	५७२।२	३०	वि १९४, क्षितिनन्द वा नन्दन मुसलमानो का ग्रानन्दकान्त इस का वेटा कतानन्द उस को वसुनन्दहुग्रा
६८	वसुनन्द	२६३६।१	५४१।८	१६५।२	५४२।२	५२	वि १४६, ग्राईने ग्रकबरी का विस्तन्द कामशास्त्र बनाया
६९	नर (२)	२६६०।१	४८४।६	२०८।२	४६०	६०	वि १२८, नामान्तर वर ग्राईने ग्रकबरी का निर।
७०	ग्रक्ष	२७५०।१	४२६।६	२२३।२	४३०	६०	वि १००, ग्राईने ग्रकबरी का यज. मुसलमान इतिहासलेखको ने इस का नाम लिखाही नहीं है।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	टायर के मत से समय	कनिंइहम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन ।
७१	गोपादित्य	२८१०।१	३६६।६	२३८।२	३७०	६०	वि ८२ ई पू आईने अकबरी का कुलवती मुसल्मानो का कोमानन्द वैदिक धर्म की उन्नति की।
७२	गोकर्ण	२८६७।१	३०६।६	२५३।२	३१०	५७	वि ६४ ई पू आ अ का करन।
७३	नरेन्द्रादित्य	२९०३।४	२५१।७	२६६।११	२५३	३६।३	वि ८९ ई पू आ अ का नरेन्द्रावत, मुसल्मानो का नरानन्द नामान्तर सिरिल।
७४	अन्धयुधिष्ठिर*	२९३७।४	२१५।४	२७६	२१६।६	३४	वि २८ ई पू अन्धमशा कमती सूझने से हुई, विषयी था। अन्त में राज्य छोड कर भाग गया।
७५	प्रतापादित्य	२९६६।४	१६७।३	२८७।६	१६८।६	३२	वि १० ई पू किसी विक्रमादित्य का नातेदार था मुसल्मानो के मत से नाम वरतपात है और मालवा से वहा जाकर राजा हुआ।
७६	जलौक (२)	३०००।४	१३५।३	३०३।६	१३६।६	३२	वि २२ ई सन्, आ अ का जगुह।
७७	तुंर्जीन*	३०२९।४	१०३।३	३१९।६	१०४।६	२६	वि ५८ ई मुसल्मानो ने इस का नाम शचीनर और इस की रानी का नाम दक्षिणा लिखा है नामान्तर वजीर वडा भारी काल पडा खजाना सब गरीबो का बाट दिया आकाश से लोगो के घर में कबूतर गिरे वडा धर्मातमा था चन्द्रक कवि ने नाटक काव्य बनाए।
७८	विजय	३०३५।४	९७।३	३३८।६	९९।९	८	वि ९ ई नामान्तर वेजिरी मुसल्मानो का विजयमह।

७९	जयेन्द्र*	३०७२।४	५६।३	३४१।८	६०।६	३७	वि ८८ ई नामान्तर चन्द्र मुसल्मानों का विजयेन्द्र।
८०	सन्धिमान*	३११६।४	२२।३	३६६	२३।६	४७	नामान्तर आर्यराज नयेन्द्र का मन्त्री था उस के विषय में यह विचित्र बात प्रसिद्ध है कि फांसी पडकर मरकर फिर जिया था मुहम्मद अजीम ने अपने फारसी इतिहास में लिखा है कि जिस समय सन्धिमान शूली पर मरगया उसी काल में राजा भी मर गया तब प्रजा लोगों ने सन्धिमान मन्त्री के पुत्र अरिराय को राज पर बैठाया और इस भांति सन्धिमान के कपाल का लिखा पूरा हुआ अरिराय विरागी हो कर जंगल में चला गया फिर युधिष्ठिर का पोता गोपाल राजा जो बडा ही सुन्दर था राजा हुआ अपने ससुर खता के बादशाह की मदद से काश्मीर का राजा हुआ था और मरन तक जीता।
८१	मेघवाहन	३१५३।४	२४।६	३८३	२३।३	३५	गान्धार (कन्दहार) का था वहा के राजा गोपादित्य ने इस को पाला था बोद्धो को बसाया।
८२	श्रेष्ठसेन	३१८३।४	ई सन् ५८।६	४००	ई॰ सन् ५७।६	३०	मुसल्मानो के अनुसार खता के बादशाह की बेटी इस को ब्याही थी इस ने प्रत्यक्ष पशु से वृण करके पिष्ट की चाल चलाई रुपये को दीनार कहते थे आईने अकबरी का मेगदहन।
८३	हिरराय*(२)	३२१३।६	८८।६	४१५	८७।३	३०१२	तोरमान कुमार का प्रतिद्वन्दी था मुसल्मानों ने लिखा है कि इस का भाई पुरवाहन इस का मन्त्री था।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	द्वापर के मत के समय	कनिङ्हम के मत के समय	विल्सन के मत के समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन ।
८४	मातृगुप्त*	३२१७ । ३	११७।११	४३०	११८ ।५	४ । ९	विक्रमादित्य ने उज्जैन से भेजा जाति का ब्राह्मण था इस विक्रमादित्य का नाम हर्ष था उस काल मे लोग ललाट में तृशूल की मुद्रा देते थे किन्तु कालिदास वाला विक्रम यह नही है ।
८५	प्रवरसेन	३२७७ । ३	१२३।८	४३२ । ६	१२२ । २	६०	यह प्राचीन वश का था शिलादित्य नामक गुजरात के राजा से लडा मुसल्मानो के अनुसार पुरवाहन का बेटा था श्री नगर फिर से बसाया मुसल्मानो ने शिलादित्य को विक्रमादित्य का बेटा लिखा है ।
८६	युधिष्ठिर (२)	३३१६ । ६	१८३।८	४९४	१८५ । २	३९	मुसल्मान लेखको से यहा वडा भेद है वे लिखते हैं प्रवरसेन का बेटा चन्द्रश्री उस ने ७३ वरस ३ महीना राज्य किया उस का बेटा लक्ष्मण राज्यकाल ३ वरस उस का बेटा जयादित्य ।
८७	नरेन्द्रादित्य	३३१६।११।१३	२०४।११	४८३	२२४ । ५	० ।८।१३	इसी का नामान्तर कोई लक्ष्मण मानते हैं वा नन्द्रावत।
८८	रणादित्य	३६१६।११।१३	२१७।११	६६०	२३७ । ५	३००	इस का राज्यकाल ग्रन्थ मे तीन सौ वरस लिखने से अनुमान होता है कि इस के पीछे के कुछ राजाओ के नाम छूट गए हैं चोलराज की बेटी व्याही मुसल्मानो

							ने लिखा है कि महात्मा मुहम्मद इसी के समय में उत्पन्न हुए थे और इस को राज्य करते जब २५८ वर्ष बीते थे तब वह मक्के से मदीने गए अर्थात् सन् हिजरी आरम्भ हुआ।
८९	विक्रमादित्य	३'५९।११।१३	५१७।११	५५५।६	५३७।५	४२	गोनर्न्दवश का अन्तिम राजा मुसल्मानों का जयानन्द
९०	बालादित्य	३'६'।११।१३	५५६।११	५७८।६	५७९।५	३७	मुसल्मान लेखकों ने लिखा है कि उपनाम नामक एक बडा पंडित इस के समय में हुआ इस के पास पच्चीस हजार ग्यासे के घोडे और तीन लाख सवार और रात को प्रकाश करनेवाले लाल थे। मुसल्मानो के अनुसार पहले इस का बेटा चन्द्रानन्द, फिर इस का भाई खानीन, फिर इस से छोटा अलनादित गद्दी पर बैठा।
९१	दुर्लभवर्द्धन	३७३२।१।१३	५९७।३	५९४।६	६५१।५	३६	नामान्तर प्रज्ञादित्य कर्कोटक वंश का यजदिजिर्द (**Yezdejerd**) का समकालीन। नामान्तर दुर्लभक।
९२	प्रतापादित्य(२)	३७८२।११।१३	६३३।३	६३०।६	६५१।५	५०	नामान्तर चन्द्रानन्द। बहुत धर्मिष्ट था। इस के समय में भी क्षमाविक्रम नाम का कोई राजा न था।
९३	चन्द्रापीड	३७९१।७।१३	६८३।३	६८०।६	७०१।५	८।८	मुसल्मानो का खाजीत।
९४	तारापीड	३७९५।८।७	६९१।११	६८९।२	७१०।१	४।०।२४	चमार की एक झोपडी मन्दिर में पडती थी। वह नही देता था। राजा ने स्वयं उस को राजी किया,
९५	ललितादित्य	३८२२।३।१८	६९५।११	६९३।२	७१४।१	३६।७।११	कन्नौज के यशोवर्म से लडा रहता और रतन तथा

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गति कलि	टायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन ।
							बुखारा गुजरात तिब्बत बंगाल तक जीता बेटा प्रनापी था पृथ्वी में से राम लक्ष्मण की मूर्ति मिली, उन की प्रतिष्ठा की सनद और सुलहनामा लिखने की चाल थी शाहिब शब्द सर्दारवाचक था भवभूति महाकवि इसी के समय में था इस समय में देवताओं के भीतर द्रव्य भी रहता था राजा लोग जैन मतवालों का भी आदर करते थे ।
६६ ६७	कुवलयापीड वज्रादित्य*	३८२३।४।२ ३८३०।८।२	७३२ । ७ ७३३ । ७	७२९ । ९ ७३० । ९	७५० । ८ ७५१ । ८	१।०।१५ ७	मुसल्मानो से गुलाम बेचने की चाल सीखी मुसल्मानो ने ललितादित्य का बेटा रमा वा रणानन्द उस का पुत्र सगरानन्द या शकानन्द राजा हुआ, यह क्रम लिखा है और इस के पीछे ललितादित्य का छोटा लडका प्रहस्त गद्दी पर बैठा ३१ वर्ष इन तीनो ने राज्य किया इस के पीछे विजयानन्द ८ वर्ष राजा रहा, फिर ३ वर्ष सगरानन्द का बेटा रतिकाम राजा रहा और फिर २ वर्ष असदानन्द राजा

							हुआ करकोटक वंश का यह अंतिम राजा था इस वंश में २००० वर्ष ५ महीना २० दिन राज्य रहा और जो यह वंश समाप्त हुआ तब हिजरी सन २०६ था।
९८	पृथिव्यापीड	३८३४।५।३	७४०।७	७३७।५	७५८।८	४।२	
९९	संग्रामापीड	३८३४।५।१०	७४४।८	७४१।११	७[illegible]२।१०	०।०।७	
१००	जज्ज	३८३७।५।१०	७५१।८	७४८।११	७[illegible]४।१०	३	जज्ज जयापीड का साला था जब जयापीड परदेश गया तब वह राज्य पर बैठ गया।
१०१	जयापीड	३८[illegible]८।५।१०	७५४।८	७५१।११	७७२।१०	३१	गौड़देश के जयन राजा की बेटी व्याही गुजरात के राजा भीमसेन को जीता विद्या का प्रचार किया (८४१) महाभाष्य की पुस्तक मगाई क्षीर और उद्भट पंडित तथा मनोरथ शङ्खदत्त चटक सन्धिमान और वामन इत्यादि इस की सभा के कवि थे द्वारका नगर बसाया और मूर्ति स्थापना की ताम्बे के दीनार अपने नाम के चलाए उस समय नैपाल का राजा अरमुडि था शंभुकवि ने भुवनाभ्युदय नामक काव्य सम्म और उत्पल की लड़ाई का बनाया इस का नामान्तर विजयादित्य था लोग राजों में टिकते थे।
१०२	ललितापीड	३८८०।५।१०	७८५।८	७८२।११	८०३।१०	१२	
१०३	संग्रामापीड(२)	३८८७।५।१०	७९७।८	७९४।११	८१५।१०	७	नामांतर पृथिव्यापीड।
१०४	बृहस्पति*	३८९[illegible]।५।१०	८०४।८	८०१।११	८२२।१०	१२	नामान्तर चिप्पटजय वेश्यापुत्र था इस के पांच भाइयों ने इस के नाम से राज चलाया।
१०५	अजितापीड	३९३५।५।१०	८१६।८	८१३।११	८३४।१०	३६	इन्ही लोगो ने राज्य पर बैठाया।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	डायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विलसन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन ।
१०६	अनगापीड	३९३८।५।१०	८५२ । ८	८४९।११	८७०।१०	३	
१०७	उत्पालपीड*	३९५९।५।१०	८५५ । ८	८५२।११	८७३।१०	३१	कर्कोटकवंश का अन्तिम राजा ।
१०८	आदित्यवर्मा	३९९९।५।१०	८५७ । ८	८५४।११	८७५।१०	२७	नामान्तर अवन्तिवर्मा बडा काल पडा बहुत से इतिहासवेत्ताओ का निश्चय है कि जालन्धर के यादव राजाओ से इस का वंश निकला है मुसल्मानो ने लिखा है कि यह सत्नवर्मा (शक्तिवर्मा) का पुत्र था और अपने रिश्तेदार शिववर्मा मन्त्री की सहायता से गद्दी पर बैठा इस का राज्य अट्ठाईस बरस तीन महीना तीन दिन ।
१०९	शकरवर्मा	४०१४।५।१०	८८६ । ८	८८३ । २	९०४ । १	१८	गुर्जर और भोज से लडा बडा उद्धत था नामान्तर श्रीवर्मा या शिववर्मा सु राज्यकाल १७ बरस ७ महीना १९ दिन ।
११०	गोपालवर्मा	४०१६।५।१०	९०४ । ८	९०१।१०	९२२ । ९	२	जवानी में मारा गया इस का मन्त्री प्रभाकरदेव बडा लोभी था इस ने अपने जामाता लकुज को शाहराज की पदवी देकर बडे पद पर पहुचाया किन्तु यही पीछे से राजा मन्त्री दोनो की मृत्यु का कारण हुआ।

१११ शकटवर्मा *	४०२९।१।१०	९०९।८	९०३।१०	९२४।९	२० दिन	वर्मवंश का अन्तिम राजा मुसल्मानों के मत के अनु- मार यह गोपालवर्मा का वास्तविक भाई नहीं था, मुहबोला भाई था।
		९०९।९	९०३।१०	९२४।९	२	पार्थ को राज्य पर बैठाया शकटवर्मा की स्त्री थी।
११२ सुगन्धारानी	४०१८।९	९०८।८	९०५।१०	९२६।९	१०	तातारी और एकांग जाति ने उपद्रव किया निर्जित-
११३ पार्थ	४०२८।९					वर्मा का पुत्र था।
		९२४।९	९२०।१०	९४१।९	८	पंगु था।
११४ निर्जितवर्मा	४०३९।९	९२५।९	९२१।१०	९४२।९	१४	जातियुद्ध हुआ राजचक्र में गड़बड़ हुआ।
११५ चक्रवर्मा	४०५०।९	९३६।९	९२७।१०	९५२।९	१	मुसल्मानों का शिववर्मा।
११६ सुरवर्मायाशूरवर्मा	४०५१।६	९३७।९	९३२।१०	९५३।९	५	फिर से गद्दी पर बैठा।
११७ पार्थवर्मा	४०५६।९	९३८।९	९३३।४	९५४।३	०	फिर से बैठा।
११८ चक्रवर्मा	४०५६।९	९३९।३	९३३।१०	९५४।८	०	राजतरंगिणी में इस का नाम नहीं है मुसल्मानों ने इस का नाम शंकर दाम लिखा है और लिखा है कि यह बड़ा ही क्रूर था।
११९ शंकरवर्धन	४०५६।९					
		९३९।७	९३५।४	९५६।३	०	तीसरी बेर गद्दी पर बैठा।
१२० चक्रवर्मा	४०५९।९	९३९।११	९३६।८	९५७।७	२	अवन्तिवर्मा नामान्तर।
१२१ उन्मत्तवर्मा	४०५८।९	९४१।११	९३८।१०	९५९।८	१	इस के पीछे वर्णाट ने ° दिन राज्य किया प्रभाकरदेव का पुत्र था बड़ा ही उत्तम राजा हुआ है अन्त में फकीर हो गया कहते हैं कि मम्मट इस समय में था मुसल्मान लेखकों ने लिखा है कि संग्रामदेव का लड़का अमान था इस को इस की मा ने मार-
१२२ शूरवर्मा (२) *	४०५९।९	९४२	९३९	९६०	९	
१२३ यशस्करदेव (तथा वर्णाट)	४०६८।९			—		

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	टायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विलसन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन।
							डाला उस का पुत्र एक बरस राज कर के दादी के डर से फकीर हो गया फिर तृभुवनगुप्त और बहमन (भीमगुप्त) गद्दी पर बैठे पर इन की दादी ने इन को मार डाला। फिर विग्रहदेव राजा हुआ। यह दिद्दा का भतीजा था। इस को भी नृसिंहराय नामक दिद्दा के साधक वजीर ने मार डाला।
१२५	संग्रामदेव *	४०६६	०	६४८	६६६	०।६।०	पर्वगुप्त ने मारडाला।
१२६	पर्वगुप्त	४०७०।४	६५१	६४८	६६६	१।४	सुरेश्वरी क्षेत्र में मारा गया।
१२७	क्षेमगुप्त	४०७४।१०	६५२	६५०	६७१	४।६	बौद्धों के बहुत से विहार तोड़ डाले। किसी के मत से आठ बरस।
१२८	अभिमन्युगुप्त	४०८८।८	६६१	६५८	६७६	१३।१०	
१२९	नन्दिगुप्त	४०८९।९	६७५	६७२	६९३	१।१	इस की दादी दिद्दारानी ने इस को मारडाला।
१३०	तृभुवनगुप्त	४०९४।९	६७६	६७३	६९४	४	तथा।
१३२	भीमगुप्त *	४०९९।९	६७८	६७५	६९६	५	ध्रुवाचार्य और पिचुल पण्डित इस की सभा में थे। कालिदास तथा श्रीहर्षादि कवि और एक विक्रम भी इसी के समय में थे। अर्थात् इस समय से हर्ष के

							गन्यारम्भ तक कनिया के उदय का काल था।
१३३	दिद्दा	४१२२।६	६८२	६८०	१००१	२३	पुर्नोक्त तीनों को मार कर गद्दी पर बैठी।
१३४	संग्रामदेव	४१४६।६	१००६।६	१००३।६	१०२४।७	२४	उस के काल में हम्मीर नामक तुर्क ने चढाई की और हार पाई।
१३५	हरिराज और अनन्तदेव	४१६६।२।७	०	१०२८	१०३२	५२।४।७	सोमदेव ने बृहत्कथा में अनन्त का पिता संग्रामदेव लिखा। हरि ने २२ दिनमात्र राज्य किया था, फिर अनन्त राजा हुआ अनन्त ने फौज के लोगों को एक बेर ८२ करोड कश्मीरी रुपया बांटा था।
१३६	कलश	४२०७।२।७	०	१०८०	१०५४	८।१	मुसल्मानों का गुलशन। बिल्हण ने अपने विक्रमाङ्क चरित्र में उस की बडी स्तुति लिखी है। उस की माता का नाम सुभटा और मामा का नाम लोहरमण्डल क्षितपति था। ये लोग वैष्णवउदार और पण्डित थे।
१३८	उत्कर्ष और हर्ष*	४२०७।३	०	१०८८	१०६२	०।०।२३	बिल्हण ने इन का एक भाई विजयमल्ल नामक और लिखा है। सोमदेव ने बृहत्कथा उसी के समय में बनाई और लेखकों के मत से उस ने १२ वर्ष राज्य किया था। चालुक्य वंश में एक विक्रम उस समय भी था। और लेखकों का मत है कि यह पिता पुत्र भाई सब एक काल में जुदा जुदा राज्य बांटकर करते थे मुसल्मानों ने लिखा है कि १२०० मशाले नित्य उस की सभा में बलती थीं और बडा ही न्यायी था।
१३९	उदयन विक्रम*	४२५४।७।२	०	११००	१०६२	१०।४।२	हर्ष से राज्य पाया नामान्तर उद्दाम विक्रम वा उच्चल मुसल्मानो का वाजिल।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गति कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिंहम के मत से समय	विलसन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन ।
१४०	शंखराज	४२१७।७।२	०	११००	१५२	०	उच्चल को मारकर राजपर बैठा नामान्तर रड्ड इस को उच्चल के भाई सुस्सल ने मार डाला मुसल्मानो ने इस का नाम दुवैन लिखा है
१४१	सल्ह	४२१७।८।२२	०	१११०	१००२।०	१।२२	इन राजाओ के समय में बडी लडाई हुई मुसल्मानो ने इस का नाम असस ओर इस के भाई का नाम एनिल लिखा है
१४२	सुस्सल्ह	४२३३।८।२२	०	११११	१०७२	१६	मल्लदेव का छोटा बेटा उच्चल का भाई
१४३	भिक्षाचर*	४२३४।२।२२	०	११२७	१०८८	०।६।०	
१४४	जयसिंहदेव	४२५६।२।२२	०	११२७	१०८८	२२	मुसल्मानो का जैनक मुसल्मानो ने इस के राज्य का अन्त ५३५ हिजरी में लिखा है राजतरंगिणी बनी शाके १०७० में यहा तक पूरा हिसाब करने से गतकलि ईसवी हिजरी सवत् शाका सब दश पद्रह बरस के हेर फेर में ठीक हो जाते हैं
१४५	परमान	४२६५।८।२२	०	११४१	१११०	६।६	
१४६	वन्तिदेव	४२७२।८।२२	०	११५६	१११६	७	
१४७	वोप्यदेव	४२८१।८।२२	०	११६६	११२६	६	

१४८	जस्सदेव	४३०६।८।२२	०	११७५	११३५	२५	बोप्यदेव का भाई था राती था किसी के मत से १८ जन्म।
१४९	जगदेव	४३२०।८।२२	०	११८३	११७३	१४	
१५०	राजदेव	४३४३।८।२२	०	१२०८	११६७	२३	
१५१	संग्रामदेव	४३५६।८।२२	०	१२३१	११९०	१६	
१५२	रामदेव	४३८०।६।२२	०	१२४७	१२०६	२२।१	
१५३	लक्ष्मणदेव *	४३८३।३।२४	०	१२६८	१२२७	३।४	
१५४	सिंहदेव*	४३९८।७।२४	०	१२८१	१२६१	१४।४	
१५५	सिंहदेव (२)*	४४१७।७।२४	०	१२९२	१२७०	१९	ट्रायर के मत से नाम उदयदेव भोटवंश का।
१५६	श्रीरिंछण*	४४२०।४।२४	०	१३१८	१२९४	३।२	
१५७	कोटारानी	४४३७।७।२४	०	१३३४	१२९४	१६।१	रिंछन सुलतान के काल में द्वितीय कालस्वरूप दुल्च नामक मुगल ने (जो न मुसलमान था न हिन्दू) कश्मीर में प्रवेश करके वहां के नगर मन्दिर अट्टालिका बगीचा सब निर्मूल कर दिया और मनुष्यों को घास की भांति काट कर देश उजाड़ कर दिया मानो आर्यों का राज्य नाश होता है यह समझ कर ईश्वर ने कश्मीर की प्राचीन शोभा ही शेष नहीं रक्खी फिर कोटारानी के साथ उस के पालित दास शाहमीर ने विश्वासघात और कृतघ्नता करके अपने को राजा बनाया और कोटा से विवाह करने को विचारी को तंग किया पहले कोटा भागी किन्तु पकड़ आने पर ब्याह करना स्वीकार किया ब्याह की मह-

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	टायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन ।
							फिर सजी गई । जब दुलहिन शृंगार करके निकाह पढ़ाने आई साथ में कटार छिपाकर लाई ठीक विवाह के समय कटार पेट मे मारकर मर गई अन्त समय कहा 'ले विश्वासघातक जिस शरीर को तू चाहता है यह तेरे सामने है !!! हिन्दुओं का राज्य इसी के साथ समाप्त हुआ कुछ कम चार हजार बरस आर्य लोगों ने कश्मीर का भोग किया ।
१५८	शाहमीर	४४४१।०।२४	०	१३३४।६।१०	०	३।५	नामान्तर शमसुद्दीन ।
१५९	जमशेद	४४४२।११।२४		१३३७।५		१।११	
१६०	अलाउद्दीन	४४५४।११।२४		१३३९।४		१२	
१६१	शहाबुद्दीन	४४७२।११।२४		१३५२।०।२३		१८	
१६२	कुतुबुद्दीन	४४८८।११।२४		१३७०।०।२३		१६	
१६३	सिकन्दर	४५१२।११।२४		१३८६।०।२३		२४	तैमूर का साला यह ऐसा कट्टर मुसल्मान था कि केवल कश्मीर के प्राचीन मन्दिर ही नहीं तोड़े, अपने सारे कश्मीर मण्डल में संस्कृत के जितने ग्रन्थ मिले सब को दीवार की नेव में डाल दिया !!! हा ! आज वे ग्रन्थ होते तो न जाने क्या क्या बात हमलोग जानते ।

१६४	अलीशाह	४५१६|११|२४	०	१४१०|०|२३	०	७	फ़क़ीर हो कर मक्के चला गया कोई कहता है कि जैनुलआब्दीन की क़ैद में मरा।
१६५	जैनलाबदीन	४५१६|११|२४		१४१७|०|२३		५०	नामान्तर बुदशाह था शाही या पंचायत की अदालत (Local Self-Government) जारी किया।
१६६	हैदरशाह	४५७१|११|२४		१४६७|०|२३		२	बड़ा विषयी था दीवार के नीचे दब कर मर गया।
१६७	हसन	४५८३|११|२४		१४६६|०|२३		१२	बड़ा विषयी था।
१६८	मुहम्मद	४५८५|११|१४		१४८१|०|२८		२	
१६९	फतहशाह	४५९६|११|१४		१४८३|७|२८		११	
१७०	मुहम्मद(२वेर)	४६२७|११|२४		१४९१|७|२८		३१	
१७१	फतह (२ वेर)	४६४६|११|२४		१५१३|५|७		२२	
१७२	मुहम्मद(३वेर)	४६५०|११|२४		१५१४|५|७		१	
१७३	फतह(३ वेर)	४६५३|११|२४		१५१७|५|७		३	
१७४	मुहम्मद(४वेर)	४६५६|११|२४		१५२०|५|७		३	
१७५	नाज़ुकशाह	४६६४		१५२७|५|७		७	
१७६	मुहम्मद(५वेर)	४६६७		१५३०|५|७		३	
१७७	नाज़ुकशाह(२वेर)	४६७४		१५३७|५|७		७	शमशुद्दीन, इस्माइलशाह, इब्राहीमशाह, हबीबशाह, अलीशाह और गाज़ीशाह इतने बादशाहों के नाम यहां भिन्न भिन्न तवारीखों में और मिलते हैं।
१७८	मिरज़ाहैदर	४६७८		१५४१|५|७		४	शीओं को बड़ी दुर्दशा से मारा। नाज़ुकशाह के नाम से राज्य करता रहा।
१७९	हुमायूं	४६७८		०		०	बीच में हुमायूं के समय से उस के मरने तक कामरा

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	ट्रायर के मत से समय	कनिङ्हम के मत से समय	विल्सन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन ।
			०	०	०		का काश्मीर में आना और उपद्रव करना और अनेक उपद्रवो में २५ या ३० वर्ष काल नष्ट हुआ ।
१८०	गाज़ीशाह	४६८६				११	मुसल्मानों के मत से नौ बरस । राजावली में ६ वर्ष गोर लोगों का राज्य स्फुट रहा ऐसा लिखा है ।
१८१	हुसैनशाह	४६९५				६	
१८२	अलीखांआदिलशाह	४७०४				९	
१८३	युसुफ़शाह*	४७०५				१	
१८४	सैयदमुवारकखां	४७०६				१	
१८५	लोहरशाह	४७०६				०।२	राजावली में लोहर के पुत्र याकूब का राज्य एक वर्ष लिखा है ।
१८६	युसुफशाह(२वेर)	४७०९				३	
१८७	याकूबशाह	४७१०				१	राजा भगवानदास से लड़ कर अपने नाम का सिक्का जारी किया ।
१८८	हुसैनशाह*	४७१०				०	
१८९	शमसीचक*	४७११				०	
१९०	अकबर	४७३०				१९	१५८३ में सयाकृत ने कश्मीर लिया । इस प्रसिद्ध और

							बुद्धिमान बादशाह की कहानी ममार में प्रसिद्ध है।
१९१	जहांगीर	४७५२				२२	सन १६०५ में तख्त पर बैठा १६२७ ई० में मरा।
१९२	शाहजहां	४७८३				३१	१६२८ में तख्त पर बैठा १६५८ मे औरंगजेब ने कैद किया १६६६ में मरा।
१९३	औरंगज़ेब	४८३१				४८	१७०७ में मरा।
१९४	मुअज्ज़मबहादुर शाह शाहआलम	४८३९				५	औरंगजेब के पीछे मुसल्मानों का राज्य शिथिल हो गया, इस मे कई बादशाह हुए। सब नाम यथाक्रम लिए जाय तो पहले आजिम, फिर मुअज्जम, जहान्दारशाह, फर्रुखसियर, रफीउलदरजात, रफीउलदौलत, नकोसीर, मुहम्मदशाह, इबराहीमशाह, अहमदशाह, आलमगीरसानी, शाहजहां, शाहआलम, अकबर, अकबरसानी और बहादुरशाह ये नाम होंगे।
१९५	जहांदारशाह	४८३७				१	
१९६	फर्रुखसियर	४८४३				६	
१९७	मुहम्मदशाह*	४८६३				२०	१७१९ में तख्त पर बैठा।
१९८	नादिरशाह*	४८७८				१५	सन् ११५२ हिजरी में नादिरशाह का खुतबा कश्मीर में पढाया गया। किन्तु नादिर के मरने पर कश्मीर फिर कुछ दिन गड़बड़ मे रहा। ११६१ हिजरी में अहमदशाह के वजीर असमतुद्दीन खां ने चढ़ाई की थी पर हार गया।
१९९	अहमदशाह*	४८७९				१	११६६ हिजरी मे पूरी तरह पर कश्मीर अहमद के अधिकार में आया।

राजसंख्या	नाम राजाओं के	गत कलि	टायर के मत से समय	कनिंहम के मत से समय	विलसन के मत से समय	राज्यकाल	विशेष वर्णन ।
२००	राजामुखजीवन*	४८८७				८	इसने बागी होकर आठ वर्ष चार महीने राज्य किया ।
२०१	अहमदशाह(२बेर)	४८९६				६	११७५ हिजरी में फिर अहमदशाह की सेना ने जीता । महानन्द पंडित और कैलाश पंडित नामक इस के दीवानो ने प्रबन्ध किया । ११७९ में बड़ी बड़ी लड़ाई हुई ।
२०२	तैमूरशाह*	४९२०				२४	११८४ में गद्दी पर बैठा । ३ महीने बडा भूकम्प हुआ । पहले वजीर ने बडा उपद्रव किया बहुत से लोग जल में डुबा दिए । तब पंडित डिलाराम नामक बडा बुद्धिमान यहा का सूबा हुआ । यह बडा बुद्धिमान था । अन्त में पहले वजीर के बेटे को फिर सूबेदारी मिली और इस ने भी बाप की भांति महा अनर्थ किया ।
२०३	ज़मांशाह	४९४६				२६	१२०८ हिजरी में गद्दी पर बैठा दीवान नन्दराम कश्मीर का सूबेदार हुआ
२०४	सुलतानमहमूद					०	इन दोनो के काल का विशेषवृत्त नही ज्ञात हुआ जमाशाह के २६ वर्ष में इन दोनो का भी समय समझना चाहिए

						०	[illegible]
२०५	शाहशुजा *						
२०६	महाराजरणजित सिंह	४८४६				०	महाराजा रणजीतसिंह ने कोहनूर हीरा इसी से लिया था
						२०	१२३४ हिजरी अर्थात १८१८ ईस्वी १८७५ संवत् में कश्मीर जीता कश्मीर जीतने की तारीख। دولت وہ کروہ کا ہے دولت دولت کروہ کی
२०७	महाराजखड्गसिंह	४८४७				१।३	१८९६ संवत में महाराजा रणजीतसिंह मरे और ये राज पर बैठे।
२०८	कुअरनौनिहालसिंह	४८४७				०।०।१	ये अपने पिता की क्रिया करके आए उसी समय पत्थर के नीचे दबकर मरगए।
२०९	महाराजशेरसिंह	४८५०				३	इन को सिंधावालों ने मारडाला।
२१०	महाराजदलीप सिंह *	४८५२				२	बालक अवस्था में नाममात्र को राजा थे। अब विलायत में पिनशिन पाते है।
२११	राजराजेश्वरी विक्टोरिया*	४८५२				०।०।७	सन् १८४८ ईस्वी संवत १९०२ मे सर्कार ने पंजाब जीता। सात दिन मात्र कश्मीर सर्कार के अधिकार में रहा।
२१२	महाराजगुलाबसिंह	४८६३				११	१८४६ ईस्वी के १६ मार्च को सर्कार से कश्मीर इन्हो ने पाया।
१३	महाराजरणबीर सिंह	४८७०					संवत् १९१४ में महाराज गुलाबसिंह के मरने पर ये राजा हुए अब कश्मीर का रकबा २५००० और आमदनी ५०००० समझी जाती है।

भारतेन्दु की नाटकावली

नये आकार में छप कर तैयार है।

इस बार यह नाटकावली बम्बई के सुन्दर टाइपों में बहुत चिकने कागज़ पर बड़ी शुद्धता और सफाई के साथ छापी गई है। रत्नावली (प्रस्तावना भर बाबू साहब ने अनुवाद किया था) भी पूरी करा दी गई है। इस से इस की पृष्ठ संख्या पहले से बहुत बढ़ गयी है। तौ भी सर्वसाधारण की सुविधा का ख्याल कर के भारतेन्दु जी के ग्रन्थो के अधिक प्रचार की अभिलाषा से १०४८ पृष्ठों की इस बड़ी और सुन्दर कपड़े की जिल्द वाली पुस्तक का मूल्य केवल ३) रक्खा गया है। हिन्दीप्रेमियों को शीघ्र ही इसे मंगा कर लाभउठाना चाहिए।

☞ इस नाटकावली की सब पुस्तकें अलग भी मिल सकती है।

मिलने का पता—मेनेजर खड्गविलास-प्रेस, बांकीपुर।

महाराष्ट्रदेश का इतिहास।

भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित.

क्षत्रियपत्रिका सम्पादक म० कु० बाबू रामदीन सिंह संकलित.

राय साहिब रामरणविजय सिंह द्वारा प्रकाशित.



पटना—'खड्गविलास' प्रेस, बांकीपुर.
बाबू चण्डीप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित
ह० स० ३२—१९१६

दूसरी बार।

महाराष्ट्रदेश का इतिहास।

भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित.

क्षत्रियपत्रिका सम्पादक म० कु० बाबू रामदीन सिंह संकलित

राय साहिब रामरणविजय सिंह द्वारा प्रकाशित.



पटना—'खड्गविलास' प्रेस, बांकीपुर.
बाबू चण्डीप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित
ह० स० ३२—१९१६

दूसरी बार।

महाराष्ट्रदेश का इतिहास।

महाराष्ट्र देश का शृङ्खलाबद्ध इतिहास नहीं मिलता। शालिवाहन राजा वहां के पुराने राजों में गिना जाता है। इस ने शाका चलाया है और यह भी प्रसिद्ध है कि इस ने किसी विक्रम को मारा था। इस की राजधानी प्रतिष्ठान थी, जिसे अब पैठण कहते हैं। देवगिरी का राज्य मुसलमानों के आगमन तक स्वाधीन था और रामदेव वहां का आखिरी स्वतन्त्र राजा हुआ। तेरहवें शतक में मुसलमानों ने देवगिरी (देवगढ़) विजय कर के उस का नाम दौलताबाद रक्खा। सन् १३५० के लगभग दिल्ली के बादशाह के जाफर खां नामक सूबेदार ने दक्षिण में एक मुसलमानी स्वतंत्र राज्य स्थापन किया और वह पहिले एक ब्राह्मण का सेवक था इस से अपना पद ब्राह्मण रक्खा था। इस वंश ने पहिले कलवर्ग में, फिर बिदर में, अन्दाज डेढ़ सौ बरस राज किया। सन् १५०० के लगभग इस राज की पांच शाखा हो गई थीं, जिन में गोलकुंडा बीजापुर और अहमदनगर वाले विशेष बली थे। इस वंश के राज मे सन् १३९६ में बारह बरस का दक्षिण में एक बड़ा भारी अकाल पड़ा था। हिन्दुओं में उस समय कोंकण में सिरका नाम का केवल एक स्वाधीन सरदार था, बाकी सब लोग इन के आधीन थे। ब्राह्मणीराज्य नाश होने के समय सन् १४९६ ई० में वास्कोडिगामा पुर्तगाल लोगों के साथ कालीकट में प्रथम प्रवेश किया और सन् १५१० में गोआ उन लोगों के आधीन हो गया। बीजापुर के बादशाह अदलशाही और गोलकुंड के कुतुब-

शाही और अहमदनगर के निज़ामशाही कहलाते थे। सन् १६२८ में अहमदनगर की बादशाहत दिल्ली के अधिकार में हो गई और गोलकुंडा और बीजापुर भी सन् १६८७ ई० में दिल्ली में मिल गए।

महाराष्ट्रों का राजस्थापन करनेवाला शिवा जी सन् १६२७ ई० में उत्पन्न हुआ।

उस के पूर्वजों का नाम भोंसला था, जो लोग दौलताबाद के पास वेरूल गांव में रहते थे।

शिवाजी का दादा मालोजी भोंसला अपने वंश में पहिला प्रसिद्ध मनुष्य हुआ और उस ने अपने बेटे शहाजी का विवाह अहमदनगर के बादशाह के दशहजारी सरदार जादोराव की बेटी से किया और पूना सूबा बादशाह से जागीर में पाया और शिवनेरी और चाकण दोनों किलों का सरदार भी नियत हुआ।

अहमदनगर की बादशाहत बिगड़ने पर शहाजी दिल्ली में शाहजहां के पास गया और वहां से अपनी जागीर कायम रखने की सनद ले आया, पर थोड़े ही दिन पीछे किसी वैमनस्य से दिल्ली का अधिकार छोड़ कर वह बीजापुर के बादशाह से जा मिला और अपने राज्य में करनाटक के बहुत से गांव मिला लिये।

शिवाजी शिवनेरी किले में जनमा और तब उस का बाप करनाटक में रहता था, इस से उस ने छोटेपन में पूना प्रान्त में दादोजी कोणदेव से शिक्षा पाई थी। छोटेहीपन से इस में वीरता के चिन्ह और लड़ाई के उत्साह प्रगट थे।

उन्नीस बरस की अवस्था में तोरन का किला जीत लिया और दादोजी कोणदेव के मरने पर पूना के जिले का सब काम अपने हाथ में ले लिया।

बीजापुर के पुरन्दर और दूसरे दूसरे कई किले अपने अधिकार में कर के उस पर सन्तोष न कर के दिल्ली के बादशाही देशों में भी लूट कर इस ने अपना बल, सेना और धन बढ़ाया।

मालव नाम की सूर जाति के लोग इस की सेना में बहुत थे और सन् १६४८ ई० में बीजापुर के बादशाह से इस के कल्यान की सूबेदारी लिया, परन्तु जब बादशाह ने उस का बल बढ़ते देखा तो सन् १६५६ में अपने अफ़ज़ुल खां नामक सरदार को उस से लड़ने को भेजा, पर शिवाजी ने धोखा दे कर इस सरदार को मार डाला।

सन् १६६४ ई० में शिवाजी का बाप मर गया और तब से उस ने अपना पद राजा रख कर अपने नाम की एक टकसाल जारी किया।

यह पहले राजगढ़ और फिर रायगढ़ के किले में रहता था। उस ने अपने बहुत से किले बनाये थे, जिन में राजगढ़ और प्रतापगढ़ ये दो मुख्य थे।

सन् १६५६ ई० में साम राजपन्त को शिवाजी ने पेशवा नियत किया।

बीजापुर का बादशाह तो शिवाजी को दमन करने में समर्थ न हुआ, परन्तु औरङ्गज़ेब ने राजा जसवन्त सिंह को बहुत सी फ़ौज दे कर शिवा जी को जीतने को भेजा, पर शिवाजी ने बादशाह के आधीन रहना स्वीकार कर के राजा से मेल कर लिया। और सन् १६६६ में आप भी दिल्ली गया, पर वहां उस का यथेष्ट आदर न हुआ, इस से उस ने बादशाह को कटु वचन कहा, जिस से थोड़े दिन तक कैद में रह कर फिर अपने बेटे समेत दक्खिन भाग गया। कुछ दिन पीछे औरङ्गज़ेब ने उस को राजा का ख़िताब

दिया और उसी अधिकार से उस ने दक्खिन में सन् १६७० में चौथाई और सर देश मुरकी नाम के दो कर स्थापन किये। सन् १६६५ में इस ने पानी के राह से मालाबार पै चढ़ाई की और दो बेर सूरत लूटा। जब यह दूसरे बेर सूरत लूटने जाता था तब १५००० फ़ौज इस के साथ थी और राह में हुगली नामक शहर लूटने से बहुत सा धन इस के हाथ आया और फिर तो वह यहां तक बलवान हो गया था कि जो अपने भाई बेङ्को जी से बाप की जागीर बंटवाने और बीजापुर का इलाका लूटने को करनाटक की तरफ गया था तो इस के साथ ४०००० पैदल और ३०००० सवार थे।

सामराज पन्त से पेशवाई ले कर मेरो पन्त पिङ्गला को उस स्थान पर नियत किया और प्रताप राव गूजर इस का मुख्य सेनापति था, जिस के मरने पर हम्वीर राव मोहिता उसी काम पै हुआ।

सन् १६७६ में रामगढ़ में शिवाजी का विधिपूर्वक राज्याभिषेक हुआ और तब इस ने आठ अपने मुख्य प्रधान रक्खे थे। पेशवा-पन्त, अमात्य, पन्तसचिव, मन्त्री, सेनापति, सुमन्त, न्यायाधीश और पण्डितराव; यही आठ पद उस ने नियुक्त किये थे और अपने जीते हुए देशों का काम अबाजी सोन देव के अधिकार में दिया।

जिस समय सब कोंकन और पूना का इलाका और करनाटक और दूसरे देशों में भी कुछ पृथ्वी इस के आधीन थी उस समय सन् १६८० ई० में सम्भाजी और राजाराम नाम के दो पुत्र छोड़ कर ५३ वर्ष की अवस्था में यह परलोक सिधारा।

शिवाजी के मरने के पीछे २३ वर्ष की अवस्था में सम्भाजी ^ पर बैठा, पर यह ऐसा क्रूर और दुर्व्यसनी था कि इस से

सब लोग दुखी थे। इस ने अपने छोटे भाई राजाराम की मा को मार डाला और सब पुराने कारबारियों को निकाल कर कलूसा नामक कनौजिया ब्राह्मण को सब राजकाज सौंप दिया। इस की दुष्टता से इस के पिता का सब प्रबन्ध बिगड़ गया और सब सर्दार इस के अशुभचिन्तक हो गये और यहां तक कि सन् १६८६ ई० मे जब यह सङ्गमेश्वर की ओर शिकार खेलने गया था तो इस को मुग़लो ने पकड़ कर औरङ्गजेब की आज्ञा से कलूसा ब्राह्मण समेत तुलापुर मे मार डाला।

इस का पुत्र शिवा जी जिस को साहू जी भी कहते हैं औरङ्गजेब की क़ैद में था, इस से इस का सौतेला भाई राजाराम गद्दी पर बैठा। इस ने सितारा में अपनी राजधानी स्थापन किया और पन्त प्रतिनिधि नाम का एक नया पद नियुक्त किया और बड़े भाई के बिगाड़े हुए सब प्रबन्धों को नए सिरे से सवांरा। यह १७०० ई० में मरा और फिर ८ वर्ष तक इस की स्त्री ताराबाई ने अपने पुत्र शिवाजी को गद्दी पर बिठा कर उस के नाम से राज्य का काम चलाया।

इन लोगों के समय में औरङ्गज़ेब ने महाराष्ट्रों को बहुत बिगाड़ना चाहा, परन्तु कुछ फल न हुआ, यहां तक कि वह सन् १७०७ में आप ही मर गया। जब सम्माजी का पुत्र शिवाजी औरङ्गज़ेब के पास रहता था तब औरङ्गज़ेब इस के दादा को लुटेरा शिवाजी और उस को साहु शिवाजी कहता था, इसी से दूसरे शिवाजी का नाम साहूराजा हुआ। सन् १७०८ ई० में जब साहू औरङ्गज़ेब की कैद से छुट कर आया तब सर्दारों ने उसे सितारे की गद्दी पर बिठाया, और तब उस की चाची ताराबाई ने अपने पुत्र शिवाजी को ले कर कोलापुर का एक अलग स्वतन्त्र राज स्थापन किया।

जब साहू राजा १७ वर्ष तक कैद में था तब औरङ्गज़ेब की बेटी उस पर और उस की मा पर बड़ी मेहरबान थी। इसी से औरङ्गज़ेब ने अपने यहां के दो बड़े बड़े मरहठे सरदारों की बेटी ब्याह दी थी और उसे बहुत सी जागीर भी दी थी। जब साहू राजा दिल्ली से सितारे आता था तब एक स्त्री ने अपना दूध पीनेवाला बालक उस के पैर पर रख दिया था, जिस के वंश में अब अकलकोट के राजा हैं। साहू राजा का स्वभाव विषयी था, इसी से उस ने अपना सब काम धनाजी राव यादव को सौंप रक्खा था और उस ने आवाजी पुरन्दरे और बालाजी विश्वनाथ नाम के दो मनुष्य अपने नीचे रक्खे थे। धना जी के मरने पर सन् १७१४ ई० में बाला जी विश्वनाथ पेशवा हुआ और महाराष्ट के इतिहास में इस का नाम सब से प्रसिद्ध है।

साहू राजा ४२ वर्ष राज कर के ६६ वर्ष की अवस्था में सन् १७४९ ई० में मर गया और इस के पीछे सितारे का राज्य पेशवा के अधिकार में रहा। यह मरते समय लिख गया था कि ताराबाई के पोते राजाराम को गोद ले कर हमारी गद्दी पर बिठा कर राज काज पेशवा करें।

राजाराम सन् १७४९ ई०,में नाम मात्र का राजा हो कर सन् १७७० तक राज्य करके अपुत्र मरा। फिर शिवाजी के भांजे के वंश का एक पुरुष दत्तक लेकर साहू महाराज के नाम से गद्दी पर बिठाया, जो सन् १८०८ ई० में मरा और उस के पीछे उस का पुत्र प्रताप सिंह गद्दी पर बैठा। इस को सन् १८१८ में सर्कार अङ्गरेज बहादुर ने पेशवा के राज्य से बहुत मुल्क दिया, पर सन् १८४९ में इस पर दोषारोप होने से अङ्गरेजों ने इसे निकाल कर इस के छोटे भाई शाहाजी को गद्दी पर बिठाया,

जो सन् १८४८ ई० में निर्वंश मर कर इस वंश का अन्तिम राजा हुआ और उस का सारा राज्य सर्कारी राज्य में मिल गया।

इति १ ला भाग।

दूसरा भाग।

बालाजी विश्वनाथ ने पेशवा होकर सैयदों की सहायता से दिल्ली के परतंत्र बादशाह से अपने स्वामी का गया हुआ सब राज्य फेर लिया। और छः वर्ष पेशवाई करके सन् १७२० में सास वड़ गांव में मर गया। उसी साल में हैदराबाद के नव्वाबों का मूल पुरुष निजामुलमुल्क नर्मदा के इस पार आकर बादशाही सेना से लड़ाई कर रहा था और अपना अधिकार बहुत बढ़ा लिया था।

साहू राजा ने बालाजी विश्वनाथ के बड़े पुत्र बाजीराव को पेशवाई का अधिकार दिया। यह मनुष्य शूर और युद्ध में बड़ा कुशल था और उस का छोटा भाई चिमनाजी आप्पा भी बड़ा बुद्धिमान् और वीर था और अपने बड़े भाई की राज्य और लड़ाई के कामों में बड़ी सहायता करता था। निजामुलमुल्क से इस ने तीन लड़ाई बड़ी भारी २ जीती और गुजरात मालवा इत्यादि अनेक देशों पर अपना इख्तियार कर लिया। और अपनी सेना ले कर सारे हिन्दुस्थान को लूटता और जीतता फिरता था। सेंधिया, हुलकर और गाइकवाड़ ने इसी के समय उत्कर्ष पाया, पर सेंधिया के पुरुषा पहले से बादशाही फौज के सरदारों में थे। वरंच कहते हैं कि औरङ्गजेब ने इन्हीं पुरुषों में से किसी की बेटी साहुराजा को ब्याही थी। नागपुर वालों ने भी इसी के समय राज पाया। चिमनाजी आपा ने पोर्तुगीज़ लोगों से साष्टीबेट का इलाका बड़ी बहादुरी से छीन लिया था। बाजीराव सन् १७४० में मरा और उस का बड़ा पुत्र बालाजी

उर्फ नाना साहब पेशवा हुआ। इस का एक छोटा भाई रघुनाथ राव नाम का था। इस ने पूना को अपनी राजधानी बनाया। इस के छोटे भाई के अधिकार में राज्य का सब काम था। यद्यपि नाना साहब राज्य के कामों में बड़ा चतुर था पर कपटी और बड़ा आलसी मनुष्य था, पर उस के दोनों भाई अपने काम में ऐसे सावधान थे कि उस की बात में कुछ फरक न पड़ने पाया।

सदाशिव राव भाऊ ने रामचन्द्र बाबा शेणिवी को साथ लेकर महाराष्ट्री राज्य का फिर से नया और पक्का प्रबन्ध किया। महाराष्टों का बल उस समय पूरा जमा हुआ था और हिन्दुस्तान में ये लोग चारों ओर चढ़ाइयां करते फिरते थे। दिल्ली का बादशाह तो मानों इन की कठपुतली था। नाना साहब से नागपुर के सरदार राघोजी भोंसला से कुछ वैमनस्य हो गया था, पर साहू राजा ने बीच में पड़ कर विहार, अयोध्या और बंगाल का मरहटी अधिकार भोंसला से छोड़वा कर आपस का द्वेष मिटा दिया।

सन् १७४८ ई० में एक सौ चार वर्ष का होकर निजामुलमुल्क मर गया। उस के पीछे बारह वर्ष तक उस का राज्य अव्यवस्थित पड़ा रहा; फिर उस के पुत्रों में से निज़ामअली नाम के एक मनुष्य ने वह राज्य पाया। रघुनाथ राव ने अटक से कटक तक हिन्दुस्तान को दो बेर जीता, पर वहां का रुपया वसूल करना हुलकर और सेंधिया के अधिकार में करके आप फिर आया।

इसी अवसर में अहमदशाह अफगानों की बड़ी भारी फौज लेकर हिन्दुस्तान में मराटों को जीतने के लिये आया। तब सदाशिव राव भाऊ और पेशवा का बड़ा लड़का विश्वास राव ये दोनों सेंधिया, हुलकर, गाइकवाड़ और और और सर्दारों के साथ डेढ़ लाख पैदल, पचपन हजार सवार और दो सौ तोप की फ़ौज से

दिल्ली की ओर चले और सन् १७६० ई० में जब मरहट्टों ने दिल्ली जीती थी तब से इन की बहुत सी फ़ौज दिल्ली में भी थी सो वह फ़ौज भी इन लोगों के साथ मिल गई, पर दो महीने पीछे इन के फ़ौज में अनाज का ऐसा टोटा पड़ा कि मरहट्टों से सिवा लड़ने के और कुछ बन न पड़ा। यह बड़ी लड़ाई पानीपत के मैदान में सन् १७६१ ई० के जनवरी महीने की सातवीं तारीख़ को हुई। भाऊ निज़ामअली के जीतने से ऐसा गर्वित हो रहा था कि इस लड़ाई को वह बड़ी असावधानी से लड़ा। जब उस ने सुना कि विश्वास राव बहुत ज़ख़मी हो गया है तब हाथी पर से उतर पड़ा और फिर उस का पता न लगा। जनको जी सेंधिया और इब्राहीम खां गारदी भी मारे गये और दूसरे भी अनेक बड़े बड़े सरदार मारे गये। और मरहट्टों की ऐसी भारी हार हुई कि सारे दक्खिन मे सियापा पड़ गया। और नाना साहेब को तो इस हार से ऐसी ग्लानि और दुःख हुआ कि थोड़े ही दिन पीछे परलोक सिधारे। इस मनुष्य के समय में जैसी पहिले महाराष्ट्रों की वृद्धि हुई थी वैसाही एक साथ क्षय भी हो गया। सन् १७६१ में बालाजी बाजीराव उर्फ़ नाना साहेब के मरने पीछे उन का पुत्र पहिला माधवराव गद्दी पर बैठा। यह स्वभाव का न्यायी सूर धीर और दयालु था। मराठी राज से बेगार की चाल इस ने एकदम उठा दी थी और ग़रीबों के पालने से इस का चित्त बहुत ही बहलता था। नाना फड़नवीस नामक प्रसिद्ध मनुष्य इस का मुख्य वज़ीर था और मराठी राज्य की आमदनी उस के समय सात करोड़ रुपया थी। इसी के काल में हैदरअली ने मैसूर के राज की नेव दी थी। इस ने राघोबा दादा को कैद कर के पूने भेज दिया और आप न्याय और धर्म से ११ बरस राज कर के २८ बरस की अवस्था में क्षय रोग से मरा। इस के मरने के पीछे इस के भाई नारायण राव को गद्दी पर बैठाया, पर आठ ही

महीने पीछे रघुनाथ राव ने उस को एक सूबेदार से मरवा डाला और आप गद्दी पर बैठा। इस से सब कारबारी इतने नाराज़ थे कि जब नारायण राव की स्त्री गंगाबाई (जो विधवा होने के समय गर्भवती थी) पुत्र जनी तो सवाई माधवराय के नाम से उस को राजा बना के उस के नाम की मुनादी फिरवा दी और नाना फड़नवीस सब काम काज करने लगा। राघोबा ने अंगरेज़ों से इस शर्त पर सहायता चाही कि साष्टीबेट बसई गांव और गुजरात के कुछ इलाके अंगरेज सरकार को दिये जायं, पर पोर्तुगीज़ और बादशाह के कलह से अंगरेज़ों ने आप ही वह बेट ले लिया और फिर कलकत्ते के गवर्नर के लिखे अनुसार नाना फड़नवीस ने साष्टीबेट अंगरेज़ों को लिख दिया और कोंपर गांव में राघोबा को कुछ महीना कर के रख दिया। राघोबा दादा को बाजीराव चिमना आप और अमृतराव से तीन पुत्र थे, परन्तु अमृतराव दत्तक थे। राघोबा का कई मनोरथ पूरा नहीं हुआ और सन् १७८४ में मर गया। नाना फड़नवीस से महाजी सेंधिया से कुछ लाग थी, इस से महाजी उस के तावे कभी नहीं हुआ और सदा कुछ उत्पात करता रहा। नाना की फ़ौज के हरिपन्त फड़के और परशुराम पन्त पट्टवर्द्धन ये दो बड़े सरदार थे। सन् १७६५ में निज़ाम अली से महाराष्ट्र लोगों से एक बड़ी लड़ाई हुई, जिस में मरहटे जीते और अङ्गरेजों से भी तीन बरस तक कुछ कलह रही, पर फिर मेल हो गया। सन् १७६६ में नाना फड़नवीस के वंश में रहने के दुःख से माधव राव गिर के मर गया और राघोबा का बड़ा बेटा दूसरा बाजीराव पेशवा हुआ, पर इस से भी नाना फड़नवीस से खटपट चली ही गई। बाजीराव ने दौलतराव सेंधिया को उभारा और उस ने छल बल कर के नाना फड़नवीस को नगर के किले में कैद कर लिया, पर बाजीराव को उस के कैद से छुड़ा कर फिर से दीवान बनाना

पड़ा, क्योंकि ऐसा चतुर मनुष्य उस काल मे उस को दूसरा मिलना कठिन था। नाना फड़नवीस सन् १८०० में मर गया और मराठो राज्य की लक्ष्मी और बल अपने साथ लेता गया। राज पर बैठने के पहिले बाजीराव ने दौलतराव से करार किया था कि हम पेशवा होंगे तो तुम को दो करोड़ रुपया देंगे, पर जब इतना रुपया आप न दे सका तो दौलतराव के साथ पूना लूटा। सन् १८०२ में जब दौलतराव कहीं दौरा करने गया था तब यशवन्त राव हुलकर ने पूना पर चढ़ाई किया और पेशवा और सेंधिया दोनों की सेना को हरा कर पूने को खूब लूटा। बाजीराव इस समय भाग कर अङ्गरेजो की शरण गया और उन से बसई में यह बात ठहराई कि सर्कारी ८००० फौज पूने में रहै और बाजीराव को शत्रुओं से बचावै और उस का सब खर्च बाजीराव दे। अङ्गरेजी फौज़ पहुंच जाने के पूर्व ही हुलकर पूना छोड़ के चला गया और बाजीराव फिर से पेशवा हुआ। बाजीराव ऊपर से तो अङ्गरेज़ो से मेल रखता था पर भीतर से बड़ाही बैर रखता था और दूसरे राजों को बहकाने सिवा आप भी छिपी २ फौज भरती करता जाता था। सन् १८१५ में गङ्गाधर शास्त्री पट्टवर्द्धन जो गाइकवाड़ का वकील हो कर सर्कार अङ्गरेज की सलाह से बाजीराव के दरबार में गया था, उस को बाजीराव ने त्र्यम्बक डेङ्गला नाम के एक अपने मुंहलगे हुये सरदार से मरवा डाला, जो सर्कार के और बाजीराव के बैर का मुख्य कारण हुआ और सर्कार ने उस त्र्यम्बकल को सन् १८१८ में पकड़ कर चुनार के किले में बंद किया। सर्कारी फ़ौज इस समय गवर्नर जेनरल की आज्ञा से पिंडारों को शमन करती फिरती थी कि इसी बीच में बाजीराव ने भी किसी बहाने से सर्कार से लड़ाई करनी आरम्भ करदी और बापू गोखला को सेनापति नियत किया, पर अन्त में हार कर सन् १८१८ ई० ३ जून को

मालकम साहेब के शरण में जाकर आठ लाख रुपया साल लेकर विट्ठूर में रहना अङ्गीकार किया। और इसी बीच में अष्ट गांव पर छापा मार के सितारा के राजा को पकड़ लिया और इसी लड़ाई में बापू मारा गया। जब बाजीराव भागा फिरता था उन्हीं दिनों में भीमा के किनारे कारे गांव में मरहटों की फ़ौज से और सर्कारी फ़ौज से एक बड़ा घोर युद्ध हुआ, जिस में सर्कारी ३०० सिपाही और बीस अङ्गरेज़ मारे गये, पर इन लोगों ने बहादुरी से उन को आगे न बढ़ने दिया। सर्कार की ओर से यहां जयसूचक एक कीर्त्तिस्तम्भ बना है। सर्कार ने महाराष्ट्र देश का राज अपने हाथ में लेकर एलिफिस्तन साहेब को वहां का प्रबन्ध सौंपा और पूर्वोक्त साहब ने महाराष्ट्रों की परम्परा के मान और रीति का पालन कर के किसी की जागीर किसी के साथ बन्दोबस्त कर के वहां की प्रजा को ऐसा सन्तुष्ट किया कि वे लोग अब तक उन को स्मरण करते हैं।

भारतेन्दु की नाटकावली

नये आकार में छप कर तैयार है।

इस वार यह नाटकावली वम्बई के सुन्दर टाइपों में बहुत चिकने कागज़ पर बड़ी शुद्धता और सफाई के साथ छापी गई है। रत्नावली (प्रस्तावना भर बाबू साहब ने अनुवाद किया था) भी पूरी करा दी गई है। इस से इस की पृष्ठसंख्या पहले से बहुत बढ़ गयी है। तौ भी सर्वसाधारण की सुविधा का ख्याल कर के भारतेन्दु जी के ग्रन्थो के अधिक प्रचार की अभिलाषा से १०४८ पृष्ठों की इस बड़ी और सुन्दर कपड़े की जिल्दवाली पुस्तक का मूल्य केवल ३) रक्खा गया है। हिन्दीप्रेमियों को शीघ्र ही इसे मगा कर लाभ उठाना चाहिए।

☞ इस नाटकावली की सब पुस्तकें अलग भी मिल सकती हैं।

मिलने का पता—मैनेजर 'खड्गविलास' प्रेस, बांकीपुर।

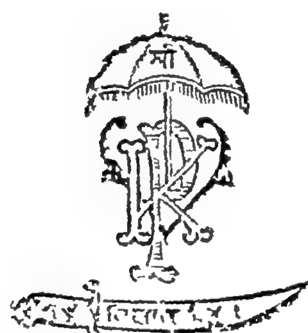
बूंदी का राजवंश ।

भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित.

—o—

क्षत्रियपत्रिका सम्पादक म० कु० बाबू रामदीन सिंह संकलित.

राय साहिब रामरणविजय सिंह द्वारा प्रकाशित ।



पटना—'खड्गविलास' प्रेस—बांकीपुर.

बाबू रामप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित.

ई० स० ३३—१९१८.

दूसरी बार ।

बूंदी का राजवंश।

बूंदी का राजवंश चौहान क्षत्रियों से है। इस वंश का मूल पुरुष अन्हल चौहान प्रसिद्ध है। भट्ट लोगों के मत से चौहान का शुद्ध नाम चतुर्भुज है। अन्हल अनल शब्द का अपभ्रंश है, क्योंकि अनल अग्नि को कहते हैं और आबू के पहाड़ पर जो चार क्षत्री वंश उत्पन्न किए गए वे अग्नि से उत्पन्न किए गए थे। जेम्स-प्रिंसिप साहब को संदेह है कि पार्थिअन* (पार्थिव ?) Parthian Dynesty से यह वंश निकला है। उन्हीं के मत के अनुसार ईसा-मसीह से ७०० वर्ष पूर्व्व अनल ने गढ़मंडला में राज स्थापन किया। अनल के पीछे सुवाच और फिर मल्लन हुआ (जिस ने मल्लनी वंश चलाया ?) फिर गलन सूर हुआ। यहां तक कि ईस्वी सन् १४५ में (विराट का सं० २०२) अजयपाल ने अजमेर बसा कर राज किया। इस के पूर्व्व ८०० बरस और पीछे ५०० बरस ठीक ठीक नामावली नहीं मिलती। विल्फर्ड साहब के मत के अनुसार सन् ५०० ई० के अन्त तक सामन्तदेव, महादेव, अजयसिंह [अजयपाल ?] वीरसिंह, बिन्दुसूर और बैरी बिहंड इन राजाओं के नाम क्रम से मिलते हैं। यदि अजय-पाल से मिला कर यह क्रम माना जाय तो वैरिविहंड तक एक प्रकार का क्रम मिलैगा, किन्तु दोलाराय [दुर्ल्लभराय ?] जिस से सन् ६८४ ईस्वी में मुसलमानों ने अजमेर छीना उस के पूर्व्व दो सौ बरस के लगभग कौन राजे हुए इस का पता नहीं। दोला-राय के पीछे माणिक्य राय (सन् ६९५ ई०) हुआ, जिस ने सांभर का शहर बसाया और सांभरी गोत स्थापन किया। फिर महा-

---

* और पठान शब्द भी इसी से निकला हुआ मालूम होता है, क्योंकि जो हिंदुस्तान के पास के क्षत्रियधर्म्मा मुसलमान हैं वेही पठान कहलाते हैं।

सिंह, चन्द्रगुप्त [१] प्रतापसिंह, मोहनसिंह, खेतराय, नागहस्त, लोहधार, वीरसिंह [२] विबुधसिंह और चन्द्रराय ये नाम क्रम से मिलते हैं। Bombay Government selection Vol III P 193 टाड साहब लिखते हैं कि भट्ट लोगों ने दूसरे ग्यारह नाम यहां पर लिखे हैं। परन्तु प्रिंसिप साहब के क्रम से दोलाराय के पीछे हरिहरराय [टाड साहब के मत से हर्षराय] सन् ७७४ ई० में हुआ और इस ने सुबुकतगी को लड़ाई मे हराया, फिर वली अगराय (वेलनदेव Tod) हुआ जो सुलतान महमूद के अजमेर के युद्ध में मारा गया। उस के पीछे प्रथमराय और उस को अंगराज (अमिल्लदेव) हुआ। अमिल्लदेव के बाद विशालदेव राजा हुआ। (विल्फर्ड १०१६ ई०, लिपि १०११ से १०६५ ई० तक टाड साहब के मत में चन्द के राय के अनुसार सम्वत् ६२१ मे और फीरोज की एक लिपि से १२२० सम्वत्) फिर सिरंगदेव [सारंगदेव वा श्रीरंगदेव] अन्हदेव [जिस ने अजमेर में अन्ह सागर खुदवाया], हिंसपाल [हंसपाल] जयसिंह तारीख फिरिश्ता का जयपाल [जो प्रिंसिप साहब के मत से सन् ६७७ ईस्वी में हुआ,] आनन्ददेव [आनन्दपाल वा अजयदेव सन् १००० ईस्वी] सोमेश्वर [जिस ने दिल्ली के राजा अनङ्गपाल की बेटी से व्याह किया] पृथीराय [लाहोर का जिसे शाहाबुद्दीन ने कतल किया ११७६] रायनसी (रायनृसिंह जो ११६२ मे दिल्ली के युद्ध में मारा गया) विजयराज और उस के पीछे लकुनसी (लक्ष्मणसिंह) हुआ जिस की सत्ताईसवीं पीढ़ी में वर्त्तमान समय के नीमरान के राजा हैं।

अब टाड साहब का मत है कि हाड़ालोगों का वंश माणिक्यदेव की शाखा में वा विशाल देव के पुत्र अनुराज से यह वंश चला है। प्रिन्सिप साहब अनुराज ही से हाड़ा लोगों की वंशावली लिखते हैं। किन्तु बूंदी के भट्ट संगृहीत ग्रन्थों में और तरह

से इस वंश की उत्पत्ति लिखी है। ये लिखते हैं* "वशिष्ठ जी ने आबू पहाड़ पर यज्ञ किया। उस से चार उत्तम पुरुष उत्पन्न हुए, उन में से चतुर्भुज जी (चौहान वा चहुमान) से १५६ पीढ़ी में भोगचन्द्र राजा हुआ। उस का पुत्र भानुराज राक्षसो (यवनो) की लड़ाई में मारा गया। तब आशापुरा देवी ने कृपा कर के भानुराज की अस्थि एकत्र कर के जिला दिया और तब से भानुराज का नाम अस्थिपाल हुआ। अस्थिपाल के पीछे क्रम से पृथ्वीपाल, सेनपाल, शत्रुशल्य, दामोदर, नृसिंह, हरिवंश, हरियश, सदाशिव, रामदास, रामचन्द्र, भागचन्द्र, रूपचन्द्र, मण्डन

---

* अग्नि कुल की उत्पत्ति पुराणों मे इस तरह लिखी है। जब परशुराम जी के मारे क्षत्रिय कुल का नाश हो गया तब उन्हो ने पृथ्वी की रक्षा के हेतु चिन्ता कर के आबू पर्वत पर ऋषियों से इस विषय का परामर्श कर के सब के साथ क्षीरसागर पर जा कर भगवान की स्तुति किया। आज्ञा हुई कि चार कुल उत्पन्न करो। फिर ऋषियों के साथ ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र और इन्द्र आबू पहाड़ पर आये, और वहा यज्ञ किया। इन्द्र ने पहले अपनी शक्ति से घास का पुतला बना कर कुंड में डाला, जिस मे मार मार कहता हुआ भाला लिए हुए एक पुरुष निकला, जिस को ऋषियों ने प्रमार नाम देकर धार और उज्जैन का देश दिया। उसी भांति ब्रह्मा ने वेद और यज्ञ लिए हुए एक पुरुष उत्पन्न किया, एक चुलुक (चुल्लू) जल से जी उठने से उस का नाम चालुक्य हुआ और अन्हलपुर इस की राजधानी हुई। रुद्र ने तीसरा पुरुष गंगाजल मे उत्पन्न किया, यह धनुष लिए काला और कुरूप था, इस से इस का नाम परिहार रख कर पर्वतो और बनो की रक्षा इस को दी। अन्त में विष्णु ने चार भुजा का एक मनुष्य उत्पन्न चतुर्भुज नामक किया। इस की राजधानी मकावती (गढ मंडल) हुई। इन्ही चार पुरुषो के क्रम से पवार, सोलखी, परिहार और चौहान वंश हुए।

जी, (जिस ने दक्षिण में मांदलगढ़ बसाया) आतमाराम, आनन्द-राम, राव हमीर, राव सुमेर, राव सरदार, राव जोधराज, राव रत्न जी, राव कोल्हण जी, राव आशुपाल, राव विजयपाल और राव बङ्गदेव जी हुए।" राव बङ्गदेव से भट्टों की और प्रिन्सिप साहब की वंशावली एक है। प्रिन्सिप साहब के मत से अनुराज ने आसी वा हांसी का राज किया। उस के पीछे इष्टपाल वा इष्ठपाल (शायद अस्थिपाल यही है) ने १०२४ ई० में असीर-गढ़ में राज किया। उस का चण्डकरण वा कर्णचन्द्र, उस का लोकपाल और उस का हम्मीर हुआ। इस हम्मीर का पृथ्वीराज रायसे में भी जिक्र है और पृथ्वीराज ही के युद्ध में यह ११९३ ई० में मारा गया। हम्मीर के पीछे क्रम से काल कालकर्ण, महा-मग्द (महामत्त) राव बच (राववत्स) और रावचन्द्र हुए। रावचन्द्र का परिवार शहाबुद्दीन ने सन् १२९८ में मारा। केवल एक पुत्र रायसी बच गया, जो चित्तौर में पाला गया और जिस ने भैंसरोर में राज स्थापन किया। रायन्सी के कोलन राय हुए, जिस ने मध्यदेश में पमारों का राज्य किया और उन के बङ्गदेव हुए, जो हुन के राजा हुए और मैनाल लोगों पर प्रभुत्व किया, राव बङ्गदेव से वंश परम्परा में और भेद नहीं है, केवल समर सिंह के पुत्र हर राज (हाराराज जिस से हाड़ा वंश चला) प्रिन्सिप साहब वंशावली में विशेष मानते हैं। बूंदीवालों के मत से बङ्गदेव ने (सन् १३४१ ई० में) बंबावदा में राज किया और इन के पुत्र राव देव सिंह ने बूंदी में राज स्थापन किया और अपने पुत्र देव सिंह (संवत् १२९८) को बूंदी राज देकर चले गए। यही राव देव लोधी लोगों के दरबार में बुलाए गए, जो प्रिन्सिप साहब के मत से अपने पुत्र हरराज को राज दे कर चले गए। बूंदी परम्परा में हरराज का नाम नहीं है, इस से सम्भव होता है कि हरराज और समरसिंह दोनों राव देव के पुत्र हैं।

ने कुछ दिन राज किया, फिर समरसिंह ने भीलों को

जीता था। समरसिंह के पीछे क्रम से ये राजा हुए। राव रनपालसिंह (नापा जी) संवत् १३३२ राव हम्मीर (हामाजी वा हामूजी) सं० १३४३ राव बरसिंह वा बीरसिंह सं० १३६३ राव बैरीशल्य वा बैरीसाल वा बीरूंजी सं० १४५० (P. 4100 \ D G) राव सुभांडदेव वा बांदा जी सं० १४६० इन के समय में बड़ा काल पड़ा (सं० १४८७) और समरकन्दी अमरकन्दी नामक दो भाइयों ने इन को राज से उतार कर बारह बरस राज्य किया, राव नारायण दास ने पिता का राज्य अपने चचा लोगों से लिया। राव सूरजमल ने संवत् १५८४ (1533 A D) भट्ट लोगों के मत से महाराना रत्न सिंह जी का बध किया, किन्तु जेम्स प्रिन्सिप साहब के मत से महाराना ने इन्हें मारा। इस से सम्भव होता है कि इन दोनों राजाओं में ऐसा घोर बैर हुआ कि दोनों परस्पर मृत्यु के कारण हुए। राव राजा सुरतानजी सं० १५८८ [1537 A D] यह पागल थे, इस से पंचों ने इन को राज से अलग कर के नारायणदास के पुत्र अर्जुनराव को राजा किया। इन के बहुत थोड़े ही समय राज के पीछे चित्तौर की लड़ाई में मारे जाने से राजावली में इन की गिनती नहीं हुई। राव राजा सुरजन जी सं० १६११ [1560 A D.] इन्हों ने महाराजाधिराज अकबर से काशी और चुनार पाया और काशी में राजमन्दिर बसाया। राव राजा भोज सं० १६४२ इन के समय से कोटा और बूंदी का राज अलग हुआ। राव रतन जी सं० १६६४ (1 1613 A D) इन के पुत्र कुंअर माधवसिंह ने जहांगीर से कोटा पाया और कुंअर गोपीनाथ युवराज हुए। कुंअर गोपीनाथ जी [सं० १६७१] युवराजत्व के समय ही में शान्त हुए। इस से उन के पुत्र रावराजा शत्रुशाल राव रत्न जी की गोद बैठे (सं० १६८८) और माधव सिंह कोटा के राजा यह राजा शत्रुशाल [प्रसिद्ध छत्रसाल] बड़ा वीर हुआ जिस ने कुलबर्गा जीता और उज्जैन की प्रसिद्ध लड़ाई में १२ गा

के साथ मारा गया, * राव राजा भावसिंह सं० १७१५ (1660 A. D.) इन्हों ने औरङ्गजेब से औरङ्गाबाद की सूबेदारी पाया। राव राजा अनरुद्धसिंह सं० १७३८ (P 1687 A D) ये भावसिंह के छोटे भाई के पौत्र थे। रावराजा बुधसिंह † सं० १७५२ (P 1710 A. D) इन्हों ने बहादुरशाह की सहायना की थी, किन्तु जयपुरवालों ने इन्हें राज्यच्युत कर दिया। महा-

---

* दारासाहि औरगज़ेरे हैं दोऊ दिल्ली दल एकै गए भाजि एकै रहे रूधि चाल मे।
भयो घोर युद्ध उद्ध माच्यो अति दुन्द जहा कैसहु प्रकार प्रान बचत न काल मे॥
हाथी तें उतरि हाड़ा जूझ्यो लोह लगर दै एती लाज का मे जेती लाज छत्रसाल मे।
तन तरवारन में मन परमेश्वर मे प्रन स्वामि कारज मैं माथो हर माल मे॥

† शिवसिंहसरोज में लिखा है बुद्धराव (सवत् १७५५)—

ये महाराज बूदी के राजा औ जयसिंह सवाई आमेरवाले के बहनोई थे। बहादुरशाह बादशाह ने इन का बड़ा मान किया। इस बादशाह के यहा दूसरे की ऐसी इज्जत न थी। जब सय्यद बारहा ने बादशाह को बेदखल कर आप ही बादशाही नक्कारा बजाते हुए गली कूचों में निकलने लगा तब तो इस शूरवीर से कब रहा जाता था। शय्यदों का मुह तरवारों की धार से फेर दिया औ तमाम उमर बादशाह के इहा रहा। कविता इन की बहुत ही अपूर्व है औ कवि लोगों का बड़ा मान दान देने-वाला था।

कीनो तुम मान मैं कियो हैं कब मान अब कीजै सनमान अपमान कीनो कब मैं।
प्यारी हसि बोलु और बोलैं कैसे बुद्धराज हसि हसि बोलु हसि बोलि हौं जू अब मैं॥
दृग करि सोंहें कोरि सौंहैं करि जानत है अब करि सौंहैं अनसौंहैं कीने कब मैं।
लीजै भरि अक जहा आये भरि अक हो न काहू भरि अक उर अक देखे अब मैं॥१॥
ऐसी ना करी है काहू आजु लौं अनैसी जैसी सैयद करी है ये कलक काहि चढैंगे।
दूजे को नगाडे बाजे दिल्ली में दिलीश आगे हम सुनि भागैं तौ कबिंद कहा पढैंगे॥
कहे राव बुद्ध हमैं करने हैं युद्ध स्वामि धर्म्म में प्रसुद्ध जेह जान जस मढैंगे।
कहवाय कहा हारि करि कदै तातें भारि शमशेर आजु रारि करि कढैंगे॥२॥

रामायण का समय।

भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित.

क्षत्रियपत्रिका सम्पादक म० कु० बाबू रामदीन सिंह संकलित.

राय साहिब रामरणविजय सिंह द्वारा प्रकाशित।



पटना—'खड्गविलास' प्रेस—बांकीपुर.

बाबू चण्डीप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित

ई० स० ३७—१९१६

दूसरी बार।

रामायण का समय ।

(रामायण बनने के समय की कौन कौन बातें विचार करने के योग्य हैं)

पुराने समय की बातों को जब सोचिये और विचार कीजिये तो उन का ठीक ठीक पता एक ही बेर नहीं लगता जितने नये नये ग्रन्थ देखते जाइये उतनी ही नई नई बातें प्रकट होती जाती हैं। इस विद्या के विषय में बुद्धिमानों के आज कल दो मत हैं। एक तो वह जो बिना अच्छी तरह सोचे विचारे, पुराने अंग्रेज़ी विद्वानों की चाल पर चलते हैं और उसी के अनुसार लिखते पढ़ते भी हैं और दूसरे वे लोग जिन को किसी बात का हठ नहीं है जो बातें नई जाहिर होती गई उन को मानते गये। दूसरा मत बहुत दुरुस्त और ठीक तो है, पर पहिला मत माननेवालों को ऐंटिक्वेरियन (Antiquarian) बनने का बड़ा सुभीता रहता है। दो चार ऐसी बंधी बातें हैं जिन्हें कहते ही से वे ऐंटिक्वेरियन हो जाते हैं। जो मूर्त्तियां मिलें वह जैनों की हैं, हिन्दू लोग तातार से या और कहीं पच्छिम से आये होंगे। आगे यहां मूर्त्तिपूजा नहीं होती था इत्यादि, कई बातें बहुत मामूली हैं, जिन के कहने ही से आदमी ऐंटिक्वेरियन हो सकता है। जो कुछ हो, इस बात को तकरार हम इस समय हुज्जत नहीं करते, हम सिर्फ़ यहां वाल्मीकीय रामायण में से ऐसी थोड़ी सी बातें चुन कर दिखाते हैं जो बहुत से विद्वानों की जानकारी में आज तक नहीं आई हैं।

रामायण बनने का समय बहुत पुराना है, यह सब मानते हैं। इस से उस में जो बातें मिलती हैं वे उस जमाने में हिन्दुस्तान में

वरती जाती थी, यह निश्चय हुआ। इस मे यहां वेही बातें दिखाई जाती हैं जो वास्तव में पुरानी हैं पर अब तक नई मानी जाती हैं और विदेशी लोग जिन को अपनी कह कर अभिमान करते हैं।

रामायण कैसा सुन्दर ग्रन्थ है और इस की कविता कैसी सहज और मीठी है। इस से जिन लोगों ने इस की सैर की है वे अच्छी तरह जानते हैं, कहने की आवश्यकता नहीं। और इस में धर्म्मनीति कैसी अच्छी चाल पर कही है, यह भी सब पर प्रकट ही है। इस से हम यहां पर और बातों को छोड़ कर केवल वहीं बातें दिखाना चाहते हैं जो प्राचीन विद्या (ऐंटीक्वेटी) से सम्बन्ध रखती हैं।

वालकाण्ड—अयोध्या के वर्णन में किले की छत पर यंत्र रखना लिखा है। यंत्र का अर्थ कल है * इस से यह स्पष्ट होता है कि उस जमाने में किले की बचावट के हेतु किसी तरह की कल अवश्य काम में लाई जाती थी, चाहे वे तोप हों या और किसी तरह की चीज़ (या यंत्र से दूरवीन मतलब हो)।

शतघ्नी † यह उस चीज़ को कहते हैं जिस से सैकड़ों आदमी

---

* यन्त्र उस को कहते हैं जिस से कुछ चलाया जाय। श्रीगीता जी में लिखा है "ईश्वरः सर्व्वभतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति। भ्रामयन सर्व्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया"। ईश्वर प्राणियों के हृदय मे रहता है और वह भूत मात्र को जो (मानो) कल पर बैठे हैं माया से घुमाता है। तो इस से स्पष्ट प्रकट होता है कि यन्त्र से इस श्लोक में किसी ऐसी चीज से मतलब है जो चरखे की तरह घूमती जाय। कल शब्द भी हिन्दी है "कल गतौ" से बना हो वा "कल प्रेरणे" से निकला होगा (कवि कल्पद्रुम कोष देखो) दोनों अर्थ मे उस चीज को कहेंगे जो आप चले वा दूसरे को चलावे।

† शतघ्नी को भी यन्त्र करके लिखा है। शतघ्नी कौन चीज है इस का निश्चय

एक साथ मारे जा सकें। कोषों मे इस शब्द के अर्थ यह दिए हैं कि शतघ्नी उस प्रकार की कल का नाम है जिस से पत्थर और लोहे के टुकड़े छूट कर बहुत से आदमियों के प्राण लेते हैं और इसी का दूसरा नाम वृश्चिकाली है। (सर राजा राधाकान्त देव का शब्दकल्पद्रुम देखो।) इस से मालूम होता है कि उस समय मे तोप या ठीक उसी प्रकार का कोई दूसरा शस्त्र अवश्य था।

नहीं होता। तीन चीज में इस का सन्देह हो सकता है, एक तोप, दूसरे मतवाले— तीसरे जम्हीरे में। इस के वर्णन में जो २ लक्षण लिखे हैं उन से तोप का तो खूब सन्देह होता है, पर यह मुझे अब तक कहीं नहीं मिला कि ये शतघ्नियां आग के बल से चलाई जाती थीं, इसी से उन के तोप होने में कुछ संदेह हो सकता है। मतवाले में शतघ्नी के लक्षण कुछ नहीं मिलते क्योंकि मतवाले तो पहाड़ों वा किलों पर से काठ की तरह लुढ़काये जाते हैं और इस के लक्षणों से मालूम होता है कि शतघ्नी वह वस्तु है जिस में पत्थर छूटें। जहमीरा वा जम्हीरा एक चीज है, उस से पत्थर छुट छुट कर दुश्मन की जान लेते हैं (हिन्दुस्तान की तवारीख में मुहम्मद क़ासिम की लड़ाई देखो) इस में शतघ्नी के लक्षण बहुत मिलते हैं। पर रामायण में लिखा है कि लोहे की शतघ्नी होती थीं और फिर सुन्दरकाण्ड में टूटे हुए वृक्षों की उपमा शतघ्नी से दी है। इस से फिर संदेह होता है कि हो न हो यह तोप ही हो। रामायण के सिवा और पुराणों में भी किले पर शतघ्नी लगाना लिखा है। (मत्स्य-पुराण में राजधर्म वर्णन में) दुर्गाय त्रा प्रकर्त्तव्याः नाना प्रहरणान्विताः। सहस्र-घातिनो राजन्तस्तुरक्षाविधायते ॥ १ ॥ दुर्गञ्च परिखोपेत वप्राट्टालसंयुत। शतघ्नी यन्त्रमुख्यैश्च शतशश्च समावृत ॥ २ ॥ इस में उपर के श्लोक में शतघ्नी के बदले सहस्र-घाती शब्द है (यहां शत और सहस्र शब्दों से मुराद अनगिनत से है)। तोप की भांति सुरंग उड़ाना भी यहां के लोग अति प्राचीन काल से जानते हैं। आदि पर्व अ। १४८ और देखो। सुरंग शब्द ही भारत में लिखा है।

अयोध्या के वर्णन में उस की गलियों में जैन फ़कीरों का फिरना लिखा है, इस से प्रकट है कि रामायण के बनने से पहिले जैनियों का मत था।

जिस समय राजा दशरथ ने अश्वमेध यज्ञ किया उस समय का वर्णन है कि रानी कौशिल्या ने अपने हाथ से घोड़े को तलवार से काटा। इस बात से प्रगट होता है कि आगे की स्त्रियों को इतनी शिक्षा दी जाती थी कि वह शस्त्रविद्या में भी अति निपुणता रखती थी।

अभी एशियाटिक सोसाइटी के जनरल मे पण्डित प्राणनाथ एम्० ए० ने इस का खण्डन किया है कि वराहमिहर के काल मे श्रीकृष्ण की पूजा ईश्वर समझ के नहीं करते थे और वराहमिहर के श्लोकों ही से श्रीकृष्ण की पूजा और देवतापन का सबूत भी दिया है। और भी बहुत से विद्वान इस बात में झगड़ा करते हैं। और योरोप के विद्वानों में बहुतों का यह मत है कि श्री कृष्ण की पूजा चले थोड़ेही दिन हुए, पर ४० सर्ग के दूसरे श्लोक में नारायण के वास्ते दूसरा शब्द वासुदेव लिखा है और फिर पच्चीसवें श्लोक में कपिलदेव जी को वासुदेव का अवतार लिखा है, इस से स्पष्ट प्रगट है कि उस काल से श्रीकृष्ण का लोक नारायण कर के जानते और मानते हैं। *

अयोध्याकाण्ड— २० वें सर्ग के २६ श्लोक मे रानी कैकेयी ने राम जी को वन जाते समय आज्ञा दिया कि मुनियों की तरह तुम भी मांस न खाना, केवल कंद मूल पर अपनी गुज-

---

* भारत के भी आदि पर्व का २४७ से २५३ श्लोक तक और २४२७ से २४३२ श्लोक तक देखो। श्रीकृष्ण को परब्रह्म लिखा है। और भी भारत में सभी स्थानों में है उदाहरण के हेतु एक पर्व मात्र लिखा।

गन करना। इस से प्रगट है कि उस समय मुनि लोग मांस नहीं खाते थे *।

३० वें सर्ग के २१ श्लोक में गोलोक का वर्णन है। प्रायः नये विद्वानों का मत है कि गोलोक इत्यादि पुराणों के बनने के समय के पीछे निकाले गए हैं और इसी से सब पुराणों में इन का वर्णन नहीं मिलता। किन्तु इस वर्णन से यह बात बहुत स्पष्ट हो गई कि गोलोक का होना हिन्दू लोग उस काल से मानते हैं जब कि रामायण बनी। †

३२ वें सर्ग में तैत्तिरीय शाखा और कठकालाप शाखा का नाम है। इस से प्रगट होता है कि वेद उस काल तक बहुत से हिस्सों में बट चुके थे।

रामजी के बन जाने की राह इस तरह बयान की गई है। अयोध्या से चल कर तमसा अर्थात् टौंस नदी के पार उतरे। फिर वेदश्रुति, ‡ गोमती, स्यन्दिका § और गंगा पार होते हुए प्रयाग आये। और वहां से चित्रकूट (जोकि रामायण के अनुसार १० कोस है) ॥ गए। यह बिल्कुल सफर उन्हों ने पांच दिन

---

* यहां मांस से बिना यज्ञ के मांस से मुराद होगी।

† वेद में ब्रह्म के धाम के वर्णन में लिखा है कि वहां अनेक सींगों की गऊ हैं।

‡ वरना नाम की एक छोटी नदी गोमती में मिलती है, शायद उसी का नाम वेदश्रुति लिखा है।

§ जिस को अब सई कहते हैं।

॥ यह बड़े सन्देह की बात है अब जो चित्रकूट माना जाता है वह प्रयाग से तीन चार मंजिल है पर यहां दस कोस लिखा है। इस दस कोस से यह आशय है कि यहां से उस पर्वत की श्रेणी (लाइन) आरम्भ होती है, पर जहां डेरा किया था वह स्थान दूर होगा।

में किया। और सुमन्त उन को पहुंचा कर शृङ्गवेरपुर अर्थात् सिंगरामऊ से दो दिन में अयोध्या पहुंचा। पहली बात से प्रकट हुआ कि पुराने जमाने के कोस बड़े होते थे। और दूसरी बात से विदित हुआ कि सड़क उस समय में भी बनाई जाती थी, नहीं तो इतनी दूर की यात्रा का पांच दिन में ते करना कठिन था।

भरत जी जब अपने नाना के पास से, जो कि केकैय अर्थात् गक्कर देश का राजा था, आने लगे तो उस ने कई बहुत बड़े और बलवान कुत्ते दिये और तेज़ दौड़नेवाले गदहों (खच्चर) के रथ पर उन को विदा किया। वे सिन्धु और पंजाब होते हुए इक्षुमती को पार कर अयोध्या आये। इस से दो बात प्रकट हुई; एक तो यह कि उस काल में कैकय देश में गदहे और कुत्ते अच्छे होते थे, दूसरे यह कि वहां की हिंदुस्तान से राह सिन्धु देकर थी।

७७ वें सर्ग में मूर्त्तियों का वर्णन है, इस से दयानन्द सरस्वती इत्यादि का यह कहना कि रामायण में कहीं मूर्त्तिपूजन का नाम नहीं है अप्रमाण होता है।

इसी स्थान में निषाद का लड़ाई की नौकाओं के तैयार करने का वर्णन है, जिस से यह बात प्रमाणित होती है कि उस काल के लोग स्थल की भांति पानी पर भी लड़ सकते थे।

दक्षिण के लोगों की सिर में फूल गूंधने की बड़ी प्रशंसा लिखी है। इस से यह बात झलकती है कि उत्तर के देश में फूल गूंधने का विशेष रिवाज नहीं था।

१०८ सर्ग में जाबालि मुनि ने चार्वाक का मत वर्णन किया है। और फिर १०९ सर्ग में बुध का नाम और उन के मत का वर्णन है। इस से प्रगट है कि ये दोनों वेद के विरुद्ध मत उस समय में भी हिन्दुस्तान में फैले हुये थे। अभी हम ऊपर बाल-

काण्ड में जैनियों के उस काल मे रहने का जिक्र कर चुके है तो अब ये सब बातें रामायण के बनने के समय, बुध के जन्म का और बौद्ध और जैन मत अलग होने के समय की विवेचना में कितनी हलचल डालेंगी प्रगट है।

आरण्यकाण्ड—चौथे सर्ग के २२ श्लोक में लिखा है कि असुरों की यह पुरानी चाल है कि वे अपने मुर्दे गाड़ते है। इस से प्रगट है कि वेद के विरुद्ध मत माननेवालों मे यह रीति सदा से चली आती है।

किष्किन्धाकाण्ड—१३ वे सर्ग के १६ श्लोक में कलम अर्थात् जौंधरी के खेत का बयान है, और कोप मे "लेखनी कलमित्यपि" लिखा है इस वाक्य से प्रगट होता है कि कलम लिखने की चीज़ का नाम संस्कृत में भी है और वह और चीज़ों के साथ जौंधरी का भी होता था, और इसी से यह भी साफ हो जाता है कि सिवा ताड़ के पत्र के कागज़ पर भी आगे के लोग लिखते थे, क्योंकि ताड़ पर मिटने के डर से सिर्फ़ लोहे की कलम से लिखा जा सकता है जैसा कि अब तक बंगाले और ओड़ीसे में रिवाज है।*

६२ वें सर्ग के ३ श्लोक में पुराणों का वर्णन है, जिस से नई तबियत और नई तलाश (लाइट) के लोगों का यह कहना कि पुराण सब बहुत नए हैं कहां तक ठीक है आप लोगों पर आप से आप विदित होगा।

इस कांड में और बातों की भांति यह भी ध्यान करने के योग्य है कि रामजी ने बालि से मनु के २ श्लोक कहे हैं और यह भी कहा है कि मनु भी इस को प्रमाण मानते हैं। इस से प्रगट

* इस विषय के लिये "सज्जनविलास" देखो।

हुआ कि मनु की संहिता उस काल में भी बड़ी प्रामाणिक और प्रतिष्ठित समझी जाती थी। *

सुन्दरकाण्ड—तीसरे सर्ग के १८ श्लोक में किले के शस्त्रालय (सिलहगाह) के वर्णन मे लिखा है कि जिस तरह से स्त्री गहनों से सजी रहती है वैसे ही बुर्ज यंत्रों से सजे हुए थे। इस से स्पष्ट प्रगट होता है कि तोप या और किसी प्रकार का ऐसा हथियार जिस से कि दूर से गोले की भांति कोई वस्तु छूट कर जान ले उस समय में अवश्य था।

चौथे सर्ग के १८ श्लोक में फिर किले पर शतघ्नी रखने का वर्णन है।

५ वें सर्ग के पहिले श्लोक में लिखा है कि चन्द्रमा सूर्य्य के प्रकाश से चमकता है। इस से स्पष्ट प्रकट हो सकता है कि उस समय मे ज्योतिषविद्या की बड़ी उन्नति थी।

६ वे सर्ग के १२ श्लोक में लिखा है कि पुष्पक-विमान के चारो ओर सोने के हुंडार बने थे और खाने पीने की सब वस्तु उस में रक्खी रहा करती थीं और वह बहुत से लोगों को बिठला कर एक स्थान से दूसरी स्थान पर ले जाता था। इस से सोचा जाता है कि यह विमान निस्सन्देह कोई बेलून की भांति की वस्तु होगी। और हुंड़ार उस में पहचान के हेतु लगाये गये होंगे।

६ वें सर्ग के २५ और २६ श्लोको में वर्णन है कि लंका मे जो गलीचे बिछे थे उन में घर, नदी, जंगल, इत्यादि बुने हुये थे। अब यदि विलायत का कोई गलीचा आता है, जिस में मकान

---

* भारत में भी कई स्थान पर मनु का नाम है। उदाहरण के हेतु आदि पर्व का १७२२ श्लोक देखो।

उद्यान इत्यादि बने रहते हैं जो देख कर हम लोग कैसा आश्चर्य्य करते हैं। कैसे सोच की बात है कि हमलोग नहीं जानते कि हमारे हिन्दुस्तान में भी इस प्रकार की चीज़ें पहिले बनती थीं। यहीं पर जब हनुमान जी ने रावण के मन्दिरों को जा कर देखा है तो उस में भोजन के अनेक प्रकार के धातुओं के मणियों के और कांच के पात्रों को भी देखा है। चिमचा कांटा आदि भी उस समय होता था और बड़ी शोभा से खाना चुना जाता था। और भी अङ्गरेजी चाल के पात्र और गहने भुवनेश्वर के मन्दिर में भी बहुत प्राचीन काल के बने हैं। बाबू राजेन्द्र लाल मित्र का उड़ीसा प्रथम भाग देखो।

इसी स्थान में अशोक बन मे जानकी जी के शिंशिपा के दरख़्त के नीचे रहने का वर्णन है।

हिन्दुस्तान के बहुत से पण्डितों का निश्चय है कि शिंशिपा शीशम वृक्ष को कहते हैं। किन्तु हमारी बुद्धि में शिंशिपा सीताफल अर्थात् शरीफ़े के वृक्ष को कहते हैं। इस के दो बड़े भारी सबूत हैं। प्रथम तो यह कि यदि जानकी जी से शरीफ़े से कुछ संबंध नहीं तो सारा हिन्दुस्तान उस को सीताफल क्यों कहता है। दूसरे यह कि महाभारत के आदि पर्व में राजा जन्मेजय की सर्पयज्ञ की कथा में एक श्लोक है जिस का अर्थ यह है कि आस्तिक की दोहाई सुन कर जो सांप न हट जायगा उस का सिर शिंश वृक्ष के फल की तरह सौ टुकड़े हो जायगा * शिंश और शिंशपा दोनों एकही वृक्ष के नाम हैं यह कोषों से और नामों के सम्बन्ध से स्पष्ट है। शीशम के वृक्ष में ऐसा कोई फल

* आस्तीक वचन श्रुत्वा य. सर्पोन निवर्त्तते।
शतधाभिद्यतेमूर्धा शिंशवृक्ष फलंयथा ॥

नहीं होता जिस में कि बहुत से टुकड़े हों। और शरीफे का फल ठीक ऐसाही होता है जैसा कि श्लोक मे लिखा है। इस से लोग निश्चय करें कि सीता जी शरीफे ही के वृत्त के नीचे थीं।

१८ वें सर्ग के १२ श्लोक में गुलाब पाश का वर्णन है। इसलिए हमारे भाई लोग यह न समझें कि यह निधि हम को मुसलमानों मे मिली है, यह हिन्दुस्तान ही की पुरानी वस्तु है।

३० वें सर्ग के १८ श्लोक में लिखा है कि ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य प्रायः संस्कृत बोलते थे, किन्तु जब छोटे लोगों से बात करते थे तो ये संस्कृत से नीचे भाषा में बोलते थे। इस से बहुत लोगों का यह कहना कि संस्कृत कभी बोली ही नहीं जाती थी खंडित होता है। हां, इस में कोई सन्देह नहीं सब से इस को काम में नहीं लाते थे।

६४ वें सर्ग के २४ श्लोक में लिखा है कि हनुमान जी राक्षसों के सिर इस तरह से तोड़ २ कर फेकते थे जैसे यंत्र से ढेले छूटें इस से ऊपर जहां हम यंत्रों का वर्णन कर आए हैं उस से लोग समझें कि वह निस्सन्देह कोई ऐसी वस्तु थी जिस से गोली या कंकड़ पत्थर छोड़े जाते थे।

लंकाकाण्ड—(३ सर्ग १२ श्लोक) (३ सर्ग १३ श्लोक) (३ सर्ग १६ श्लोक) (३ सर्ग १७ श्लोक) (४ सर्ग २३ श्लोक) (२१ सर्ग श्लोक अन्त का) (३६ सर्ग २६ श्लोक) (६० सर्ग ५४ श्लोक) (६१ सर्ग ३२ श्लोक) (७६ सर्ग ६८ श्लोक) (८६ सर्ग २२ श्लोक) इन श्लोकों में यंत्र और शतघ्नी का वर्णन है।

यंत्र और शतघ्नी ये रामायण में किस २ प्रकार से वर्णन की गई हैं यह ऊपर के श्लोकों के देखने से प्रगट होगा। इन दोनों के विषय में हमें कुछ विशेष कहना नहीं है, क्योंकि हमारे

पाठकों पर आप से आप यह प्रगट होगा कि यंत्र और शतघ्नी का कोई रूप रामायण से हम ठीक नहीं कर सकते।

पत्थर ढोने की कल किसी चाल की वाल्मीकि जी के समय में अवश्य रही होगी। और किवाड़ भी किसी चाल की कल से बंद किये जाते होंगे।

यंत्र बहुत ऊंचे २ भी होते थे, जैसा कि कुम्भकर्ण की उपमा में कहा गया है। शतघ्नी फ़ौलाद की बनती थी और वृक्षों की तरह लम्बी होती थी और केवल किले ही पर नहीं रहती थी, परन्तु लड़ाई में भी लाई जाती थी। इन बातों से हमारा यह कहना तो ठीक ज्ञान होता है कि आगे कल * अवश्य थी पर शतघ्नी किस चाल का हथियार था यह हम नहीं कह सकते। †

११५ सर्ग ४२ श्लोक में राजा भोज के बेटे के नाम से जो सिंह और रीछ की कहानी प्रसिद्ध है वह ठीक २ यहां कही गई है।

(१५ सर्ग २७ श्लोक) राम जी से ब्रह्मा ने कहा है कि सीता लक्ष्मी है और आप कृष्ण हैं। (इस से हमारा वासुदेव शब्द-

---

* महाभारत की टीका में युद्ध में नीलकण्ठ चतुर्धर ने यंत्र का अर्थ अग्नि यंत्र लिखा है, पर राजा राधाकान्त ने अग्नियंत्र और अश्मयंत्र इन दोनों शब्दों का अर्थ तोप किया है ("सामान बन्दूक इति भाषा") और नालयंत्र का अर्थ तोप लिखा है। महाभारत में एक जगह और लिखा है "यंत्रस्य गुण दोषौ न विचार्यौ मया ...। अहं यंत्रा भवान् यंत्री न मे दोषो न मे गुणः।

वाला पहिला प्रमाण और भी दृढ़ होता है)। *

(१२९ सर्ग ३ श्लोक) पुराणों का वर्णन है।

(१३० सर्ग) जब राजा लोग राज पर बैठते थे तब नज़र खिलअत इत्यादि आगे भी ली और दी जाती थी। इसी सर्ग में लिखा है कि रामायण वाल्मीकि जी ने जो पहिले से बनाया है वह जो सुनता है सो सब पापों से छूट जाता है। इस में (पुराकृतं) पद से जैसे मनु का शास्त्र भृगु ने एकत्र किया वैसे ही वाल्मीकि जी की कविता भी किसी ने एकत्र किया है यह संदेह होता है। इसी सर्ग के १२० श्लोक में लिखा है कि जो रामायण लिखते हैं उन को भी पुण्य होता है। इस से उस काल में पोथियां लिखी जाती थीं, यह भी स्पष्ट है।

उत्तरकाण्ड—उत्तरकाण्ड में बहुत सी बातें अपूर्व और कहने सुनने के योग्य हैं, पर अंगरेज़ विद्वानों ने उस के बनने का काल रामायण से पीछे माना है, इस से हमारा उन बातों के लिखने का उत्साह जाता रहा तब भी जो बातें विशेष दृष्टि देने के योग्य हैं यहां लिखी जाती हैं।

(४४ सर्ग श्लोक ४२।४३) रावण शिव जी की पूजा करता था † इस से दयानन्द स्वामी का यह कहना कि रामायण में मूर्ति-पूजा नहीं है खंडित होता है। हां, यदि वे भी यह कह दें कि यह कांड क्षेपक है या नया बना है तो इस का उत्तर नहीं।

(५३ सर्ग श्लोक २०, २१, २३) श्रीकृष्णावतार का वर्णन

---

* पाणिनि के सूत्रों में भी वासुदेव आदि शब्द मिले हैं। इस विषय का विस्तार हमारे प्रबन्ध वैष्णवता और भारतवर्ष में देखो।

† यत्रयत्रस्मयातीह रावणोराक्षसेश्वर. जाम्बूनदमय लिङ्ग तत्रस्मनीयते ॥ ४२ ॥
वालुका वेदि मध्येतुतल्लिङ्गस्थाप्य रावणः अर्चयामासगन्धैश्चपुष्पैश्चमृतगन्धिभिः ॥४३॥

है * विदित हो कि तीसरे सर्ग के १२ श्लोक में भी एक जगह विष्णु का नाम गोविन्द कहा है "गोविन्द कर निस्मृता" और गोविन्द श्रीकृष्ण का नाम तब पड़ा है जब गोवर्द्धन उठाया है, यह विष्णुपुराणादिक से सिद्ध है, यथा "गोविन्द इतिचाभ्यधात्" तो इस से भी हमारी बालकांड वाली युक्ति सिद्ध हुई।

(६४ सर्ग श्लोक ८) छन्दोविदः पुराणज्ञान् इस वाक्य में पुराणों का वर्णन किया है। पुराणैश्च महात्मभिः इत्यादि वाक्यों में और भी कई स्थानों पर पुराणों का वर्णन है और पुराणों की अनेक कथा भी इस काण्ड में मिलती है। इस से यह निश्चय होता है कि उत्तरकाण्ड के बनने के पहले पुराण सब बन चुके थे।

पुराणों के विषय की बहुत सी शंकाएं काल क्रम से मिट गईं। जिन पुराणों को विलायती विद्वानों ने चार पांच सौ बरस का बना बतलाया था उन की सात सात सौ बरस की प्राचीन पुस्तकें मिलीं। लोग भागवत ही को बोपदेव का बनाया कहते थे किन्तु चन्द के रायसे में भागवत का वर्णन मिलने से और प्राचीन पुस्तकों से यह सब बातें खंडित हो गईं।

उत्तरकाण्ड से मालूम होता है कि अयोध्या, काशी और प्रयाग ये तीनों राज्य उस समय अलग थे और उस समय हिन्दुस्तान में तीन सौ राज्य अलग २ थे।

---

* उपस्थिते हि लोकेऽस्मिन यदूनां कुलवर्द्धने ।
वासुदेव इति ख्यातो विष्णु पुरुष विग्रह॰ ॥ २० ॥
स ते मोक्षयिता शापात् राजन् तस्माद्भविष्यति ।
कृता च तेन कालेन निष्कृतिस्ते भविष्यति ॥ २१ ॥ ॥
भारावतरणार्थं हि नरनारायणावुभौ । उत्पत्स्येते महावीर्यौ कलौ युग उपस्थिते ॥ २२ ॥

इसी काण्ड के चौरानवे सर्ग में यह लिखा है कि उत्तरकाण्ड भार्गव ऋषि ने बनाया है। यह भी एक आश्चर्य्य की बात है। इस वाक्य से तो अंगरेज़ी विद्वानों का सन्देह सिद्ध होता है।

॥ इति ॥

एकश्लोकी रामायणम्।

आदौ रामतपोवनादिगमनं हत्वा मृगं काञ्चनम्,
वैदेहीहरणं जटायुमरणं सुग्रीवसम्भाषणम्।
वालीनिग्रहणं समुद्रतरणं लङ्कापुरीदाहनम्,
पश्चाद्रावणकुम्भकर्णहननम् एतद्धि रामायणम्॥

अगरवालों की उत्पत्ति ।

भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित.

क्षत्रियपत्रिका सम्पादक म० कु० बाबू रामदीन सिंह सङ्कलित

राय साहिब रामरणविजय सिंह द्वारा प्रकाशित.



पटना—'खड्गविलास' प्रेस, बांकीपुर.
बाबू चण्डीप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित.
ई० स० ३२—१९१६

दूसरी बार ।

भूमिका।

यह वंशावली परम्परा की जन श्रुति और प्राचीन लेखों से संगृहीत हुई है परन्तु इसका विशेष भाग भविष्य पुराण के उत्तर भाग में से श्रीमहालक्ष्मी व्रत की कथा से लिया गया है, इस में वैश्यों में मुख्य अगरवालों की उत्पत्ति लिखी है। इस बात का महाराज जय सिंह के समय में निर्णय हुआ था कि वैश्यों में मुख्य अगरवाले ही है, इन अगरवालों का संक्षेप वृत्तान्त इस स्थान पर लिखा जाता है। इनका मुख्य देश पश्चिमोत्तर प्रान्त है और इनकी बोली स्त्री और पुरुष सब की खड़ी बोली अर्थात् उर्दू है, इन के पुरोहित गौड़ ब्राह्मण हैं और इनका व्यवहार सीधा और प्रायः सच्चा होता है और इस जाति में एक विशेषता यह है कि इन में कोई ऊंचे नीचे नहीं होते और न किसी को कोई अल्ल (उपाधि) होती है। बनारस और मिरजापुर में तो पुरवियों का नाम भी सुनाता है पर जो देश में पूछो कि तुम पुरविए हो कि पछांही तो व लोग बड़ा आश्चर्य्य करते हैं और कहते हैं कि पुरविए शब्द का क्या अर्थ है। बनारस के पछांही लोगों में भी ठीक अगरवालों की रीतें नहीं मिलती और उनकी बोली भी वैसी नहीं है। केवल जो घर दिल्ली वाले लोगों के हैं उन में वे बातें हैं। इन लोगों में जैसा विवाहादिक में उत्साह होता है वैसा ही मरने में बरसों दुःख भी करते हैं परन्तु जो बूढ़ा मरता है तब तो विवाह में भी पृथक विशेष कर देते हैं!!!

वालों में मांस और मदिरा की चाल कहीं नहीं है पर हुक्का इनके पुरोहित और ये दोनों पीते हैं यों जो लोग नेमी हों वे न पिवें पर जाति की चाल है। विवाह के समय इन का बहुत व्यय करना सब में प्रसिद्ध है और इसी विपत से कई घर बिगड़ गए पर यह रीति छोड़ते नहीं। इन में कुछ लोग जैनी भी होते हैं और देस में सब जनेऊ पहिरते हैं पर इधर पूरब में कोई कोई नहीं भी पहिरते, इन के पुरुषों का पहिरावा पगड़ी पायजामा या धोती और अंगा है और स्त्रियों का पहिरावा ओढ़ना घंघरा या छोटे-पन में सुथना है। और दशो संस्कार होने की चाल इन में अब तक मिलती है। पुरबियों के अतिरिक्त मारवाड़ी अगरवाले भी होते हैं पर इनका ठीक पता नहीं मिलता कि कब से और कहां से हैं। जैसे पछांही अगरवालों की चाल खत्रियों से मिलती है वैसे ही इन मारवारियों की महेशरियों से मिलती है पर पुरबियों की चाल तो इन दोनों से विलक्षण है।

अगरवालों की उत्पत्ति की भूमिका में यह बात लिखनी भी आनन्द देने वाली होगी कि श्रीनन्दरायजी जिन के घर साक्षात् श्रीकृष्णचन्द्र प्रगट हुए वैश्यही थे और यह बात श्रीमद्भागवतादि ग्रंथों से भी निश्चय की गई है, जो हो इस कुल में सर्व्वदा से लोग बड़े धनवान और उदार होते आए पर इन दिनों वे बातें जाती रहीं थीं, मुगलों के समय से इनकी वृद्धि फिर हुई और अब तक होती जाती है।

मैंने इस छोटे से ग्रन्थ में संक्षेप से इनकी उत्पत्ति लिखी है। निश्चय है कि इसे पढ़ के वे लोग अपनी कुल परम्परा जानेंगे और मुझे भी अपने दीन और छोटे भाइयों में स्मरण रक्खेंगे।

वैशाख शुद्ध ५ सं १९२८ }
काशी }
श्री हरिश्चन्द्र।

वैश्यवंशावतंसाय भगवते श्रीकृष्णचन्द्राय नमः ।

अगरवालों की उत्पत्ति ।



दोहा ।

विमल वैश्य वंशावली, कुमुदवनी हित चन्द ।
जयजय गोकुल गोप को, गोपी पति नन्दनन्द ॥ १ ॥

भगवान ने अपने मुख से ब्राह्मण और भुजा से क्षत्री और जांघ से वैश्य और चरण से शूद्रों को बनाया—इसमें वैश्य को चार कर्म का अधिकार दिया पहिला खेती दूसरा गऊ की रक्षा तीसरा व्यापार और चौथा व्याज, जैसे वेद और यज्ञादिक का स्वामी ब्राह्मण और राज्य और युद्ध का स्वामी क्षत्री वैसेही धन का स्वामी वैश्य है और ब्राह्मण क्षत्री वैश्य इन तीनों की द्विज संज्ञा है और तीनों वर्ण वेद कर्म के अधिकारी हैं। पहिला मनुष्य जो वैश्यों में हुआ उस का नाम धनपाल था जिसे ब्राह्मणों ने प्रतापनगर में राज पर बिठा कर धन का अधिकारी बनाया, उस के यहां आठ पुत्र और एक कन्या हुई। उस कन्या का नाम मुकुटा था और वह याज्ञवल्क्य ऋषि से व्याही गई। उन आठ पुत्रों के ये नाम थे—शिव, नल, अनिल, नन्द, कुन्द, मुकुन्द, वल्लभ और शेखर। इन पुत्रों को अश्वविद्या शालिहोत्र के आचार्य विशाल राजा ने अपनी आठ बेटियां व्याह दी थी। उन कन्या लोगों के ये नाम थे और यही वैश्य लोगों की मात्रिका हैं—पद्मावती, मालती, कान्ती, पुष्पा, भव्या, भवा, रम्भा और सुन्दरी।

इन का व्याह नाम के क्रम से हुआ। इन आठ पुत्रों में नल नामा पुत्र जोगी और दिगम्बर हो कर वन में चला गया और सात पुत्रों ने सात द्वीप का अधिकार पाया। और पृथ्वी में इन का वंश फैल गया। जम्बू द्वीप में विश्य नामा राजा हुआ जो आठ पुत्रों में शिव के कुल में था औ उस विश्य को वैश्य हुआ, उस के वंश में एक सुदर्शन राजा हुआ जिस के दो स्त्रियां थीं जिन के नाम सेवती और नलिनी थे। उस का पुत्र धुरन्धर हुआ इसी धुरन्धर का पड़पोता समाधि नामा वैश्य हुआ था। इसी समाधि के वंश में मोहन दास बड़ा प्रसिद्ध हुआ, जिस ने कावेरी के तट पर श्रीरंगनाथ जी के बहुत से मन्दिर बनाए। इस का पड़पोता नेमिनाथ हुआ जिसने नैपाल बसाया और उस का पुत्र वृन्द हुआ जिसने श्री वृन्दावन में यज्ञ करके वृन्दा देवी की मूर्त्ति स्थापन किया। इस वंश में गुर्जर बहुत प्रसिद्ध हुआ जिस के नाम से गुजरात का देश बसा है। इसके वंश में हरि नामा एक राजा हुआ जिसके रंग इत्यादिक सौ पुत्र थे जिन में रंगने तो राज पाया और सब बुरे कर्म्मों से शूद्र हो गए और तप के बल से फिर इन लोगों ने वंश चलाये—जिन के वंश के लोग वैश्य हुए पर उनके कर्म शूद्रों के से थे। रंग का पुत्र विशोक हुआ, उस के पुत्र का नाम मधु और उसका पुत्र महीधर हुआ। महीधर ने श्री महादेव जी को प्रसन्न करके बहुत से बर पाये—इसके वंश में सब लोग ब्योहार में चतुर और सब धन और पुत्र से सुखी थे।

इसी वंश में वल्लभ नामा एक राजा हुए और उस के घरमें बड़े प्रतापी अग्र राजा उत्पन्न हुए इस को अग्रनाथ और अग्रसेन भी कहते थे। यह बड़ा प्रतापी था। इसने दक्षिण देश में प्रतापनगर को अपनी राजधानी बनाया। यह नगर धन और रत्न और गऊ से पूर्ण था। यह ऐसा प्रतापी था कि इन्द्रने भी उससे मित्रता की थी। एक समय नाग लोक से नागों का कुमुद नाम

राजा अपनी माधवी कन्या को लेकर भूलोक में आया और उस कन्या को देखकर इन्द्र मोहित हो गया और नागराज से वह कन्या मांगी। पर नागराजने इन्द्र को वह कन्या नहीं दी और उसका विवाह राजा अग्र से कर दिया यही माधवी कन्या सब अगरवालों की जननी है और इसी नाते से हम लोग सर्पों को अब तक मामा कहते हैं।

इन्द्र ने इस बात से बड़ा क्रोध किया और राजा अग्र से वैर मान कर कई बरस उनकी राजधानी पर जल नहीं बरसाया और अग्रराजा से बड़ा युद्ध किया तब भगवान ब्रह्मदेव ने दोनों को युद्ध से रोका इससे राजा अपनी राजधानी में फिर आया और राज अपनी स्त्री को सौंप के आप तीर्थों में घूमने चला गया और सब तीर्थों में फिर कर महालक्ष्मी की उपासना किया और काशी में आकर कपिलधारा तीर्थ पर महादेव जी का बड़ा यज्ञ करके बहुत सा दान किया, तब श्री महादेवजी प्रसन्न होकर प्रगट हुए और कहा कि वर मांगो तब राजा ने कहा कि मैं केवल यही वर मांगता हूं कि इन्द्र मेरे वश में होय—इसपर प्रसन्न होकर अनेक वर दिये और कहा कि तुम महालक्ष्मी की उपासना करो तुम्हारी सब इच्छा पूरी होगी यह सुन कर राजा फिर तीर्थ में चला और एक प्रेत की सहायता से हरिद्वार पहुंचा और वहां से गर्गमुनि के संग सब तीर्थों में फिरा और जब फिर हरिद्वार में आया तब वहां महालक्ष्मी की बड़ी उपासना किया और देवी ने प्रसन्न होकर वर दिया कि इन्द्र तेरे वश में होगा और तेरे वंश में दुःखी कोई न होगा और अन्त में तुम दोनों स्त्री पुरुष ध्रुवतारा के आसपास रहोगे और इस समय तुम कोलापुर में जाओ वहां नागराज के अवतार राजा महीधर की कन्याओं का स्वयम्वर है वहां उन कन्याओं से व्याह करके अपना वंश चलाओ। देवी से ये वर पाकर राजा कोलापुर में गया और वहां उन कन्याओं से धूमधाम

से ब्याह किया और फिर कर दिल्ली के पास के देशों में आया और पंजाब के सिरे से आगरे तक अपना राज स्थापन किया और इन्हीं देशों में अपना वंश फैलाया। जब इन्द्र ने राजा के वर का सामचार सुना तब तो घबड़ाया और उससे मित्रता करनी चाही। और इस बात के हेतु नारद जी को भेजा और एक अप्सरा जिसका नाम मधुशालिनी था देकर मेल कर लिया। इसके पीछे राजा अग्रसेन ने जमुना जी के तट पर श्रीमहालक्ष्मी का बड़ा तप किया और श्रीलक्ष्मीजी ने प्रसन्न होकर ये वर दिये कि आज से यह वंश तेरे नाम से होगा और तेरे कुल की मैं रक्षा करने वाली और कुलदेवी हूंगी और इस कुल में मेरा दीवाली का उत्सव सब लोग मानेंगे—यह वर देकर श्री महालक्ष्मी चली गईं। तब राजाने आकर अपना राज चलाया उस राज की उत्तर सीमा हिमालय पर्व्वत और पंजाब की नदियां थीं और पूर्व्व और दक्षिण की सीमा श्रीगंगा जी और पश्चिम की सीमा जमुनाजी से लेकर माड़वार देश के पास के देश थे—इनके वंश के लोग सर्व्वदा इन्हीं देशों में बसे इससे मुख्य अगरवाले लोग वेही हैं जो पंजाब प्रान्त से इधर मेरट आगरे तक के बसने वाले हैं। अगरवालों के मुख्य बसने के नगर ये हैं १—आगरा जिस का शुद्ध नाम अग्रपुर है यह नगर राजा अग्र के पूर्व्व दक्षिण प्रदेश की राजधानी था। २ दिल्ली जिसका शुद्ध नाम इन्द्रप्रस्थ है। ३—गुड़गांवां जिस का शुद्ध नाम गौड़ ग्राम है, यह नगर अगरवालों के पुरोहित गौड़ ब्राह्मणों को मिला था इसी से प्रायः अगरवाले लोग यहीं की माता को पूजते हैं *। ४ मेरट जिस का शुद्ध नाम महाराष्ट्र है। ५ रोहतक जिसका शुद्ध नाम रोहिताश्व है। ६ हांसीहिसार जिसका शुद्ध नाम हिसारि देश है। ७ पानीपत इस का शुद्ध नाम पुन्यपत्तन जाना जाता है। ८-करनाल। ९ कोट

---

* इसको कोई मथरा भी कहते हैं।

कांगड़ा जिस का शुद्ध नाम नगर कोट है। अगरवालों की कुलदेवी महामाया का मन्दिर यहीं है और ज्वाला जी का मन्दिर भी इसी नगर की सीमा में है। १० लाहोर इस नगर का शुद्ध नाम लवकोट है। ११ मंडी इसी नगर की सीमा में रैवालसर तीर्थ है। १२ बिलासपुर इसी नगर की सीमा मे नयना देवी का मन्दिर बना है। १३ गढ़वाल। १४ जींदसफीदम। १५ नाभा। १६ नारनौल इस का शुद्ध नाम नारिनवल है। ये सब नगर उस राजधानी में थे, और राजधानी का नाम अग्र नगर था जिसे अब अगरोहा कहते हैं। आगरा और अगरोहा ये दोनों नगर राजा अग्रसेन के नाम से आज तक प्रसिद्ध हैं। राजा अग्रसेन ने अपनी राजधानी में महालक्ष्मी का एक बड़ा मंदिर किया था।

राजा अग्रसेन ने साढ़े सत्रह यज्ञ किये—इसका कारण यह है कि जब राजा ने अठारवां यज्ञ आरम्भ किया और आधा हो भी चुका तब राजा को यज्ञ की हिंसा से बड़ी ग्लानि हुई और कहा कि हमारे कुल में यद्यपि कहीं भी कोई मांस नहीं खाता परन्तु देवी हिंसा होती है, सो आज से जो मेरे वंश में हो उसको यह मेरी आन है कि देवी हिंसा भी न करे अर्थात् पशु यज्ञ और बलिदान भी हमारे वंश में न होवे और इसने राजा ने उस यज्ञ को भी पूरा नहीं किया।

गोत्रों के ये नाम हैं—१ गर्ग २ गोइल ३ गावाल ४ बात्सिल ५ कासिल ६ सिंहल ७ मंगल ८ भद्दल ६ तिंगल १० ऐरण ११ टैरण १२ ठिंगल १३ तित्तल १४ मित्तल १५ तुन्दल १६ तायल १७ गोभिल, और गवन अर्थात् गोइन आधा गोत्र है, पर अब नामो में के कुछ अक्षर उलट पुलट भी हो गए हैं। राजा अग्र ने अपने सहायक गर्ग ऋषि के नाम से अपना प्रथम गोत्र किया और दूसरे गोत्रों के नाम भी यज्ञों के अनुसार रक्खे। राजा अग्र ने अपने कुल पुरोहित गौड़ ब्राह्मण बनाए और उस काल में सब अगरवाले वेद पढ़नेवाले और तृकाल साधनेवाले थे। राजा अग्र बूढ़ा होकर तप करने चला गया—और उसका पुत्र विभु राज पर बैठा और उसके कई वंश तक राजा लोग अपने धर्म्म में निष्ठ हो कर राज करते रहे। इस वंश में दिवाकर एक राजा हुआ जो वेदधर्म्म छोड़कर जैनी हो गया और उस ने बहुत से लोगों को जैनी किया और उसी काल से अगरवालों में वेदधर्म्म छूटने लगा परन्तु अगरोहा और दिल्ली के अगरवालों ने अपना धर्म्म नहीं छोड़ा। इस वंश में राजा उग्रचन्द्र के समय से राज घटने लगा और जब शहाबुद्दीन ने चढ़ाई किया तब तो अगरोहा सब भांति नाश कर दिया—शहाबुद्दीन की लड़ाई में बहुत से लोग मारे गए और उनकी बहुतसी स्त्री सती हुईं जो हम लोगों के घर में अब तक मानी और पूजी जाती हैं। यह अगरवालों के नाश का ठीक समय था इसी समय से इन में से बहुतों ने धर्म्म छोड़ दिये और यज्ञोपवीत तोड़ डाले। उस समय जो अगरवाले भागे वे मारवाड़ और पूर्व्व में जा बसे। और उनके वंश में पुरविये और माड़वारी अगरवाले हुए, और उतराधी और दखिनाधी लोग भी इसी भांति हुए, पर मुख्य अगरवाले पछांही वेही कहलाए जो दिल्ली प्रान्त में बच गए थे। जब मुगलों का राज हुआ तब अगर-वालों की फिर बढ़ती हुई और अकबर ने तो अगरवालों को

अपना वज़ीर बनाया—उसी काल से अगरवालों की विशेष वृद्धि हुई—अकबर के दो मुख्य और प्रसिद्ध अगरवाले वज़ीर थे जिन का नाम महाराज टोडरमल और मधूशाह था, मधूसाही पैसा इन्हीं के नाम से चला है ॥



खत्रियों की उत्पत्ति ।

भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित.

छत्रियपत्रिका सम्पादक म० कु० बाबू रामदीन सिंह सङ्कलित

राय साहिब रामरणविजय सिंह द्वारा प्रकाशित.



पटना—'खड्गविलास' प्रेस, बांकीपुर.
बाबू रामप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित.
ई० स० ९२—१९१८

दूसरी बार।

खत्रियों की उत्पत्ति ।



मेरी बहुत दिन से इच्छा थी कि इस जाति का पुरावृत्त संग्रह करूं परन्तु मुझे इस में कोई सहायक न मिला और जिन २ मित्रों ने मुझ से पुरावृत्त देने कहा था वे इस विषय में असमर्थ हो गए और इसी से मेरा भी उत्साह बहुत दिनों तक मन्द पड़ा रहा परन्तु मेरे परम मित्र ने इस विषय में मुझे फिर उत्साहित किया और कुछ मुझे ऐसी सहायता भी मिल गई कि मैं फिर से इस जाति के समाचार अन्वेषण में उत्सुक हुआ ।

लाहोर निवासी श्रीपण्डित राधाकृष्ण जी ने इस विषय में मुझे बड़ी सहायता दी और वैसी ही कुछ कुछ सहायता श्री मुनशी बुधसिंह के मिहिर प्रकाश और श्रीयुत शेरिङ्ग साहब के जातिसंग्रह से मिली ।

इस समय में प्रायः बहुत जाति के लोग अपनी अपनी उन्नति दर्शन में प्रवृत्त हुए हैं जैसा दूसरे (जिन के वैश्यत्व में भी सन्देह है क्योंकि उनके यहां फिर से कन्या का पति होता है) अपने को कहते हैं कि हम ब्राह्मण हैं कायस्थ (जो शूद्रधर्म कमलाकर की रीति से संकर शूद्र हैं) कहते हैं कि हम क्षत्रिय हैं और जाट लोगों में भी मेरे मित्र बेसवां के राजा श्री ठाकुर गिरिप्रसाद सिंह ने निश्चय किया है कि वे क्षत्रिय हैं तो इस दशा में इस आर्य्य जाति का पुरावृत्त संग्रह होना भी अवश्य है, जो मुख्य आर्य जाति के निवास स्थल पञ्जाब और पश्चिमोत्तर देश में फैली हुई है और जिस में सर्वदा से अच्छे लोग होते आए

हैं। हमारे पूर्व्वोक्त आर्य्य शब्द के दो बेर के प्रयोग से कोई यह शंका न करे कि देश के पक्षपात से मैंने यह आग्रह से आदर का शब्द रक्खा है क्योंकि आर्य्य जाति के निवास का मुख्य यही देश है और यहीं से आर्य्य जाति के लोग सारे भारतवर्ष में फैले हैं यह अङ्गरेजी हिन्दुस्तान के इतिहासों के पाठ से स्पष्ट हो जायगा। हमारे एक मित्र से इस बात का मुझ से बड़ा विवाद उपस्थित हुआ था, वह कहते थे कि पंजाब देश अपवित्र है क्योंकि महाभारत में कर्ण पर्व्व के आरम्भ में शल्य राजा से कर्ण ने पंजाब देश की बड़ी निन्दा की है और वहां के बहुत बुरे आचरण दिखाये हैं परन्तु वह निन्दा निन्दा की भांति गृहीत नहीं होती क्योंकि पश्चिम में गुजराती या मध्य देश के वासियों की भांति सोला पामरी का प्रचार नहीं है और न ऊपर से वे लोग स्वच्छ रहते हैं परन्तु यह मैं निस्सन्देह कह सक्ता हूं कि यहां के काले चित्तवाले मनुष्यों से उनका चित्त कहीं उजला है। इसके अतिरिक्त कर्ण शल्य का शत्रु है इससे शत्रु की की हुई निन्दा निन्दा नहीं कहाती हां इस बात का हम पूर्ण रूप से प्रमाण देते हैं कि भारतवर्ष में पहिले पहिले आर्य्य लोग केवल पंजाब से लेकर प्रयाग तक बसते थे, श्रीमान जानम्योर साहब ने लाहौर के चीफपण्डित पण्डित राधाकृष्ण को जो पत्र लिखा है उसमें मुक्त कंठ से उन्हों ने स्थापन किया है कि जहां तक मैंने प्राचीन वेदादिक पुस्तकें पढ़ीं उनसे मुझे पूरा निश्चय है कि आर्य्य लोग पहले इन्हीं देशों में बसते थे। "ऋग्वेद संहिता दशम मंडल ७५ सू० ५ ऋक् इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्या सुषोमया। ६ मंडल सू० ४५ ऋ० ३१ अधिवृबुः पणीनां वर्षिष्ठे मूर्धन्नस्थात् उरुकक्षो न गांग्यः। १० मंड० सू ७५ ऋ और ५ मं ७२ सू ऋ. १७ सप्तमे सप्तशाकिन एकमेकाशता ददुः यमुनायामश्रुतमुद्राधो-

गर्व्य मृधे निराधो अशव्या मृधे मंड ३ ३३ ऋ १ प्रपर्वतानामुशती उपस्था दश्वे इव विषिते हासमाने गावेव शुभ्रे मातरारिहाणे विपाट् छुतुद्री पयसा जवेते ३ मंड २३ सू० ४ ऋ० नित्वादधेवर आणधिव्या इलायास्पदे सुदिनत्वे अह्नाम् दषद्वत्यां मानुष आपयायां सरस्वत्यां रेवदग्ने दिदीहि ६ मंड ६१ ऋ० २ इयंशुष्मेभिर्बिसखाइवारुजत् सानुगिरीणां तविषेभिरुर्मिभिः पारावतघ्नीमवसे सुवृक्तिभिः सरस्वतीमा विवासेमधीतिभिः' इत्यादि श्रुतियों में गङ्गा यमुना व्यासा सतलज सरस्वती इत्यादि नदियों की महिमा कही है और ऋग्वेद में पहले और दूसरे मं० से कई ऋचाओं में सरस्वती की महिमा कही है, यास्क ने अपने निरुक्त में इन ऋचाओं के अर्थ में विश्वामित्र ऋषि के सतलज और व्यासा के मुहाने पर यज्ञ करने का और इन नदियों के स्तुति करने का प्रसङ्ग लिखा है। और कीकट देश तथा अन्य प्रदेश और इत्यादि प्रदेश और गोमती इत्यादि नदियों के जो कहीं श्रुतियों

हैं। हमारे पूर्व्वोक्त आर्य्य शब्द के दो बेर के प्रयोग से कोई यह शंका न करे कि देश के पक्षपात से मैंने यह आग्रह से आदर का शब्द रक्खा है क्योंकि आर्य्य जाति के निवास का मुख्य यही देश है और यहीं से आर्य्य जाति के लोग सारे भारतवर्ष में फैले हैं यह अङ्गरेजी हिन्दुस्तान के इतिहासों के पाठ से स्पष्ट हो जायगा। हमारे एक मित्र से इस बात का मुझ से बड़ा विवाद उपस्थित हुआ था, वह कहते थे कि पंजाब देश अपवित्र है क्योंकि महाभारत में कर्ण पर्व्व के आरम्भ में शल्य राजा से कर्ण ने पंजाब देश की बड़ी निन्दा की है और वहां के बहुत बुरे आचरण दिखाये हैं परन्तु वह निन्दा निन्दा की भांति गृहीत नहीं होती क्योंकि पश्चिम में गुजराती या मध्य देश के वासियों की भांति सोला पामरी का प्रचार नहीं है और न ऊपर से वे लोग स्वच्छ रहते हैं परन्तु यह मैं निस्सन्देह कह सक्ता हूं कि यहां के काले चित्तवाले मनुष्यों से उनका चित्त कहीं उजला है। इसके अतिरिक्त कर्ण शल्य का शत्रु है इससे शत्रु की की हुई निन्दा निन्दा नहीं कहाती हां इस बात का हम पूर्ण रूप से प्रमाण देते हैं कि भारतवर्ष में पहिले पहिले आर्य्य लोग केवल पंजाब से लेकर प्रयाग तक बसते थे, श्रीमान जानम्योर साहब ने लाहौर के चीफपण्डित पण्डित राधाकृष्ण को जो पत्र लिखा है उसमें मुक्त कंठ से उन्हों ने स्थापन किया है कि जहां तक मैंने प्राचीन वेदादिक पुस्तकें पढ़ीं उनसे मुझे पूरा निश्चय है कि आर्य्य लोग पहले इन्हीं देशों में बसते थे। "ऋग्वेद संहिता दशम मंडल ७५ सू० ५ ऋक् इमं मे गंगे यमुने सरस्वति शुतुद्रि स्तोमं सचता परुष्ण्या असिक्न्या मरुद्वृधे वितस्तयार्जीकीये शृणुह्यासुषोमया। ६ मंडल सू० ४५ ऋ० ३१ अधिबृबुः पणीनां वर्षिष्ठे मूर्धन्नस्थात् उरुःकक्षो न गांग्यः। १० मंड० सू ७५ ऋ० और ५ मं ७२ सू ऋ १७ सप्तमे सप्तशाकिन एकमेकाशता ददुः यमुनायामधिश्रुतमुद्राधो-

कहलाये, कोई कहते हैं कि जब परशुराम जी ने निःक्षत्र किया तब पंजाब देश में कई बालक खत्री कहकर बचा लिये गये थे वे ब्राह्मण वैश्य और शूद्रों के घरों में पले थे और अब उन्हीं से खत्री अरोड़े भाटिये इत्यादि अनेक उपजाति बन गई और उनके आचरण भी अपने २ पालकों के अनुसार अलग २ होगये, तीसरे कहते हैं कि क्षत्री और खत्री से भेद राजा चन्द्रगुप्त के समय से हुआ क्योंकि चन्द्रगुप्त शूद्री के पेट से था और जब उसने चाणक्य ब्राह्मण के बल से नन्दों को मारा और भारतवर्ष का राजा हुआ तो सब क्षत्रियों से उसने रोटी और बेटी का व्यवहार खोलना चाहा तब से बहुत से क्षत्री अलग होकर हिमालय की नीची श्रेणी में जा छिपे और जब उसने क्षत्रियों का संहार करना आरंभ किया तब से ये सब क्षत्री खत्रियों के नाम से बनिये बन कर बच गये, कोई कहते हैं कि ये लोग हैं तो क्षत्री पर कलजुग के प्रभाव से वैश्य हो गये हैं क्योंकि कलजुग के प्रकरण में लिखा है कि " वैश्य वृत्यातु राजानः "। कोई ऐसा भी निश्चय करते हैं कि किसी समय सारे भारतवर्ष में जैनों का मत फैल गया था ? तब सब वर्ण के लोग जैन हो गये थे विशेष करके वैश्य और क्षत्री उन में से जो क्षत्री आबू के पहाड़ पर ब्राह्मणों ने संस्कार देकर बनाये वे तो क्षत्री हुए और उन लोगों से सैकड़ों वर्ष पीछे जो क्षत्री जैन धर्म छोड़ कर हिंदू हुए वे खत्री कहाये और क्षत्रियों के पंक्ति से न मिले, गुरु गोविन्द सिंह ने अपने ग्रन्थ नाटक के दूसरे तीसरे चौथे पांचवे अध्याय में लिखा है कि " सब खत्री मात्र सूर्य्यवंशी हैं रामजी के दो पुत्र लव और कुश ने मद्र देश के राजा की कन्या से विवाह किया और उसी प्रान्त में दोनों ने दो नगर बसाये कुश ने कसूर लव ने लाहौर, उन दोनों के वंश में कई सौ वर्ष लोग राज्य करते चले आये एक समय में कुशवंश में कालकेत नामा राजा हुआ और लव वंश में कालराय, इन दो

कोई विकल्प नहीं करने क्योंकि नीचे लिखे हुए वाक्य पुराणोपपुराण सारसंग्रह में दशावतार प्रकरण में परशुराम जी के दिग्विजय में मिले हैं जिन से इनका क्षत्रिय होना स्पष्ट है यथा—

यदा श्रीमत्परशुरामो गतो दिग्विजयेच्छया ॥
सकलाभूस्तदाजाता पूर्णं मोदान्विता यतः ॥ २४ ॥
दुष्टसंहारकृद्धीमान् दुष्टभाराकुला रसा ।
पर्यटन् सकलां पृथ्वीं जयन् बाहुबलेन च ॥ २५ ॥
गतः पंचनदान्देशान्यद्राज्ञा कूरसंगरं ।
कृतं परशुरामेण महाविक्रमशालिना ॥ २६ ॥
एकाकिनापि तद्राज्ञः सैन्यं सर्वं विनाशितं ।
कतिचिद्दुद्रुवुर्वीरा हतास्तु बहवोऽभवन् ॥ २७ ॥
असृङ्मेदवती भूमिः शुशुभे रणमंडले ।
धुनी लोहितपंकाढ्या बभूवातिभयंकरा ॥ २८ ॥
धूलिः सैन्यस्य यस्यां स्मा मग्ना पंकीबभूव ह ।
जन्यभूमिगता यत्र वीराणां मृतमस्तकाः ॥ २९ ॥
कमलाभां वहन्ती या कल्लोलैरावृताप्यभूत् ।
राजानं संनिहत्यासौ रामस्तत्र तरो पदे ॥ ३० ॥
श्रान्तोऽतिष्ठत् क्षणं यावद्रिपुनार्यः समागताः ।
अन्वेषयन्त्यः संग्रामभूम्यां स्वं यान् पतीन् मृतान् ॥ ३१ ॥
आक्रोशंत्योभिधेयेन पुनर्वृत्तगृहादिना ।
विलपन्, योमुहुर्दुःखादूघातयन्त्य उरःस्थलं ॥ ३२ ॥
लक्ष्मीविलास नामैको वैश्यस्तावत्समागतः ।
करुणापूर्ण हृदयो दृष्ट्वा तासां हि दुर्गतिम् ॥ ३३ ॥
पत्युर्नाशं महद्दुःखं ज्ञात्वा ताः शीलशालिनी ।
दानशौण्डोधनाढ्यश्च सद्बुध्या ताः सुदुःखिताः ॥ ३४ ॥
बालाननाथान् मत्वा ऽसौ वनयत् स्वगृहं प्रति ।
सान्त्वयित्वा विवेकेन परेण परमाः सतीः ॥ ३५ ॥

लालनं पालनं तेषां पोषणं तत्क्रिया मुत ।
बालानां क्षत्रवंश्यानामकरोत् स्नेहभावतः ॥ ३६ ॥
एवमेव ततो रंग भूम्या काश्चित् स्त्रियो हृता ।
दुष्टैः काश्चिद्विडानिसश्चै दयालुभिरुपाहृता ॥ ३७ ॥
लक्ष्मीविलासश्च ंशं न विशा ते बालका यदा ।
अतपंधार्हतां प्राप्ताः समकार्षु, पलायनं ॥ ३८ ॥
स्वधर्माचरणे चैव विशा ते सुनियोजिताः ।
एदेभद्वापरे बालाः स्त्रियो येन सुरक्षिताः ॥ ३९ ॥
पोषिताः स्वीयदत्तेन अन्नेनैव तथैव ते ।
मत्वा तत्रैव चाचार वर्वर्तुस्ते र न्मुदा ॥ ४० ॥
इमे लक्ष्मीविलासेन रक्षिताः क्षत्रवंशजाः ।
शुद्धाः सदाचारयुक्ता बभूर्सांग्यशालिनः ॥ ४१ ॥
येषां कलियुगेपीमे चत्वारो वंशजा स्मृताः ।
अग्निः सोमश्च सूर्यश्च नाग एते चतुर्विधाः ॥४२॥
अद्यापि भूमौ वर्तंते चतुस्सन्तानवर्द्धकाः ।
दानशूरा रणत्राणा भाग्यवतः सुविक्रमाः ॥४३॥

अर्थ—जब परशुराम जी दिग्विजय करने निकले तब सब पृथ्वी आनन्दपूर्ण होगई क्योंकि दुष्टों के भार से पृथ्वी व्याकुल हुई थी और इन्होंने दुष्टों का संहार किया। तब पृथ्वी पर घूमते और बाहुबल से जय करते हुए पंचनद देशों में गए और वहां के राजा से घोर संग्राम किया यद्यपि भगवान् अकेले थे तथापि वहां के राजा की सब सेना मार डाली—इत्यादि।

वर्षों के घर गए उन के ऐसेही आचरण हुए और लक्ष्मीविलास का पालित क्षत्रियों का समूह जो अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा और नागवंश का था क्षत्रियसंस्कार पाकर भी वैश्यधर्म में लिप्त हुआ इत्यादि।

इनका विशेष वर्णन भविष्यपुराण के पूर्व्वार्द्ध में जो लिखा है उस से और भी निश्चय होता है कि ये सब क्षत्रिय हैं ० इन श्लोकों की संस्कृत ऐसी सहज है कि अर्थ लिखने की आवश्यकता नहीं। सिद्धान्त यह है कि वैश्यों की वा दूसरी वृत्ति करनेवाले क्षत्रिय जो पंजाब देश में हैं वे क्षत्रिय ही हैं किन्तु परशुराम जी के समय से वहां के क्षत्रियों का युद्ध संस्कार छूट गया है और ऐसे लोगों की एक पृथक जाति, खत्री, रोड़े, भाटिये इत्यादि हो गई है। इस विषय के दोनो अध्याय यहां प्रकाशित किए जाते हैं।

—:०:—

सूतउवाच।

एवं बहुविधे देशे स हत्वा क्षत्रियर्षभान्।
गतो पञ्चनदे देशे क्षत्रियान्वयसूदनः॥ १॥
तत्र प्राप्तान् महाशूरान् क्षत्रियान् रणदुर्मदान्।
युयुधेऽतिबलो रामः साक्षान्नारायणांशजः॥ २॥
जनन्या जानितो लोके कः शूरो यस्तु पार्थिवान्।
पाञ्चालान् जयते युद्धे विना नारायणं स्वयं॥ ३॥
सर्व्वान् हत्वा महाराजान् क्षत्रियान् स द्विजोत्तमः।
रुरुधे पङ्कज वने यथा मत्त द्विपाधिपः॥ ४॥
एवं हत्वा रणे शूरान् तरुणान् रणदुर्म्मदान्।
प्रवृत्तो वृद्धबालेषु हन्तुं क्रोधाकुलेक्षणः॥ ५॥
हाहाकारो महानासी तत्र क्षत्रिय पर्य्यये।
नार्य्यो वृद्धाश्च बालाश्च मुमुहुर्भयविह्वलाः॥ ६॥

हतेषु तेषु शूरेषु बालवृद्धेषु च क्रमात् ।
अनाथाश्चाभवन् सर्व्वाः क्षत्रियाण्यो हतान्वया ॥ ७ ॥
तत्र कश्चिन् महावैश्यः सुधर्म्मा नामकः प्रभुः ।
आसीन् नागान्वये जातः क्षत्रियाणां प्रियंकरः ॥ ८ ॥
हतेषु सर्वबालेषु व्याकुलाश्रुकुलेक्षणः ।
चतुःपञ्चावशेषेषूपायं समकरोत्तदा ॥ ९ ॥
नीत्वा स बालान् तान् सर्व्वान् स्वप्रियायै प्रदत्तवान् ।
तस्य भार्य्या महाप्राज्ञी सुशीला नाम्न नामत ॥
वात्सल्यमकरोत्तेषु यथा स्वोदरजे भृशं ॥ १० ॥
यदा निवर्तितो देवो निःक्षत्रीकृत्य पार्थिवान् ।
ऊचुस्तस्मै समागत्यं तद्वृत्तं पिशुनास्तदा ॥ ११ ॥
आसित कश्चिन् महावैश्यो क्षत्रियाणां प्रियंकर ।
रक्षितास्तेन बालास्ते क्षत्रियाणां नरोत्तम ॥ १२ ॥
तच्छ्रुत्वा स द्विजो धावन्नुश्वसन्नुरगो यथा ।
उद्यम्य परशुं तत्र गतः क्रोधाकुलेन्द्रियः ॥ १३ ॥
तं दृष्ट्वा स महान् वैश्यः प्राप्तं कालानलोपमं ।
दुर्निवारं मनुष्येभ्यो भक्त्या बुध्या प्यपूजयत् ॥ १४ ॥
सारस्वतास्तु ये विप्राः क्षत्रियाणां पुरोहिताः ।
तेपि तत्रागमन् सर्व्वे यजमानहितेप्सवः ॥ १५ ॥
ऊचुः प्राञ्जलयो विप्राः प्रणामानतकन्धराः ।
वैश्य सुधर्म्मा तत्पत्नी भार्गवं भर्गविक्रमं ॥ १६ ॥

सर्व्वे ऊचुः

नमो नमस्ते श्रितविग्रहाय । नमो नमस्ते हृत विग्रहाय ।
नमो नमस्ते कृत विग्रहाय । नमो नमस्ते धृत प्रग्रहाय ।
नमस्ते पूर्णकामाय दुष्ट वामाय ते नमः ।
नमो रामाभिरामाय रूपश्यामाय ते नमः ॥ १८ ॥
क्षात्रद्रुम कुठाराय चाकूपाराय ते नमः ।

नमस्तेऽकृतदाराय चाकूपाराय ते नमः ॥ १६ ॥
नमो नमस्ते सर्व्वायार्चितशर्व्वाय ते नमः ।
हृतराजन्य गर्व्वाया पूर्व्वखर्व्वाय ते नमः ॥ २० ॥
मीन कच्छप वाराह नृसिंह वटु रूपिणे ।
कृत लीलावताराय विष्णवे प्रभविष्णवे ॥ २१ ॥
रेणुका गर्भ रत्नाय च्यवनानन्द दायिने ।
भार्गवान्वय जाताय नमो रामाय विष्णवे ॥ २२ ॥
नमः परशुहस्ताय खड्गिने चक्रिणे नमः ।
गदिने शार्ङ्गिणे नित्यं शौरिणे ते नमोनमः ॥ २३ ॥
नमस्तेऽद्भुत विप्राय धरा भारापहारिणे ।
शरणागत पालाय श्रीरामाय नमोनमः ॥ २४ ॥

इति श्री भविष्यपुराणे पूर्वखण्डे वर्णाचारनिर्णये चत्वारिंशोऽध्यायः ॥

सूतउवाच—इत्थं स्तुतः स भगवान् उवाच श्लक्ष्णया गिरा ।
वरं वृणीध्वं भद्रं वो मा भैष्ट विगत ज्वराः ॥ १ ॥
सारस्वता ऊचुः—नाशिता भवता देव राजन्या भूरिविक्रमाः
सन्ति तेषान्दयासिन्धो बाला दीनास्त्रियस्तथा ॥ २ ॥
तेभ्योऽभयं वयं त्वत्तो देव वाञ्छामहे सदा ।
सुधर्म्मोवाच—मया संरक्षिता ये तु मामकीं वृत्तिमाश्रिताः ॥ ३ ॥
त्यक्तक्षत्रियधर्मास्ते सम्भविष्यन्ति बालका ।
वैश्यस्तु भवताऽवध्य सदा त्वत्पाद सेवकः ।
अनुकंप्यो दया सिन्धो दीनोऽहं बन्धु वञ्चितः ॥ ४ ॥
परशुरामउवाच—अत्राऽगतोऽहं नाशार्थं तेषामेव न संशयः ।
किन्तु तत् स्तवनात्प्रीतो विरक्तोऽहं वधात्प्रति ॥ ५ ॥
मत्प्रसादाद्भविष्यन्ति बाला विट धर्म्ममाश्रिताः ।
लक्ष्मीवन्तः प्रजावन्तो नानाशास्त्रविचक्षणाः ॥ ६ ॥
पण्यधर्थिषु चतुरा राजसेवाविधायिनः ।
पुरुषाश्च स्त्रियः सर्व्वा सुभगाः कुलमाश्रिताः ॥ ७ ॥

यूयं सारस्वता विप्राः प्रतिगृह्णन्तु बालकान् ।
कुर्व्वन्तु चापि सर्व्वेषां संस्कारं क्षत्रियोचितम् ॥ ८ ॥
सूतउवाच—इति संस्थाप्य भगवान् प्रजाबीजं प्रजापतिः ।
जगाम तपसे शैलं गौतमाचलमुत्तमं ॥ ९ ॥
ततः प्रभृति ते सर्व्वे क्षत्रिया द्विजपालिताः ।
त्यक्तक्षत्रियधर्म्माणो वणिग्वृत्तं समाश्रिता ॥ १० ॥
ते सूर्य्य शशि वंशीया अग्निवंशसमुद्भवाः ।
उत्तमाः क्षत्रियाः ख्याताः इतरे मध्यमाः स्मृताः ॥ ११ ॥
भोठ भिल्ल निवारादि महिपावन कोटकाः ।
दैत्यवंशसमुत्पन्नाःक्षत्रियास्तेपि विश्रुताः ॥ १२ ॥
टिक्कसेल इति ख्याता प्रेतवंशोद्भवा श्रुताः ।
उन्नाःवंशसंभूतास्तेतु कायस्थ पूर्वजाः ॥ १३ ॥
विसेना वर वाराश्च अवस्तास्तवरास तथा ।
अह्लाश चमर गौडाद्या भूतवंशसमुद्भवाः ॥ १४ ॥
गह्लास कनवाराश्च मोरभंजास्तु वैश्यकाः ।
जगराख्या सोलङ्कावत्सा ब्राह्मणवंशजाः ॥ १५ ॥
खरा भद्रा मार्गवाश्च कुण्डिता नाकुलन्धराः ।
एतरन्येपि पापा क्षत्रियत्वं समाश्रिता ॥ १६ ॥
नागवंशोद्भवा भिल्ला क्षत्रिया समुदाहृताः ।
ऋक्षवंशोद्भवाश्चान्य तथाऽरद्वंशसम्भवाः ॥ १७ ॥
एतेषु भविता श्रेष्ठो महात्मा विगतज्वरः ।
उज्जीति कुलगुरुः ख्यातो भार्ग्गे वनुर्गते ॥ १८ ॥
इत्येतत् कथितं तात क्षत्रियाणां विनाशनं ।
पालनं चापि सर्वेषु किं मन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ १९ ॥
इति पूर्व्वभविष्ये पञ्चत्रिंशोऽध्यायः ।
श्रीयुत बाबू हरिश्चन्द्र महाशयेषु सविनय निवेदनम् ।

खत्री के उत्पत्ति विषय में मेरे मित्र पंडित चण्डीप्रसाद जी वर्णन करते हैं कि जब परशुराम श्री दशरथ जी के समय में क्षत्रियों को मारते थे तौ वे सब खत्री कहि के बचि गये। तब से वे खत्री कहलाये अद्यावधि उसी नाम से प्रकट हैं। कोई कहते हैं कि (ख) आकाशनिवासी (त्रि) तीन ऋषियों के सन्तान हैं अतएव खत्री शब्द से प्रसिद्ध हैं। और जो परशुराम जी को शिरोनमन पूर्वक प्रणाम करि बद्धांजलि हो गये तब तो परशुराम जी ने प्रसन्न हो कर कहा, धन्य हौ तुम निर्भय रहो क्योंकि तुम अरुट् हौ अर्थात् क्रोध विना ही सोई अब अरोड़ा कहलाते हैं। और मेरे मित्र पंडित गोकुलचन्द्र जी के पास एक पुस्तक थी। तिस में लिखा है कि लव जी के वंश में एक राजा थे तिन्ह के दो स्त्री थीं जो कि छोटी थीं वह राजा को परम प्यारी थी जो दूसरी बड़ी थी उस में कुछ रुचि कम थी एक एक पुत्र दोनों में प्रकट भये। छोटी स्त्री ने स्वामी से कहा कि राज्य मेरे पुत्र को देवो। राजा ने न माना अंत में मंत्री को भी उस राणी ने स्ववशवर्ति करि के कहवाया कि छोटे को राज्य देना चाहिये। मंत्रियों ने कहा कि राजन्! एक को समस्त धन दे दो। एक को केवल राज्य दे दो। सुनि के राजा ने बड़े पुत्र को समस्त धन दे दिया। छोटे पुत्र को स्वकीय राज्य दे दिया। छोटे पुत्र ने राज्य पाय के बड़े भ्राता से कहा कि तुम मेरे देश तें निकल जावो, तब तो वह तिलाचार होकर मूलत्राण नगर अर्थात् मुलतान के पास में चला आया। और उस के और २ जातियों के मित्र जो थे वे भी चलि आवे तब तो उसने कहा कि हम सब एक जाति कहलावैं और एक अपने नाम पर ग्राम बसावें जहां हमारी जाती सब सुखपूर्वक निवास करें। इस सलाह को सब ने माना तब उस राजकुमार ने सब को कहा कि हम सब रुट् (कोप) कभी करैं नहीं आपस में अतएव अरुट् हमारा नाम हुआ। सब ने

प्रसन्न होके माना। परंच जो जो पुरुष आये थे उनके नाम से मरट् में भी कई जाति हो गई सो सब इस पंचनद देश में विस्तृत हैं। इसी समय उस राजकुमार ने उक्त नगर के निकट में एक मरट् कोट नाम ग्राम बनवाय कर निवास किया जिस को आज काल मारोड़कोट कहते हैं। यह ग्राम अरोड़ों का पूर्व निवास भूमि है। आज काल भी कई एक पुरुष उसी स्थान में जाय के विवाहादि करि आते हैं। जिन्हों को इस देश में कन्या नहीं मिलती हैं। अब देश प्रभाव से इस देश के लोक आचार से हीन होते हैं दूसरे गदहा को अनेकही पुरुष रखते हैं उसपर निःसंक सवार भी हो जाते हैं अतएव नीच गिने जाते हैं नहीं तो जाति में अच्छे हैं। जो लघुराजकुमार क्षत्री था उस को इस पांचाल देश के लोगों ने खत्री शब्द से प्रसिद्ध किया क्योंकि जो श्री गुरु अंगद जी ने गुरुमुखी अक्षर बनाये उस में केवल मूर्द्धन्य खकार है और (क्ष) अक्षर नहीं है अतएव देश बोली से सब खत्री कहलाने लगे। सोई रीति अद्यावधि चली आती है। इत्यादि प्रकार से प्रसिद्ध है। जो आकाश निवासी ३ ऋषि हैं उनका नाम १ मार्कंड २ पराशर ३ खर्लिंग इत्यादि सुदर्शन संहिता में लिखा है। खर्लिंग की सन्तान खत्री कहलाते हैं। यह आख्यायिका उक्त संहिता के द्वादश अध्याय में विदित है। इत्यलम्बहुना।

(शालिग्रामदास)

लोग कहते हैं कि खत्री हयहो वंश के वंश में हैं। सहस्राऽर्जुन से और परशुराम से जब युद्ध ठनी तो परशुराम ने उस वंश के क्षत्रियों को मार डाला और यह प्रतिज्ञा किया कि इस वंश के क्षत्री को निर्वंश कर डालेंगे। यह प्रतिज्ञा सुनकर उस वंश के दूषण कुलकलंक कई एक कायरों ने यह कह कर बच गय कि हम बनियों के बालक हैं। और जब परशुराम जी चले गये तो ये जाकर हयहोवंशियों से कहने लगे कि भाई हम लोग विपत्ति में ऐसा कहकर बच गये यह सुन कर उन सबों ने बहुत प्रकार से धिक्कार दिया और कहा कि रे चांडाल तुम सबों ने यह क्या किया अपनी जननी को कलंक लगाया। हाय ! तुम सब क्षत्री कुल में कलंक पैदा हुए। जाओ यहां से भागो दूर हटो न तो अभी शिर काट लेंगे क्या तुम सब हम लोगों के तुल्य हो सकते हो ? अपने वंश के लोगों की रक्षा क्या करोगे अपने बाप के माथे पाप चढ़ाये अब हम लोग तुम लोगों के साथ कोई व्यवहार न रक्खेंगे तुम लोगो ने अपने माता पिता को कैसा कलंक लगाया। यह सुनकर ये सब अपनी श्री गवांकर वहां से आके वैश्यों से कहा कि भाई तुम लोग अपनी जाति अर्थात् वैश्य हम लोगों को बनाओ। कारण हम लोग बनियां के बालक कहकर बच गये हैं और अपनी सारी व्यवस्था कह गये। बनियांओं ने भी इस बात को अस्वीकार किया अर्थात् कहा कि आज विपति पड़ने पर तुम लोग बनियां के बालक कहकर बच गये कल विपति पड़ने पर शूद्र के बालक कहोगे इस से हम लोग तुम लोग को वैश्य अर्थात् बनियां न बनावेंगे इस बात को सुनकर ये लोग बड़े विपद में पड़े और आपस में सलाह कर के न क्षत्री न वैश्य एक विचित्र जाति खत्री बन गये।

कोई कोई कहते हैं कि खात नामक राजपूत के वंश में एक वेश्या से इन लोगों की उत्पत्ति है और कोई २ कहते हैं कि नहीं

ये लोग बढ़ई के वंश में हैं अर्थात् बढ़ई की जाति कहते हैं काल प्रभाव से कुछ द्रव्य पाकर वैश्यों के गिनती में होगये। जो हो कोई ऐसा भी कहते हैं कि खेचर नामक राजपूत के वंश में खत्री हैं कोई कहते हैं कि ये लोग क्षत्री हई नहीं हैं क्योंकि परशुरामजी से जो लोग अभय पाये हैं वे लोग वैश्य क्षत्री हैं जो वैश्यवारे में रहते हैं। और खत्रियों की दास की पदवी अब तक प्रचलित है इन से ये लोग शूद्र हैं परन्तु बड़े अपसोस की बात है कि जिनका बाप दास उनके बेटा अपने को क्षत्री लिखते हैं ठीक है "श्याह सुत सेर होत निधन कुबेर होत दीनन की फेर होत मेरु होत माटि को"। कोई कहते हैं कि यदि इन के मूल पुरुष क्षत्री थे तो भी ये अब क्षत्री नहीं हो सक्ते कारण खानपान बैठब उठब सब क्षत्रियों से न्यारी है और मूल्य पुरुष तो पैठान के भी क्षत्री हैं क्योंकि प्रार्थियन से पैठान शब्द बना है और वेणु वंश के कोल भील खरो आदि हैं तो क्या अब वे क्षत्री हो सक्ते कदापि नहीं। कोई कहते हैं कि चीनी लवण आदि का व्यापार करने से ब्राह्मण शूद्र होजाता है तो क्षत्री होकर लवणादि बेचे तो क्या रहा इसी भांति से लोग अनेक प्रकार से खत्रियों की उत्पत्ति या वर्णनिर्णय बतलाते हैं परन्तु मैं इन बातों को छोड़ कर नृपवंशावली से पता देता हूं कि ये लोग क्षत्री के वंश में हैं।

दोहा—एक समय वसुधा भई, कामधेनु को रूप।
पुलक गात रोमांच युत, भारि दियो तन कूप। १।
तेहि रोमांच के मूल ते, प्रगटेउ क्षत्री खानि।
तासों निज निज नाम सभ, बिधिवत कहो बखान। २।
जादव वंश निशेन नृप, खत्री जाति बिजवान।
अगरवार सुरवार भौ, पंचगोतिया नृप जान। ३।
महीदहार काठिहार पुनि, धाकर और सिरमौर।
लकारिहार जनवास पुनि, बड़ गुंजर महिमौर। ४।

भदवरिया प्रगटे बहुरि, काश्यप और सोमवंश ।
भंडवलिया गार सहित, पाछिल भौ अवतंश । ५ ।
कठहरिया उत्पन्न भौ, मलन हांस करिहार ।
पोड पुंडर बुंदेल पुनि, गौरवार भिलवार । ६ ।
हाडा भए नरवनी, छत्री अति रणधीर ।
पछु दान वर्णन करी, विरदावलि अति बीर । ७ ।
सोनकी और जगार भौ, बहुरि तरेढ गरेर ।
ठकुराई लांवत कह्यौ, खीची और धंधेर । ८ ।
पुनि भौ प्रगट सिहोगिया, छत्री नृपति कुलीन ।
किनवार सिंघेल नृप, कुलपालक अवहीन । ९ ।
पुनि प्रगटेउ महरौठ नृप, कामधेनु ते जानि ।
करचोलिया छत्री भएउ, एहि प्रकार सभ खानि ॥ १० ॥
नागवंशी छत्री भए, गडवरिया लकसेल ।
जाति वंश कुल उत्तम, पुनि प्रगटेउ रकसेल ॥ ११ ॥
अनटैया अगरेढ नृप, कुश भौ नाम निहार ।
अपर वंश कहँ लागि कहौं, भए धेनु औतार ॥ १२ ॥

[शिवराम सिंह]

बादशाहदर्पण

अर्थात्

हिन्दुस्तान के मुसल्मान बादशाहों के समय और जन्म
आदिक मुख्य बातों के वर्णन का चक्र।

भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित.

क्षत्रियपत्रिकासम्पादक म० कु० बाबू रामदीन सिंह सङ्कलित.

राय साहिब रामरणविजय सिंह द्वारा प्रकाशित.



'खड्गविलास प्रेस, बांकीपुर, पटना
बाबू रामप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित
ई० स० १२—१९१७.

दूसरी बार।

भूमिका ।

रामायण में भगवान् वाल्मीकिजी ने कहा है जो वस्तु छुई है नाश होगी जो खड़ी है गिरेंगी, जो मिले हैं बिछुड़ेंगे, और जो जीते हैं अवश्य मरेंगे । सच है, इस जगत की गति पहिये की आर की भांति है । जो आर अभी ऊपर थी नीचे गई और जो नीचे थी ऊपर हो गई । आधीरात को सूर्य का वह प्रचंड तेज कहां है जो दो पहर को था ? दिन को ठंढी किरनों से जी हरा करनेवाला चन्द्रमा कहां है ? संसार की यही गति है । जो भारतवर्ष किसी समय में सारी पृथ्वी का मुकुटमणि था, जिस की आन सारा संसार मानता था और जो विद्या वीरता और लक्ष्मी का एक मात्र विश्राम था वह आज हीन दीन हो रहा है— यह भी काल का एक चरित्र है ।

जब से यहां का स्वाधीनता सूर्य अस्त हुआ उस के पूर्व समय का उत्तम श्रृङ्खलाबद्ध कोई इतिहास नहीं है । मुसलमान लेखकों ने जो इतिहास लिखे भी हैं उन में आर्यकीर्त्ति का लोप कर दिया है । आशा है कि कोई माई का लाल ऐसा भी होगा जो बहुत सा परिश्रम स्वीकार कर के एक बेर अपने 'बाप दादों' का पूरा इतिहास लिख कर उन की कीर्त्ति चिरस्थायी करेगा ।

प्यारे भोले भाले हिन्दू भाइयो! अकबर का नाम सुन कर आप लोग चौंकिए मत। यह ऐसा बुद्धिमान शत्रु था कि उस की बुद्धि बल से आज तक आपलोग उस को मित्र समझते हैं। किंतु ऐसा है नहीं। उस की नीति (policy) अङ्गरेज़ों की भांति गूढ़ थी। मूर्ख औरङ्गज़ेब उस को समझा नहीं, नहीं तो आज दिन आधा हिन्दुस्तान मुसल्मान होता। हिन्दू मुसलमान में खाना पीना व्याह शादी कभी चल गई होती। अङ्गरेज़ों को भी जो बात नहीं सूझी वह इस को सूझी थी।

यद्यपि उस उर्दू शेर के अनुसार 'बागवां आया गुलिस्तां में कि सैयाद आया। जो कोई आया मेरी जान को जल्लाद आया।' क्या मुसल्मान क्या अङ्गरेज़ भारतवर्ष को सभी ने जीता, किन्तु इन में उन में तब भी बड़ा प्रभेद है। मुसल्मानों के काल में शत सहस्र बड़े बड़े दोष थे किन्तु दो गुण थे। प्रथम तो यह कि उन सबों ने अपना घर यहीं बनाया था इस से यहां की लक्ष्मी यहीं रहती थी। दूसरे बीच बीच में जब कोई आग्रही मुसल्मान बादशाह उत्पन्न होते थे तो हिन्दुओं का रक्त भी उष्ण हो जाता था इस से वीरता का संस्कार शेष चला आता था। किसी ने सच कहा कि मुसल्मानी राज्य हैज़े का रोग है और अङ्गरेज़ी क्षयी का। इन की शासनप्रणाली में हमलोगों का धन और वीरता निःशेष होती जाती है। बीच में जाति पक्षपात, मुसल्मानों पर विशेष दृष्टि आदि देख कर लोगों का जी और भी उदास होता है। यद्यपि लिबरल दल से हमलोगों ने बहुत सी आशा बांध रक्खी है पर वह आशा ऐसी है जैसे रोग असाध्य हो जाने पर विषवटी की आशा। जो कुछ हो, मुसल्मानों की भांति इन्हों ने हमारी आंख के सामने हमारी देवमूर्तियां नहीं तोड़ीं और स्त्रियों को बलात्कार से छीन नहीं लिया, न घास की भांति सिर काटे गए और न जबरदस्ती मुंह में थूक कर मुसल्मान किए गए।

अभागे भारत को यही बहुत है। विशेष कर अङ्गरेज़ों से हम लोगों को जैसी शुभ शिक्षा मिली है उस के हम इन के ऋणी हैं। भारत कृतघ्न नहीं है। यह सदा मुक्तकंठ से स्वीकार करेगा कि अङ्गरेज़ों ने मुसलमानों के कठिन दंड से हम को छुड़ाया और यद्यपि अनेक प्रकार से हमारा धन ले गए किन्तु पेट भरने को भीख मांगने की विद्या भी सिखा गए।

मेरे प्रमातामह राय गिरधरलाल साहब जो यावनी विद्या के बड़े भारी पंडित और काशीस्थ दिल्ली के शहज़ादों के मुख्य दीवान थे, उन की इच्छा से दिल्ली के प्रसिद्ध विद्वान सैयद अहमद ने एक ऐसा चक्र बनाया था जिस में तैमूर से ले कर शाहआलम तक सब बादशाहों के नाम आदि लिखे थे। उस फारसी ग्रन्थ से इस में बहुत सी बातें ली गई हैं इस कारण तैमूर के पूर्व के बादशाहों का वर्णन इतना पूरा नहीं है जितना तैमूर के पीछे है। फिर मेरे मातामह राय खीरोधरलाल ने बहादुरशाह के काल से आरम्भ तक शेष वृत्त संग्रह किया। और और बातें और स्थानों से एकत्र की गई हैं। इस में परंपरागत बहुत से बादशाहों के नाम हैं जो और इतिहासों में नहीं मिलते।

यद्यपि इस से कुछ विशेष उपकार नहीं है किन्तु हम लोगों का इस से बहुत सा कौतूहल शान्त होगा जब हमलोग इस में बादशाहों की माता आदि के नाम जो अन्य इतिहासों में नहीं हैं पढ़ेंगे।



नम्बर	नाम बादशाहों का	बाप का नाम	जाति	राज्यपाने का समय	[illegible]	[illegible]	[illegible]	[illegible]
१	कुतुबुद्दीन ऐबक	०	गोरीबाद-शाहों के दास	१२०६	घोड़ा परसे गिर कर मरा	१२१०	[illegible]	[illegible]
२	आरामशाह	कुतुबुद्दीन	०	१२१०	[illegible]	०	[illegible]	[illegible]
३	शमसुद्दीन अलतिमश	०	०	१२१०	०	१२३६	[illegible]	[illegible]
४	रुकनुद्दीन फीरोजशाह	शमसुद्दीन अलतिमश	०	१२३६	०	१२	[illegible]	
५	रजिया बेगम	[illegible]	०	१२३६	०	१२४०	[illegible]	
६	मुईजुद्दीन बहराम	[illegible]	०	१२४०	०	[illegible]	[illegible]	
७	अलाउद्दीन मसऊद	फीरोजशाह	०	१२४१	[illegible]	[illegible]	[illegible]	
८	नासिरुद्दीन महमूद	अलतिमश	०	१२४६	[illegible]	[illegible]	[illegible]	
९	गयासुद्दीन बलबन	०	०	१२६६	[illegible]	[illegible]	[illegible]	
१०	मुईजुद्दीन कैकबाद	बुगराखां बलबन का बेटा	खिलजी	१२८७	[illegible]	[illegible]	[illegible]	
११	जलालुद्दीन फीरोजशाह खिलजी	०	पठान	१२९०	[illegible]	[illegible]		
१२	अलाउद्दीन	जलालुद्दीन का भतीजा था	[illegible]					

नम्बर	नाम बादशाहों का	बाप का नाम	जाति	राज्यपाने का समय	अवस्था	मरने का समय	मृत्यु का कारण	विवरण।
								इसी चाडाल ने तोडा। वडा ही क्रूर और उपद्रवी था।
१३	कुतुबुद्दीनमुबारकशाह	अलाउद्दीन	तथा	१३१६	०	१३२१	हिन्दूगुलाम के हाथ मारा गया	बाप की भांति गोवहन्ता और क्रूर था। विशेषता यह थी कि आप विषयी और नीच भी थे। इस के पीछे चार महीने इस के गुलाम खुसरो खा ने सिक्का चलाया।
१४	गयासुद्दीन	०	तुगलक	१३२१	०	१३२५	काठ के मकान के नीचे दब कर मरा	अच्छा था।
१५	फखरुद्दीनमहम्मद तुगलक (अलगू खा)	गयासुद्दीन	तथा	१३२५	०	१३५१	स्वाभाविक	राजा शिवप्रसाद के लिखने के अनुसार वडा दाता वडा पडित वडा बुद्धिमान वडा भाग्यवान वडा वीर वडा मूर्ख वडा क्रूर वडा झक्की और वडा पागल था।
१६	फीरोजशाह	मुहम्मद	तथा	१३५१	९०	१३८८	तथा	अच्छा था। बहुत से धर्मार्थ काम किए।
१७	गयासुद्दीन	फीरोज शाह	तथा	१३८८	०	१३८९	मारा गया	पाच महीने राज्य किया। मूर्ख था।
१८	अबूबकर	तथा (पोता)	तथा	१३८९	०	०	कैद में मरा	एक वर्ष भी पूरा राज्य न किया।
१९	नासिरुद्दीन मुहम्मद	तथा	तथा	१३९०	०	०	स्वाभाविक	
२०	हुमायूँ सिकन्दर शाह	नासिरुद्दीन	तथा	१३९४	०	१३९४	तथा	केवल ४५ दिन बादशाह था।
२१	नासिरुद्दीन महमूद	सिकन्दर शाह	तथा	१३९४	०	१४१२	तथा	

ख

मरने के पीछे उप-नाम क्या हुआ।	कहां गाड़े गये।	ईस्वी सन् जुलूस।	ईस्वी मर[illegible]
०	बदाऊं	१४४६	[illegible]
०	दिल्ली	१४५०	[illegible]
०	दिल्ली	१४८८	[illegible]
०	पानीपत	१५१६	[illegible]
फिरदौस आराम-गाह	[illegible]	१५२६	[illegible]
जन्नत आशियानी	दिल्ली	१५३०	[illegible]

नम्बर	नाम बादशाहों का	बाप का नाम	जाति	राज्यपाने का समय	अवस्था	मरने का समय	मृत्यु का कारण	विवरण।

मुसल्मान राज्यत्व का संक्षिप्त इतिहास।



सन् ५७० में महम्मद का जन्म हुआ। ४० बरस की अवस्था में उन्हों ने मुसल्मान धर्म्म का प्रचार किया। सन् ६३२ में इन की मृत्यु हुई। इन के उत्तराधिकारियों में वलीद खलीफा ने अपने भतीजा कासिम को ६००० फौज के साथ सिन्धु देश जय करने को भेजा। सिन्धु का राजा दाहिर युद्ध में मारा गया और इस की दो बेटियों के कौशल से कासिम को भी वलीद ने मार डाला।

सन् ८१२ में मामूं ने हिन्दुस्थान पर फिर चढ़ाई किया किन्तु चित्तौर के राजा खुमान ने २४ बेर युद्ध कर के उन को भगा दिया।

सैन्य ले कर उस से भिड़ा, किन्तु ठीक युद्ध के समय उस के हाथी के बिचलने से वह लड़ाई भी महमूद जीता और नगरकोट लूट कर भारतवर्ष की अनन्त लक्ष्मी ले गया। इस में २० मन तो केवल जवाहिर था (१००८ ई०)। अबुलफतह के बागी होने से मुलतान पर उस की पांचवीं चढ़ाई हुई (१०१०)। छठी बेर उस ने थानेश्वर लूटा (सन् १०११)। सातवीं और आठवीं चढ़ाई इस ने सन् १०१३ और १०१८ में कश्मीर पर किया, किन्तु वहां के राजा संग्रामदेव ने इस को हटा दिया। नवीं बार यह सन् १०१७ में बड़ी धूम से कन्नौज पर चढ़ा, किन्तु कन्नौज के राजा के दासत्व स्वीकार करने से मथुरा नाश करता हुआ लौट गया। १० वी चढ़ाई इस की सन् १०२२ में कालिंजर पर हुई और उसी बरस ११ वी चढ़ाई इस की फिर लाहौर पर हुई। १२ वीं बेर गुजरात पर चढ़ाई कर के सन् १०२४ में सोमनाथ का प्रसिद्ध मन्दिर तोड़ा। इस के पीछे वह हिन्दुस्तान में नहीं आया और सन् १०३० में मर गया। इस के वंश वालों का हिन्दुस्तान में केवल पंजाब पर कुछ अधिकार रहा।

गज़नी राज्य निर्बल होने पर जगतदाहक अलाउद्दीन गोरी ने गज़नी के अन्तिम राजा बहराम को मार कर अपने को बादशाह बनाया और कुछ दिन पीछे उस के भतीजे शहाबुद्दीन महम्मद ग़ोरी ने बहराम के पोते को मार कर गज़नी के राज्य का नाम भी शेष नहीं रक्खा। यही महम्मद हिन्दुस्थान में मुसलमानों के राज्य का मूल है। इस ने सन् ११७६ से लेकर १६ बरस तक कई बेर हिन्दुस्थान पर चढ़ाई किया किन्तु कुछ फल नहीं हुआ। कन्नौज के राजा जयचन्द के बहकाने से इस ने सन् ११६१ में दिल्ली के चौहान राजा पृथ्वीराज पर बड़ी धूम से चढ़ाई किया था, किन्तु तरौरी नामक स्थान में घोर युद्ध के पीछे पृथ्वीराज से हार कर वह अपने देश को लौट गया। सन् ११६३ में

यह मर गया। इस का पुत्र आरामशाह साल भर भी राज्य करने न पाया था कि इस के बहनोई शमसुद्दीन ने जो पहिले एक गुलाम था इस को सिंहासन से उतार कर मुकुट अपने सिर पर रक्खा। इस के समय में बंगाला मुलतान कच्छ सिन्धु कन्नौज बिहार मालवा और ग्वालियर तक दिल्ली के राज्य में मिल चुका था। इस के मरने के पीछे इस का बेटा रुकुनुद्दीन फीरोज़ बादशाह हुआ किन्तु यह ऐसा नष्ट था कि इस को उतार कर लोगों ने इस की बहिन रज़िया बेगम को बादशाह बनाया। साढ़े तीन बरस राज्य कर के बलवाइयों के हाथ से यह भी मारी गई। इस का भाई मुईजुद्दीन बहराम दो बरस दो महीना बादशाह रहा फिर लोगों ने इस को कैद कर के इस के भतीजे अलाउद्दीन मसऊद को बादशाह बनाया। किन्तु चार बरस बाद यह भी मारा गया और इस का चाचा नसीरुद्दीन महमूद बादशाह हुआ। अल्तिमश का दास और दामाद बलबन इस के समय में मन्त्री था और इस ने नरवर और चन्देरी का किला तथा ग़ज़नी का राज्य जय किया था। सन् १२६६ में नसीर के मरने पर बलबन बादशाह हुआ और बीस बरस राज कर के ८० बरस की अवस्था में मर गया। इस का पोता कैकुबाद राजा हुआ किन्तु यह ऐसा विषयी था कि दो बरस भी राज्य न करने पाया कि लोगों ने इस को मार डाला और दिल्ली का राज्य गुलामों के वंश से निकल कर खिलजियों के हाथ में आया।

पंजाब से आकर सत्तर वर्ष की अवस्था में जलालुद्दीन ख़िलजी तख्त पर बैठा। मालवा और उज्जैन उस के समय में विजय हुए। इस के भतीजे अलाउद्दीन ने सन् १२९४ में देवगढ़ भी जीत लिया। किन्तु दुष्ट अलाउद्दीन ने इस विजय के पीछे ही अपने वृद्ध चाचा को प्रयाग में मिलने के समय कटवा दिया और आप बादशाह हुआ। (१२९५) बादशाह होते ही इस ने जलालु

ने बादशाह हो कर (१३१७) अपने छोटे भाई को अन्धा किया और बहुत से सर्दारों को मार डाला। यह अति विषयी और मूर्ख था। इस के एक हिन्दू गुलाम ने जिस का मुसलमान होने पर खुसरो नाम हुआ था १३१६ मे मलाबार जीता और १३२० में मुबारक को सकुटुम्ब काट कर आप राज पर बैठा। दिल्ली में चार महीने तक इस का सिक्का चलता रहा। इस के समय में हिन्दुओं ने मुसलमान सर्दारों की स्त्रियों को दासी और वेश्या बनाया मसजिदों में मूरत बिठा दीं और कुरान की चौकी बना कर उस पर बैठते थे। यह उपद्रव सुन कर पंजाब का सूबेदार ग़ाजी खां सेना लेकर दिल्ली में आया और खुसरो को मार कर आप बादशाह बना।

ग़ाज़ी खां ने बादशाह होकर अपना नाम गयासुद्दीन तुगलक रक्खा (१३२१) इस का बाप बलबन का गुलाम था। बीडर और बारंगोला जीता। तुगलकाबाद का किला बनाया। तिरहुत जीत कर जब लौटा, तो नगर के बाहर इस के बेटे जूना ने एक काठ का नाचघर जो इस के लौटने के आनन्द मे बनाया था उस के नीचे दब कर मर गया। (१३२५) जूनाखां ने गद्दी पर बैठ कर अपना नाम मुहम्मद तुगलक रक्खा। (१३२५) इसका प्रकृत नाम फ़खरुद्दीन अलगखां था। पहिले यह बड़ा बुद्धिमान और बड़ा दानी था। हज़ार दर का महल बनाया। मुगलों से सुलह किया। और दक्षिण में अपना अधिकार फैलाया। पर पीछे से ऐसे काम किये कि लोग उसे पागल समझने लगे। हुकुम दिया कि दिल्ली की प्रजा मात्र दिल्ली छोड़ कर देवगढ़ में रहै, जिसको दक्षिण में दौलताबाद नाम से बसाया था। इस का फल यह हुआ कि देवगढ़ तो न बसी किन्तु दिल्ली उजड़ गई। अन्त में फिर दिल्ली लौट आया। फारस और खुरासान जीतने के लिये तीन लाख सतरह हज़ार सवार इकठ्ठे किए, इन में से एक लाख

को चीन लेने के लिये भेजा, ये सब के सब हिमालय में नष्ट हो गये, कोई न बचा। बहुत ले कर प्रचलित किये। लोग शहर छोड़ कर जंगलों में भाग गये पर वहां भी पीछा न छोड़ा और जानवरों की भांति उन लोगों का शिकार किया गया। कागज़ का सिक्का चलाया। बड़ा भारी दुर्भिक्ष पड़ा। लाखों मनुष्य मरे। चारो ओर विद्रोह हो गया। बंगाल और तैलंग स्वाधीन हो गये। मालवा पंजाब और गुजरातवाले विद्रोही हो गये। कर्नाटक में विजयपुर नाम का एक नया राज्य हो गया, हुसैन बामनी ने मध्यप्रदेश में एक नया राज्य बनाया। अन्त में विद्रोह शान्ति के लिये स्वयं सब जगह घूमा किन्तु मालवा और पंजाब छोड़ कर कहीं शांत न हुआ, रास्ते में सिन्धु के पास ठट्ठा में इसकी मृत्यु हुई (१३५१)। मुहम्मद का भाई फिरोज़शाह बादशाह हुआ (१३५१)। इस ने स्थान स्थान पर हम्माम, चिकित्सालय, सराय, पुल, तालाब, पाठशाल और सुन्दर महल बनवाये थे। कर्नाल से हांसी हिसार तक जमुनाजी नहर निकाली। इस ने अपने को अति वृद्ध समझ कर नसीरुद्दीन को राज्य दिया किन्तु इस के दो बरस पीछे नसीरुद्दीन के दो भाइयों ने बलवा करके इस को निकाल दिया और फ़िरोज़ शाह के पोते गयासुद्दीन को तख्त पर बैठाया। १३८८ में नब्बे बरस की अवस्था में फ़िरोज़ मरा, और उस के पांच ही महीने बाद १३८९ में इन्हीं बलवाइयों ने गयासुद्दीन को भी मार डाला और उस के भाई अबूबकर को बादशाह किया। अबूबकर साल भर भी राज्य नहीं करने पाया था कि नसीरुद्दीन उस को जीत कर आप बादशाह बन बैठा। चार बरस राज्य करके यह मर गया और इस का बड़ा बेटा हुमायूं अपने को सिकदर शाह प्रसिद्ध करके बादशाह हुआ। यह केवल ४५ दिन जीआ और इस के पीछे इस का छोटा भाई महमूद तुग़लक बादशाह हुआ (१३९४)। इस का अवस्था छोटी

होने के कारण राज्य में चारो ओर अप्रबंध हो गया और गुज़रात मालवा, और खांदेश के सूबे स्वतंत्र हो गये और वज़ीर बिगड़ कर जौनपुर का स्वतंत्र राजा बन बैठा। इसी समय अमीर तैमूर-लंग जो कि परमेश्वर की मानो मूर्त्तिमयी संहारशक्ति थी बहुत से तातारियों को लेकर हिन्दुस्तान में आया (१३९८)। यह लंगड़ा था। इस के नाम तैमूर साहबकिरां और गोरकां थे और जगद्दाहक चंगेज़ खां के वंश में था। पंजाब के रास्ते में भटनेर इत्यादि जितने नगर या गांव मिले उनको प्रलय की तरह लूटता और जलाता हुआ दिल्ली को भी खूब लूटा और जलाया। लाख मनुष्य जो रास्ते में पकड़ गये थे कतल किये गये। १५ बरस से छोटे लड़के गुलामी के लिये नहीं मारे गये। महमूद गुजरात में भाग गया और तैमूर के नाम का खुतबा पढ़ा गया। सन् १३९९ में मेरट लूटता हुआ यह अपने देश चला गया। महमूद फिर आया और ६ बरस राज्य कर के मर गया। और दौलत खां लोदी ने १५ महीने तक राज्य किया। तैमूर के सूबेदार खिज्र खां सैयद ने इस से राज्य छीन लिया। सैयद अहमद ने अपने जामेजम नामक चक्र में नसीरुद्दीन आदि दो तीन बादशाह और लिखे हैं जो और तवारीखों में नहीं हैं। १४१४ से १४२१ तक खिज़्र खां बादशाह रहा और उस के मरने पर उस का बेटा मुबारकशाह बादशाह हुआ। १४३६ में उस के मंत्री अबदुल सैयद और सदानन्द खत्री ने उस को मार कर उस के भतीजे मुहम्मद को बादशाह बनाया। १४४४ ई० में इस के मरने पर इस का बेटा अलाउद्दीन बादशाह हुआ। उस समय की बादशाहत नाम मात्र को थी। १४५० ई० में बहलूल लोदी ने पंजाब से आकर तख्त छीन लिया और अला-उद्दीन बदाऊं चला गया।

बहलूल के बादशाह होने से पंजाब दिल्ली में मिल गया। जौनपुर-वालों से छब्बीस बरस तक लड़कर उस ने वह बादशाहत भी

दिल्ली में मिलाली। १४८८ में इस के मरने पर इस का बेटा सिकंदर बादशाह हुआ। इस ने हिन्दुओं को अनेक कष्ट दिए। तीर्थ बंद कर दिए। पोर्चुगीज़ लोग पहले पहल इसी के काल में यहां आए। १५१६ में इस के मरने पर इस का बेटा इबराहीम बादशाह हुआ। यह ऐसा नीच और दुष्ट और अभिमानी था कि सब सूबेदार इस से फिर गए। पंजाब का सूबेदार सिकंदर लोदी जो इस का गोती था इस से ऐसा दुखी हुआ कि इस ने काबुल के बादशाह बाबर जो तैमूर से छठी पुश्त में था उस को अपनी सहायता को बुलाया। बाबर ने आतेही पहले सिकन्दर ही का राज नाश किया, फिर १५२६ मे पानीपत के प्रसिद्ध युद्ध मे इबराहीम को जीत कर आप हिन्दुस्तान का बादशाह हुआ।

बाबर ने बड़ी सावधानी से राज्य करना आरम्भ किया। दिल्ली के अधीनस्थ जो सूबे फिर गये थे सब जीते गए। १५२७, में मेवार के राजा संग्राम सिंह ने बहुत से देश जीत लिए थे, इस से कई बेर इन से घोर संग्राम हुआ, १४२८ में चन्देरी का किला टूटा। ७०० राजपूत बड़ी वीरता से खेत रहे। इसी साल राणा संग्राम सिंह ने रंतभंवर का किला ले लिया। १५२९ में बिहार, लाहोर, बंगाल आदि में अफ़गानों को बाबर ने पराजित किया। १५३० सन् में २६ दिसम्बर को बाबर की मृत्यु हुई। कहते हैं कि हुमायूं बहुत बीमार हो गया था। बाबर ने इस बात का इतना शोच किया कि आप ही बीमार होकर मर गया। बाबर में कई गुण सराहने के योग्य थे। हुमायूं ने राज्य पर बैठ कर अपने तीनों भाई कामरान्, हिन्दाल और अस्करी को यथाक्रम काबुल, सम्भल और मेवार का देश दिया। पहले जौनपुर का विद्रोह निवारण करके फिर वह गुजरात पर चढ़ा और वहां के बादशाह बहादुर शाह को बड़ी बहादुरी से जीत लिया। १५३७ में शेरशाह ने बंगाला जीत लिया और जब इधर हुमायूं शेरशाह

से लड़ने को आया तो बहादुर शाह फिर स्वतंत्र हो गया। शेरशाह पहले बाबर का एक सैनाध्यक्ष था। हुमायूं ने पहले तो चुनार शेरशाह से जीता, किन्तु पीछे शेरशाह ने विश्वासघात करके रोहतासगढ़ के राजा को मार कर उस के किले में अपना परिवार रख कर हुमायूं पर एकबारगी ऐसा धावा किया कि बनारस और कन्नौज तक जीत लिया। १५३९ में फिर एक बेर शेरशाह ने हुमायूं का पीछा किया और गंगा में कूद कर हुमायूं ने अपने को बचाया। सन् चालीस में फिर हुमायूं शेरशाह से हारा और गंगा में तैर कर किसी तरह फिर बच गया। दिल्ली पहुंच कर अपना परिवार लेकर वह लाहौर गया, किन्तु वहां भी शेरशाह ने पीछा न छोड़ा, इस से वह सिन्ध होता हुआ राजपुताने में आया। यहीं इसी आपत्ति के समय अमरकोट में १५४२ में अकबर का जन्म हुआ। डेढ़ बरस अमरकोट के राजा के आश्रय में रह कर हुमायूं ईरान में चला गया और वहां के बादशाह की सहायता से वहीं रहने लगा।

शेरशाह ने (१५४०) हुमायूं के अधीनस्थ सब राज्य अधिकार करके रायसेन, माड़वार और मालवा जीता। (१५४५) चित्तौर जीतने का दृढ़ संकल्प कर के मार्ग में कालिंजर का किला घेरे हुए पड़ा था कि रात को मेगज़ीन में आग लगने से झुलस कर प्राण त्याग किया। यह बड़ा धीर और बुद्धिमान् था। घोड़े की डांक, राजस्वकर, सराय, तहसीलदार आदि कई नियम उस ने उत्तम बांधे थे। बंगाले से मुलतान तक एक राजमार्ग इस ने बनवाया था। इस के मरने पर इस का छोटा बेटा जलालखां सलीमशाहसूर नाम रख कर बादशाह हुआ। १५५२ में इस के मरने पर इस के बेटे फिरोज़शाह को मार कर इस का साला मुहम्मदशाह अदली बादशाह हुआ। यह राज्य का सब भार हेमूं एक बनिये के ऊपर छोड़ कर आप अति विषय में प्रवृत्त

हुआ। चारो ओर बलवा हो गया। इसी वंश के इबराहीम सूर ने दिल्ली, आगरा, सिकंदर सूर ने पंजाब और मुहम्मद सूर ने बंगाला जीत लिया। हुमायूं, जो हिन्दुस्तान जीतने का अवसर देख ही रहा था, इस समय को अनुकूल समझ कर पंद्रह हज़ार सवार ले कर सिन्ध उतर कर हिन्दुस्तान में आया और (१५५५) पंजाब जीतता हुआ दिल्ली में पहुंच कर फिर से भारतवर्ष के सिंहासन पर बैठा। जितने देश अधिकार से निकल गए थे सब जीते गए। किन्तु मृत्यु ने उस को राज भोगने न दिया और एक दिन संध्या को महल की सीढ़ी पर से पैर फिसल कर गिरने से (१५५६) परलोक सिधारा।

इस की मृत्यु पर इस का पुत्र जगद्विख्यात अबुलमुज़फ्फ़र जलालुद्दीन मुहम्मद अकबर शाह साढ़े तेरह बरस की अवस्था में बादशाह हुआ। बैरम खां ख़ानखाना राज्य का प्रबन्ध करता था। बदख़शां के बादशाह सुलैमान शाह ने काबुल दख़ल कर लिया है, यह सुन कर बैरम अकबर को ले कर पंजाब के मार्ग से काबुल गया। इधर हेमूं * बनियां ने तीस हजार सैन्य ले कर दिल्ली और आगरा जीत लिया और पंजाब की ओर अकबर के जीतने को आगे बढ़ा। बैरम खां ने यह सुन कर शीघ्रही दिल्ली को बाग मोड़ी और पानीपत में हेमूं से घोर युद्ध हुआ, जिस में हेमूं मारा गया और बैरम की जीत हुई। इस जय से बैरम को इतना गर्व हो गया कि वह अकबर को तुच्छ समझने लगा। परिणामदर्शी अकबर उस की यह चाल देखकर बहाने से निकल कर दिल्ली चला आया और वहां (१५६०) यह इश्तिहार जारी किया कि सल्तनत का सब काम इस ने अपने हाथ में ले लिया है। बैरम इस बात से खिसिया कर बागी हुआ, किन्तु बादशाही

---

* इस का वास्तव में बसन्तराय नाम था। कई तवारीखों में इस की जाति दूसरी लिखी है। किन्तु अगरवालों के भाट इस को अगरवाला कहते हैं।

फ़ौज से हार कर बादशाह की शरण में आया। अकबर ने उस के सब अपराध क्षमा किए और भारी पिनशन नियत कर दी। किन्तु बैरम को उसी वर्ष मक्का जाती समय मार्ग में एक पठान ने मार डाला। इसी बैरम का पुत्र अबदुलरहीम ख़ां खानखाना संस्कृत और हिन्दी भाषा का बड़ा पंडित और कवि हुआ है। यों अट्ठारह बरस की अवस्था में अकबर इतने बड़े राज्य का स्वतंत्र कर्त्ता हुआ। उस ने अपनी परंपारगामिनी बुद्धि से यह बात सोच लिया कि बिना हिन्दुओं का जी हाथ में लिए उस की राज्यश्री स्थिर नहीं रह सकती। इस ने हिन्दू मुसल्मान दोनों को बड़े बड़े काम दिए। योधपुर और जयपुर के राजाओं की बेटियों से व्याह किया। मत का आग्रह छोड़ दिया। यहां तक कि कई हिन्दुओं के तोड़े हुए मन्दिर इस ने फिर से बनवा दिए। लखनऊ, जौनपुर, ग्वालियर, अजमेर इत्यादि इस के राज्य के आरम्भ ही में इस के आधीन हो गए थे। १५६१ में मालवा भी, जो अब तक राजा बाजबहादुर के अधिकार में था, इस के सेना पति ने जीत लिया। राजा के पहले ही पकड़ जाने पर उस की रानी दुर्गावती बड़ी शूरता से लड़ी। दो बेर बादशाही फौज को इस ने भगा दिया, किन्तु तीसरी लड़ाई में जब हार गई तो आत्मघात कर के मर गई। इस पवित्र स्त्री का चरित्र अब तक बुंदेलखंड में गाया जाता है। अकबर ने बाजबहादुर को अपना निज मुसाहिब बना कर अपने पास रक्खा। १५६८ में अकबर ने चित्तौर का क़िला घेरा। राणा उदयसिंह पहाड़ों में चले गए, किन्तु उन के परम प्रसिद्ध वीर जयमल्ल नामक सेनाध्यक्ष ने दुर्ग की बड़ी सावधानी से रक्षा किया। एक रात जयमल्ल किले के बुर्जों की मरम्मत करा रहा था कि अकबर ने दूरबीन से देख कर गोली का ऐसा निशाना मारा कि जयमल्ल गिर पड़ा। इस सेनाध्यक्ष के मरने से क्षत्री लोग ऐसे उदास हुए कि सब बाहर निकल आए।

स्त्रियां चिता पर जल गईं और पुरुष मात्र लड़कर वीर गति को गए। उस युद्ध में जितने क्षत्री मारे गए उन सब का जनेऊ अकबर ने तौलवाया तो साढ़े चौहत्तर मन हुआ। इसी से चिट्ठियों पर ७४॥ लिखते हैं, अर्थात् जिस के नाम की चिट्ठी है उस के सिवा और कोई खोले तो चित्तौर तोड़ने का पाप हो। यद्यपि चित्तौर का क़िला टूटा किन्तु वह बहुत दिन तक बादशाही अधिकार में नहीं रहा। राणा उदयसिंह के पुत्र राणा प्रतापसिंह सदा सर्वदा लड़भिड़ कर बादशाही सेना को नाश किया करते थे। जहां बरसात आई और नदी नालों से बाहर से आने का मार्ग बन्द हुआ कि वह क्षत्रियों को ले कर उतरे और बादशाही फौज को काटा। मानसिंह का तिरस्कार करने से अकबर की आज्ञा से १५७६ में जहांगीर और महावत खां के साथ बड़ी सेना लेकर मानसिंह ने राणा पर चढ़ाई की। प्रताप सिंह ने हल्दीघाट नामक स्थान पर बड़ा भारी युद्ध किया, जिस में बाईस हज़ार राजपूत मारे गए। इस पर भी राणा ने हार नहीं माना और सदा लड़ते रहे। अपने बाप के नाम से उदयपुर का नगर भी बसाया और बहुत सा देश भी जीत लिया। १५७२ में गुजरात, ७६ में बंगाला और बिहार, ८६ में कश्मीर, ९२ में सिंध और ९५ में दक्खिन के सब राज्य अकबर ने जीत लिए। अहमदनगर के युद्ध में [१६००] चांद सुलताना नामक वहां के बादशाह की चाची ने बड़ी शूरता प्रकाश की थी। इसी समय युवराज सलीम बागी हो गया और इलाहाबाद आदि अपने अधिकार में कर लिया। किन्तु अकबर जब दक्खिन से लौटा तो जहांगीर इस के पास हाज़िर हुआ। अकबर ने अपराध क्षमा करके बंगाला और बिहार इस को दिया। १५८३ में युसुफ़ज़ाइयों की लड़ाई में अकबर के प्रिय सभासद महाराज बीरबल मारे जा चुके थे और अबुलफ़ज़ल को जहांगीर के विद्रोह के समय ऊरछा के राजा ने मार डाला था,

तथा उस का दूसरा लड़का मुराद भी अति मद्यपान करके मर चुका था। अब (१६०५) में अकबर को उस के तीसरे लड़के दानियाल के भी अति मद्यपान से मर जाने का समाचार पहुंचा। इतने प्रियवर्ग के मर जाने से इस का चित्त ऐसा दुखी हुआ कि बीमार हो कर ६३ वर्ष की अवस्था में आगरे में अकबर ने इस असार संसार को त्याग दिया।

अकबर अति बुद्धिमान और परिणामदर्शी था। आलस्य तो इस को छू नहीं गया था। प्रथमावस्था में तो कुछ भोजन पानादि का व्यसन भी था किन्तु अवस्था बढ़ने पर यह बड़ा ही सावधान हो गया था। बरस में तीन महीना मांस नहीं खाता था। आदित्य वार को मांस की दूकानें बन्द रहती थीं। जिजिया नामक कर और प्रत्यक्ष गोहिंसा उस ने उठा दिया था और सती होना भी बन्द कर दिया था। कर का भी बन्दोबस्त अच्छा किया था। महाराज टोडर मल्ल (टण्डन खत्री) अबुलफजल, खानखाना, मानसिंह, तानसेन गंग, जगन्नाथ पंडितराज और महाराज बीरबल आदि सब प्रकार के चुने हुए मनुष्य इस की सभा में थे। कागज़, हुंडी, बही आदि का नियम इन्हीं टोडर मल्ल का बांधा हुआ है। विधवाविवाह के प्रचार में भी इस ने उद्योग किया था और तीर्थों का कर भी छूट गया था। भूमि की उत्पत्ति से तृतीयांश लिया जाता था और पन्द्रह सूबों में राज बंटा हुआ था।

अकबर के मरने पर सलीम नूरुद्दीन जहांगीर के नाम से सिंहासन पर बैठा। इस ने बहुत से कर जो अकबर के समय भी बच गए थे बन्द कर दिये। नाक कान काटने की सजा, बादशाही फौज का जमींदार या प्रजा से रसद लेना और अफीम और मद्य का प्रचार इस ने बन्द कर दिया। महल में एक सोने की जंजीर लटकाई थी कि किसी दीन दुखी की पुकार जो कोई राजपुरुष न सुने तो वह जंजीर हिला दे। जंजीर की घंटी के शब्द पर वह

आप बाहर निकल आता था और न्याय करता था। किन्तु १६०६ में जब उस का लड़का खुसरो पंजाब में बागी हो गया था तब जहांगीर ने उस के सात सौ साथियों को बड़ी निर्दयता से उस के आंख के सामने मरवा डाला। १६१० से चार बरस तक मलिक अम्बर और अहमद से लड़ाई होती रही। १६१४ में खुर्रम (शाहजहां) के साथ एक बड़ी सेना इस ने उदयपुर जीतने को भेजी थी, किन्तु राजा ने मेल कर लिया। १६११ में जहांगीर ने नूरजहां से ब्याह किया। नूरजहां का पिता ग़यासबेग ईरान का एक धनी था किन्तु विपत्ति पड़ने से वह व्यापार को हिन्दुस्तान आता था। मार्ग में नूरजहां का जन्म हुआ। गयास यहां आ कर अकबर के दरबार में भरती हो गया था। उसी समय से जहांगीर की नूरजहां पर दृष्टि थी, किन्तु अकबर के डर के मारे कुछ कर न सका और शेर अफगन नामक एक पठान अमीर के साथ, जिसे अकबर ने बंगाला और बिहार में जागीर दी थी, नूरजहां का ब्याह हो गया था। बादशाह होते ही जहांगीर ने बंगाले के सूबेदार को नूरजहां को किसी प्रकार भेज देने को लिखा। शेर अफगन बड़ी वीरता से मारा गया और नूरजहां बादशाह के पास भेज दी गई। चार बरस तक जहांगीर ने इस की सुश्रूषा कर के इस के साथ विवाह किया। फिर तो नूरजहां ही सारी बादशाहत करती थी, जहांगीर नाममात्र को बादशाह था। यह स्त्री चतुर भी अतिशय थी। १६२१ में जहांगीर का बड़ा बेटा खुसरो मर गया। परवेज़ मूर्ख था, इस से जहांगीर ने खुर्रम शाहजहां को ही अपना उत्तराधिकारी बनाना चाहा। किन्तु नूरजहां की बेटी जहांगीर के चौथे पुत्र शहरयार को ब्याही थी इससे नूरजहां ने उसी को बादशाह बनाने की इच्छा से जहांगीर का मन शाहजहां से फेर दिया। पिता का मन फिरा देख शाहजहां बागी हो गया। दक्षिण में और बंगाले में यह बराबर लड़ता रहा और बादशाही फौज इस

का पीछा छिप फिरती थी। अन्त में एक अर्ज़ी भेज कर बाप से इस ने अपराध की क्षमा चाही और अपने दो लड़कों को दरबार में भेज कर आप दक्षिण की सूबेदारी पर चला गया। नूरजहां ने एक बेर बंगाले के सूबेदार प्रसिद्ध वीर महाबतखां को हिसाब देने को बुला भेजा। महाबतखां इस आज्ञा से शंकित हो कर आया सही, किन्तु पांच हज़ार चुने हुए राजपूत अपने साथ लाया। इस समय जहांगीर काबुल जाता था। ज्योंही झेलम पार इस की सेना उतर चुकी थी कि महाबत खां ने बादशाह और बेगम को घेर कर अपने अधिकार मे कर लिया। किन्तु नूरजहां की चालाकी से कुछ दिन पीछे (१६२६) जहांगीर महाबतखां के अधिकार से निकल आया । १६२७ मे कश्मीर में जहांगीर ऐसा रोगग्रस्त हुआ कि लाहौर में आकर साठ बरस की अवस्था में मर गया। आसिफ़खां नामक नूरजहां के भाई ने जिस के हाथ में सारा राज्यचक्र था खुसरो के बेटे दाविरबख्श को नाममात्र बादशाह कर के आप काम काज करने लगा और शाहजहां को दक्खिन से बुला भेजा । शाहजहां के पहुंचने पर आसिफखां ने दाविरबख्श को मार डाला। कहते हैं कि चौदह महीने यह नाम मात्र को बादशाह था । इंग्लिस्तान के बादशाह जेम्स (१) का एलची सर टामसरो जहांगीर की सभा में आया था।

शाहजहां १६२८ में बड़ी धूमधाम से दिल्ली के तख्त पर बैठा। डेढ़ करोड़ रुपया उसी दिन व्यय हुआ था। महाबतखां और आसिफखां इस के मुख्य मंत्री थे। दिल्ली फिर से बसाई गई। सात करोड़ दस लाख रुपया लगा कर तख्तेताऊस (मोर का सिंहासन) बनवाया । आगरे में ताजगंज नामक प्रसिद्ध स्थान इसी बादशाह का बनवाया है। नूरजहां जहांगीर के पीछे २० बरस जीती रही और शाहजहां पच्चीस लाख रुपया साल इस देता था। शाहजहां ने जैसा राज भोगा और सुख किया और

हिन्दुस्तान की बादशाहत को चमकाया, पहले कभी ऐसा किसी और ने नहीं किया था। बत्तीस करोड़ साल इस की आमदनी थी। प्रति वर्ष सालगिरह में डेढ़ करोड़ व्यय होता था। मकानों में सोना और हीरा जड़ा जाता था। इस पर भी मरने के समय यह बयालीस करोड़ रुपया नकद छोड़ गया था। १६३२ में कन्दहार के ईरानी सूबेदार अलीसर्दारखां के शाहजहां से मिलजाने से कन्दहार फिर हिन्दुस्तान के राज्य में मिल गया था, किन्तु इक्कीस बरस पीछे ईरानियों ने फिर जीत लिया। १६४६ में बुखारा भी बादशाह ने जीता। १६४७ में कई बरस की लड़ाई के पीछे दक्षिण में भी शान्ति स्थापन हुई और अबदुल्ला शाह गोलकुंडे के बादशाह से सन्धि हो गई। इसी सन्धि में कोहनूर नामक प्रसिद्ध हीरा बादशाह के हाथ लगा। शाहजहां को चार पुत्र थे। दाराशिकोह, शुजा, औरंगज़ेब और मुराद। दाराशिकोह बड़ा बुद्धिमान, नम्र और उदार था, किन्तु औरंगज़ेब इस के विरुद्ध दीर्घदर्शी और महा छली था। शुजा वीर था, परन्तु अव्यवस्थित था और मुराद चित्त का बड़ा दुर्बल था। १६५७ में शाहजहां बहुत ही अस्वस्थ हो गया। दारा के हाथ में राज का शासन था। औरंगज़ेब ने इस अवसर को उत्तम समझ कर मुराद को बहकाया कि दोदिन दारा से बादशाहत तुम ले लो, हम तुम्हारी सहायता करेंगे और तुम को तख्त पर बैठा कर मक्के चले जायंगे। मुराद दारा से लड़ने चला। औरंगज़ेब भी आगे बढ़ कर उस से मिल गया। १६६२ में बंगाल से शाहशुजा भी फौज ले कर चढ़ा, किन्तु सुलैमांशिकोह (दाराशिकोह के बेटे) से बनारस के पास लड़ाई हार कर फिर बंगाले चला गया। मुराद और औरंगज़ेब इधर यशवन्त सिंह को जीतते हुए आगरे से एक मंज़िल श्यामगढ़ में आ पहुंचे। दारा एक लाख सवार लेकर इन से युद्ध करने को निकला। राजा रामसिंह, राजा रूपसिंह, छत्रसाल आदि कई क्षत्री

राजे उस की सहायता को आए थे और बड़ी वीरता से मारे गए। परमेश्वर को मुसलमानों का राज्य स्थिर नहीं रखना था इस से हाथी विचलने से दारा की फौज भाग गई और औरंगज़ेब ने आगरे में प्रवेश कर के विश्वासघातकता से मुराद को क़ैद कर के १६५८ में अपने को बादशाह बनाया। अन्त में एक दिन मुराद को भी मरवा डाला और सुलैमांशिकोह को भी, जो कश्मीर से पकड़ आया था, मरवा डाला। शुजा लड़ाई हार कर अराकान भागा और वहीं सवंश मारा गया। दारा ने सिंध की राह से अजमेर आकर बीस हज़ार सैना एकत्र कर के औरंगज़ेब पर चढ़ाई किया, किन्तु युद्ध में हार गया और औरंगज़ेब ने बड़ी निर्दयता से उस को मरवा डाला। उस के पुत्र सिपहशिकोह को ग्वालियर के किले में क़ैद किया और फिर बहुत से शाहज़ादों को, जिन को बादशाह से दूर का भी संबंध था, कटवा डाला। कहते हैं कि दाराशिकोह बादशाह होता तो लोग अकबर को भी भूल जाते। इस के पीछे शाहजहां सात बरस जिया था।

औरंगज़ेब के राज्य के आरम्भ ही से मुसलमानी बादशाहत का वास्तविक ह्रास समझना चाहिए। जिज़िया का कर फिर से जारी हुआ। हिन्दुओं के मेले और त्योहार बन्द किए। तीर्थ और देवमन्दिर ध्वंस किए गए। इसी से 'तीन पुश्त की कमाई' स्वरूप हिन्दुओं की जो दिल्ली के बादशाहों से प्रीति थी वह नाश हो गई। इधर दक्षिण में महाराष्ट्रों का उदय हुआ। शिवाजी नामक एक वीर पुरुष ने, जो यादवराव का नाती और मालुजी का पुत्र था, दक्षिण में अपनी स्वतंत्रता का डंका बजाया। पहले विजयपुर के राज में लूट-पाट कर के अपनी सामर्थ्य बढ़ा कर १६६२ में बादशाही देशों को लूटना आरम्भ किया। बादशाही सैन्नाध्यक्ष शाइस्ताख़ां

ने इन के विरुद्ध आ कर पूने में अपना अधिकार कर लिया। किन्तु असमसाहसी शिवाजी केवल पच्चीस मनुष्य साथ ले कर एक रात उस के डेरे में घुस गए और शाइस्ता बिचारे प्राण ले कर भागे। शिवाजी ने अबकी पूने से ले कर गुजरात तक अपना प्रताप बढ़ाया और तंजौर और मन्दराज जीत कर १६६४ में अपने को राजा प्रसिद्ध किया। औरंगज़ेब शिवाजी के इस साहस से बहुत ही खिसिया गया और जयसिंह के साथ बहुत सी सैना उसे जीतने को भेजी। राजा जयसिंह और शिवाजी से सन्धि हो गई और उस से मरहठे दक्षिण में बादशाही माल-गुज़ारी की चौथ लेने लगे। १६६५ में शिवाजी दिल्ली आए और औरंगज़ेब ने जब उन को नज़रबन्द कर लिया तो कुछ दिन पीछे बड़ी सावधानी से वह दिल्ली से निकल गए। १६६७ में औरंग-ज़ेब ने शिवाजी को राजा की पदवी भेज दी और बीजापुर और गोलकुंडा के बादशाहों से लड़ने को इन को कहला भेजा। शिवाजी इन दोनों बादशाहों से लड़े और अन्त में जब सन्धि हुई तो अपने राज्य का शिवाजी ने सुप्रबन्ध किया। १६६६ में शिवाजी का प्रभुत्व दक्षिण में स्थिर हो गया था, इस से औरंगज़ेब ने क्रोध करके महाबत खां को बड़ी सैना के साथ उन को दमन करने को भेजा, किन्तु (१६७०) शिवाजी ने उन को परास्त कर दिया। इसी समय सत्तनामी और सिख नामक दो दल हिन्दुओं के और औरंगज़ेब के विरुद्ध खड़े हुए। १६७८ में जोधपुर के राजा यशवन्त सिंह के सिंधुपार मारे जाने पर उन की स्त्री और पुत्र को निरपराध औरंगज़ेब ने कैद करना चाहा। यद्यपि दुर्गादास नामक सैनापति की शूरता से लड़के तो क़ैद नहीं हुए, किन्तु बादशाह की इस बेईमानी से राजपुताना मात्र विरुद्ध हो गया। उदयपुर के राणा राजसिंह, जयपुर के रामसिंह और सभी राजाओं ने बादशाह के विरुद्ध शस्त्र धारण किया। **इधर**

दुर्गादास ने औरंगज़ेब के लड़के अकबर को बहका कर बागी कर दिया और सत्तर हज़ार सेना लेकर अजमेर में बादशाही सेना से बड़ा युद्ध किया। १६८० में बिरार, खानदेश, बिल्लोर, मैसूर आदि देश में अपना अधिकार, यश और प्रताप विस्तार कर के शिवाजी मर गए। शिवाजी का पुत्र शंभुजी राजा हुआ और बादशाह के पुत्र मुअज़्ज़म को जीत कर बहुत देश लूटा, किन्तु एक युद्ध में बादशाही सेना से घिर कर पकड़ा गया और औरंगज़ेब ने उस को मरवा डाला। इधर बीस बरस के रगड़े झगड़े के पीछे गोलकुंडा और बीजापुर भी औरंगज़ेब ने जीत लिया। यद्यपि इस जीत से औरंगज़ेब का गर्व बढ़ गया, किन्तु साथ ही उस का आयुष्य और प्रताप घट गया। दक्षिण की लड़ाई के मारे खज़ाना खाली हो गया। हिन्दुओं का जी अति खट्टा हो गया। अन्त में १७०७ में ८६ वर्ष की अवस्था में औरंगज़ेब मर गया और मुगलों का सौभाग्य भी उसी के साथ कब्र में समाहित हुआ।

औरंगज़ेब के तीन लड़कों में से आज़म और मुअज़्ज़म दोनों ही बादशाह बन बैठे, किन्तु आज़म लड़ाई में मारा गया और कामबख़्श भी दक्खिन में मारा गया, इस से मुअज़्ज़म ही बहादुर शाह के नाम से बादशाह हुआ। इस ने उदयपुर, महाराष्ट आदि प्रबल राजों से सन्धि की। सिक्खों ने इस के समय में भी बड़ा उपद्रव किया। बहादुर शाह पांच बरस राज कर के मर गया। इस के पीछे सभी बादशाह बनने लगे और बहुत सा रुधिर बहने के पीछे (१७१२) जहांदार शाह बादशाह हुआ। यह भी साल भर नहीं रहा कि इस का भतीजा फरुख़सियर इस को सपरिवार मार कर आप बादशाह हो गया (१७१३) इस के समय में ,भाई बन्दा नामक सिख बड़ी धर्मवीरता से मारा गया। १७१६ में सैयद अब्दुल्ला और सैयद हुसैन,

जो इस के मुख्य सहायक थे, इस से बिगड़ गए और फर्रुखसियर मारा गया। सैयदों ने रफ़ीउल्दरजात और रफ़िउलशान को सिंहासन पर बैठाया, किंतु वे चार चार महीने में मर गए। जहांदार और फर्रुखसियर ने इतने शहजादे मार डाले थे कि सैयदों ने बड़ी कठिनता से रौशनअख़तर नामक एक शहजादे को खोज कर कैद से निकाला और मुहम्मद शाह के नाम से बादशाह बनाया। (१७१३) विद्रोह चारों ओर फैल गया। १७२० में मालवा और १७२५ में हैदराबाद स्वतंत्र हो गए। सैयद लोग इस के पूर्व ही मारे जा चुके थे। इधर भरतपुर में जाटों ने नया राज स्थापन कर के लूटपाट आरम्भ कर दी। इधर प्रतापशाली बाजीराव पेशवा ने दिल्ली के द्वार तक जीत कर चम्बल के दक्षिण का सब देश अपने अधिकार में मिला लिया। (१७३७) इस के सर्दारों में से हुलकर ने इंदौर, सेन्धिया ने ग्वालियर, गायकवाड़ ने बड़ोदा और भोंसला ने नागपुर राज्य स्थापन किया। इसी समय ईश्वर के क्रोध का एक पंचम अवतार ईरान का बादशाह नादिरशाह हिन्दुस्तान में आया। करनाल में मुहम्मदशाह ने इस से मुकाबिला किया, किन्तु जब हार गया तो नादिरशाह के पास हाज़िर हुआ। नादिर ने इस का बड़ा शिष्टाचार किया। दोनों बादशाह साथ ही दिल्ली आए। उस समय दिल्ली ऐसे निकम्मे और लुच्चे लोगों से भरी हुई थी कि दूसरे ही दिन लोगों ने यह गप्प उड़ा दी कि नादिरशाह मारा गया। बदमाशों ने उस के मनुष्यों को काटना आरम्भ कर दिया। इस बात पर नादिर ने ऐसा क्रोध किया कि सारी दिल्ली को काट देने का हुकुम दिया। डेढ़ पहर तक शाक की भांति लाख मनुष्य के ऊपर काटे गए। अन्त को महम्मदशाह रोता हुआ उस के सामने गया, तब नादिरशाह ने आज्ञा दिया कि काटना बन्द हो जाय। उस की आज्ञा ऐसी मानी जाती थी

कि उस के प्रचार होते ही यदि किसी ने किसी के शरीर में आधी तलवार गड़ाई थी तो वहीं से उठा ली—दिल्ली को यों उजाड़ कर के अट्ठावन दिन वहां रह कर सत्तर करोड़ का माल साथ ले कर नादिर अपने मुल्क को लौट गया (१७३९)। कुछ दिन पीछे उस के देशवालों ने नादिरशाह को मार डाला और अहमदशाह नामक उस का एक सैन्याध्यक्ष कन्दहार, बलख़, सिन्ध और कश्मीर का बादशाह बन बैठा। लाहौर लेते हुए (१७४७) हिन्दुस्थान में भी उस ने प्रवेश करना चाहा, किन्तु मुहम्मद शाह का पुत्र अहमद शाह ने सरहिन्द में युद्ध करके उस को पीछे हटा दिया, इस के पूर्व (१७४०) बाजी राव मर गए थे, किन्तु उन के पुत्र बालाजी राव ने मालवा ले लिया था। १७४८ में मुहम्मद शाह मर गया। यह अति रागरंगप्रिय और विषयी था। इस का पुत्र अहम्मद् शाह बादशाह हुआ। इस के समय में रुहेलों ने बड़ा उपद्रव उठाया था। किन्तु मरहट्टों ने इन का दमन किया। १७५४ में ग़ाज़ियुद्दीन ने अहमद शाह को अन्धा और क़ैद कर के जहांदारशाह के एक लड़के को तख़्त पर बैठाया और आलमगीर सानी उस का नाम रक्खा। ग़ाज़ियुद्दीन ने अहमदशाह दुर्रानी के पंजाब के सूबेदार की मां को क़ैद कर लिया था। इस बात से अहमदशाह ने ऐसा क्रोध किया कि बड़ी भारी सेना लेकर सीधा दिल्ली पर चढ़ दौड़ा। ग़ाज़ियुद्दीन बड़ी दीनता से उस के पास हाज़िर हुआ, किन्तु वह बिना कुछ लिए कब जाता था। (१७५५) बल्लभगढ़ और मथुरा लूटी और काटी गई। दिल्ली और लखनऊ के लोगों से भी रुपया वसूल किया गया। अन्त में नजीबुद्दौला को दिल्ली का प्रधान मन्त्री बना कर अपने देश को लौट गया। ग़ाज़ियुद्दीन ने मरहट्टों से सहायता चाही और पेशवा का भाई रघुनाथ राव दिल्ली पर चढ़ आया। नजीबुद्दौला भाग गया और ग़ाज़ियुद्दीन फिर वज़ीर हुआ। इधर मरहट्टों ने अहमदशाह

दुर्रानी के लड़के तैमूर को पंजाब से निकाल कर वह देश भी अधिकार में कर लिया, अर्थात् अब मरहट्टे सारे भारतवर्ष के अधिकारी हो गए। इसी समय ग़ाज़ियुद्दीन ने बादशाह को मार डाला और आप दिल्ली छोड़ कर भाग गया। अहमदशाह दुर्रानी इस बात से ऐसा क्रोधित हुआ कि बहुत बड़ी सेना ले कर फिर हिन्दुस्तान में आया। पेशवा ने यह सुन कर अपने भतीजे सदाशिवराव भाऊ के साथ तीन लाख सेना और अपने पुत्र विश्वास राव को उस से युद्ध करने को भेजा। मरहट्टों ने पहले दिल्ली को लूटा, फिर पानीपत के पास डेरा डाला। पहले कुछ सुलह की बातचीत हुई थी, किन्तु अन्त को ६ जनवरी १७६१ को दोनों दल में घोर युद्ध हुआ, जिस में दो लाख से ऊपर मरहट्टे मारे गए और अहमदशाह की जय हुई। इस हार से मरहट्टों का उत्साह, बल, प्रताप, सभी नष्ट हो गये और साथ ही मुग़लों का राज्य भी अस्त हो गया। शुजाउद्दौला ने आलमगीर के बेटे अलीगौहर को शाहआलम के नाम से बादशाह बनाया (१७६१)। यह दस बरस तक तो पहले नजीबुद्दौला के डर से इलाहाबाद में पड़ा रहा, फिर उस के मरने पर मरहट्टों की सहायता से दिल्ली में गया। थोड़े ही दिन पीछे ग़ुलामक़ादिर नामक नजीबुद्दौला के पोते ने दिल्ली लूट कर बादशाह को पृथ्वी पर पटक कर छाती पर चढ़ कर कटार से आंख निकाल ली और हाथ बांध कर वहीं छोड़ दिया। महाजी सेन्धिया यह सुन कर दिल्ली में आया और ग़ुलामक़ादिर को पकड़ कर बड़ी दुर्दशा से मारा और अन्धे शाहआलम को फिर से तख़्त पर बैठाया। चारो ओर उपद्रव था। १८०३ में लार्ड लेक ने अङ्गरेज़ी सेना ले कर दिल्ली को मरहट्टों के हाथ से लिया और शाहआलम को पिन्शन नियत कर दी। शाहआलम को अकबर सानी और उस को बहादुरशाह हुए। ये लोग साढ़े सोलह

लाख की जागीर और पिन्शन भोगते रहे। अन्त को वह भी न रही। यों मुसलमानों का प्रतापसूर्य आठ सौ बरस तप कर अस्ताचल को गया।

कनकपात्र रत नगजटित, फेंकत जौन उगार।
तिन की आजु समाधि पर, मूतत स्वान सियार॥
जे सूरज सों बढ़ि तपे, गरजे सिंह समान।
भुज बल विक्रम पारि निज, जीत्यो सकल जहान॥
तिन की आजु समाधि पैं, बैठ्यो पूछन काक।
'को' हौ तुम अब 'का' भए, 'कहां' गए करि साक॥

॥ इति ॥

ग्रन्थ का उपष्टम्भक।



अकबर ने काश्मीर में हिन्दुओं के हेतु एक मन्दिर का जीर्णोद्धार कराया था, क्योंकि उस को मुसलमान लोग तोड़ डाला करते थे। और इस पर उस की एक आज्ञा भी खुदी हुई है, जो यहां प्रकाशित होती है। इस से लोग उस का चित्त देखें।

کتابهٔ ابوالفضل بر لوح سنگ کلیساے کشمیر که بموجب
حکم اکبر تعمیر یافته بود وانرا اورنگزیب عالمگیر غازی مسمار
ساخت * الهی بهر کجا که مینگرم جویاے توانند و بهر
زبان که میشنوم گویاے توانند * شعر * کفر و اسلام در رهش
پویان * وحده لاشریک له گویان * اگر مسجدست بیاد
تو نعرهٔ قدوس مے زنند و اگر کلیساست بشوق تو ناقوس مے
جنبانند * شعر * گهه معتکف دیرم وگهه ساکن مسجد یعنی
که ترا می طلبم خانه بخانه * گرچه خاصان ترا بکفر و
اسلام کارے نه پس این هردو را در پردهٔ اسرار تو باری نه *
شعر * کفر کافر را و دین دیندار را * ذرهٔ درد دل عطار را * این
خانه که بنیت تالیف قلوب موحدان هندوستان خصوصا
معبود پرستان عرصهٔ کشمیر تعمیر یافته * شعر *

بفرمان خدیو تخت و افسر * چراغ آفرینش شاه اکبر * هرخانه
خراب که نظر بر صدق نه انداخته این خانه را خراب سازد باید
که نخست معبد خود را بر اندازد گرچه نظر بدل است باهمه
ساختنی ست و اگر چشم بر آب وگل ست همه انداختنی
ست * شعر * خداوندا خو دارے کار دادی * مدارے کار
بر نیت نهادی * توئی بر بارگاه نیت آگاه * به پیش شاه
دادی نیت شاه *

हे परमेश्वर! जिस स्थान को देखता हूं वहां सब तेरे ही खोज में हैं और जिस से सुनता हूं तेरी ही वात करते हैं। धर्म्माधर्म्म सब तेरे ही मार्ग में चलते हैं और एक ब्रह्माद्वैत ही का भाषण करते हैं। यदि तेरे वन्दना के स्थान हैं तो वहां तेरे पवित्र नाम की शब्दध्वनि करते हैं और यदि देवस्थान हैं तो वहां सब तेरे ही अभिलाषा में शंखनाद करते हैं। कभी मैं मूर्तिमन्दिर की परिक्रमा करता हूं और कभी तेरे वंदनालय में रहता हूं, अर्थात् तुझी को घर घर ढूंढ़ता हूं। यद्यपि जो लोग तुझ में ही लवलीन हो रहे हैं; उन्हें इस द्वैतता से कुछ प्रयोजन नहीं और इन दोनों को तेरे अंतर भेद में गम्य नहीं। मूर्तिपूजकों को मूर्तिपूजा और वन्दनावालों को वन्दना किसी प्रकार चित्तरोग की शान्ति है।

यह मन्दिर भारतवर्ष के ब्राह्मद्वैतवादियों के विशेष कर काश्मीर प्रान्त के प्रिय मूर्तिपूजकों के चित्त तोषार्थ सिंहासन और मुकुट के स्वामी साम्राज्य के मणिदीप महाराजाधिराज अकबर की आज्ञा से बनाया गया। जो सत्यानाशी सत्य पर दृष्टि न रखकर इस घर को गिरावेगा वह मानो अपने इष्ट का मन्दिर

ढहावेगा। यदि ईश्वर से सच्चे चित्त से सम्बन्ध है तो सब मत के स्थानों को बनाना चाहिये और मिट्टी पत्थर पर दृष्टि है तो सब को गिराना चाहिये।

हे ईश्वर! तू ही सब कर्म्मों के तत्व का समझनेवाला है और कर्म्मों की मूल मति है और तू ही हम लोगों की अन्तर मति को जानता है और तू ही ने राजा को राजा योग्य मति दी है।

किन्तु इस आज्ञापत्र पर दुष्ट औरंगजेब ने कुछ ध्यान न दिया और अपनी आज्ञा से इसे तोड़वा दिया।

औरंगज़ेब ने एक आज्ञा सन् १०६६ हिजरी में ऐसी प्रचलित की थी कि बनारस में न कोई मन्दिर तोड़े जायं, न हिन्दुओं को दुख दें। १०६८ में विश्वनाथ का मन्दिर उस ने तुड़वाया था, उस के साल भर पीछे न जानें क्या दया आप के चित्त में आई कि यह आज्ञा प्रचलित की गई, किन्तु यह आज्ञा उस की किसी विशेष युक्ति से शून्य नहीं थी, और यह आज्ञा कार्य में परिणत भी नहीं हुई, क्योंकि १०७७ में इसी काशी में कृत्तवासेश्वर का मन्दिर इसी की आज्ञा से तोड़ा गया था। वहां जो मस्जिद है उस का लेख भी यहां प्रकाशित होता है, इसी से उस के चित्त की कुटिलता स्पष्ट होगी। मन्दिर न तोड़नेवाला असली आज्ञापत्र काशी में महादेव नामक एक ब्राह्मण के पास अद्यापि विद्यमान है।



* بسم‌الله الرحمن الرحيم *

طغرع بادشاه

مهر بادشاه

حدا

لايق‌العنايه و المرحمه ابوالحسن بالتفات شاهانه اميدوار بوده بداند كه چون بمقتضاء مراحم ذاتي و مكارم جباي همگي همت والا نهمت و تمامي نيت حق طويت ما بر رفاهيت جمهور و انتظام احوال طبقات خواص و عوام مصروفست و ازروي شرع شريف و ملت منيف مقرر چنين است كه ديرهاي ديرين برانداخته نشود و بتكدهاو تازه بنا نيابد و درين ايام معدلت انتظام بعرض اشرف اقدس ارفع اعلي رسيد كه بعض مردم از راه عنف و تعدي بهنود سكنه قصبه بنارس و برخي امكنه ديگر كه بنواحي آن واقعست و جماعه برهمنان سدنه آنمحال كه سدانت بتخانه‌ء قديم آنجا بانها تعلق دارد مزاحم و معترض ميشوند و ميخواهند كه ايشانرا از سدانت آن كه از مدت مديد بانهان متعلق است بازدارند و اين معني باعث پريشاني و تفرقه حال اين گروه ميگردد لهذا حكم والا

من كه
سادر ميشود كه بعد از ورود اين منشور لامع النور مقرر كند كه
من بعد احدي بوجوه بيحساب تعرض و تشويش باحوال
برهمنان و ديگر هنود متوطنه آنمحال نرساند تا آنها بدستور
ايام پيشين بحال و مقام خود بوده بجمعيت خاطر بدعاء بقاء
دولت داد ابد مدت ازل بنياد قيام نمايند درين باب تاكيد
داند بتاريخ ۱۵ شهر جمادي الثانيه سنه ۱۰۶۹ هجري
نوشته شده -

شاهزاده سلطان محمد

مهر

سلطان

درساله نواب قدسي القاب نوباده بوستان خلافت گزين
ثمره شجره رفعت چراغ دودمان ابهت فروغ خاندان شوكت
قره ناصره دولت و اقبال طره ناميه حشمت و اجلال گرامي
نسب سمي المكان الممدوح بلسان المعد والحد شاهزاده نامدار
كامگار والا تبار محمد سلطان بهادر *

यह आज्ञापत्र शाहज़ादे मुहम्मद सुलतान बहादुर के नाम है। इस का आशय यह है—'कुरान में लिखा है कि पुराने मन्दिर को नहीं गिराना और नए नहीं बनाने देना। ऐसा सुना गया है कि बनारस के ब्राह्मणों को लोग दुख देते हैं, इस हेतु यह आज्ञा दी जाती है कि आगे से कोई हिन्दुओं के स्थानों को न

छोड़े और ब्राह्मणों को निर्विघ्न पाठ पूजा करने दे (इत्यादि) १५ जमादिउस्सानी १०६६।

इस के पीछे का कृत्तिवासेश्वर की मस्जिद पर का लेख।

زحکم شاہ سلطان شریعت * دلیل زھد برھان طریقت
شہاب آسمان سرفرازی * محمد شاہ عالمگیر غازی
سراصنام بتخانہ شکستہ * ظہور مسجد دلخواہ کشتہ
١٠٧٧
باستصواب نوراللہ مقتی * غلام درکہ پیراں حشتی
ثنام خانہ زینتست پیدا * ردولتخانہ تاریخش ہویدا
١٠٧٧ ھج

अर्थ—मुसलमानी धर्म के स्वामी (इत्यादि) औरंगज़ेब बादशाह की आज्ञा से देवमन्दिर के देवताओं के सिर तोड़ कर यह मस्जिद बनाई गई (इत्यादि) १०७७ हिजरी।



उदयपुरोदय

अर्थात्

मेवाड़ का पुरावृत्त संग्रह ।

भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित.

क्षत्रियपत्रिकासम्पादक म० कु० बाबू रामदीन सिंह सङ्कलित.

राय साहिब रामरणविजय सिंह द्वारा प्रकाशित.



'खड्गविलास' प्रेस, बांकीपुर, पटना
बाबू रामप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित.
ई० स० १२—१९१७.

दूसरी बार।

उदयपुरोदय।

—<>*<>—

मेवाड़ का शुद्ध नाम मेदपाट है। और यहां के महाराज की संज्ञा सोसोधिया है। कहते हैं कि इन के वंश में कोई राजा बड़े धार्मिक थे। एक समय वैद्यों ने छल से औषध मे मद्य मिला कर उन को पिला दिया, क्योकि जिस रोग मे वे ग्रस्त थे उस की औषधि मद्य ही के साथ दी जाती थी। शरीर स्वच्छ होने पर जब उन्हो ने जाना कि हम ने मद्य पीया था, तो उस के प्रायश्चित्त के हेतु गलता हुआ सीसा पीकर प्राण त्याग किया। तभी से सीसौधिया इस वंश की संज्ञा हुई। यही वंश भारतखण्ड में सब से प्राचीन और सब से माननीय है। इसी वंश में महात्मा मांधाता, सगर, दिलीप, भगीरथ, हरिश्चन्द्र, रघु आदि बड़े बड़े राजा हुए हैं और इसी वंश में भगवान् श्रीरामचन्द्र ने अवतार लिया है। इसी वंश के चरित्र में कालिदास, भवभूति, वररुच, व्यास, वाल्मीकि ने भी वह ग्रन्थ बनाए हैं जो अब तक भारतवर्ष के साहित्य के रत्नभूत हैं। हिन्दुस्तान में यही वंश ऐसा बचा है जिस में लोग सत्ययुग से लेकर अब तक बराबर राज्यसिंहासन पर अचल छत्र के नीचे बैठते आए। उदयपुरवाले ही ऐसे हैं जिन्हों ने और और विलायत के बादशाहों की बेटी ली, पर अपनी बेटी मुसलमान को न दी *।

---

* कहते हैं कि जब औरङ्गजेब ने उदयपुर घेर लिया था तब राना साहब शिकार

आज हम उसी बड़े पराक्रमशाली प्राचीन वंश का इतिहास लिखने बैठे हैं। इस में हमारे मुख्य सहायक ग्रन्थ टाड साहिब का राजस्थान, उदयपुर के वंशचरित्र के भाषाग्रन्थ और प्राचीन ताम्रपत्र हैं। जैसे संसार के सब राजों के इतिहास प्रारम्भ में अनेक आश्चर्य्य घटना पूरित होते हैं वैसे ही इस के भी प्रारम्भ में अनेक आश्चर्य्य इतिहास हैं। उन से कोई इस के ऐतिहासिक इतिवृत्ति में सन्देह न करे; क्योंकि प्रायः प्राचीन इतिवृत्त अनेक अद्भुत घटना पूर्ण होते हैं और इतिहासवेत्ता लोग उन्हीं चमत्कृत इतिहासों का सारासार निस्सार पूर्वक सारा निर्णय बुद्धि बल से कर लेते हैं।

राज्यस्थान में मेवाड़ और जैसलमेर का राज्य सब से प्राचीन है। आठ सौ बरस से भारतवर्ष में विदेशियों का राज्य प्रारम्भ हुआ, तब से अनेक राज्य बिगड़े और बने पर यह ज्यों का त्यों है। गज़नी के बादशाह लोग सिन्धु नदी का गम्भीर जल पार कर के हिन्दुस्तान में आए। उस समय जहां मेवाड़ के राज्य का सिंहासन था वहीं अब भी है। बहुत से राजा लोग उस राज्य के चारो

खेलते थे और उन को बादशाह की दो बेगम फौज से बिछड़ी जंगल में भटकती हुई मिलीं, जिन को राना ने अपनी बहिन कह के पुकारा और रक्षापूर्व्वक लाकर उन को औरङ्गजेब को सौंप दिया। मुसलमान तवारीख़ लिखनेवालों ने अपनी क्षति इसी बहाने पूरी की और कहा कि उदयपुरवालों ने बेटी नहीं दी, तो क्या हुआ, बादशाह बेगम को अपनी बाहिन बनाया तो सही। वरञ्च इसी हेतु उस दिन से उन बेगमों का उदयपुरी बेगम लिखा गया। भाषाग्रन्थों में इन बेगमों के नाम रंगी चंगी बेगम लिखे हैं।

ओर, वहुत से वहां से और कही जा वसे, पर इन के महल अव भी वही खड़े हैं जहां पहले खड़े थे। सतयुग से आज तक इसी वंश के सब पुरुष सिंहासन ही पर मरे।

भगवान रामचन्द्र के ज्येष्ठ पुत्र लव ने अपने राज्य-समय में लवपुर अर्थात् लाहौर बसाया था और सुमित्रायु नामक राजा लव से पचपन पीढ़ी पीछे हुआ। पुराणों में लिखा है कि सुमित्र ने कलियुग में राज्य किया और बहुत से प्रमाणों से मालूम होता है कि ये विक्रमादित्य के कुछ पहले वर्त्तमान थे। इन के पीछे कनकसेन तक राजाओं का ठीक वृत्तान्त नही मिलता। जहां तक नाम मिले हैं उस में पहला महारथ, उस का पुत्र अन्तरीक्ष, उस का अचलसेन और उस का पुत्र राजा कनकसेन हुआ। राजा कनकसेन ही सौराष्ट्र देश में आये, परन्तु इस का नही पता लगता कि उन्हों ने लाहौर किस हेतु से छोड़ा और किस पथ से सौराष्ट्र पहुंचे। यहा आकर इन्हों ने किसी पवांर वंश के राज का अधिकार जीत कर सन् १४४ में वीर नगर नामक नगर संस्थापन किया। कनकसेन को महामदनसेन, उन को शोणादित्य और उन को विजय भूप हुआ। इस ने जहां अब धोल का नगर है वहां पर विजयपुर नामक नगर संस्थापन किया और जहां अब सिहोर है तहां विदर्भ नगर बनाया। और वल्लभीपुर नामक एक बड़ा नगर वसा कर उसे अपनी राजधानी बनाया। अब धोल नगर से पांच कोस उत्तर-पश्चिम वालभी नामक जो गांव है वही इस प्रसिद्ध वल्लभीपुर का अवशेष है। शत्रुञ्जय माहात्म्य नामक जैन ग्रन्थ में भी इस नगर की बड़ी शोभा लिखी है। मेवाड़ के राजा लोग वल्लभीपुर से आए हैं यह प्रवाद बहुत

दिन से था, पर कोई इस का पक्का प्रमाण नहीं था। अब उदयपुर के राज्य में एक टूटे शिवालय में एक प्राचीन खोदा हुआ पत्थर मिला है, उस से यह सन्देह मिट गया, क्योंकि उस में लिखा है कि जिन महात्माओं का ऊपर वर्णन हुआ उस की साक्षी वल्लभीपुर के प्राचीर हैं। राना राज्यसिंह के समय के बने हुये एक ग्रन्थ में भी लिखा है कि सौराष्ट्र देश पर बरबरों ने चढ़ाई करके बालकानाथ को पराजय किया।

इस वल्लभीपुर के विप्लव में सब लोग नष्ट हो गये और केवल एक प्रमर की दुहिता मात्र बची। वल्लभीपुर शिलादित्य के समय में नाश हुआ। विजय भूप के पद्मादित्य, उन के शिवादित्य, उन के हरादित्य, उन के सुयशादित्य, उन के सोमादित्य, उन के शिलादित्य।

शिलादित्य वा शीलादित्य तक एक प्रकार का क्रम लिख आए हैं। अब आगे नामो मे और उन के समय में कितना गड़बड़ ओर उस के ठीक निर्णय में कितनी विपत्ति है यह दिखाते हैं। आर्य्यमत के अनुसार चार युग मे काल बांटा गया है। इस मे ब्रह्मा की उत्पत्ति से सत्ययुग माना जाता है। अब अनेक पुराणों से और प्रसिद्ध विद्वानों के मत से प्रारम्भ से काल लिखते हैं।

पुराण के मत से इक्ष्वाकु को २१८५००० वर्ष हुए। जोन्स के मत से ६८७७ और विलफर्ड के मत से ४५७८, टाड के मत से ४०७७, बेण्टली के मत से ३४०५।

श्री रामचन्द्र का समय पुराण० ८६८६७६ वर्ष, जोन्स० ३६०६, विलफर्ड० ३२३७, बेण्टली० २८२७, टाड० ४०००।

महाराज युधिष्ठिर का समय पुराण० ४१७१, वेएटली २४५३, और जोन्स टाड ३३०७ और विलफर्ड के मत से श्री रामचन्द्र का और युधिष्ठिर का समय एक है, विल्सन के मत से ३३०७ सुमित्र का समय पुराण० ३१७७, जोन्स २१०६, विलफर्ड २५७७, विएटली १६६६, विल्सन० २८०२, ब्रह्मावालों के मत से २४७७।

शिशुनाग का समय पुराण० ३८३६, जोन्स २७४७, विलफर्ड २४७७, विल्सन २६५४, ब्रह्मावाले २४७७।

नन्द का समय पुराण ३४७७, जोन्स २५७६, विल्सन २२६२, ब्रह्मावाले २२८१।

चन्द्रगुप्त का समय पुराण० ३३७१, जोन्स २४७७, विलफर्ड २२२७, विल्सन २१६२, टाड २१६७, ब्रह्मावाले २२६६।

अशोक का समय पुराण० ३३४७, जोन्स २५१७, विल्सन २१२७, ब्रह्मावाले २२०७।

जोन्स प्रिन्सिप साहब के मत से परशुराम जी को ३०५३ वर्ष हुए और वेएटली साहब के मत से वाल्मीकि रामायण बने केवल १५८६ वर्ष हुए।

कलियुग का प्रारम्भ पुलोम के समय तक भागवत के मत से ३७३४, ब्रह्माण्डपुराण के मत से ३६५२, वायुपुराण के मत से ३६०६, जैनों के मत से २५५५ और चीन और ब्रह्मा के मत से २५१८ वर्ष से है। अंगरेजी विद्वानों के पुराणों के अनुसार इस समय तक पुलोम का समय जोड़ कर एक सम्मति है कि कलियुग बीते ५००० वर्ष लगभग हुए, परन्तु इस मत को वे सत्य नहीं मानते,

क्योंकि फिर आप ही लिखते हैं कि स्वायंभु मनु को हुए ५८८३ वर्ष और वैवस्वतमनु को ४८२७ वर्ष हुए।

युधिष्ठिर के ३०४४ संवत् बीते विक्रम का संवत् चला और विक्रम के १३५ वर्ष पीछे शालिवाहन का शाका चला।

ऊपर जो कालनिर्णय में विद्वानों के परस्पर विरुद्ध मत वर्णन किए गए इस से यह बात प्रसिद्ध होगी कि प्राचीन समय निर्णय करना कितना दुरूह है, इस के आगे जो ब्रह्मा से लेकर सुमित्र पर्य्यन्त नामावली दी जाती है उस के मध्यगत काल का निर्णय न कर के सुमित्र के समय से जो हमारे मत के अनुसार २००० वर्ष बीते हुआ है काल का निर्णय प्रारम्भ करेंगे।

ब्रह्मा, मरीचि, कश्यप, विवस्वान, श्राद्धदेव, इक्ष्वाकु, विकुक्षी १ पुरंजय, काकुस्थ, २ अनेनास, ३ पृथु, ४ विश्वगाश्व, ५ अर्द, भाद्रआर्द, युवनाश्व, ६ श्रवस्थ, वृहदश्व, ७ कुवलयाश्व, दृढ़ाश्व, हर्यश्व, निकुम्भ, ८ संकटाश्व, ९ प्रसेनजित्, युवनाश्व, १० मान्धाता, पुरुकुत्स, त्रिसिशदश्व, अनारण्य, पृषदश्व, हर्यश्व, ११ वसुमान, १२ त्रिधन्वा, १३ त्रयारण्य, त्रिशंकु, हरिश्चन्द्र, रोहिताश्व, हारीत, १४ चंचु, विजय, १५ रुरुक, वृक, १६ वाहु,

१ नामान्तर काकुस्थ। २—३ ना० अनपृथु, ४ ना० विश्वगन्धि। ५ ना० चन्द्र। ६ ना० स्वसव या श्रव। ७ ना० धुन्धुमार। ८ सकटाश्व के पीछे वरुणाश्व और कृशाश्व दो नाम और मिलते हैं। ९ ना० सेनजित। १० ना० सुबन्धु इन को चक्रवर्ती लिखा है॥ ११ ना० महर्षण या अरुण। १२ ना० त्रिविन्धन १३ ना० सत्यव्रत। १४ ना० चम्प, किसी पुस्तक में चम्प के पीछे सुदेव तब विजय

सगर, असमञ्जस, अंशुमान्, दिलीप, भगीरथ, श्रुत, नाभाग, अम्बरीष, सिन्धुद्वीप, अयुताश्व, १७ ऋतुपर्ण, सर्वकाम, सुदास, कल्माषपाद, १८ असमक, १९ हरिकवच, २० दशरथ, इलिवथ, विश्वासह, २१ खट्वाङ्ग, दीर्घबाहु, रघु, अज, दशरथ, श्रीराम, २२ कुश, अतिथि, निषध, नल, नाभ, पुण्डरीक, क्षेमधन्वा, २३ द्वारिक. अहीनज, कुरुपरिपात्र, २५ दल, २६ छल, उक्थ, २७ वज्रनाभि, २८ शंखनाभि, २९ व्युथिनाभि, ३० विश्वासह, हिरण्यनाभि, ३१ पुष्प, ३२ ध्रुवसंधि, ३३ अपवर्म, शीघ्र, ३४ मरु, प्रसव श्रुत, ३५ सुसंध, आमर्ष, ३६ महाश्व, बृहद्वाल, बृहद्शान, उरुक्षेप, वत्स, वत्सव्यूह

लिखा है ॥ १५ ना० भरुक। १६ ना० बाहुक। १७ ऋतुपर्ण के पीछे किसी पुस्तक में नल, तब सर्व्वकाम लिखा है ॥ १८ ना० आमक। १९ ना० मूलक। २० दशरथ, और इलिवथ दो के बदले किसी पुस्तक में ऐडाबिड एक ही नाम लिखा है ॥ २१ ना० खरभद्र। २२ कुश के समय से अनेक ग्रन्थकार द्वापर की प्रवृत्ति मानते हैं * २३ ना० देवार्नीक। २४ ना० अहीनग। २५ ना० बल। २६ ना० रणच्छल। २७ वज्रनाभि के पीछे कोई अर्क तब शङ्खनाभि को लिखता है ॥ २८ ना० सगण। २९ ना० विधृत। ३० ना० विशिताश्व। ३१ ना० पुष्य। ३२ ध्रुवसन्धि, और अपवर्म्म के बीच में कोई सुदर्शन नामक और एक राजा मानता है ॥ ३३ ना० अग्निवर्म्म। ३४ ना० मनु। ३५ ना० सन्धि। ३६ ना० अवस्वान, इसी महाश्व के पीछे विश्वबाहु प्रसेन जित और तक्षक नामक तीन राजा बृहद्वाल के पहले अनेक ग्रन्थकार मानते हैं और कहते हैं कलियुग का प्रारम्भ

---

* इन्हीं कुश का एक पुत्र कूर्म्म नामक था जिस से कछवाहे लोग अपनी वंशावली मानते हैं।

प्रतिव्योम, ३७ देवकर, सहदेव, ३८ वृहदश्व, ३९ भानुरत्न, सुप्रतीक, मरुदेव, सुनक्षत्र ४० ।

केशीनर, ४१ अन्तरीक्ष, ४२ सुवर्ण, अमित्रजित्, वृहद्राज, ४३ धर्म, ४४ कृतञ्जय, ४५ रणञ्जय, सञ्जय, शाक्य, ४६ क्रोधदान, शाक्य·सिंह, ४७ अतुल, प्रसेनजित, क्षुद्रक, कुन्दरु, ४८ सुरथ, सुमित्र ।

महाराज जैसिंह के ग्रन्थ के अनुसार सुमित्र के पीछे महारितु, अन्तरित, अचलसेन, कनकसेन, महामदनसेन, सुदन्त, वा प्रथम सोणादित्य, (विजयसेन, वा अजयसेन, वा विजयादित्य) पद्मादित्य, शिवादित्य, हरादित्य, सूर्य्यादित्य, शिलादित्य, ग्रहादित्य, नागादित्य, भागादित्य, देवादित्य, आशादित्य, कालभोज वा भोजादित्य, द्वितीय ग्रहादित्य और बापा। सुमित्र से महारितु तक चार नाम नहीं मिलते और इस क्रम से श्रीरामचन्द्र से बापा

इसी के समय से हुआ ॥ ३७ प्रतिव्योम और देवकर के बीच में कोई भानु को भी जोड़ते हैं । इसी देवकर का नामान्तर दिवाकर है ॥ ३८ सहदेव, तब वीर, तब वृहदश्व, यह किसी का मत है ॥ ३९ ना० भानुमत, वा भानुमान, ग्रन्थकारों का मत है कि ईरान का जो प्रसिद्ध बहमन नामक हुआ था वह यही भानुमान है । इस के और सुप्रतीक के बीच में कोई प्रतिशोश्व नामक राजा मानते हैं ॥ ४० ना० पुष्कर । ४१ ना० रेख । ४२ ना० सुतुपा । ४३ ना० बाढि । ४४ कोई ग्रन्थकार कहते हैं कि यही कृतञ्जय प्रथम सौराष्ट्र में आया ॥ ४५ ना० जयरान । ४६ ना० शुद्धोदन इसी का पुत्र प्रसिद्ध शाक्यसिंह है, जो भादो सुदी ५ को जन्मा था, और बौद्ध और जैन के नाम से जिस का मत संसार की एक तिहाई में व्याप्त है ॥ ४७ ना० लाङ्गल वा सिद्धपक्ष वा रातुल ॥ ४८ ना० सुरत वा सुराष्ट्र कहते हैं, कि इसी के नाम से सौराष्ट्र देश बसा है ॥

अस्सी पीढ़ी में है, तक्षक से ले कर के बाहुमान वा भानुमान तक आठ राजाओं का नाम कई वंशावली में नहीं मिलता, अनेक ग्रन्थकारों का मत है कि इसी तक्षक के समय से ईरान, तूरान, तुरकिस्तान इत्यादि देशों में इस का वंश राज करता था और तुरकिस्तान का प्राचीन नाम तक्षकस्थान बतलाते हैं और यूनान में जो अर्तक्षर्क्स नामक राजा हुआ है वह भी इसी तक्षक का नामान्तर मानते हैं।

राजा जयसिंह का मत है कनकसेन के समय में अर्थात् सन् १४४ में सौराष्ट्र देश में इस वंश का राज हुआ और वही लिखते हैं कि विजय वा अजयसेन का नामान्तर नौशेरवां था। इस ने विजयपुर वा विराटगढ़ बसाया और सन् ३१६ में बल्लभीशक स्थापन किया। उन्हीं का मत है कि शिलादित्य को यवनों ने जीता और सौराष्ट्र से यह राज छिन्न भिन्न हो गया और इस का पुत्र केशव वा गोप वा ग्रहादित्य भांडेर के जङ्गल में रहा और उस के पुत्र नागादित्य के समय से इस वंश का गोत्र गहलौत कहलाया और फिर आशादित्य ने मेवाड़ में अपने वंश की पहली राजधानी आशापुर और आहार बसाया और इस के पीछे बापा ने सन् ७१४ में चित्तौड़ का राज्य पाया, दूसरे ग्रहादित्य का नाम द्वितीय नागादित्य भी लिखा है।

बापा तक नाम का क्रम हम पूर्व में लिख आए हैं, परन्तु प्राचीन ताम्रपत्रों से ले कर यदि वंशावली लिखी जाय, तो सेनापति वा भट्टारक तथा धरासेन, द्रोणसिंह (प्रथम), ध्रुवसेन, धरापति,

गृहसेन, श्रीधरसेन (प्रथम), शिलादित्य (प्रथम), चारुग्रह वा खड्ग्रह (द्वितीय), श्रीधरसेन (द्विनीय), (ध्रुवसेन तृतीय), श्रीधरसेन (तृतीय), शिलादित्य (इस के पीछे तोन नाम छूट गए हैं), शिलादित्य (तृतीय) और (चतुर्थ) शिलादित्य।

टाड साहब की वंशावली और वल्लभीपुर की वंशावली में कितना अन्तर है यह ऊपर के नामों से प्रगट होगा। पादरी अण्डरसन साहब ने दो नये ताम्रपत्र पढ़ कर इस वंशावली को शोधा है और वे कहते हैं कि इस में जहां २ श्रीधरसेन लिखा है वह सब नाम धरासेन है और शिलादित्य का नाम क्रमादित्य वा विक्रमादित्य है और इन्हीं को धर्म्मादित्य भी कहते हैं (१)। और वंशावली के प्रथम पुरुष को सेनापति वा भट्टारक वा धर्म्मादित्य भी लिखा है। दोनों वंशावली में वल्लभीपुर का अन्तिम राजा शिलादित्य है और इन दोनों के सवत् भी पास २ मिलते हैं। पारसी इतिहासवेत्ताओं के मत से इसी शिलादित्य का पुत्र ग्रह वा ग्रहादित्य, जिस ने ग्रहलोत वा ममोधिया गोत्र चलाया, नौशेरवां का रक्षित पुत्र था, परन्तु महाराज जैसिंह ने राजा अजयसेन का ही नामान्तर नौशेरवां लिखा है। पारसी इतिहासवेत्ताओं के मत से नौशेरवां के पुत्र नोशीज़ाद (हमारे यहां का नागादित्य) और यज़्दिजिर्द की बेटी माहबानू, जो इन्ही राजाओं में से किसी को व्याही थी, इस वंश के मूल पुरुष हैं। विलफर्ड साहब के मत से वल्लभीशक के स्थापन कर्त्ता अजयसेन वा दूसरी वंशावली के अनुसार धरासेन

---

1 Bomb Jour VLIII P 216.

को ही पुराणों में शूद्रक वा शूरक लिखा है, जिस ने ३२९० वर्ष कलियुग वीते सन् १९१ वा २९१ में प्रथम विक्रमादित्य के नाम से राज्य किया था (२) मेजर वाट्सन के मत से सेनापति भट्टारक के सौराष्ट्र जीतने के दो वर्ष पीछे प्रसिद्ध स्कन्द गुप्त मरा (३), इस से गुप्त संवत के आस ही पास वल्लभी संवत् भी है और इस विषय के उन्हों ने अनेक प्रमाण भी दिए हैं। इस वल्लभी संवत् के निर्णय में इतिहासवेत्ता विद्वानों के बड़े २ झगड़े हैं, जिस से कई दरजन कागज़ के बड़े ताव रंग गए हैं। लोग सिद्धान्त करते हैं कि गुप्तवंश जब प्रवल था तब वल्लभीवंश के लोग उस के वंश के अनुगत थे, यहां तक कि भट्टारक सेनापति गुप्त वंश बिगड़ने के पीछे स्वाधीन हुआ और अपने दूसरे बेटे द्रोणसिंह को महाराज किया। पांच छः ताम्रपत्र इस वंश के जो मिले हैं उन के परस्पर नामों में बड़ा फरक है, जैसा गुहसेन धरासेन शिलादित्य धरासेन शिलादित्य वा गुहसेन के दो पुत्र शिलादित्य और खड्ग्रह, खड्ग्रह के दो पुत्र धरासेन और ध्रुवसेन वा शिलादित्य के देरभट्ट, उन के शिलादित्य खड्ग्रह और ध्रुवसेन और शिलादित्य के वाद फिर शिलादित्य।

इन नामों के परस्पर अत्यन्त ही विरुद्ध होने से कोई निश्चित वंशावली नहीं वन सकती, अतएव इन झगड़ों को छोड़ कर राजा कनकसेन के समय से हम ने पूर्व वृत्तान्त प्रारंभ किया। कारण यह कि जब एक बड़ा वंश राज्य करता है तो उस की

2 as Ras VL IX pp 135, 230
3 In Ant VL III P XXXIII.

शाखा प्रशाखा आस पास छोटे २ राज्य निर्माण कर के राज करती है। इस में क्या आश्चर्य है कि ताम्रपत्रों में ऐसे ही अनेक श्रेणियों की वंशावली का वर्णन हो जो वास्तव में सब वल्लभी वंश से सम्बन्ध रखती हैं। ऐसा ही मान लेने से पूर्वोक्त समय और वंश निर्णय की असमञ्जसता जटिलता घनता असम्बद्धता और विरोधिता दूर होगी।

सुमित्र से लेकर शिलादित्य तक एक प्रकार का निर्णय ऊपर हो चुका और इस से निश्चय हुआ कि महाराज सुमित्र कलियुग के अन्त मे हुए थे और वल्लभीपुर का नाश भए दो हजार वर्ष के लगभग हुए। कहा है कि वल्लभीपुर में सूर्य्यकुण्ड नामक एक तीर्थ था। युद्ध के समय शिलादित्य के आवाहन करने से इस कुण्ड में से सूर्य्य के रथ का सात सिर का घोड़ा निकलता था और इस अश्व के रथ पर बैठने से फिर शिलादित्य को कोई जीत नहीं सकता था। और यह भी कथित है कि सूर्य की दी हुई शिलादित्य के पास एक ऐसी शिला थी जिस को दिखा देने से वा स्पर्श करा देने से शत्रुओं का नाश हो जाता था। और इसी वास्ते इन का नाम शिलादित्य था। इन के किसी शत्रु ने इन्हीं के किसी निज भेदिये की सम्मति से उस पवित्र कुण्ड को गोरक्त द्वारा अशुद्ध कर दिया, जिस से वल्लभीपुर के नाश के समय राजा के वारम्वार आवाहन करने से भी वह अश्व नही निकला और राजा सपरिवार युद्ध में नियत हुआ और वल्लभीपुर नाश हुआ। जैन-ग्रन्थों के अनुसार संवत् २०५ में वल्लभीपुर नाश हुआ और श्री

महाराणा उदयपुर के राज्य कृत संग्रह के अनुसार राजा शिलादित्य का नाम सलादित्य था और वल्लभीपुर का नाम विजयपुर।

अंगरेज़ी विद्वानों का मत है कि नगरावरोधकारी शत्रुदल ने हिन्दुओं को दुःख देने के हेतु गोरक्त से वल्लभीपुर के जल कुण्डों को अशुद्ध कर दिया होगा, जिस से हिन्दू लोग घबड़ा कर एक साथ लड़ने को निकल खड़े हुए होंगे। अलाउद्दीन बादशाह ने गागरौन देश के खीची राजाओं से यही छल किया था। वल्लभीपुर के शत्रुओं का यही छल मानो इस कथा का मूल है।

वल्लभीपुर को किस असभ्य जाति ने नाश किया इस का निर्णय भली भांति नहीं होता। प्राचीन पारस निवासी लोग वृष को पवित्र समझते थे और सूर्य्य के सामने उस को बलिदान भी करते थे। इस से निश्चय होता है कि ये लोग पारसी तो नहीं थे। प्राचीन ग्रन्थों में पाया जाता है कि खृष्टीय दूसरी शताब्दी में सिन्धु नद के किनारे पारद वा पार्थियन लोगों का एक बड़ा राज्य था। विष्णुपुराण में लिखा है कि सूर्य्यवंशी सगर राजा ने म्लेच्छों को चिन्ह विशेष देकर भारतवर्ष से निकाल दिया था, जिस में यवन सर्व शिरोमुण्डित केश अर्द्ध शिर मुण्डित पारद मुक्त केश और पन्हव वा पल्हव श्मश्रुधारी बनाए गए थे। उसी काल में श्वेत वर्ण की एक हून जाति भी सिन्धु के किनारे राज्य करती थी। हून जाति नामक प्राचीन असभ्य मनुष्यों का लेख पुराणों और यूरप के इतिवृत्तों में भी पाया जाता है। सम्भावना होती है कि इन्हीं दो जातियों में से किसी ने वल्लभीपुर नष्ट किया होगा, पारद और हून दो जातियों का आदिनिवास शाकद्वीप है। महाभारत में शाक-

द्वीपी और पूर्व्वोक्त हूणादिकों को इसी प्रकार यवन लिखा है। पुराणों में इन सबों को एक प्रकार का क्षत्री लिखा है। ये सब असभ्य जाति शाकद्वीप से किस काल में यहां आए इस का पता नहीं लगता। विल्फर्ड साहब का मत है कि शाकद्वीप इङ्गलैण्ड का नामान्तर है। विशेष आश्चर्य्य का विषय यह है कि ये सब शाकद्वीपी काल पाके आर्य्य जाति में मिल गए, यहां तक कि ब्राह्मण और क्षत्रियों में भी शाकद्वीपी वर्त्तमान हैं।

यह निश्चय हुआ कि इन्हीं म्लेच्छ जाति के लोगों में से किसी जाति ने वल्लभीपुर नाश किया। सांदोराई से जो वंशपत्रिका मिली है उस में लिखा है कि वल्लभीपुर नाश होने के पीछे वहां के लोग मारवाड़ में आ कर सांदोरावाली और नांदोर नगर बसा कर रहने लगे और फिर गाजनी नामक एक नगर का और भी उल्लेख है। एक कवि अपने ग्रंथ में लिखता है "असभ्यों ने गाजनी हस्तगत किया, शिलादित्य का घर जनशून्य हुआ और जो वीर लोग उस की रक्षा को निकले वे मारे गए"।

हिन्दू सूर्य्य के वंश का यहां चौथा दिवस अवसान हुआ। प्रथम दिवस इक्ष्वाकु से श्री रामचन्द्र तक अयोध्या मे वीता, दूसरा दिन लव से सुमित्र तक अन्य राजधानियों में, तीसरा सुमित्र से विजयभूप तक अंधेरे मेघों से छिपा हुआ कहां वीता न जान पड़ा और यह चौथा दिन आज वल्लभीपुर में शिलादित्य के अस्त होने से समाप्त हुआ। पांचवें दिन का इतिहास बहुत स्पष्ट है, जो गोहा और बाप्पा के विचित्र चित्रों से चित्रित होकर दूसरे अध्याय में वर्णन होगा॥

इति उदयपुरोदय प्रथम अध्याय।



दूसरा अध्याय।

वल्लभी वंश की रात्रि का अवसान हुआ। उदयपुर के इतिहास की यहां से शृङ्खला बंधी। पूर्व्व में लिख आए हैं कि वल्लभीपुर को यवनों ने घेरा और राजा शिलादित्य ने सकुटुम्ब सपरिवार वीरों की गति पाया। अब और सीमन्तिनी गण राजा की सहगामिनी हुई, किन्तु रानी पुष्पवती (वा कमलावती) मात्र जीवित रही।

रानी पुष्पवती चन्द्रावती नगर (सांप्रत आबूनगर) के राजा की दुहिता थी। वल्लभीपुर के आक्रमण के पूर्व्व ही यह रानी गर्भवती होकर अपने पिता के राज में जगदम्बा (आर्शाम्बिका) के दर्शन को गई थी और वहां से लौटती समय मार्ग में अपने प्राणवल्लभ और वल्लभीपुर का विनाश सुना और उसी समय अपना प्राण देना चाहा। परन्तु वीरनगर की एक ब्राह्मणी लक्ष्मणावती जो रानी के साथ थी उस के समझाने से प्रसव काल तक प्राण धारण का मनोरथ कर के मालिया प्रदेश के एक पर्व्वत की गुहा में काल यापन करना निश्चय किया। इसी गुहा में गुहा का जन्म हुआ और रानी ने सद्योजात सन्तान उस ब्राह्मण को देकर आप अग्नि प्रवेश किया। मरती समय रानी ब्राह्मणी को समझा गई थी कि इस पुत्र को ब्राह्मणोचित शिक्षा दे कर क्षत्रिय कन्या से व्याह देना।

लक्ष्मणावती ब्राह्मणी उस बालक का लालन पालन करने लगी और द्वेपियों के भय से भांडेरगढ़ और पराशर वन में क्रम से

रही। गुहा में जन्म होने के कारण बालक का नाम भी गुहा (ग्रहादित्य वा केशवादित्य) रक्खा। गुहा की प्रकृति दिन दिन अति उत्कट होने लगी और बहुत से वनवासी बालकों को इन्हों ने अपना अनुगामी बना लिया। इसी वृत्तान्त पर उस देश में यह कहावत अब भी प्रचलित है कि सूर्य्य की किरण को कौन छिपा सकता है।

मेवाड़ की दक्षिण सीमा पर ईदर के राज्य पर उस समय भीलों का अधिकार था और उस समय के भीलों के राजा का नाम मण्डलिका था। प्रतिपालक शान्तिशील ब्राह्मणों के साथ गुहा का जी नहीं मिलता था। इस से सम स्वभाव उग्र प्रकृति वाले भीलों से अपनी उद्दण्ड प्रचण्ड प्रकृति की एकता देख कर गुहा उन्हीं लोगों के साथ वन वन घूमते थे और काल क्रम से भीलों के ऐसे स्नेहपात्र हो गए कि सवन पर्व्वत ईदर प्रदेश भीलों ने इन को समर्पण कर दिया। अबुलफज़ल और भट्ट गन गुहा के भील राजप्राप्ति का वर्णन यों करते हैं। एक दिन खेल में भील बालक लोग एक बालक को राजा बनाना चाहते थे और सब ने एक वाक्य हो कर गुहा ही को राजा बनाना स्वीकार किया। एक भील के बालक ने चट से अपनी उंगली काट के ताजे लहू से गुहा के सिर में राजतिलक लगाया। यह खेल का व्यापार पीछे कार्य्यतः सत्य हो गया, क्योंकि भील राजा मंडलिका ने यह समाचार सुन कर प्रसन्न हो कर ईदर का राज्य गुहा को दे दिया। कहते हैं कि गुहा ने व्यर्थ भीलराज मण्डलिका को पीछे से मार डाला। गुहा के नाम के अनुसार उन के वंश के लोग

गोहिलोट (गहिलौत वा गिहलौट) कहलाए। टाड साहब कहते है कि गहिलौट आहिलोन का अपभ्रंश है।

गुहा (केशवादित्य) के पुत्र नागादित्य हुए। इन्हीं ने पराशर वन से नागहृद नामक एक बड़ा हृद बनवाया। इन्हीं के नाम के कारण लक्ष्मणावती ब्राह्मणी के सन्तान वा वह वन और तालाब सब नागदहा के नाम से प्रसिद्ध है और सिसौधियों को भी नागदहा कहते हैं। नागादित्य के भोगादित्य। इन्हों ने कुटिला नदी पर पक्का घाट बनाया और इन्द्र सरोवर नामक तालाब का जीर्णोद्धार किया। पूर्वोक्त तड़ाग इन के नाम से अब तक भोडेला कहलाता है। इन के पुत्र देवादित्य, जिन्हो ने देलवाड़ा ग्राम निर्माण किया और उन के आशादित्य जिन्हो ने अहाड़पुर नगर बसा कर अपनी राजधानी बनाया। यह अहाड़पुर अब राना लोगों का समाधिस्थल है। कहते हैं कि अहाड़पुर में जो गङ्गोद्भव तीर्थ है वह इसी राजा का निर्माण किया है और इन्ही की भक्ति से उस में गङ्गा जी का आविर्भाव हुआ था। उस प्रान्त में इस तीर्थ का बड़ा माहात्म्य है। यह तीर्थ उदयपुर से एक कोस पूर्व्व की ओर है। आशादित्य के पुत्र कालभोजादित्य और उन के पुत्र ग्रहादित्य (वा द्वितीय नागादित्य) बाला गांव इन्हीं के नाम से प्रसिद्ध है। गुहा राजा से लेकर नागादित्य पर्य्यन्त छः (टाड साहब के मत से सात) राजाओं ने इसी पर्वत भूमि का राज्य किया, पर इन में से कोई अत्यन्त प्रसिद्ध न था, किन्तु नागादित्य के पुत्र बाप्पा बड़ा प्रसिद्ध और नामी मनुष्य हुआ, वरञ्च उदयपुर के राज का इसे मूलस्तम्भ कहैं तो अयोग्य न होगा। बापा का

वर्णन उदयपुर से जो लिख कर आया है उसे हम यहां पर अविकल प्रकाश करते हैं " ग्रहादित्य के बाप्प नामक पुत्र हुआ। कहते हैं कि बाप्प नन्दी गण के अवतार थे। यह कथा सविस्तर वायु पुराणांतर्गत एकलिङ्ग माहात्म्य में लिखी है। जब राजा ग्रहादित्य के एक शत्रु जंजाबल नाम राजा ने धासा नगर को आन आवर्तन किया वहां राजा ग्रहादित्य बड़े पराक्रम के साथ मारे गए और घासा में जुजाबल का अधिकार हो गया तब आपत्ति काल अवलोकन कर प्रमरवशोद्भवाग्रहादित्य की राणी ने अपने पुत्र बाप्प को शिशुता के भय से निज पुरोहित वशिष्ट के गृह में गोपन कर पिहित रहना स्वीकार किया। बहुत समय व्यतीत होने पीछे बाप्प ने वशिष्ट की गो चारन का नियम लिया लिखा है कि उस गो निकर में एक कामधेनु नाम धेनु थी सो जब बाप्प गो चारन को जाते वहां उक्त गाय एक वेणु चय में प्रवेश करती। वहां एक स्फटिक का स्वयम्भू लिङ्ग था उस पर अपने स्तनों से दुग्ध श्रवती इस वास्ते गुरुपत्नी ने एक दिन बाप्प को उपालम्भ दिया कि इस धेनु के स्तनों में दुग्ध नहीं, सो कहां जाता है। द्वितीय दिवस बाप्प ने उस गाय को दृष्टि से पिहित न होने दिया। वह सुरभी तो शिव लिङ्ग पर पूर्वोक्त दुग्ध श्रवने लगी अरु बाप्प ने इस चरित्र को देख साक्षी बनाने को हारीत नामा ऋषि ज्यो भृङ्गी गण का अवतार लिखा है वहां तपस्या करते हुये को देख बाप्प ने निमन्त्रण कर वह चरित्र दिखाया तब भृङ्गी गण ने कहा कि हे बाप्प इस श्रीमदेकलिंगेश्वर के दर्शनार्थ तो मैं यहां ऐसा कठिन तप करता था अरु तू भी

इन्ही का सेवक नन्दीगण का अंशावतार है तव वाप्प को भी स्वरूप ज्ञान हुआ। फिर श्रीशंकर की स्तुति कर वर पाय हारीत ऋषि तो कैलास सिधारे और वाप्प ने राज्य की अपेक्षा करी इससे उन को शंकर ने वरदान दिया कि तेरा शरीर अभिन्न और महत्तर होगा और तुझे इस भर्तृहरि के पर्वत में खनन करने से बहुत द्रव्य मिलेगा जिससे सेना एकत्र कर अरु चित्तौड़ का राज्य अपने अधिकार में कीजियो और आज से तुम्हारे नाम पर रावल पद प्रख्यात रहैगा। यह लिंग प्रादुर्भाव विक्रमार्क गताब्द २१० वैशाख कृष्ण १ को हुआ था सो उक्त महीने की इसी तिथि को अब भी प्रादुर्भावोत्सव प्रति वर्ष होता है। फिर रावल वाप्प ने इष्टाज्ञा ले द्रव्य निष्कासन कर महत्तर सेना बनाय चित्तौड़ के राजा मानमोरी को जय किया और उसी दुर्ग को अपनी राजधानी बनाया इस महिपाल ने समस्त भारतवर्ष को विजय किया।"

वापा के विषय में ऐसे ही अनेक आश्चर्य्य उपाख्यान मिलते हैं। पृथ्वी पर जितने बड़े बड़े राजवंश हैं उन में ऐसे कोई भी न होंगे जो कवि जनों की विचित्र कल्पना से अलंकृत न हों, क्योंकि उस समय में उन के विषय में विविध दैवी कल्पनाओं का आरोप ही मानों उन के प्राचीनता और गुरुत्व का मूल था। रोम राज्य के स्थापनकर्त्ता रमूलस देवता के पुत्र थे और बाघिन का दूध पी कर पले थे। ग्रीस राज्य के हर्क्यूलिस और इङ्गलैंड राज्य के आरथर राजाओं के दैत्यों से युद्ध इत्यादि अनेक अमानुष कर्म्म प्रसिद्ध हैं। जगद्विजयी सिकन्दर का दो सींग थी ओफार के अफरासियाब ने जब देव सदृश अनेक कर्म्म किए, तो हिंदुस्तान के

बड़े बड़े उदयपुर, नैपाल, सितारा, कोल्हापुर, ईलानगर, डूंगरपुर, प्रतापगढ़ और अलीराजपुर इत्यादि राजवंशों के मूलपुरुष वापा के विषय में विचित्र बातें लिखी हों तो कौन आश्चर्य्य की बात है। वापा सैकड़ों राजकुल के आदि पुरुष लोकातीत संभ्रम भाजन और चिरजीवी फिर उन के चरित्र अलौकिक घटनाओं से क्यों न सघटित हों।

वापा बाल्यकाल से गोचारण करते थे, यह पूर्व्व में कह आए है। कहते हैं कि शरत्काल में गोचारण के हेतु बन में गमन करके वापा ने एक साथ छ सौ कुमारियों का पाणिग्रहण किया। उस देश में शरद ऋतु में बालक और बालिका गन बाहर जा कर झूला झूलते हैं। इसी रीति के अनुसार नगेन्द्रनगर के सोलङ्की राजा की क्वारी कन्या अपनी अनेक सखियों के साथ झूलने को आई थीं, किन्तु उन के पास डोरी नहीं थी कि वह झूला बांधें। वापा को देख कर उन सबों ने इन से डोरी मांगी, इन्हों ने कहा पहिले ब्याह खेल खेलो तो डोरी दें। बालिका लोगों के हिसाब सभी खेल एक से थे इस से इन लोगो ने पहिले ब्याह खेल ही खेलना आरम्भ किया। राजकुमारी और वापा की गांठ जोड़ कर गीत गाकर दोनो की सब ने सात फेरी किया। कुछ दिन पीछे जब राजकुमारी का ब्याह ठहरा तब एक वरपक्ष के ज्योतिषी ने हाथ देख कर कहा कि इस का तो ब्याह हो चुका है। कुमारी का पिता यह सुन के बहुत ही घबड़ाया और इस की खोज करने लगा। वापा के साथी गोपाल गण यह चरित्र जानते थे, परन्तु वापा ने इस के प्रगट करने ने उन से शपथ ली थी। यह शपथ भी विचित्र प्रकार की थी।

एक गड्हे के निकट बापा ने अपने सब संगियों को बैठाया और हाथ में एक एक छोटा पत्थर दे कर कहा कि तुम लोग शपथ करो कि "तुमारा भला बुरा कोई हाल किसी से न कहैंगे, तुम को छोड़ के न जायंगे, और जहां जो कुछ सुनैंगे सब आ कर तुम से कहैंगे। यदि इस मे कोई बात टालैं, तो हमारे और हमारे पुरुषों के धर्म्म कर्म्म इस ढेले की भांति धोबी के गड़हे में पड़ैं" बापा के संगियों ने यही कह कह के ढेला गड़हे मे फेंका और उस के अनुसार बापा का विवाह करना उन के संगियो ने प्रकाश न किया। किन्तु छ सौ सरला कुमारियों पर जो बात विदित है वह कभी छिप सकती है ? धीरे धीरे यह विवाह खेल की कथा राजा के कान तक पहुची। बापा को तीन वर्ष की अवस्था से भाण्डोर दुर्ग * से लाकर ब्राह्मणों ने इसी नगेन्द्र नगर † के समीप निविड़ पराशर कानन में त्रिकूट पर्व्वत के नीचे अपने घर में रक्खा था इस से बापा उसी सोलङ्की राजा के प्रजा थे।

* बापा भाण्डीर दुर्ग मे भीलो के हाथ से पले थे। जिस भील ने बापा को पाला वह जदुवंशी था। उस प्रदेश मे भीलो की दो जाति है। एक उजले अर्थात् शुद्ध भील वंश के दूसरे मकर भील। यह मकर भील राजपूतो मे मिल कर उत्पन्न हुए हैं और पवार चौहान रघुवंशी जदुवंशी इत्यादि राजपूतो की जाति के नाम उन की जाति के भी होते हैं। यह भाण्डीर दुर्ग मेवार मे जागेल नगर से ८ कोस दक्षिण-पश्चिम है।

† नगेन्द्र नगर का नाम नागदहा प्रसिद्ध है। यह उदयपुर से पांच कोस उत्तर की ओर है। यहां से टाड साहब ने अनेक प्राचीन लिपि संग्रह किया था। इन सबो मे एक पत्थर शक्ति नवम शतक का है जिस मे गनाओं की उपाधि (गोहिलोट) लिखा है।

राजा ने यह समाचार सुन लिया, यह जान कर वापा नगेन्द्र नगर छोड़ कर पर्व्वतों में छिप रहे और उसी समय से उन का सौभाग्य संचार होने लगा। किन्तु इन छः सौ कुमारियों का फिर पाणि-ग्रहण न हुआ और वापा ही के गले पड़ीं। इसी कारण सैकड़ों राजा ज़मीदार सरदार सिपाही तक्री अपने को बापा * की सन्तान बतलाते हैं।

नागेन्द्र नगर से चलने के समय में दो भील वाप्पा के सहगामी हुए थे इन में एक उन्द्री प्रदेश वासी और इस का नाम बालव अपर † अगुणा—पानोर नामक स्थान निवासी, इस का नाम देव। इन दोनों भीलों का नाम वाप्पा के नाम के साथ चिरस्मरणीय हो रहा है। चित्तौर के सिंहासन पर अभिषिक्त होने के समय वालव ने स्वीय करांगुलि कर्त्तन कर के सद्यो शोणित से वाप्पा के ललाट में राजतिलक प्रदान किया था तदनुसार अद्यावधि पर्यन्त वाप्पा वंशीय राज गण के सिंहासनारोहण के दिवस इन्हीं दो भीलों के सन्तान गण आ कर अभिषेक विधि सम्पादन करते

---

* वाप्पा दुलार में लड़के को कहते हैं। एक प्राचीन ग्रन्थ में वापा का नाम शिलाधीश लिखा है, किन्तु प्रसिद्ध नाम इन का वापा ही है।

† टाड साहब कहते हैं, भारतवर्ष के मध्य अगुनापनोर प्रदेश अद्यावधि प्राकृतिक स्वाधीन अवस्था में है। अगुना एक सहस्र ग्राम में विभक्त। तत्रस्थ भीलगण जातीय जनैक प्रधान के आधीन में निर्विघ्नता से बास करते हैं। इस प्रधान की उपाधि भी राणा है, पर किसी राजा के साथ इन लोगों का विशेष कोई सम्बन्ध नहीं। विग्रह उपस्थित होने से अगुना का राणा धनुःशर पाच सहस्र जन एकत्र कर सकता है। आगुनापनोर मिवार राजा के दक्षिण-पश्चिम प्रान्त मे अवस्थित हैं।

हैं। अगुणा प्रदेश के भील स्वीय शोणित से राजललाट में तिलकार्पण और राजकीय बाहु धारण कर के सिंहासन में अधिष्ठित कराते हैं। उन्हीं प्रदेश का भील तावत् काल दण्डायमान हो कर राजतिलक का उपकरण * द्रव्य का पात्र लिये रहता है। जो प्रथा पुरुषानुक्रम से इस प्रकार से प्रतिपालित होती चली आती है उस का मूल किस प्रकार से उत्पन्न हुआ था यह अनुसन्धान कर के अज्ञात होने से अन्तःकरण कैसा विपुल आनंद रस से आप्लुत हो जाता है।

मिवार के राज्याभिषेक के समुदय प्राचीन नियम रक्षा करने में विपुल अर्थ का व्यय होता है इसी कारण उस का अनेक अंग परित्यक्त हो गया है। राणा जगतसिंह के पश्चात् और किसी का अभिषेक पूर्ववत् समारोह के साथ सम्पन्न नहीं हुआ। उन के अभिषेक में नब्बे लक्ष रुपया व्यय हुआ था। मेवार के अति समृद्ध समय में समग्र भारतवर्ष का आय १० लक्ष रुपया था।

नरेन्द्र नगर से बाप्पा के जाने का कारण पहिले वर्णित हुआ है, वह सम्पूर्ण सगत है, परन्तु भट्ट कविगण के ग्रन्थ में उन के प्रस्थान का अन्य प्रकार का विवरण दृष्ट होता है। उन लोगों ने कविजन सुलभ कल्पना प्रभाव से दैव घटना का आरोप कर के उस की विलक्षण शोभा सम्पादन किया है। काल्पनिक विवरण

* राज टीका का प्रधान और प्राचीन उपकरण जल मयुक्त तण्डुल चूर्ण राजस्थान की चलित भाषा में उस राजटीका का नाम ' स्वुगर्क " काल क्रम से सुगन्धि मिला हुआ चूर्ण तदुपकरण मध्य परिगणित हो गया है।

से अलङ्कृत न हो ऐसा सम्भ्रान्त बंश भारतवर्ष में अतीव दुर्लभ है, सुतरां हम भी भट्टगण वर्णित बाप्पा के सौभाग्यसञ्चार का विवरण निम्न में प्रकटित करते हैं:—

पहले कह आये हैं कि बाप्पा ब्राह्मण गण का गोचारण करते थे * उन की पालित एक गऊ के स्तन में ब्राह्मण गण ने उपर्य्युपरि कियद्दिवस तक दुग्ध नहीं पाया इस से सन्देह किया कि बाप्पा इस गऊ को दोहन कर के दुग्ध पान कर लेते हैं। बाप्पा इस अपवाद से अति क्रुद्ध हुए, किन्तु गऊ के स्तन में स्वरूपतः दुग्ध न देख कर ब्राह्मण गण के सन्देह को अमूलक न कह सके। पश्चात् स्वय अनुसन्धान कर के देखा कि यह गऊ प्रत्यह एक पर्वत गुहा में जाया करती थी और वहां से प्रत्यागमन करने से उस के स्तन पयःशून्य हो जाते हैं। बाप्पा ने गऊ का अनुसरण कर के एक दिन गुहा में प्रवेश किया और देखा कि उस बेतसवन में एक योगी ध्यानावस्था मे उपविष्ट हैं। उन के सम्मुख में एक शिवलिंग है और उसी शिवलिंग के मस्तक पर पयस्विनी का धवल पयोधर प्रचुर परिमाण से परिवर्षित होता है।

पूर्व्वकाल के योगी ऋषिगण भिन्न यह प्राकृतिक और पवित्र देवस्थली इति पूर्व्व में और किसी को दृष्टिगोचर नही हुई थी। बाप्पा ने जिन योगी का ध्यान अवस्था में दर्शन किया था उन का

---

* सूर्य्यवंशियों मे ब्राह्मण की गोचारण करना प्राचीन प्रथा है। रघुवंश मे दिलीप का इतिहास देखो।

नाम हारीत * जन समागम से जोगी का ध्यान भंग हुआ, वाप्पा का परिचय जिज्ञासा करने से वाप्पा ने आत्म वृत्तान्त जहां तक अवगत थे सब निवेदन किया। योगी के आशीर्वाद ग्रहणान्तर उस दिन गृह में प्रत्यागत भए। अतः पर वाप्पा प्रत्यह एक वार योगी के निकट गमन कर के उन का पादप्रक्षालन, पानार्थ पय.- प्रदान और शिवप्रीति काम होकर धतूरा अर्क प्रभृति शिव-प्रिय वन पुष्प समूह चयन किया करते। सेवा से तुष्ट होकर योगी वर ने उन को क्रम क्रम से नीति शास्त्र में शिक्षित और शैव मन्त्र में दीक्षित किया और स्व कर से उन के कण्ठ में पवित्र यज्ञसूत्र समर्पण पूर्व्वक "एक लिङ्ग को देवान" यह उपाधि प्रदान किया।

तत्पश्चात् वाप्पा का यह क्रम था कि नित्य प्रति योगी का दर्शन करना और तत्कथित मन्त्र का अनुष्ठान करना। काल पा कर भगवती पार्व्वती ने मन्त्र प्रभाव से वाप्पा को दर्शन दिया और राज्यादिक के वरप्रदान पूर्व्वक दिव्य शस्त्र से वाप्पा को सुसज्जित किया।

कियत् कालानन्तर ध्यान से योगी ने अपने परमधाम जाने का समय निकट जान कर वाप्पा को तद्वृत्तान्त विदित कर बोले

---

* हारीत वंशीय ब्राह्मण लोग अद्यावधि एक लिङ्ग के पूजन पद में प्रतिष्ठित हैं। टाड साहब के समकालीन पुरोहित हारीत के पञ्चाशत्तम पुरुष थे उन के निकट में राणा के साथ दत्तिता से शिवपुराण प्राप्त हो कर टाड साहब ने इङ्गलैण्ड के रायल एशियाटिक सोसाइटी (Royal Asiatic Society) समाज को प्रदान किया था।

" कल तुम अति प्रत्यूष में उपस्थित होना ? " वाप्पा निद्रा के वशीभूत होकर आदेशानुरूप प्रत्यूष में उपस्थित हो नहीं सके और विलम्ब कर के जब वहां गए तो देखा कि हारीत ने आकाश-पथ में कियद् दूर तक आरोहण किया है। उन का विद्युत-निभ विमान उज्ज्वलांग अप्सरागण वहन करती हैं। हारीत ने विमान गति स्थगित कर के वाप्पा को निकटस्थ होने का आदेश किया। उस विमान तक पहुंचने के उद्यम से वाप्पा का कलेवर तत्क्षणात् २० हाथ दीर्घ हो गया। किन्तु तथापि उन को गुरुदेव का रथ प्राप्त नहीं हुआ। तब योगी ने उन को मुख व्यादान करने को कहा। तदनुसार वाप्पा ने वदन व्यादित किया। कथित है योगीवर ने उन के मुख विवर में उगाल परित्याग किया था। * वाप्पा ने उस से घृणा कर के इस ष्ठीवन का पदतल में निक्षेप किया और इसी अपराध से उन को अमरत्वलाभ नहीं हुआ। केवल उन का शरीर अस्त्र शस्त्र से अभेद्य हो गया। हारीत अदृश्य हुए। वाप्पा ने इस प्रकार सदेवानुगृहीत हो कर और अपने को चित्तौर के मौरी राजवंश का दौहित्र जानकर और आलस्य में कालक्षेप करना युक्ति संगत अनुमान नहीं किया। अब गोचारण से उन को अत्यन्त घृणा हुई और उन्हों ने कतिपय सहचर समभिव्यवहार में ले कर अरण्यवास परित्याग करके लोकालय

---

* कथित है मुसलमानधर्म्मप्रचारक महम्मद ने स्वीय प्रिय दौहित्र हसन के वदन में ऐसाही निष्ठीवन परित्याग किया था। क्या आश्चर्य्य है जो मुसलमान लोगों ने यह कथा भारतवर्ष के इसी उपाख्यान से ली है।

में गमन किया। मार्ग में * नाहर-मगरा नामक पर्व्वत में विख्यात 'गोरखनाथ' ऋषि के साथ उन का साक्षात् हुआ था। गोरक्ष ने उन को और द्विधार तीक्ष्ण करवाल† प्रदान किया था। मन्त्रपूत कर के चलाने से उस तीक्ष्ण कृपाण के आघात से पर्व्वत भी विदीर्ण हो जाता था। वाप्पा ने उसी के प्रताप से चित्तौर का सिंहासन प्राप्त किया था। भट्ट कविगण के ग्रन्थ में वाप्पा के नागेन्द्र नगर से प्रस्थान का यह विवरण प्राप्त होता है। और इस विवरण में मिवार निवासी लोगों का प्रगाढ़ विश्वास भी है।

मालव के भूत पूर्व्व अधिपति प्रमारवंशीय तत्काल में भारत वर्ष के सार्व्व भौम थे। इस वंश की एक शाखा का नाम मोरी। मोरी वंशियों का इस समय में चित्तोर पर अधिकार था, किन्तु चित्तोर तत्काल प्रधान राजपाट था या नहीं यह निश्चित नहीं। विविध अट्टालिका और दुर्ग प्रभृति में इस वंश के राजत्व काल की खोदित लिपि विद्यमान है, उस से ज्ञात होता है कि मोरी राजा गण उस समय में विलक्षण पराक्रमशाली थे।

वाप्पा जब चित्तौर में उपस्थित हुए तात्काल में मोरीवंशीय मान राजा सिंहासनारूढ़ थे। चित्तौर के राजवंश के साथ उन का

---

* मेवार के राजधानी उदयपुर के पूर्व भाग में प्रवेश करने के रास्ते में कोस के अन्तर नाहरमगरा पर्व्वत अवस्थित है। इस पर्व्वत में राजा और तत्पारिषद वर्ग मृगया काल में उपवेशन करते थे। उन लोगों के बैठने के स्थान सब अद्यापि-असंस्कृत और जीर्ण अवस्था में पतित हैं।

† कथित है वह करवाल अद्यावधि विद्यमान है। राणा प्रति वत्सर में निर्दिष्ट दिवस में उस की पूजा करते हैं।

सम्बन्ध था * सुतरां विशेष समादर से राजा ने उन को सामन्त पद मे अभिषिक्त करके तदुचित भूमि वृत्ति प्रदान किया। चित्तोर के सरदार गण सैनिक नियम भोग करते थे †। वे लोग समुचित सम्मानभाव से इति पूर्व्व में मान राजा के ऊपर विरक्त हो रहे थे। एक आगन्तुक वाप्पा के ऊपर उन के समधिक अनुराग सन्दर्शन से वे लोग और भी सातिशय ईर्षान्वित हुए। इसी समय में चित्तोर राज विदेशीय शत्रु कर्तृक आक्रान्त होने से सर्दार लोग युद्धार्थ आहुत हुए, परन्तु उन लोगों ने युद्धोद्योग नहीं किया। अधिकन्तु सैनिक नियमानुसार भुक्त भूमि का पट्टा प्रभृति दूर निक्षेप करके साहङ्कार वाक्य बोले कि राजा अपने प्रियतर सरदार को युद्धार्थ नियोग करें।

वाप्पा ने यह सुन कर उपस्थित युद्ध का भार ग्रहण करके चित्तौर से यात्रा किया। सरदार गण यद्यपि भूमि-वृत्ति-वञ्चित हुए

---

* वाप्पा की माता प्रमारवंशीया थी। सुतरा वर्त्तमान प्रमारा के सहित मामा भागिनेय का सम्बन्ध था।

† सैनिक नियम (Feudal System) इस नियमानुसार में भुक्त भूमि के कर के परिवर्त्त मे प्रत्येक सरदार को अपने अपने वृत्ति भूमि के परिमाणानुरूप नियामित सख्या की सेना ले कर विग्रह समय में विपक्ष के साथ सग्राम करना होता है। प्राचीनकाल मे वृहत् वृहत् राज्य भूमि सक्रान्त यह नियम प्रचालित था। राजा और सरदारगण के मध्य और सरदार और तदधीन साधारण प्रजावर्ग के मध्य पूर्व्वोक्त मूल नियम के आनुषगिक अन्यान्य नियम समुदय पृथक् पृथक् रूप से व्यवसित करते थे। राजस्थान के सैनिक नियम का विवरण इस पर पृथक् एक खण्ड मे सविस्तार से प्रकटित होगा।

थे तथापि लज्जावशतः बाप्पा के अनुगामी हुए। समर में विपक्ष गण ने पराजित होकर पलायन किया। बाप्पा ने सरदार गण के साथ चित्तौर में प्रत्यागत न होकर स्वीय पैत्रिक राजधानी गाजनी नगर में गमन किया। सलीम नामक जनेक असभ्य उस काल मे गाजनी के सिंहासन पर था। बाप्पा ने सलीम को दूरीभूत करके वहां का सिंहासन जनेक चौर वंशीय राजपूत को दिया और आप पूर्वोक्त असन्तुष्ट सरदार गण के साथ चित्तौर प्रत्यागमन किया। कथित है कि बाप्पा ने इस समय सलीम की कन्या का पाणिग्रहण किया था। जातरोष सरदार गण ने चित्तौर राजा के साथ वैर-निर्यातन में कृतसङ्कल्प होकर सब ने एक वाक्य होकर नगर परित्याग करके अन्यत्र गमन किया। राजा ने उन लोगों के साथ सन्धि करने के मानस से बारम्बार दूत प्रेरण किया, किन्तु किसी प्रकार सरदार गण का कोप शान्त नहीं हुआ। उन लोगों ने कहा, " हम लोगों ने राजा का नमक खाया है इस से एक वत्सर काल मात्र प्रतीक्षा करेंगे। अनन्तर उन को व्यवहार के विहित प्रतिशोध देने में त्रुटि न करेंगे।" बाप्पा के वीरत्व और उदार प्रकृति के वशम्वद होकर सरदार गण ने उन को चित्तौर का अधिपति करने का अभिप्राय प्रकाश किया। बाप्पा ने सरदार गण के सहायता से चित्तौर नगर आक्रमण करके अधिकार कर लिया। भट्ट कविगण ने लिखा है " बाप्पा मोर राजा के निकट से चित्तौर ले कर स्वयं उस के " मौर " (अर्थात् मुकुट स्वरूप) हुए। चित्तौरप्राप्ति के पश्चात् सर्व्व सम्मति से बाप्पा ने 'हिंदूसूर्य' 'राजगुरु' और 'चक्कवे' यह तीन उपाधि धारण किया था। शेषोक्त उपाधि का अर्थ सार्व्वभौम।

वाप्पा के अनेक पुत्र हुए थे। उन में किसी किसी ने स्वीय वंश के प्राचीन स्थान सौराष्ट्र राज्य में गमन किया। आईन अकवरी ग्रन्थ में लिखा है कि अकवर सम्राट के समय में इस वंश के पञ्चास सहस्र पराक्रान्त सरदार सोराष्ट्र देश में वास करते थे। वाप्पा के अपर पांच पुत्र ने मारवाड़ देश में गमन किया था। गोहिल-वाल नामक स्थान में गोहिल वंशीय भी वाप्पा की सन्तान हैं। परन्तु वे लोग अपने वंश का मूल विवरण आप भूल गए हैं। इति पूर्व्व में उन लोगों ने क्षीर* प्रदेश में आ कर वास किया था। और अव पूर्व्व काल के पूर्व्व पुरुषगण के नाम वा वंश का अन्य कोई विवरण वह लोग नही वतला सकते। घटना क्रम से उन लोगों ने वालभी ग्राम में वास भी किया, किन्तु यह नही जाना कि यही स्थान उन लोगों की पैत्रिक भूमि है। यह लोग अव अरव गण के सहवास से वाणिज्य कर के जीविका निर्व्वाह करते हैं।

वाप्पा के चरम काल का विवरण सर्व्वापेक्षा आश्चर्य्य है। कथित है परिणत वयस में उन्हों ने स्वीय राज्य सन्तान गण को परित्याग कर के खुरासान राज्य में गमन किया था, और तद्देश अधिकार कर के म्लेच्छ वंशीय अनेक रमणिका पाणिग्रहण किया था। इन सव रमणी के गर्भ से वहुसंख्यक सन्तान समुत्पन्न हुए थे।

सुना जाता है कि एक शतवर्ष की अवस्था में वाप्पा ने शरीर त्याग किया। देलवारा प्रदेश के सर्दार के निकट एक ग्रन्थ है उस में लिखा है कि वाप्पा ने इस्पहान, कन्दहार, कश्मीर, इराक,

---

* मारवाड प्रदेश के दक्षिण-पश्चिम प्रान्त में लूणी नदी के निकट क्षीर भूमि है।

तूरान और काफरिस्तान प्रभृति देश अधिकार कर के तत् समुदय देशीया कामिनियों का पाणिपीड़न किया था। उन म्लेछ महिला के गर्भ से उन का १३० पुत्र जन्मे थे। उन लोगों की साधारण उपाधि "नौशीरा पठान" है। उन सब पुत्रों में से प्रत्येक ने अपने अपने मातृनामानुयायी नाम से एक एक वंश विस्तार किया है। वाप्पा के हिन्दू सन्तान की संख्या भी अल्प नहीं। हिन्दू महिला गण के गर्भ में उन्हों ने ९८ पुत्र सन्तान उत्पादन किया था उन लोगों की उपाधि "अग्नि उपासी सूर्य्यवंशीय" है। उक्त ग्रन्थ में लिखा है, वाप्पा ने चरम काल में संन्यास आश्रम अवलम्बन कर के सुमेरु शिखर के मूल में अवस्थिति किया था, उन का प्राण त्याग नहीं हुआ है जीवदशा में ही इस स्थान में उन की समाधि क्रिया सम्पन्न हुई थी। अन्यान्य प्रवाद में कथित है

कि वाप्पा की अंत्येष्टि क्रिया सम्बन्ध में उन के हिन्दू और म्लेच्छ प्रजागण के मध्य तुमुल कलह उपस्थित हुआ था। हिन्दू लोग उन का शरीर अग्निदग्ध और म्लेच्छ लोग मिट्टी में प्रोथित करने को कहते थे। उभय दल ने इस विषय का विवाद करते करते शव का आवरण खोल कर देखा शव नहीं है तत् परिवर्त्तन में कतिपय प्रफुल्ल शतदल विराजमान है। उन लोगों ने वह सब कमल ले कर ह्रद मे रोपन कर दिया था। पारस्य देश के नौशेरवां की और काशी के प्रसिद्ध भगवद्भक्त कबीर की अन्त्येष्टि क्रिया का प्रवाद भी ठीक ऐसा ही है।

मिवाड़ के राजवंश के प्रधान पुरुष वाप्पा का यह संक्षेपक इतिहास प्रकटित किया गया। प्राचीन कालीन अन्यान्य राज पुरुष के भांति वाप्पा की कहानी भी सत्यमिथ्या से मिलित है। किन्तु इस विचार को छोड कर चित्तौर के सिंहासन में सूर्य्यवंशी राजगण ने दीर्घ कालावधि जो आधिपत्य किया था, उस आधिपत्य का वाप्पा ही से प्रारम्भ है इस कारण गिहलोट गण का चित्तौर का राजत्व कितने दिन का है यह निरूपण करने को वाप्पा का जन्मकाल का निरूपण करना अत्यन्त आवश्यक है। वल्लभीपुर २०५ संवत् मे शिलादित्य के समय मे विनष्ट हुआ था। शिलादित्य से वाप्पा दशम पुरुष, परन्तु आश्चर्य्य का विषय यह है कि उदयपुर के राजभवन की वंशपत्रिका में वाप्पा का जन्मकाल १९१ संवत् में लिखा है। विशेषतः चित्तौर की एक खोदित लिपि से प्रकाश हुआ था कि ७७० संवत् मे चित्तौर नगर मोरी वंशीय मान राजा के अधिकार में था। इसी मान राजा के समय

में असभ्य गण ने चित्तौर नगर आक्रमण किया था। उन लोगों को पराभव कर के उस के पश्चात् वाप्पा ने पञ्चदश वर्ष की अवस्था में चित्तौर का सिंहासन प्राप्त किया था। इस कारण ईदृश विवरण से वाप्पा का जन्मकाल १९१ संवत् किसी प्रकार स्वीकृत नहीं हो सक्ता। परन्तु उदयपुर के राजवंश के कुलाचार्य्य भट्ट गण पूर्वोक्त समुदय घटना स्वीकार कर के भी कहते हैं कि वाप्पा ने १९१ संवत् में जन्म ग्रहण किया था। टाड साहब ने अनेक अनुसन्धान कर के अवशेष में सौराष्ट्र देश में सोमनाथ के मन्दिर की एक खोदित लिपि से जाना था कि वल्लभी संवत् नाम का एक और भी संवत् प्रचलित था। वह संवत् विक्रमादित्य की संवत् से ३७५ बरस के पश्चात् प्रारम्भ हुआ था, २०५ वल्लभी सम्वत् में वल्लभीपुर विनष्ट हुआ था, सुतरां विक्रमादित्य के संवतानुसार उस के विनाश का काल ५८० हुआ। जिस प्रणाली से टाड साहब ने चित्तौर के मान राजा का राजत्व, वल्लभीपुर का विनाश और कुलाचार्य्य गण लिखित वाप्पा के जन्मसमय का परस्पर समन्वय साधन किया है वह विलक्षण बुद्धि व्यञ्जक है, परंतु जटिल और नीरस है इस कारण सविस्तर से इस स्थान में प्रकटित नहीं किया। उस की मीमांसा का स्थूलतात्पर्य्य यह कि वल्लभीपुर विनाश के १९० बरस पश्चात् विक्रमादित्य के ७६९ संवत् में वाप्पा ने जन्म ग्रहण किया था। कुलाचार्य्य गण ने भ्रम वशात इस १९० संख्या को विक्रमादित्य का संवत कर के लिखा है। तद् पश्चात् पञ्चदश वर्ष की अवस्था में वाप्पा चित्तौर राज्य में अभिषिक्त हुए थे। सुतरां ७८४ संवत् उन का चित्तौर प्राप्तकाल निरूपित हुआ।

उस समय से सार्द्ध एकादश वत्सरावधि वाप्पा के वंशीय ६० राजा गण ने क्रमान्वय से चित्तौर के सिंहासन पर उपवेशन किया है।

यद्यपि भट्ट गण के ग्रन्थानुयायी वाप्पा के जन्मकाल की प्राचीनत्व रक्षा नहीं हुई, परन्तु जो समय टाड साहब ने निरूपित किया है वह भी नितान्त आधुनिक नहीं है। तदनुसार प्रकाश होता है कि वाप्पा फरासी राजा के करोलों भिञ्जिया वंशीय राज गण के और मुसल्मान साम्राज्य के वलीद खलीफा के समकालवर्ती थे।

आइतपुर * नगर से मिवाड़वंशीय और एक खोदित लिपि संगृहीत हुई थी। वह लिपि १०२४ संवत् समय की है तत्कालीन चित्तौर के सिंहासन में वाप्पा के वंशीय शक्ति कुमार राजा प्रतिष्ठित थे। उस लिपि में शक्ति कुमार के चतुर्दश पुरुष के मध्य एक जन शील नाम से अभिहित हुए हैं। राजभवन की वंशावली अपेक्षा तल्लिपि में यही एक मात्र अतिरिक्त नाम लक्षित होता है, तद्भिन्न और सब विषय में समता है। इङ्गलैंड के प्रसिद्ध कवि ह्यूम ने कहा है " यद्यपि कविगण सूक्ष्म सत्य के तादृश्य अनुरागी नहीं, और यदिच वह इतिवृत्त का रूपान्तर कर देते हैं, तो भी उन लोगों की अत्युक्ति के मूल में सत्य की सत्वालक्षित होती है " हम वर्णित विषय में ह्यूम की एतदुक्ति का सारत्व प्रतीयमान होता है। जन समागम शून्य स्वापद पूर्ण आइतपुर के कानन में जो सब नाम विलुप्त हो जाते और उन सब नामों के कभी किसी के

* आइतपुर—सूर्य्यपुर। आदित्य शब्द का अपभ्रंश आइत। आइत शब्द का संकीर्ण रूप एत, यथा एतवार आदित्यवार।

कर्णगोचर होने की संभावना नहीं थी, किन्तु भट्ट कविगण की वर्णना प्रभा में मिवाड़ राजवंश के प्राचीन काल के वह सब नाम चिरस्मरणीय हो रहे हैं।

इस १०२३ संवत् समय में वलीदखलीफा के सेनापति महम्मद विन्कासिम ने भारतवर्ष में आकर सिन्धु देश जय किया था। इस के पहिले मोरी वंशीय मानराजा के समय जिस असभ्य राजा ने चित्तोरनगर आक्रमण किया था और बाप्पा कर्तृक जो पराजित हुआ था, वह अनुमान होता है कि यही विन कासिम है।

बाप्पा और शक्ति कुमार के मध्यवर्त्ती ६ राजा ने चित्तौर में राजत्व किया था। उस समय से दो शत वर्ष के मध्य में ६ जन राजा का राजत्व असम्भव नहीं। तदनुसार मिवार के इतिवृत्त का निम्नोक्त चार प्रधान काल निरूपित हुआ। प्रथम, कनकसेन का काल १४४। द्वितीय, शिलादित्य और वल्लभीपुर विनाश का काल ५२४। तृतीय बाप्पा के चित्तोर प्राप्ति का काल खृष्टाब्द ७२८। चतुर्थ, शक्तिकुमार का राजत्व काल खृष्टाब्द १०६८।

तृतीय अध्याय।

बाप्पा और समर सिंह के मध्यवर्त्ती राजगण, बाप्पा का वंश अरब जाति के भारतवर्ष आक्रमण का विवरण, मुसलमानगण से जिन सब राजाओं ने चित्तौर नगर रक्षा किया था उन लोगों की तालिका।

७८४ संवत् में बाप्पा का चित्तौर सिंहासन प्राप्त हुआ था। मिवार के इतिवृत्त में तत्परवर्त्ती प्रधान समय समर सिंह का

राजत्व काल—संवत् १२४९ । अनपत्र वाप्पा के ईरान राज्य गमन के समय ८२० संवत् से समर सिंह के समय पर्य्यन्त भट्टगण के ग्रन्थानुसार मिवार राज्य का वृत्तान्त संपूर्ति प्रकटित होता है। समर सिंह का राजत्व काल केवल मिवार के इतिवृत्ति का प्रधान काल नहीं, स्वरूपतः समुदय हिन्दू जाति के पक्ष में एक प्रधान समय है । उन के राजत्व समय में भारतवर्ष का राज किरीट हिन्दू के सिर से अपनीत हो कर तातारी मुसलमान के सिर में आरोपित हुआ था । वाप्पा के समर सिंह के मध्य चार शताब्दी काल का व्यवधान है । इस काल के मध्य में चित्तौर के सिंहासन पर अष्टादश राजाओं ने उपवेशन किया था । यद्यपि उन लोगों का राजत्व का विशेष विवरण पाप्त नहीं होता, तौ भी नितान्त नीरव में तत्तावत् काल उल्लङ्घन करना उचित नहीं । उन सब राजा को लोहितवर्ण पात का सुवर्णमयी प्रतिमा से शोभमान चित्तौर के सौध शिखर पर उड्डीयमान थी और तन्मध्य में अनेक का नाम उन लोगों के राज्यस्थ शैल शरीर में लोह लेखनी की लिपि योग से अद्यावधि विद्यमान है ।

इस के पहिले आइतपुर की जिस खोदित लिपि का उल्लेख किया है, उस से बाप्पा और समर सिंह के मध्यवर्ती शक्तिकुमार राजा का राजत्व काल सम्वत् १०२४ निरूपित हुआ। जैन ग्रन्थ से ज्ञात होता है कि शक्तिकुमार के चार पुरुष पूर्ववर्ती उन्नत नाम राजा ९२२ संवत् में चित्तौर के सिंहासनारूढ़ हुए थे । ७६४ खृष्टाब्द में वाप्पा ने ईरान देश में गमन किया । ११९३ खृष्टाब्द में समर सिंह के समय में हिन्दू राजत्व का

[स]लमान हुआ। इस उभय घटना के मध्यवर्ती समय में मिवार
[रा]ज्य और एक वार मुसलमान गण से आक्रान्त होने का विवरण
[रा]जवंश के ग्रन्थ मे प्राप्त होता है। तत्काल खोमान नामक एक
[रा]जा चित्तोर के सिंहासनस्थ थे। उन के राजत्व काल मे ८१२ से
[८३]६ खृष्टाब्द के अन्तर्गत किसी समय में मुसलमानो ने चित्तौर
[प]र आक्रमण किया था। खोमान रास नामक ग्रन्थ में तत्
[आ]क्रमण संक्रांत वृत्तांत सविस्तार निवृत्त हुआ है। मिवार राज्य
[के] पद्य विरचित इतिहास ग्रन्थ समूह के मध्य खोमानरास
[स]र्वापेक्षा पुरातन है।

टाड साहब कहते हैं भारतवर्ष का पतत् समय का इतिवृत्त
[अ]ज्ञान तमसाच्छन्न है। इस कारण खोमानरासा प्रभृति हिन्दू
[ग्रन्]थ से तत् संबंध में जो कुछ आलोक लाभ हो सकता है वह
[प]रत्याग करना उचित नहीं। भारतवर्ष मे पतत् काल में जो
[स]ब ऐतिहासिक विवरण सत्य कह कर प्रसिद्ध है सो हिन्दू ग्रन्थ
[में] लिखित विवरण अपेक्षा अधिक असङ्गता वा परिच्छन्न नहीं।
[य]दि हो तदुभय एकत्रित रहने से भवि कालीन इतिवृत्तप्रणेता
[ग]ण उन से अनेक उपकरण लाभ कर सकेंगे। इस कारण (मुसल-
[मा]न साम्राज्य के आरम्भ से गजनगर राज्य संस्थापन पर्य्यन्त)
[भा]रतवर्ष में अरब जाति के समागम का संक्षिप्त विवरण इस
[अ]ध्याय में सन्निविष्ट किया जायगा। परन्तु अरब समागम
[का] सविस्तार विवरण विशिष्ट कोई ग्रन्थ नहीं मिलता यह
[बड़]े शोच की बात है। अलमकीन नामक ग्रन्थकार ने खलीफा
[ग]ण के इतिवृत्त मे भारतवर्ष का प्राय उल्लेख नहीं किया है।

राजत्व काल—संवत् १२४६। अतएव बाप्पा के ईरान राज्य गमन के समय ८२० संवत् से समर सिंह के समय पर्य्यन्त भट्टगण के ग्रन्थानुसार मिवार राज्य का वृत्तान्त संपूर्ति प्रकटित होता है। समर सिंह का राजत्व काल केवल मिवार के इतिवृत्ति का प्रधान काल नहीं, स्वरूपतः समुदय हिन्दू जाति के पक्ष में एक प्रधान समय है। उन के राजत्व समय में भारतवर्ष का राज किरीट हिन्दू के सिर से अपनीत हो कर तातारी मुसलमान के सिर में आरोपित हुआ था। बाप्पा के समर सिंह के मध्य चार शताब्दी काल का व्यवधान है। इस काल के मध्य में चित्तौर के सिंहासन पर अष्टादश राजाओं ने उपवेशन किया था। यद्यपि उन लोगों का राजत्व का विशेष विवरण प्राप्त नहीं होता, तौ भी नितान्त नीरव में तत्तावत् काल उल्लङ्घन करना उचित नहीं। उन सब राजा को लोहितवर्ण पात का सुवर्णमयी प्रतिमा से शोभमान चित्तौर के सौध शिखर पर उड्डीयमान थी और तन्मध्य में अनेक का नाम उन लोगों के राज्यस्थ शैल शरीर में लोह लेखनी की लिपि योग से अद्यावधि विद्यमान है।

इस के पहिले आइतपुर की जिस खोदित लिपि का उल्लेख किया है, उस से बाप्पा और समर सिंह के मध्यवर्ती शक्तिकुमार राजा का राजत्व काल संवत् १०२४ निरूपित हुआ। जैन ग्रन्थ से ज्ञात होता है कि शक्तिकुमार के चार पुरुष पूर्व्ववर्त्ती उल्लत नाम राजा ९२२ संवत् में चित्तौर के सिंहासनारूढ़ हुए थे। ७६४ खृष्टाब्द में बाप्पा ने ईरान देश में गमन किया। ११९३ खृष्टाब्द में समर सिंह के समय में हिन्दू राजत्व का

ासान हुआ। इस उभय घटना के मध्यवर्ती समय में मिवार
ाय और एक वार मुसलमान गण से आक्रान्त होने का विवरण
जवंश के ग्रन्थ मे प्राप्त होता है। तत्काल खोमान नामक एक
ना चित्तौर के सिंहासनस्थ थे। उन के राजत्व काल मे ८१२ से
६ खृष्टाब्द के अन्तर्गत किसी समय में मुसलमानों ने चित्तौर
र आक्रमण किया था। खोमान रास नामक ग्रन्थ में तत्
क्रमण सक्रांत वृत्तांत सविस्तार निवृत्त हुआ है। मिवार राज्य
पद्य विरचित इतिहास ग्रन्थ समूह के मध्य खोमानरास
र्वापेक्षा पुरातन है।

टाड साहब कहते हैं भातवर्ष का पतत् समय का इतिवृत्त
तान्त तमसाच्छन्न है। इस कारण खोमानरासा प्रभृति हिन्दू
न्थ से तत् सबध में जो कुछ आलोक लाभ हो सकता है वह
रित्याग करना उचित नही। भारतवर्ष में पतत् काल में जो
व ऐतिहासिक विवरण सत्य कह कर प्रसिद्ध है सो हिन्दू ग्रन्थ
लिखित विवरण अपेक्षा अधिक असङ्गता वा परिच्छन्न नही।
ो हो, तदुभय एकत्रित रहने से भावि कालीन इतिवृत्तप्रणेता
स में से अनेक उपकरण लाभ कर सकैंगे। इस कारण (मुसल-
ान साम्राज्य के आरम्भ से गजनगर राज्य सस्थापन पर्य्यन्त)
ारतवर्ष में अरब जाति के समागम का संक्षिप्त विवरण इस
ध्याय में सन्निविष्ट किया जायगा। परन्तु अरब समागम
ा सविस्तार विवरण विशिष्ट कोई ग्रन्थ नहीं मिलता यह
ड़े शोच की बात है। अलमकीन नामक ग्रन्थकार ने खलीफा
ण के इतिवृत्त में भारतवर्ष का प्रायः उल्लेख नही किया है।

अबुलफ़जल के ग्रन्थ में अनेक विषय का सविशेष विवरण प्राप्त होता है और वह ग्रन्थ भी विश्वास के योग्य है। फरिस्ता ग्रन्थ में इस विषय का एक पृथक् अध्याय है, परन्तु उस का अनुवाद यथोचित मत से निष्पन्न नहीं हुआ है *। अब पहिले वाप्पा के वंशीय राजगण का वृत्तान्त विवरित किया जाता है, पश्चात् यथायोग्य स्थान में मुसलमान गण का भारतवर्ष सक्रान्त इतिवृत्त प्रकटित होगा।

गिहेलिट वश की चतुर्विंशति शाखा। तन्मध्य अनेक शाखा वाप्पा से समुत्पन्न। चित्तौर अधिकार के पश्चात् वाप्पा ने

---

* टाड साहब ने फिरिस्ता के अनुवाद में जो सब विषय परित्याग किया है तन्मध्य में अफगान जाति की उत्पत्ति का विवरण अतीव प्रयोजनीय। मुसलमान गण के साथ हिजरी ६२ अब्द में जिस काल में अफगान जाति का प्रथम आगमन हुआ तब वे लोग सुलेमान पर्व्वत के निकटस्थ प्रदेश में वास करते थे। फिरिस्ता ने जिस ग्रन्थ के ऊपर निर्भर कर के अफ़गान का विवरण लिखा है वह यह है "अफ़गान लोग कायर जाति के लोग फिर उस उपाधिकारी राजगण के अधीन वास करते थे उन लोगो में बहुतो ने मूसा की प्रतिष्ठित नूतन धर्म्म व्यवस्था अवलम्बन किया था। जिन लोगो ने पूर्व्व की पौत्तलिकता त्याग नहीं किया वे लोग हिन्दुस्तान से भाग कर कोह—सुलेमान के निकटवर्त्ती देश मे वास करते थे। सिन्धु देश से आगत बिनकासिम के साथ उन लोगो का समागम हुआ था। हिजरी १४३ अब्द में उन लोगों ने किरमान और पेशावर प्रदेश और तत् सीमा वर्ती समुदय स्थान अधिकार किया था।" कोहिस्थान का भूगोल वृत्तान्त, रोहिला शब्द की व्युत्पत्ति और अन्यान्य प्रयोजनीय विषय टाड साहब ने स्वीय अनुवाद में परित्याग किया है।

सौराष्ट्र देश में गमन कर वन्दर द्वीप के यूसुफगुल * नाम राजा की कन्या से विवाह किया। वन्दर द्वीप निवासी व्यानमाता नामक एक देवी की उपासना करते थे। वाप्पा ने इस देवी की प्रतिमा और स्वीय वनिता सह चित्तौर में प्रत्यागमन किया था। गिहलोट वंशीय अद्यावधि व्यानमाता की उपासना करते हैं। वाप्पा ने इस देवी को जिस मन्दिर में प्रतिष्ठित किया था, वह आज तक चित्तौर मे विद्यमान है, तद्भिन्न तत्रत्य अन्यान्य अनेक अट्टालिका वाप्पा कर्तृक विनिर्म्मित हैं, यह भी प्रवाद प्रचलित है। यूसुफगुल के कन्या के गर्भ में वाप्पा को एक पुत्र जन्मा था, उस का नाम अपराजित। द्वारका नगरी के निकटवर्ती कालिवायो नगर के प्रमारा वंशीय जनैक राजा की कन्या से भी वाप्पा ने विवाह किया था। उस रमणी के गर्भ में इस के पहिले वाप्पा को और एक आसिल नामक पुत्र जन्मा था, यदिच आसिल ज्येष्ठ तथापि अपराजित चित्तौर में जन्मे थे, इस कारण उन्हों ने वहां का राज प्राप्त किया। आसिल सौराष्ट्र देश के किसी एक राज्य में राजा

---

* कथित है, समुद्र मे वन्दर द्वीप और स्थल में चोयाल नामक स्थान यूसफगुल राजा के अधिकार में था। यूसफगुल चौर वंशीय राजपूत, अनल परम का संस्थापन कर्त्ता रेणु राज अनुमान होता है। इसी यूसफगुल का वृत्तान्त कुमार पालचरित नामक ग्रन्थ में लिखा है, रेणुराज के पूर्व्व पुरुष वन्दर द्वीप के अधिपति थे। वन्दर द्वीप आज कल पोर्त्तगीस जाति के अधिकार मे है। इस का आधुनिक नाम डिय्यो है। यह नाम पोर्त्तगीस जाति प्रदत्त है।

हुए थे * उन की सन्तान परम्परा से वहां विपुल वंश विस्तार हुआ था। इस वश को उपाधि आसिला गिहलोट है।



* आसिला के नामानुसार एक क़िला का आसिला नाम रक्खा था. यह वश-पत्रिका से ज्ञात होता है। सग्रामदेव नामक जनैक राजा के निकट मे कुवायन (कावे) नगर अधिकार करने के अभिलाष मे आसिल के पुत्र विजयपाल समर में निहत हुए थे। विजय की इसी आकस्मिक मृत्यु घटना के पहिले तद गर्भस्थ पुत्र अकाल में भूमिष्ठ हुआ था, उस पुत्र का नाम सेतु टाड साहब कहते हैं अस्वभाविक मृत्यु प्राप्त व्यक्तिगण भूतयोनि प्राप्त होते हैं। हिंदूगण का यह सस्कार है और स्त्री भूत का हिंदुस्तानी नाम चुरइल, सेतु की माता के अस्वाभाविक मृत्यु वशत सेतु का वश काचोराइल नाम से प्रसिद्ध हुआ। आसिल से द्वादशतम अधस्तन पुरुष बोना गिरनार के राजा शृङ्गार देव के भाजे थे और मातुल के निकट से इन्हों ने लालन स्थान प्राप्त किया था। सुराट का राजा जयसिंह देव के साथ समर में विजा निहत हुए थे। फ़िरिश्ता ग्रन्थ में जो देवी सालिमा वश का उल्लेख है, अनुमान होता रहा है देवी और चोरइल, इन दो नाम के समता से तन्नाम की उत्पत्ति हुई है।

पुरावृत्त-संग्रह

अर्थात्

इतिहास सम्बन्धि बात।

भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित.

क्षत्रियपत्रिकासम्पादक म० कु० बाबू रामदीन सिंह सङ्कलित

राय साहिब रामरणविजय सिंह द्वारा प्रकाशित.



'खड्गविलास' प्रेस, बांकीपुर, पटना
बाबू रामप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित
ई० स० ३२—१९१७

दूसरी बार।

पुरावृत्त-संग्रह।

—⁂—

[इस प्रबन्ध में प्राचीन पुस्तकें तथा राजा बादशाह आदि के वृत्त और आरम्भ में सर्कारी अमलदारी की दशा जो कुछ हाथ लगेगी प्रकाशित होगी]

अकबर और औरंगज़ेब।



काशी में राजा पटनीमल्ल बहादुर अग्रवाल कुल के भूषण हो गए हैं। इन के उद्योग, अध्यवसाय, साहस, धर्मनिष्ठा, गंभीर गवेषणा, बुद्धि और अपूर्व औदार्य सभी गुण प्रशंसा के योग्य हैं। कई बेर राजविप्लव में ऐसे लुट गए कि कुछ भी पास न रहा, किन्तु अपने उद्योग से फिर करोड़ों की सम्पत्ति पैदा किया। गया, काशी, मथुरा, वैतरणी, किस तीर्थ में इन के बनाए मन्दिर घाट, तालाब आदि नहीं हैं। कर्मनाशा का पक्का पुल अद्यापि इन की अतुल कीर्त्ति का चिन्ह वर्त्तमान है। फारसी विद्या के ये पारङ्गत थे। काशीखण्ड का सम्पूर्ण फारसी में इन्हों ने स्वयं अनुवाद किया है। और भी कई ग्रन्थों को हिन्दी और फारसी में इन्हों ने अनुवाद कराया था। वेद, स्मृति, पुराण, काव्य, कोष आदि

विषय मात्र की पुस्तकें इन्हों ने संग्रह की थीं। फारसी पुस्तकों के संग्रह की तो कोई बात ही नहीं। अंगरेज़ी यद्यपि स्वयं नहीं जानते थे किन्तु दस पन्द्रह हजार की पुस्तकें अंगरेज़ी भाषा की संग्रह की थी और सब के ऊपर फारसी में उस का नाम विषय कवि मूल्य आदि का वृत्तान्त उन के हाथ का लिखा हुआ था। उन का सरस्वती भण्डार और औषधालय तीन लाख रुपये का समझा जाता था। किन्तु हाय ! वह अमूल्य भण्डार नष्ट हो गया। कीट दीमक छुईमुई चूहे आदि उन अमूल्य ग्रन्थों को खा गए। उन के स्वकार्य निपुण छ पौत्र और अनेक प्रपौत्रों के होते भी यह अमूल्य संग्रह भस्मावशेष हो गया। मैं ने दो बेर इस भण्डार का दर्शन किया था। रुपये का चार आना तो पहली ही बेर देखा था दूसरी बेर एक आना मात्र बचा पाया। सो भी खण्डित छिन्न भिन्न। उस पुण्य-कीर्ति-उदार-मनुष्य की उदारता और अध्यवसाय और उस के संगृहीत वस्तु की यह दुर्दशा देख कर मेरी छाती फट गई। इस्कन्दरिया का पुस्तकालय मानो अपनी आंखों से जला हुआ देख लिया। अस्तु ! ईश्वर की यही गति है !! नाशान्ताः संचयः सर्वे !!!

उन के प्रपौत्र और अपने फुफेरे भाई राय प्रह्लाद दास से कह कर उस संग्रह की भस्मावशिष्ट हड्डियों में से मैं टूटे फूटे दस पांच ग्रन्थ ले आया हूं। इन में कुछ सर्कारी पुराने छपे हुए कागज़ और कुछ खण्डित पुस्तकें हैं। इस प्रबन्ध में बहुत सी बात उन्हीं सबों में से चुन कर लिखी जायगी, इस हेतु उस सुगृहीतनामा महापुरुष का भी थोड़ा वृत्तान्त लिखे बिना जी न माना।

प्रकृति मनुसराम:

मैं ने बादशाहदर्पण नामक अपने छोटे इतिहास में अकबर और औरङ्गज़ेब की बुद्धि और स्वभाव का तारतम्य दिखलाया है। अब पूर्वोक्त राजा साहब की अङ्गरेज़ी किताबों में सन् १७८८ से लेकर १८०२ तक के जो पुराने एशियाटिक रिसर्चेज़ के नम्बर मिले हैं उन से जोधपुर के राजा जशवन्त सिंह का वह पत्र भी मिला है जो उन्हों ने औरङ्गज़ेब को लिखा था और श्रीयुक्त राजा शिवप्रसाद सी० एस० आई० ने भी अपने इतिहास मे जिस का कुछ वर्णन किया है। तथा मेरे मित्र पण्डित गणेश रामजी व्यास ने मुझ को कुछ पुस्तकें प्राचीन दी हैं, उन में महा कवि कालिदास के बनाए सेतुबन्ध काव्य की टीका मिली है, जिस में कुछ अकबर का वर्णन है। इन दोनों को हम यहां प्रकाश करते हैं, जिस से पूर्वोक्त दोनों बादशाहों का स्पष्ट चित्त और विचार Policy प्रकट हो जायगी।

यह टीका राजा रामदास कछवाहे की बनाई है। अपना वंश इस ने यों लिखा है। कुलदेव को क्षेमराज उन के पुत्र माणिक्य राय फिर क्रम से मोकलराय-धीरराय, नापाराय, (उन के पौत्र) पातलराय, खानाराय, चन्द्राराय और उदयराज हुए। इन्ही उदयराज का पुत्र रामदास हुआ, जो सर्व भाव से अकबर का सेवक है। अकबर के विषय में वह लिखता है :—

श्लोक।

आमेरोरासमुद्रादवति वसुमती य. प्रतापेन तावत्।
दूरे गाःपाति मृत्योरपि करममुचत्तीर्थवाणिज्य वृत्योः।
अप्यश्रौषीत् पुराणं जपति च दिनकृन्नाम योगं विधत्ते।
गङ्गाम्भोभिन्नमम्भो न च पिबति जयत्येषजल्लालुदीन्द्र. ॥ ३ ॥
अङ्ग-वङ्ग-कलिङ्गं-सिलिहट्ट-तिपुरा-कामता-कामरूपा
नान्ध कर्णाट-लाट द्राविड़-मरहट्ट द्वारका-चोल-पण्ड्यान्।
भोटाश्च मारूवारोत्कलमलयखुरासानखान्धारजाम्न् ॥
काशी-काश्मीर ढक्का वलक-बदखशा-काबिलान् यःप्रशास्ति ॥४॥
कलियुगमहिमाऽपचीयमानश्रुतिसुरभिद्विजधर्मरक्षणाच्च।
धृतसगुणतनं तमप्रमेयं पुरुषमकब्बरशाहमानतोस्मि ॥ ५ ॥

अर्थ—जो समुद्र से मेरू तक पृथ्वी को पालता है जो मृत्यु से गउओं की रक्षा करता है, जिस ने तीर्थ और व्यापार के कर छुड़ा दिए, जिस ने पुरान सुने, जो सूर्य्य का नाम जपता, जो योग्य धारण करता है और गंगाजल छोड़ कर और पानी नहीं पीता उस जलालुद्दीन की जय ॥ ३ ॥

अंग वंग कलिंग सिलहट तिपुरा कामता (कामटी ?) कामरूप अंध कर्णाटक लाट द्रविड़ महाराष्ट्र द्वारका चोल पांड्य भोट मारवाड़ उड़ीसा मलय खुरासान कंदहार जम्बू काशी ढाका वलख बदख्शा और काबुल को जो शासन करता है ॥ ४ ॥

कलियुग की महिमा से घटते हुए वेद गऊ द्विज और धर्म की रक्षा को सगुन शरीर जिस ने धारण किया है उस अप्रमेय पुरुष को हम नमस्कार करते हैं ॥ ५ ॥

पाठक गण ! अकबर की महिमा सुनी, यह किसी भाट की बनाई नहीं है एक कट्टर कछवाहे क्षत्रिय महाराज की बनाई है इसी से इस पर कौन न विश्वास करेगा। उस ने गो-वध बंद कर दिया था यह कवि परम्परा द्वारा तो श्रुत था अब प्रमाण भी मिल गया। हिन्दूशास्त्रों को वह सुना करता था। यह तो और इतिहासों में लिखा है कि वह आदित्यवार को पवित्र समझता है। देखिए उस के इस कार्य से गायत्री के देवता सूर्य के आदर से हिन्दूमात्र उस से कैसे प्रसन्न हुए होंगे। मैं समझता हूं कि उस समय सूर्यवंशी राजा बहुत थे और सूर्य को यह सम्मान दिखा कर अकबर ने सहज उन लोगों का चित्त वश कर लिया था। योग साधने से हिन्दुओं की प्रसन्नता और शरीर की रक्षा दोनों काम हुए। विशेष यह बात जानी गई कि वह गंगाजल छोड़ कर और पानी नहीं पीता था। यह उस की सब क्रिया हिंदुओं के वश करने को एक महामोहनास्त्र थी। इसी से उस को परमेश्वर का अवतार तक कहने में हिंदुओं ने संकोच न किया। उस को लोग जगद्‌गुरु पुकारते थे यह आगे वाले महाराज जसवन्त सिंह के पत्र से प्रकट होगा। इस के विरुद्ध औरंगज़ेब से हिंदुओं का जी कैसा दुःखी था और उस समय राज्य की भी कैसी अवनति थी यह भी इस पत्र ही से प्रकट हो जायगा हम विशेष क्या लिखें।

विदित हो कि इस पत्र के लेखक महाराज जसवन्त सिंह जोधपुर के महाराज गज सिंह के द्वितीय पुत्र थे। सन् १६३८ में गज सिंह युद्ध में मारे गए। अपने बड़े पुत्र अमर सिंह को अति

क्रूर और प्रजापीड़क समझ कर गज सिंह ने त्याग कर दिया। यही अमर सिंह फिर शाहजहान के दर्बार में रहा और वहां भी अपनी उद्धतता से एक दिन काम पर हाजिर नहीं हुआ। इस पर शाहजहां ने उस पर जुर्माना किया। जुर्माना अदा करने को सलावत खां खजानची को भेजा। उस का भी अमर सिंह ने निरादर किया। इस पर बादशाह ने उस को दरबार में बुला भेजा। यह अति क्रोधावेश में एक कटार लिए हुए दर्बार में निर्भय चला गया। बादशाह को क्रोधित देख कर रोषानल और भी भड़का। पहले सलावत का प्राण संहार किया फिर वही शस्त्र बादशाह पर चलाया। खम्भे में लग कर कटार गिर पड़ी, किंतु उस आघात में बल इतना था कि खम्भे का दो अंगुल पत्थर टूट गया *। दर्बार में चारों ओर हाहाकार हो गया। पांच बड़े बड़े मोगल सर्दारों को अमर ने और मारा। अंत में उस को उस का साला अर्जुन गौरा (बूंदी का राजकुमार) पकड़ने चला, तो उस से भी लड़ा और उसी की तलवार से गिरा भी। अब तक तख्त पर लहू की छींट और टूटा हुआ खम्भा उस के इस वीर दर्प का चिन्ह आगरे के किले में विद्यमान है। लाल किले का दरवाजा जिस से अमरसिंह आया था बुखारा दरवाजा कहलाता था; उस दिन से अमर फाटक कहलाता है। उस के सरदार चंपावत गोती और

* आनि के सलावत खा जोर कै जनाई बात तोरि धर पंजर करेजे जाय करकी।
दिल्लीपति नाह के चलन चलबे को भए गाज्यो राज सिंह को सुनी है बात बरकी॥
कहै बनवारी बादशाह के तखत पास फराकि फराकि लोथ लोथन सों अरकी।
हिन्दुन की हद्द सह राखी तैं अमर सिंह करकी बडाई कै बडाई जमधर की॥

कंपावत गोती भी दरबार में अपनी निज सैन्य लेकर घुस आए और बहुत से मुगलों को मार कर मारे गए। अमर सिंह की स्त्री बूंदी की राजकुमारी पति का देह लेने को उसी हल्ले में अपने योद्धाओं को लिये किले में चली आई और देह ले गई और डेरे में जा कर सती हो गई। इस घटना के वर्णन में राजपुताने में कई ग्रन्थ ख्याल आदि बने हैं और अब तक इस लीला को नट सुथरे-साही जोगी भवैये गवैये गाया करते हैं।

अथ पत्र।

"सब प्रकार की स्तुति सर्व शक्तिमान् जगदीश्वर को उचित है और आप की महिमा भी स्तुति करने के योग्य है जो चन्द्र और सूर्य की भांति चमकती हैं। यद्यपि मैं ने आज कल अपने को आप के हाथ से अलग कर लिया है किन्तु आप की जो सेवा हो उस को मैं सदा चित्त से करने को उद्यत हूं। मेरी सदा इच्छा रहती है कि हिन्दुस्तान के बादशाह रईस मिर्जा राजे और राय लोग तथा ईरान तूरान रूम और शाम के सरदार लोग और सातों बादशाहत के निवासी और वे सब यात्री जो जल या थल के मार्ग से यात्रा करते हैं मेरी सेवा से उपकार लाभ करें।

यह इच्छा मेरी ऐसी उत्तम है कि जिस में आप कोई दोष नहीं देख सकते। मैं ने पूर्वकाल में जो कुछ आप की सेवा की है, उस पर ध्यान कर के मुझ को अति उचित जान पड़ता है कि मैं नीचे लिखी हुई बातों पर आप का ध्यान दिलाऊं जिस में राजा और प्रजा दोनों की भलाई है। मुझ को यह समाचार मिला है

कि आप ने मुझ शुभचिन्तक के विरुद्ध एक सेना नियत की है और मैं ने यह भी सुना है कि ऐसी सेनाओं के नियत होने से आप का खजाना जो खाली हो गया है उस को पूरा करने को आप ने नाना प्रकार के कर भी लगाए हैं।

आप के परदादा महम्मद जलालुउद्दीन अकबर ने जिन का सिंहासन अब स्वर्ग में इस बड़े राज्य को ५२ बरस तक ऐसी सावधानी और उत्तमता से चलाया कि सब जाति के लोगों ने उस्से सुख और आनन्द उठाया। क्या ईसाई, क्या मूसाई, क्या दाऊदी, क्या मुसलमान, क्या ब्राह्मण, क्या नास्तिक, सब ने उन के राज्य में समान भाग से राजा का न्याय और राज्य का सुख भोग किया। और यही कारण है कि सब लोगों ने एक मुंह होकर उन को जगत्गुरु की पदवी दिया था।

शाहनशाह मुहम्मदनूरुद्दीन जहांगीर ने जो अब नन्दनवन में विहार करते हैं उसी प्रकार २२ बरस राज्य किया और अपनी रक्षा की छाया से सब प्रजा को शीतल रक्खा। और अपने आश्रित था सीमास्थित राजवर्ग को भी प्रसन्न रक्खा और अपने बाहु बल से शत्रुओं का दमन किया।

वैसे ही परम प्रतापी शाहजहां ने बत्तीस बरस राज्य करके अपना शुभ नाम अपने गुनों से विख्यात किया।

आप के पूर्व पुरुषों की यह कीर्ति है। उन के विचार ऐसे उदार और महत् थे कि जहां उन्हो ने चरन रक्खा विजय लक्ष्मी को हाथ जोड़े अपने सामने पाया और बहुत से देश और द्रव्य को अपने अधिकार में किया। किन्तु आप के राज्य में वे देश अब

अधिकार से वाहर होते जाते हैं और जो लक्षण दिखलाई पड़ते हैं उससे निश्चय होता है कि दिन दिन राज्य का क्षय ही होगा। आप की प्रजा अति दुःखी है और सब देश दुर्वल पड़ गये हैं। चारो ओर से वस्तियों के उजड़ जाने की और अनेक प्रकार की दुःख ही की वातें सुनने मे आती हैं। जब बादशाह और शाहजादों के देश को यह दशा है तव और रईसों की कौन कहै। शूरता तो केवल जिह्वा में आरही है। व्यापारी लोग चारो ओर रोते हैं। मुसलमान अव्यवस्थित हो रहे हैं। हिन्दू महा दुःखी हैं, यहां तक कि प्रजा को सन्ध्या को खाने को भी नही मिलता और दिन को सब मारे दुःख के अपना सिर पीटा करते हैं।

ऐसे वादशाह का राज्य कै दिन स्थिर रह सकता है, जिस ने भारी कर से अपने प्रजा को ऐसी दुर्दशा कर डाली है? पूरब से पच्छिम तक सब लोग यही कहते हैं कि हिन्दुस्तान का वादशाह हिन्दुओं का ऐसा द्वेषी है कि वह ब्राह्मण से बड़ा योगी वैरागी और संन्यासी पर भी कर लगाता है और अपने उत्तम तैमूरी वंश को इन धनहीन उदासीन लोगों को दुःख देकर कलंकित करता है। अगर आप को उस किताव पर विश्वास है जिस को आप ईश्वर का वाक्य कहते हैं तो उस में देखिए कि ईश्वर को मनुष्य मात्र का स्वामी लिखा है केवल मुसलमानों का नहीं। उस के सामने गवर और मुसलमान दोनों समान हैं। नानारंग के मनुष्य उसी ने अपने इच्छा से उत्पन्न किये हैं। आप के मसजिदों में उस का नाम लेकर चिल्लाते हैं और हिन्दुओं के यहां देवमन्दिरों में घंटा वजाते हैं, किन्तु सव उसी को स्मरण करते हैं। इस से किसी जात

को दुःख देना परमेश्वर को अप्रसन्न करना है। हमलोग जब कोई चित्र देखते हैं उसके चितेरे को स्मरण करते हैं और कवि की उक्ति के अनुसार जब कोई फूल सूंघते हैं उस के बनानेवाले को ध्यान करते हैं।

सिद्धान्त यह है कि हिन्दुओं पर जो आप ने कर लगाना चाहा है वह न्याय के परम विरुद्ध है। राज्य के प्रबन्ध को नाश करनेवाला है और बल को शिथिल करने वाला है तथा हिन्दुस्तान के नीत रीत के अति विरुद्ध है। यदि आप को अपने मत का ऐसा आग्रह हो कि आप इस बात से बाज न आवें, तो पहिले राम सिंह से, जो हिन्दुओं में मुख्य हैं, यह कर लीजिए और फिर अपने इस शुभचिन्तक को बुलाइए, किन्तु यों प्रजापीड़न वा रण भङ्ग वीर धर्म्म और उदारचित्त के विरुद्ध है। बड़े आश्चर्य की बात है कि आप के मन्त्रियों ने आप को ऐसे हानिकर विषय में कोई उत्तम मन्त्र नहीं दिया।"

महात्मा कर्नैल टाड साहब लिखते हैं कि यह पत्र महाराज जसवंत सिंह ने नहीं लिखा था महाराणा राज सिंह ने लिखा था।

यह प्रसिद्ध दानी कन्नौज के राजा गोविन्दचन्द्र के अन्यतर दानपत्र की प्रति है। यह राजा बड़ा ही दानी था।

ताम्रपत्र।

स्वस्ति। अकुण्ठोत्कण्ठवैकुंठकंठपीठलुठत्करः। संरम्भः सुरतारंभे सश्रियःश्रेयसेऽस्तुवः॥ १॥ आसीदशीतद्युति वंशजातक्ष्मापालमालासुदिवंगतासु। साक्षाद्विवस्वानिवभूरिधाम्ना नाम्ना

यशोविग्रहइत्युदारः ॥ २ ॥ तत्सुतोभून्महीचन्द्रश्चन्द्रधामनिभंनिजं। येनाथारमकूपार पारेव्यापारितयशः ॥ ३ ॥ तस्याऽभूत्तनयोनयैक-रसिकः क्रांतद्विपन्मंडलो विध्वस्ताद्धुतवीरयोध्र विजितः श्रीचन्द्र-देवोनृपः। येनोदारतरप्रतापशमिताशेषप्रजोपद्रवं। श्रीमद्गाधि-पुराधिराज्यसमस्त दोविक्रमेनोर्जितं ॥ ४ ॥ तीर्थाणि काशिकुशिको-त्तरकोसलेन्द्रस्थानीयकानि परिपायताभिगम्य ॥ हेमात्मतुल्यमनि-शंददता द्विजेभ्यो येनांकिता वसुमती शतशस्तुलाभिः ॥ ५ ॥ तस्या-त्मजोमदनपालइतिक्षितीद्रचूड़ामणिर्विजययेनिजगोत्रचन्द्रः। यस्या-भिषेककलशोल्लसितैःपयोभिः प्रक्षालितंकलिरजःपटलंधरित्र्याः ॥६॥ यस्यासी द्विजयःप्रयाणसमये तुंगाचलौघश्चलन्माद्यत्कुंभिपद्-क्रमात्समसरत्नऽस्यन्ममहीमंडले। चूड़ारत्न विभिन्नतालुगलितस्त्या-नास्टगुद्भासितः शेषःपेशवशादितःक्षणमसौक्रोडेनिलीनाननः ॥ ७ ॥ तस्मादजायत लिजायत बाहुवल्लिवध्धावरुध्धनवरराष्ट्र गजोनरेंद्रः। सांद्रामृतद्रवसुधा प्रसवी गवां यो गोविंदचंद्रइति चद्रइवांबुराशेः ॥८॥ नकथमप्यलभन्तरणक्षमां स्तिस्टपुदिक्षुगजानथतत्रिणः। ककुभिव-भ्रमुरभ्रमुवल्लभ प्रतिभटाइवयस्यघटागजाः ॥९॥

सोयं समस्तराजचक्रसंसेवितचरणः परमभट्टारक महाराजा-धिराज परमेश्वर परममाहेश्वर निज भुजोपार्जित श्रीकान्यकुब्जा-धिपत्य श्रीचन्द्रदेवपादानुध्यात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्वर श्रीमदनपाल देव पदानुध्यात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्वराश्वपति गजपति नरपति राजत्रयाधिपति विविध विद्याविचारवाचस्पति श्रीमद्गोविन्द-चन्द्रदेवो विजयी खरकापतत्तलायां मधुवाग्राम निवासिनो

निखिलजन पदानुपगतानपि राजाराज्ञी युवराज मन्त्रिपुरोहित प्रतीहार सेनापति भांडागारिकाऽक्षपट लिकभिषग्नि मित्तिकान्तः पुरिकदूत करितुरगपत् तनाकरस्थानाऽऽगोकुलाधिकारि पुरुषान्स-माज्ञापयति बोधयत्यादिशनिच्च यथा विदितमस्तुभवतां यथोपरि-लिखितग्रामः सजलस्थलः सलोहलवणाकरः समत्स्यकार. सगर्तोखरः समधूकाम्रवनवाटिका विटपतृणप्रतिगोचरपर्यन्तश्चतुरा-घाटशुद्धस्वसीमापर्यन्तः सोङ्काद्यः संवत् ११६५ माघ वदि १ सोमदिने प्रयागे वेण्यां स्नात्वा विधिवन्मन्त्राह देव मुनिमनुजभूत पितृणां स्तर्पयित्वा तिमिर पटल पाटन पटुसहस्रमुष्णरोचिष-मुपस्थायौषधिपतिसकलसप्तभंस मभ्यर्च्य त्रिभुवनत्रातुर्वासुदेवस्य पूजां विधायप्रचुरपायसेनहविषा हविर्भुजंहुत्वा मातापित्रो रात्मनश्च पुण्यशोभिवृद्धये कौशिकगोत्राय कौशिकावदल्य विश्वामित्र देवरातत्रिप्रवराय पण्डित श्रीकैकप्रपौत्राय पण्डित श्रीमहादित्य पौत्राय पण्डित श्रीसाक्षतपुत्रायपण्डित श्रीविद्याकचसंभाराय ब्राह्मणाय अस्सा भिर्गोकर्णकुशलतापूतकरतलोदकपूर्वमाचन्द्रार्कं यावदाशासनी कृत्यप्रदत्तोमत्वागाद्यदीयमानभाग भोग कर प्रवणिकर प्रभृति समस्तादायानांविधियाम्रयदास्यम्नितिभवन्ति बात। श्लोका।

भूमिंयःप्रातगृह्णाति यश्चभूमिप्रयच्छति। उभौ तौपुण्यकर्माणौ नियतंस्वर्गगामिनौ॥ शंखंभद्रासनंछत्रं त्वराश्वावरवारणाः। भूमि-दानस्यचिन्हानि फलमेतत्पुरंदर॥ सर्वानेतान्भाविनःपाथि वेंद्रान्-भूयोभूयो याचतेरामभद्रः। सामान्योयंधर्मसेतु र्नृपाणां काले-कालेपालनीयोभवद्भिः। बहुभिर्वसुधाभुक्ता राजभिःसगरादिभिः॥ यस्ययस्ययदाभूमि स्तस्यतस्यतदाफलं। स्थलमेकंग्राममेकं भूमे-

रप्येकमगुलं । हरन्नरकमाप्नोति यावदाभूतसंप्लवं । ठक्कुर श्रीवालिकेन लिखित मिदम् ।

काशी क्वीन्स कालिज (Queen's College Benares) के फाटक पर यह लेख है—

तालुकदार दाउदपुर के राय पृथ्वीपाल सिंह ने
अपने कीर्त्ति के लिये दो द्वार रचवाये ।

(१)

रामरास बाबू सुघर, वैश्यबंश औतार ।
हर्षचन्द्र तिन के तनय, रचवाये दुइद्वार ॥

(२)

राजा पटनीमल्ल के, पुत्र नारायण दास ।
रचवाये दुइद्वार यह, अचल कीर्त्ति के आस ॥

(३)

श्री देवकीनन्दन सुनुरासीघो जनकी पूर्वपद प्रसाद ।
तदङ्गजो द्वारमिदं द्रव्य धत राम प्रसन्नोपमहीश्वरोये ॥

(४)

श्री मत् बाबू देवकीनन्दन पौत्र उदार ।
बाबू रामप्रसन्नो सिंह रचवाये यह द्वार ॥ संवत १८०७ ॥

(५)

श्री बाबू भगवानदास बड़े दानि विदित ।
मृजापुर बिच धाम तिन रचवाए द्वार दुई ॥

(६)

सुनय जानकिदास के, श्री विश्वेश्वर दास ।
रचवाए दुइ दुवार वर, मुक्ति सुजस के आस ॥

(७)

राजा दर्सन सिंह के, गुन कुल अति उजियार ।
राजा रघुवरदयाल जस, चाहि किन दुइ दुवार ॥

(८)

इण्डियन म्यूज़ियम (Indian Musium) में एक पत्थर के मुंडेरे के एक टुकड़े पर नीचे की ओर निम्न लिखित लेख लिखा है। वह पत्थर अशोक के चारदिवाली का है, परन्तु यह लेख सन् ईसवी दो सौ बरस पहले का नहीं हो सकता। यह गुप्ताक्षर में पुराचीन रीति से लिखा है—

दी पढंका कता येपां दान × × मशमनिनाचार्य्य ।

—(:)—

अशोक के चारदिवाली के मुंड़ेरे के पत्थर पर निचली ओर निम्न लिखित लेख लिखा है। यह दो लाइन (पंक्ति) में है और प्रत्येक लाइन ६ फीट लंबा है।

१। कारितो यन्त्रवज्रासन वृहद्गर्म्भकुटी प्रमादमर्द्ध त्रिकोट्या भश्मतेर्म्मधुलेपकस्यपुन लटिकः गिक रेद्गतुट मादन्यार्क तारक भगवते वुद्धाय × × रदानेन घृतप्रदीपः × रारिध दिए प्रती समधने रदनी मायां च प्रदहं घृतप्रदीपैः गुणे शतदानेनापरेण कारितः विहारेपि भगवते रेत्यपद्ध ।

२। हग्रटां पालय नः धिकरो धमशत तं द वं ग प्रदेप च च न पं × × × × पं × मनीनू माधुरं लातीतं तदसं सव्वं चा प्रहतत × न्नुमत्पादितं तदेतत् सव्वं यन्मया बुद्धौ प्रचेतमभारंतन।

मेजर (Major Mead) ने बोधगया के बड़े मंदिर की एक कोठरी से एक मूर्ती निकाली थी उस के पांव के समीप निम्नलिखित लिपि थी—

इदमतितरचित्तं सव्वं सत्वानुकम्पिने।
भवनवरमदारजितमाराय पतये॥
सु (शु) द्धात्मा कारयामास बोधिमार्गरतोयतिः।
बोधि षे (से) णा (नो) तिविख्यातो दत्तगल्लनिवासकः॥
भवबन्धविमुत्क्यार्थं पित्रोर्वन्धुजनस्य च।
तथोपाध्यायपूर्वाणामाहवाग्रनिवासिनां॥ ली॥

ए० ग्रोट साहिब (A Grote Esqr,) प्रेसिडेन्ट बंगाल एसियाटिक सोसाइटी ने निम्न लिखित लिपि, जो एक सांढ़ (नंदी) की मूर्ति के पीठ पर लिखी हुई है, एशियाटिक सोसाइटी में भेज दी थी। यह लेख कुटिलाक्षर (Kutila Character) मे लिखा हुआ है। भीमकउल्ला के पुत्र श्री सुफंदी भट्टारक ने यह मूर्ति सवत् ७८१ में सन्तति के लिये चढ़ायी थी।

ए सम्व ७८१ वैशाख वदि ६ परुध्य ग्रामव × × × × त्तम भिमक उल्लसुतेन श्री सुफन्दिनभट्टारक अ (?) ग्र (?) रा मतया × × । त्मनापत्यहेतोः वृपभट्टारकप्रतिष्ठितेति।

जनरल कनिङ्गहम (General Cunningham) ने बोधगया के मन्दिर के फाटक के चूर के नीचे एक पत्थर देखा था जिस पर निम्न लिखित लिपि खुदी हुई है। यह लेख २० लाइन में है और कुटिलाक्षर में लिखा हुआ है।

(१) नमोबुद्धाय॥ आसीद्दृप्तनरेन्द्रवृन्दविजयी श्रीराष्ट्रकूटान्वय. श्रीमान्नन्द इति त्रिलोकविदितस्तेजस्विनामग्रणीः सत्येन प्रश्रयेन शौचविधिना श्लाघ्येन विख्यापितस्त्यागैः कल्प महीरुहः प्रणयिषु प्राज्ञो नरेन्द्रात्मजः॥

(२) यो मत्तमातङ्गमभिद्रवन्तन्नरेन्द्रवीथ्यांऽतुरगेन्द्रगामी। कशाभिघातेन विजित्य वीरः प्रख्यातवान्हस्तितलप्रहारः॥

(३) दुर्गं दुर्जयमूर्जितक्षितिभुजामत्युत्तमैर्विक्रमैः श्रीमद्राम कृपाणपुण्यविभवैरुच्चैर्विजिग्ये च यः। येनाद्यापि नरेन्द्रसंसदि सदा सम्भूतरोमोद्गमैर्व्वर्णेः मणिपूरदुर्गधवलः सवर्ण्य सूरिभि॥

(४) यः शौर्यातिशयादनल्पसदृशात्ख्यातो महोभृद्गणः (?) सन्मार्गेण गुणावलोक इति च श्लाघ्यामभिख्यान्दधौ। गेयैर्बुद्धगुणाह्वयैरभिनवस्वान्तर्विशेषोद्गतैर्यश्चान्ते तनुमुत्ससर्ज विधिवद्योगीव तीर्थाश्रयः॥

(५) तस्यालि सूनुर्विजितारिवर्गः प्रतापसंतापितदिग् विभाग। प्रहर्षितार्थिव्रजपद्मषण्डः पूषेव पादाश्रितसर्व्व लोकः॥

(६) धर्म्मार्थकामेषु गृहीतसारः श्रिया सदाराधितपादपद्मः। अरातिमातङ्गकुलैकसिंहस्त्रिलोकविख्यातयशः पताकः॥

(७) कोपे यमः कल्पतरुः प्रसादे प्रयोगमार्गप्रणयी कलाना। अगण्यविक्रान्तविलासभूमिः प्रभूतसद्वर्णशशाङ्ककीर्त्तिः॥ रूपोदये

रपितचित्रयोनिर्मतङ्गजारोहनलब्धशब्दः । तुरङ्गमाध्यासनकौशला-ग्रः प्रभासते राजसु कीर्त्तिराजः ॥

(८) तस्यात्मजः शुभशतोदितपुण्यमूर्त्तिः साक्षान्मनोभव इव प्रयतात्मभाव । दृप्तद्विषद्विपिनवन्हिरुदीर्णदीप्तिरस्तीह तुङ्ग इतिशान्वयनामधेयः ॥

(९) कामिनीवदनपङ्कजतिग्मभानुर्विद्वन्मनः कुमुदकाननकान्त-रश्मि । शास्त्रप्रयोगकुशलः कुशलानुवर्त्ती धर्म्मावलोकइति च प्रथितः पृथिव्याम् ॥

(१०) शैलेन्द्रस्य द्विमूर्त्तीननवरतगलद्दानमत्तद्विरेफश्रेणीस-ङ्कीर्णनादप्रतिगजविजयोद्गारिभेरीविरावान् । दृष्ट्वा यो दन्ति-शास्त्रे पु गुरु रिव गुरुः प्रो गु × × × × लोलः कालज्ञः पुण्यपूतः कलयति मृगवद्धन्यकान्वारणेन्द्रान् ॥

(११) येनागाधतया जितो जलनिधिः शान्त्या मुनिस्तेजसा भानुः कान्ततया शशी मृगपतिः शौर्य्येण नीत्या गुरुः । कर्णस्त्यागितया विलासविधिना दैत्यद्विषामीश्वरः वाचालापितया यथार्थपदया नैवास्ति यस्योपमा ॥

(१२) धत्ते य श्रीनिधानं हृतकलिचरितं धर्म्ममामूलमुच्चै-रत्तुङ्गैः स्वर्गमार्गप्रणयिभिरतुलैः कीर्त्तनैः शुद्धकीर्त्तिः कुर्वतसेवाम-निन्द्यामनुदिनममलैरन्नपानैर्यतीनां शिष्टैस्मत्कारयत्नैर्भव इव चलितं रावणेनाचलेन्द्रम् ॥

(१३) तेन प्रसन्नमनसा जितमारशत्रोरुत्तीर्णजन्मजलधेरसृ × × भवेच्चवन्धोः । श्रीमद्विशुद्धगुणरत्नस—विप्रेन्द्रशेखरितपाद-सरोजरेणो ॥

(१४) मोहान्धकारनिधनोद्गतभास्करस्य संग्रामरेणुशमनैकघनाघनस्य। द्वेषोरगोद्धरणकर्म्मणि तार्क्ष्यस्य गिरिदारणवज्रधाम्न. ॥

(१५) स्फुर्ज्जत्प्रवादिकरियूथमृगाधिपस्य नैरात्म्यसिंहनिनदप्रविभावितस्य। धर्म्माभिषेकपरिपूतजगत्त्रयस्य—गुणरत्नमहार्णवस्य ॥

(१६) निर्म्मापिता गन्धकुटीयमुच्चैः सोपानमालेव दिवो दिदेश। गृहीतसारेण धनोदयानामनित्यताभावितमा—॥

(१७) नरामर्शविचक्षणेन शरत्प्रसन्नेन्दुमनोहरेण। मदानभिज्ञेन गुणाभिरामैरावर्जिताजय्यसमागमेन ॥

(१८) मुनिरिह गुणरत्न—प्रजानामभयपथविदर्शी सन्निधत्तां सदैव। विदधदभिमतानां सिद्धिमभ्युन्नतीनामनयविमुखबुद्धेर्दायकस्यास्य भूयः॥ न देवराज सम्वत् १५ श्रावणदिनपञ्चम्यां। सिंहलद्वीपजन्मना पण्डितरत्न श्रीजनभिक्षुणा ॥

एक मूर्त्ति पर बोधगया में यह लेख लिखा है। यह दो पंक्ति में है जो प्रत्येक ६ फीट लम्बी है। पूर्णभद्र सुसंतस के पुत्र ने इस [मूर्त्ति] को बनवाया था। इस से उस का और उस के वंश का कुछ वृत्तान्त मालूम होता है।

१। वावस्तस्यैव स्वसङ्घतः सङ्घः।

२। सिध्धा। परः श्रीमान् तस्य सुतः श्रीधर्म्म.।

३। थर्थिय जगती कीर्त्तिक प्रतापमेग्रतां यात.॥ तेनयशः

१। सिन्धौ दातृ × गजो गल्लभूमज :—

नरवर सिंह ग

२। नुसपुररन्ध्री सदुदयकम × पुनः पूतः श्री दुर्गजयसेनः
कुमा कु तर सयू शुभ
स्वोधिलासुकृत ग

१। ये धर्म्मा हेतुप्रभवा हेतुस्तेषां तथागतः ह्यवदत् तेषाञ्चयो
निरोध स्वंवादो महा—

२। श्रमणः।

३। श्रीसामन्तस्तदात्मजस्तस्य । श्रीपुनुभद्रनामा प्रतापेन
चन्द्रमः कोर्त्तिः। द्राप्त

१। सु × यिष्ठो × × श्रीमान्

२। सेनोसन द्योतः। श्रीमति उदण्डपूरे येन

३। तिलरत्नकता × सिव चन्द्रनमवृतः सुधियः॥

महाबोधी मन्दिर के समीप एक पत्थर के टुकड़े पर खोदो हुई निम्न लिखित लिपि डबल्यू हाथोर्न (W Hawthorne Esqr) ने पायो थी, उस पत्थर को बचनन हमिलटन (Mr Buchanan Hamilton) ने ईस्ट इन्डिया कम्पनी के म्यूज़ियम (Musium) में रख दिया था।

नमोबुद्धाय सकलपोयं प्रवरमहाबोरस्वामिनः परमोपासकस्य दैवज्ञचरणारविन्दमकरन्दमधुकरहलकारभूपालवेश्मोत्पन्नाऽकृत्स्न-नृपति गुरूह नारायण रिपुराज मत्तगज सिंहति रिवल्ल महीपाल जनकेत्पादिनिजनिरखेल प्रशस्ति समलकृतं सपादलक्ष शिखरिख समेण राजाधिराज श्रीमदशोकचन्द्रदेवकनिष्ठभ्रातृ श्रीदशरथनाम-धेयकुमारपादपद्मोपजीवि भारादागारिक सत्यव्रतपरायणा-विनिवर्त्तनीयबोधिसत्व चरितस्कन्धिस्वकुलदीय श्री सहस्रपातृ

नामधेयस्य महात्मक श्रीचाट ब्रह्मसुतस्य महामहात्मक श्री ऋषि ब्रह्मपौत्रस्य यद्भपुरायं तद्भट्टाचार्योपाध्याय मातापित्र सर्वाङ्ग सङ्गता सकल पुण्यराशि रनन्तविज्ञानफलावामन इति श्रीमल्लक्षण सेनदेवपादानामतीनराज्ये सं० ७१ वैशाग्न वदि १२ गुरौ।

बोधगया के बड़े मदिर के बारहदरी के सामने एक छोटे मंदिर में एक संगमरमर के तख्ते पर तीन लिपि खोदी हुई है। यह तख्ता कुछ नीले रंग का चार फीट लंबा और दो फीट तीन इंच चौड़ा है। इस के आगे की ओर दो लिपि हैं, पहली अपभ्रंश पालीभाषा में और दूसरी ब्रह्मा देश की भाषा में है। और तख्ते की पिछली ओर ३० पंक्ति ब्रह्मा देश की भाषा में है? परंतु यह संस्कृत नहीं है। उन में से केवल पालीलिपी को यहां नागरी अक्षर में प्रकाश किया है—

१। नमस्तस्मै भगवते अरहते सम्यक् सम्बुद्धाय ॥ जयतु॥ बोधिमूले जिनाः सर्व्वे सर्व्वज्ञुतो तथा अय। जयतं धर्म्मग तापि बोधिप्रसादनेन सा। पथ्यावर्त्तश्लोक। अय महाधर्म्म राजा अनेकशेनिभप्रतिरुच्छद्दन्तगजराजस्वामि अनेकशताम आदित्यकुलसम्मतान। पीतुपीतामहअव्ययकपाय्यकादिमहा धम्र्मराजनं सम्यक्दि।

२। ष्टिकानं धम्र्मिकानं प्रवरराजवशानुक्रमेण असम्मितदेत्रिय वंशजो। सन्ध्याशीलाद्यनेकगुनाधिबासो। दानरागेण सन्तो- षमानसो। धम्र्मिको धम्र्मगुरुधर्म्मकेतु धर्म्मध्वजो। बुद्धा- दिरतनत्रये सततं समितं निम्नपोण प × रहृदयो। नानावि-

धानि। शारिरिक, परिभोग उद्देश्यक चैत्यानि नानाप्रकारेण नन्दति माने।

३। ति पूजेति संस्करोति। मारजयनक्लेशविध्वंसनसर्व्वधर्म्म-विघातनवीरभूत महाबोधिम्बि। अभिप्रसादेन पुनप्पुनं मनसि × × × ×। संमति परिवृन्दति कलैरारम्भने गन्य। सप्तपञ्च-छिफे गते। वसूरतवभूषर्व्वे ?। धर्म्म विहगे नमारवन्धः। पुराकपिल व × ×॥ माया देव्यो सुद्धोदनी। निलमित्वा × स्तनूले अनु × अ ×।

४। तं पद तेन सुदेसिनो धर्म्मो संघो चास्यानुशासितो। दिश्यते ज्ञानिलोक। मू बोधित्वस्य न दिश्यते; इति हि पुराणतन्त्रा-गतानुरूपं। अयं महाधर्म्मरागमनसि करोनो बिमसन्तो। परिपृच्छन्तो पीतामहच्छन्न गजराजस्वामि महाधर्म्मराज-काले। मध्यपदैरागतैहि वाणिरैहि ब्राह्मणैहि × गीहि च।

५। मगधराष्ट्रे। गयाशीषपदे च नद्यानेरञ्जनाग्रतीरे सुसमे भूमिभागे। वनप्रतिभूत्वा प्रतिष्ठितभावं। अर्धखण्डसाखाप्रमा-णेन हस्तशत विस्ताराद् ये धर्म्मभावं। × कादी पाति इराय्र्य गृधणक। लेयय। पिद्दानं दक्षिण महासाखाय स्वयमेवच्छिन्ना-कारदपा मानभाव वोधिमण्डसंखानवज्रासनयानस्सिरिधम्मा सोके।

६। न नाम सकल जम्बुद्वीपेश्वरमहाराक्षा कृतचेतियस्य विद्य-मानभाव। पूर्व्वे पद्दशतसप्तपञ्चापसकराजे श्वेतगजेन्द्रमहा-राजेन त चेत्यमतिसंखरित्वा धर्म्मभासाय सेनक्ष स्वामिनभाव

च श्रुत्वा। तदेतत् वचनं अनेकतन्त्रागतवचनेन नं सन्दति समेति। यथात गङ्गोदकेन यमुनोदकम्मि। युक्तायुक्तं विदि।

७। त्वा। अवश्यमेवेष भगवता सह जातो महाबोधीसि निसंपयं। सन्निधानमकासि। यथावत् कठोन विशेष नियमिते हि। मनुरपानं दोश्रवस्त्वादिकर्म्मकरण× ततो यथानुक्रममुन्नतुन्नतभावेन पदवी युगेधे। अग्रराजकरोप मात्तविसतारोकेय मश्रु प्रमाणानम्पिति गानमधिहल्लं। समन्तानिनलना।

८। गन्धं गुम्बवनव्रतीनं प्रदक्षिणावद्याभिमृत्तपरिवारितो रजतवर्णवालुकाविप्रकिर्ण। भेरितलमिव समे भूमिभागे। बोधिमण्डसद्यायस्थ वज्रासनपल्लङ्कस्य अपस्मयफलकमिव सन्धुजुत्वा। साखा पर्ण×मणिपत्रमिव पटिच्छादेत्वा महाबोधिवृक्षः प्रतिष्ठाति तस्मिन् पनवज्रासनपल्लङ्के अत (न)।

९। न (त) श्रेपि काले सर्व्वेपि असंख्येया सम्यक् सम्बुद्धा श्राणाप्राणवस्तुज्ञानपादकन्धत्रिराकोटिपतसहम्सविपस्सता ज्ञानसंघात महावज्रज्ञानं भावेत्वा श्र।

१०। मार्गपदष्ठान सर्व्वज्ञान ज्ञानपति रभिसु। न याहिसे। सण्वहन्ते कल्पे पयसं सण्वहितो। विनाश्यन्तेपि प×विनश्यन्तो अचलपदेपो पृथुद्वीप×वो।

११। धिमण्डो नाम होति॥ एव अतिचरिय मन्वचरिय महाबोधिवृत्त एकसत विदित्वा अभिप्रसादमानसो। यथा कालि× चक्कवत्तिसिरिधम्मासोको प ×महिकोसलो। महार्य्य यतिवो महाबोधिमभिपूजेसु। तथा पूजेतुकामो। सिरिपवरसुधम्म-

महाराजाधिराजाति । मूलभासाय श्रीप्रवरधम्मिक राजा×××
मल्ल ।

१२ । श्वतो अनेकश्वेति×प्रतिसरदकुमुदकुन्दइन्दु प्रभासमानवर्ण-
च्छद्दन्तगजराजस्वामिमहाधर्म्मराजा । पुरोहित महाराजिन्द
अग्ग महाधर्म्मराज गुरूभि×नं भूमिनन्दभारिकामत् पञ्च-
महाराजाभिरूप सागरसूरनाभकं । अनेकशतपरिजनेहि मूद ।
द्विसहस्सत्रिशतपञ्चषष्टिसासनवर्षे । एकसहस्मै

१३ । शिक शतत्याशीतिसकराजे कार्त्तिकमाससरदकतुप । स्वबि-
जितरक्खाङ्गदेन नु सार जलजस्थलजमार्गेण पेसेत्वा सरिश्वर
महाराजेन्दाररता देवी नामिकाय अग्गमहेसिया सार्द्धं ।
महावोधिमूले बुद्धत प्राप्त भगवन्तमुद्दिष्य । दक्षिणोदकं पा-
तन्तो । इम महापृथुवि साक्षिं कृत्वा महार्घ्यं ।

१४ । हि सोर्ण रौप्य मारिणवथ विचित्रेहि । ल । × । छत्र । ध्वज ।
पद्योत । कलश । मालाङ्ग लेहि महावोधिमभिपूजेसि । संसा-
रौघनिम्मुंग्ग सत्वगणताराणञ्च पि बुद्धत प्रयतमकासि । माता-
पीतुपीतामहआय्यक पाय्यकादिनं पि सत्वानं पुण्यभागम-
दासि ॥ यथानेद्द रविससि । यावत् तयावतिष्ठति ।

१५ । नथापि दसेलक्खरं । तिष्ठत अनुमोदयति । इदमनेकश्वेतिभ-
प्रतिच्छदन्तगजराजस्वामिमहाधर्म्मराजोत्तर पुज्यसेलदारं ।
महाजेयसहखनामेन पण्डितामन्येन वन्धित । इद सेलक्खरं
सिरिराजिन्दमहाधर्म्मराजगुरूनामिकेन पुरोहितेन नागरीले-
खाय लिखित । : ॥ ॰ ॥

—:><:—

राजा जन्मेजय का दानपत्र।

यह दानपत्र युधिष्ठिर के संवत् ११२ का है जो मौज अगराहर तालुका अनन्तपुर जिला महानाद नगर इलाका मैसूर में मिला है। इस में सर्पयाग और सूर्यपर्व का वर्णन है। कर्नेल एलिस् साहिब सोचते हैं कि यह उस जन्मेजय का नहीं है विजयनगर के राजाओं में से किसी का है। वह कहते हैं कि जैसा सूर्यग्रहण इस में लिखा है वैसा सं० १५२१ ई० में हुआ था। कोलब्रुक साहिब कहते हैं कि यह प्राचीन काल में ब्राह्मणों ने जाल करके बनाया होगा। परन्तु उन दोनों साहिबों की बात का कोई दृढ़ प्रमाण नहीं। इस की लिपि प्राचीन बालबन्द अथवा नन्दिनागर अक्षरों में है। इस के पीछे का भाग बहुत सा टूट गया है और यहां हम भी इस का वह भाग नहीं लिखते जिस में उन दक्षिणी ग्रामों के और उन की चारो सीमाओं के वर्णन में बड़े कठिन कठिन कर्णाटकी शब्द लिखे हैं।

" जयत्याविष्कृतं विष्णोर्वाराहं क्षोभितार्णवम्।
दक्षिणोन्नतदंष्ट्राग्रे विश्रान्तभुवनवपु.॥

स्वस्ति समस्तभुवनाश्रय श्री पृथ्वी वल्लभ महाराजाधिराज परमेश्वर परमभट्टारक हस्तिनापुरवराधीश्वर आरोहभगदत्तरिपुराय कान्तादत्तवैरिवैधव्यपाण्डव कुलकमल मार्त्तण्डकदन प्रचण्ड कलिङ्ग कोदण्ड मार्त्तण्ड एकाङ्गवीररणरङ्गधीर अश्वपतिराय दिशापति गजपतिराय संहारक नरपतिराय मस्तक तलप्रहारिहयारूढ़प्रौढ़रेखरेवन्त सामन्त मृगचामर कोङ्कणचतुर्दश भयङ्करनित्यकर पराङ्गनापुत्र सुवर्णवराहलाञ्छनध्वजसमस्त राजावलिविराजित समा-

लिङ्गित श्री सोमवंशोद्भव श्री परीक्षित चक्रवर्त्ती। तस्यपुत्रो जन्मे-जयचक्रवर्त्ती हस्तिनापुरे सुखसंकथाविनोदेन राज्यङ्करोति। दक्षिण दिशावरे दिग्विजययात्रेयंविजयङ्करोमि। तुङ्गभद्राहरिद्रासङ्गमे श्री हरिहरेश्वरसन्निधौ कटक मुत्कमितचैत्रमासे कृष्णपक्षेदर्शके रवि वासरे ववकरणे उत्तरायण सक्रान्तौ व्यतीपातनिमित्त सूर्यपर्वणि अर्द्धग्रासग्रसित समये सर्पयागङ्करोमि॥

इस के पीछे ३२००० ब्राह्मण जो वनवासे शान्तलिको गौतम ग्राम और दूसरे गावों से आए थे जिन में मुख्य गौतमगोत्री कण्व-शाखीय गोविन्द पट्टवर्धन कर्णाट ब्राह्मण काण्वशाखीय वशिष्ठगोत्री वामनपट्टवर्द्धन कर्णाट ब्राह्मण कण्वशाखीय भारद्वाजगोत्री केशव यज्ञ दीक्षित कर्णाटक ब्राह्मण कण्वशाखीय श्रीवत्सगोत्री नारायण दीक्षित कर्णाटक ब्राह्मण थे। उन को गौतम ग्राम के बारहो गांव नाद वल्लि बूदवल्लि चिक्कहार कतरलगेरे सुरलगोडु ताग रुद्गुजिं-अलरु वाचेन हच्लिंल पगोडु और किरूसम्य गोडु सब सपर्य्या अष्टभोग समेत पूजन करके दिया। इस के नीचे इन गाओं की सीमा लिखी है। उस के पीछे ' सर्व्वानेतान् भाविना पार्थिवेन्द्रान् ' यह और ' दानं वा पालनं वापि ' ये दो प्राचीन श्लोक हैं।

मंगलीश्वर का दानपत्र।

यह दानपत्र मगलीश्वर का कलादगी जिले में वदामो में हिन्दू मत की बड़ी गुहाओं के पास खुदा है, इसकी लवाई चौड़ाई २५× ४३ इञ्च है। यह मगलीश्वर कीर्ति वर्म्मा का भाई पुलकेशी का पुत्र था, जो शक ४७७ में राज्य करता था। यह दानपत्र श० ५००

(ई० ५७८) में लिखा गया है जिस के १२ वर्ष पूर्व्व अर्थात् शाके ४८८ (ई० ५६६) में यह राज्य पर बैठा था। इस दानपत्र में मंगलीश्वर ने एक विष्णुमन्दिर बनाया और अपने बड़े भाई को स्मरणार्थ जो निपिम्मलिंगेश्वर ग्राम दिया है उस का वर्णन है।

स्वस्ति । श्रीस्वामिपादानुध्यातानां मण्डव्यसगोत्राणाम् हारीति पुत्राणाम् अग्निष्टोमाग्निचयनवाजपेयपौंडरीक बहुसुवर्णाश्वमेधावभृथस्नान पवित्री कृतशिरसाम् चालुक्यानां वंशेसंभूत. शक्तित्रयसपन्नः चालुक्यवंशाम्बर पूर्णचन्द्र. अनेकगुणगणालंकृतशरीर· सर्वशास्त्रार्थतत्त्वनिविष्टबुद्धिः अतिबलपराक्रमोत्साहसंपन्नः श्रीमंगलीश्वररणविक्रान्तः प्रवर्द्धमानराज्य१२संवत्सरे द्वादशेशकनृपतिराज्याभिषेक संवत्सरे ष्वतिक्रान्तेषु पंचसुशतेषु निजभुजावसम्वितखड्गधारानमितनृपशिरो मकुट मणिप्रभारंजिपादयुगलः चतुःसागरपर्य्यन्तावनिविजयः माङ्गलिकागारः परमभागवनोलयने मयाविष्णुगृहअतिदैव मानुष्यकाम अत्यद्भुतकर्म विरचितभूमि भागोपभागो परिपर्य्यन्तातिशय दर्शनीय तमकृत्वातस्मिन् महाकार्त्तिक्यांपौर्णमास्यांब्राह्मणेभ्योमहाप्रदानंत्वाभगवतः प्रलयोदिताक मण्डलाकारचक्रपितापकारिपत्रस्य विष्णोः प्रतिमाप्रतिष्ठापनाभ्युदये निपिंमलिङ्गेश्वरम् नामग्रामंनारायणावल्युपहारार्थ षोडशमङ्व्येभ्योब्राह्मणेभ्यश्च सत्रनिबन्धं प्रतिदिनंअनुविधानं कृत्वाशेषं च परिव्राजकभोज्यदत्वा सकलजगन्मडलावनसमर्थारथहस्त्यश्व पदातसंकुलानेकयुद्धलब्धजय पताकालम्बितचतुस्समुद्रोर्म्मिनिवारितयश· प्रतापनोपशोभिताय देवद्विजगुरुपूजिताय ज्येष्ठायस्मद्भ्रात्रे कीर्त्तिवर्म्मणेपराक्रमेश्वरायनत् पुण्यो

पञ्चयफलम् आदित्याग्निमहाजन समुद्रमुदक पूर्वविश्राणितमस्मद्-भ्रातृशुश्रूषणे यत्फलंतन्मह्यंस्यादितिनकैश्चित्परि हापितव्यः। बहु-भिर्वसुधादत्ता बहुभिश्चानुपालिता यस्ययस्ययदाभूमिस्तस्यतस्य-तदाफलम् स्वदत्तांपरदत्तांवायत्नाद्रक्षयुधिष्ठिर। महीमही क्षितां-श्रेष्ठं दानाच्छ्रेयोनुपालन। स्वदत्तांपरदत्तांवायोहरेतवसुधराम्। श्व-विष्ठायांकृमिर्भूत्वापितृभिस्सहमज्जति। व्यासगीताःश्लोकाः।

—:*:—

मणिकर्णिका।

अहा! ससार का भी कैसा स्वरूप है और नित्य यह कुछ से कुछ हुआ जाता है, पर लोग इस को नही समझते और इसी में मग्न रहते है। जहां लाखों रुपये के बड़े बड़े और दृढ़ मन्दिर बने थे वहां अब कुछ भी नहीं है और जो लाखों रुपये अपने हाथ से उपार्जन और व्यय करते थे उन के वंशवाले भीख मांगते फिरते हैं नित्य नित्य नए नए स्थान बनते जाते है वैसेही नए नए लोग होते जाते हैं।

यह मणिकर्णिका तीर्थ सब स्थानों में प्रसिद्ध है और हिन्दू-धर्म्मवालों को इस का आग्रह सर्व्वदा से रहा है। इसी कारण जो बड़े बड़े राजा हुए उन सबों ने इस स्थान पर कीर्त्ति करनी चाही और एक के नाम को मिटा कर दूसरा अपना नाम करता रहा। इस स्थान पर तीर्थ दो हैं, एक तो गगाजी दूसरा चक्रपुष्करिणी तीर्थ और इन दोनों पर लोगों की सदा दृष्टि रही। घाट के नीचे ब्रह्मनाल और नीलकंठ तक अनेक घाटों के बनने के

चिन्ह मिलते हैं। थोड़े दिन हुए कि मणिकर्णिका पर एक पुराना छत्ता था जिस को लोग राजा कीचक का छत्ता कहते थे, पर न जाने यह कीचक किस वंश मे और किस समय में उत्पन्न हुआ था। ऐसा ही राजा मान का एक जनाना घाट है जो गली की भांति ऊपर से पटा है, पर अब इस के ऊपर ब्रह्मनाल की सड़क चलती है। निश्चय है कि योंही घाटों के नीचे अनेक राजाओं के बनाए घाटों के चिन्ह मिलेंगे। हम आजकल में मणिकर्णिका पर से एक प्राचीन पत्थर उठा लाए हैं जिस्से उस समय का कुछ वृत्तान्त मिलता है। यह पत्थर संवत् १३५६ तेरह सै उनसठ का लिखा है जो ईस्वी सन् १३०२ के समय का होता है। इस के अक्षर प्राचीन काल के हैं और मात्रा पड़ हैं। पर शोच का विषय है कि पूरा नहीं है, कुछ भाग इस का टूट गया है, इस्से नाम का पता नहीं लगता कि किस राजा का है। जो कुछ वृत्त उस्से जाना गया वह यह है—"उक्त समय में क्षत्रिय राजा दो भाई बड़े विष्णुभक्त और ज्ञानवान हुए और इन की कीर्त्ति परम प्रगट थी, उन लोगों ने मणिकर्णिका घाट बनवाया। उस घाट के निर्माण का विस्तार वीरेश्वर से विश्वेश्वर तक था और मध्य में मणिकर्णिकेश्वर का बड़ा लम्बा चौड़ा और ऊंचा मन्दिर बनाया और बीच में बड़ी बड़ी वेदिका बनाई (वेदिका चबूतरे को कहते हैं) यह राजा बड़ा गुणज्ञ था" इत्यादि। इस्से निश्चय है कि उस की बनाई कोई वस्तु शेष नहीं रही। अब जो मणिकर्णिकेश्वर है वह एक गढ़े में नीचे सङ्कीर्ण स्थान में है और विश्वेश्वर और वीरेश्वर

भी नए नए स्थानों में है। ऐसा अनुमान होता है कि गङ्गाजी आगे ब्रह्मनाल की ओर बहुत दब के बहती थी, क्योंकि अद्यापि वहां नीचे घाट मिलते हैं। निश्चय है कि इस राजा के पीछे भी अनेक बार घाट बने होंगे, परन्तु अब जो कुछ टूटा फूटा घाट बचा है वह अहल्याबाई साहब का बनाया है।

मणिकर्णिका कुण्ड की सीढ़ियां जो वर्तमान है वह दो सै उनचास २४६ वर्ष की बनी हुई हैं और इन को नारायणदास नामक वैश्य ने (जिस का पुकारने का नाम नरैनू था) बनवाई है यह सोमवंशी राज बासुदेव का मन्त्री था और रावत इस के पिता का नाम था। यह बात इन श्लोकों से प्रगट होती है जो वहां एक पत्थर पर खुदे मिले हैं।

व्योमाष्टषट् चन्द्रमिते शुभेन्दौ मासे शुचौ विष्णुतिथौ शिवायां।
चकार नारायणदासगुप्तः सोपानमेतन्मणिकर्णिकायाः॥ १ ॥
जातः क्षितीवासतुल्यतेजाः सोमान्वये भूपति बासुदेवाः
तस्यानुवर्त्ती मणिकर्णिकायाश्चकार सोपान ततिर्नरेणुः॥ २॥
वासुदेवाग्रसचिवो नरेणुरावतात्मजः।
चक्रपुष्करणी तीर्थ जीर्णोद्धारमचीकरत्॥ ३॥

॥ काशी ॥

मैं इस में काशी के तीन भाग का वर्णन करूंगा यथा प्रथम भाग में पञ्चकोश का, दूसरे में गोसाइयों के काल का, तीसरे कुछ अन्य स्फुट वर्णन। मैं पञ्चकोशी का वर्णन ऐसा नहीं करना चाहता कि जिसे देख कर लोग पञ्चकोशी की यात्रा करने चले जाय

वरच में भगवान काल के उस परम प्रवल फेर फार रुपी शक्ति को दिखाता हूं जिस मे धैर्य्यमानों का धैर्य्य और अज्ञानों का मोह वढ़ता है। आहा ! उस की क्या महिमा है और कैसी अचिंत्य शक्ति है ? अतएव मैं मुक्तकंठ से कह सकता हूं कि ईश्वर भी काल का एक नामान्तर है। क्योंकि इस संसार की उत्पत्ति प्रलय केवल इसी पर अटकी है। जिस विजयी और विख्यात सिकन्दर ने संसार को जीता उसकी अस्थि कहां गड़ी है और जिस कालिदास की कविता संसार पढता है वह किस काल में और किस स्थान पर हुआ ? यह किसका प्रभाव है कि अव उस का खोज भी नहीं मिलता ! काल का अतएव यदि हम प्राचीनों से प्राचीन, नवीनों से नवीन, वलवानों से वलवान, उत्पत्ति, पालन, नाश कर्त्ता और सर्व्व तन्त्र-स्वतन्त्रादि विशेषणों से विशिष्ट ईश्वर को काल ही का एक नामान्तर कहें, तो क्या दोष है।

इस पंचक्रोशी के मार्ग और मन्दिर और सरोवरों मे से दो सौ वा तीन सौ वर्ष से प्राचीन कोई चिन्ह नहीं है और इस वात का कोई निश्चायक नहीं कि पंचक्रोश का मार्ग यही है, केवल एक कर्दमेश्वर का मन्दिर मात्र वहुत प्राचीन है और इस के वौद्धों के काल का वा इस के पीछे के काल का कहें, तो अयोग्य न होगा। इस मन्दिर के अतिरिक्त और कोई प्राचीन चिन्ह नहीं, पर हां, पद पद पर पुराने वौद्ध वा जैन मूर्त्ति खंड, पुराने जैन मन्दिरों के शिखर, दासे, खभे और चौखटे टूटी फूटी पड़ी हैं। क्यों भाई हिन्दुओ ! काशी तो तुम्हारा तीर्थ न है ? और तुम्हारा वेद मत तो परम प्राचीन है ? तो अव क्यों नहीं कोई चिन्ह दिखाते जिस से

निश्चय हो कि काशी के मुख्य देव विश्वेश्वर और बिंदुमाधव यहां पर थे और यह उन का चिन्ह शेष है और इतना बड़ा काशी का क्षेत्र है और यह उस की सीमा और यह मार्ग है और यह पंचक्रोश के देवता हैं। बस इतनाही कहो भगवते कालाय नमः। हमारे गुरु राजा शिवप्रसाद तो लिखते हैं कि "केवल काशी और कन्नौज में वेदधर्म्म बच गया था" पर मैं यह कैसे कहूं, बरंच यह कह सकता हूं कि काशी में सब नगरों से विशेष जैन मत था और यही के लोग दृढ़ जैनी थे, भवतु काल जो न करे सब आश्चर्य्य है। क्या यह संभावना नहीं हो सकती कि प्राचीन काल में जो हिन्दुओं की मूर्त्तियां और मन्दिर थे उन्ही में जैनों ने अपने काल में अपनी मूर्त्तियां बिठा दी? क्यों नहीं। केवल कुछ क्षण दिल्ली के सिंहासन पर एक हिन्दू बनियां बैठ गया था उतने ही समय में मस्जिदों में हिन्दुओं ने सिन्दूर के भैरव बना दिये और कुरान पढ़ने की चौकियों पर व्यासों ने कथा बांची, तो यह क्या असम्भावित है।

कर्दमेश्वर का मन्दिर बहुत ही प्राचीन है और उस के शिखर पर बहुत से चिह्न बने हैं जिन में कई एक तो हिन्दुओं के देवताओं के हैं, पर अनेक ऐसे विचित्र देव और देवी बनी हैं जिन का ध्यान हिन्दू शास्त्र में कहीं नहीं मिलता अतएव कर्दमेश्वर महादेव जी का राज्य उस मन्दिर पर कब से हुआ यह निश्चय नहीं और पलथी मारे हुए जो कर्दम जी की श्रीमूर्त्ति है वह तो निःसन्देह * * * * कुछ और ही है और इस के निश्चय के हेतु उस मन्दिर के आस पास के जैन खंड प्रमाण हैं और उसी गांव में आगे कूप

के पास दहिने हाथ एक चौतरा है उस पर वैसी ही ठीक किसी जैनाचार्य्य की मूर्त्ति पलथी मारे खंडित रक्खी है देख लीजिए और उस के लम्बे कान उस का जैनत्व प्रमाण करते हैं। अब कहिए वह तो कर्दम ऋषि हैं ये कौन हैं कपिलदेव जी हैं ? ऐसे ही पंचक्रोशी के सारे मार्ग में वरंच काशी के आस पास के अनेक गांव में सुन्दर सुन्दर शिल्पविद्या से विरचित जैन खंड पृथ्वी के नीचे और ऊपर पड़े हैं। कर्दमेश्वर का सरोवर श्रीमती रानी भवानी का बनाया है और उस पर यह श्लोक लिखा है।

" शाके गोलतुरंभूपतिमिते श्रीमत्भवानीनृपा
गौड़ाख्यानमहीमहेन्द्रवनिता निष्कर्द मं कार्दमं।
कुंडं ग्रावसुखंडमंडिततटं काश्यां व्यधाद्दादरात्
श्रीतारातनया पुरांतकपर प्रीत्यै विमुक्त्यै नृणां "॥

अर्थ—शाके १६७७ में अपनी कन्या श्रीतारा देवी के स्मरणार्थ यह कर्दम कुंड बंगाले की महारानी श्रीभवानी ने बनाया इन महारानी की कीर्त्ति ऐसी ही सब स्थानों में उज्ज्वल और प्रसिद्ध है और राजा चन्द्रनाथ राय (उन के प्रपौत्र) मानो उस पुन्य के फल हैं। भीमचंडी के मार्ग में भी ऐसे ही अनेक चिन्ह हैं और भद्राक्षी नामक ग्राम में एक बड़ा पुराना कोट उलटा हुआ पड़ा है और पंचक्रोशी करानेवाले उस के नीचे उसी के ईंटों से छोटे २ घर बनाते हैं और इस में पुन्य समझते हैं। सम्भावना है कि यहां कोई छोटी राजसी रही हो, क्योंकि काशी के चारो ओर ऐसी छोटी छोटी कई राजसियां थीं जैसा आशापुर। काशीखंड में आशापुर को एक बड़ा नगर कर के लिखा है पर अब तो गांव

मात्र बच गया है। भीमचंडी का कुंड भी श्रीमती रानी भवानी का बनाया है और उस में यह श्लोक लिखा हुआ है।

शाके कालाद्रिभूपे गतविलकमलं गौड़राजेन्द्रपत्नी
गन्धर्व्वाम्भोधिमम्भोनिधिसमखननं स्वर्गसोपानजुष्टं।
चक्रे राज्ञी भवानी सुकृतिमतिकृतिर्भीमचंडी सकाशे
कार्य्यामस्यास्तुकीर्त्तिस्सुरपतिसमितौ गीयते नारदाद्यैः।

अर्थात् शाके १६७६ में रानी भवानी ने यह सरोवर बनाया तो इस लेख से ११८ का प्राचीन यह सरोवर है। इस से प्राचीन भी कुछ चिन्ह हैं, पर अत्यन्त प्राचीन नहीं। देहली विनायक जो मुख्य काशी की सीमा हैं वही ठीक नहीं है, क्योंकि वहां कोई भी प्राचीन चिन्ह शेष नहीं है। वहां के मन्दिर और सरोवर सब एक नागर के बनाये हुए हैं जिसे अभी केवल सत्तर अस्सी बरस हुए। पर इतने ही समय में वह बहुत टूट गए हैं। काशी के कतिपय पंडित कहते हैं कि प्राचीन देहली विनायक वहां से कोसों दूर हैं। अतएव पंचक्रोशी का प्रचलित मार्ग ही अशुद्ध है और यह सम्भावना भी है, क्योंकि सिन्धुसागर तीर्थ का बहुत सा भाग इस मार्ग में वाम भाग पड़ता है, पर प्राचीन मार्ग की सड़क खेतवालों ने सम्पूर्ण नष्ट कर डाली। रामेश्वर में श्री रानी भवानी की धर्म्मशाला और उद्यान है, परन्तु रामेश्वर के कोस भर उधर बीच मार्ग ही में एक बड़ा प्राचीन मन्दिर खंड पड़ा है। बीच में शिवपुर एक विश्राम है और वहां पांचो पांडव हैं, परन्तु यह विश्राम इत्यादि कोई काशीखंड लिखित नहीं हैं। सब साहो गोपाल दास के भाई भवानी दास साहो के बनाए हुए हैं और अब वह एक ऐसा

विश्राम हो गया है कि सब काशी के बन्धु यहीं पंचक्रोशी वालों से मिलने आते हैं। कपिलधारा माना जैनों की राजधानी है। कारण ऐसा अनुमान होता है कि प्राचीन काल में काशी उधर ही बसती थी, क्योंकि सारनाथ वहां से पास ही है और मैं वहां से कई जैन मूर्त्ति के सिर उठा लाया हूं। ऐसी भी जनश्रुति है कि महादेवभट्ट नामक कोई ब्राह्मण था, उसी ने पंचक्रोशी का उद्धार किया है।

मुझे शिव मूर्त्ति अनेक प्रकार की मिली हैं १ पंचमुख दशभुज २ एक मुख द्विभुज ३ एक मुख चतुर्भुज ४ पद्मपर से पैर लटकाए हुए बैठे और पार्वती गोद में बैठी ५ पालथी मारे ६ पार्वती को आलिंगन किए हुए इत्यादि तो इस अनेक प्रकार की शिव मूर्त्तियों की प्राप्ति से शंका होती है कि आगे लिंग पूजन का आग्रह नहीं था।

काशी में किसी समय में दश नामी गोसाइयों का बड़ा प्राबल्य था और इन महात्माओं ने अनेक कोटि मुद्रा पृथ्वी के नीचे दबा रक्खी है अतएव अनेक ताम्र पत्र पर बीजक लिखे हुए मिलते हैं, पर वे द्रव्य कहां हैं इसका पता नहीं। इन गोसाइयों ने अनेक बड़े बड़े मठ बनवाए थे और वे सब ऐसे दृढ़ बने हैं कि कभी हिल भी नहीं सकते। इन गोसाइयों में पीछे मद्यपान की चाल फैली और इसी से इन का तेजोनाश हुआ और परस्पर की उन्मत्तता और अदालत की कृपा से इन का तन धन नाश हो गया, पर अद्यापि वे बड़े बड़े मठ खड़े हैं। इन गोसाइयों के समय में भैरव की पूजा विशेष फैली थी। कालिज में एक विस्तीर्ण पत्थर पड़ा है उस पर एक गोसाइयों के बनाए मठ और शिवाले और उसकी

विभूति का सविस्तर वर्णन है मैं उस को ज्यों का त्यों आगे प्रकाश करूंगा जिस्से वह समय स्पष्ट हो जायगा।

यहां जिस मुहल्ले में मैं रहता हूं उस के एक भाग का नाम चौखम्भा है। इस का कारण यह है कि वहां एक मसज़िद कई सै बरस की परम प्राचीन है उसका कुतबा कालबल से नाश हो गया है पर लोग अनुमान करते हैं कि ६६४ बरस की बनी है और मसज़िदे चिहल सुतून, यही उस की 'तारीख' पर यह दृढ़ प्रमाणी भूत नहीं है। इस मसजिद में गोल गोल एक पंक्ति में पुराने चाल के चार खंभे बने हैं अतएव यह नाम प्रसिद्ध हो गया है। यही व्यवस्था ढाई कनगूरे के मसज़िद की है, यह मसजिद भी बड़ी पुरानी है। अनुमान होता है कि मुगलों के काल के पूर्व की है इसकी निर्मिति का काल मैं १०५६ ई० बतलाते हैं। इस से निश्चय होता है कि इस मुहल्ले में आगे अब ला हिन्दुओं का प्राबल्य नहीं था, पर यह मुहल्ला प्राचीन समय से बसा है।

मैं ने जो अनेक स्थलों पर लिखा है कि जैन मूर्त्ति बहुत मिलती है इससे यह निश्चय नहीं कि काशी में जैन के पूर्व्व हिन्दूधर्म्म नहीं था, क्योंकि जैन काल के पूर्व्व की और सम काल की हिन्दुओं की अनेक मूर्त्ति अद्यापि उपलब्ध होती हैं। कालिज में एक प्रस्थर खंड पड़ा है और उस की लिपि परम प्राचीन है। पंडित शीतलाप्रसाद जी का अनुमान है कि यह लिपि पाली के भी पूर्व्व की है। इस पत्थर पर एक काली के मन्दिर की प्रतिष्ठा का समाचार है और इस का काल अनेक सहस्र वर्ष पूर्व्व है और उस में ये श्लोक लिखे हैं।

१

ख्याता वाराणसीय त्रिभुवनभवने भोगचौरीनि दूरात्।
सेवन्ते यां विरक्ता' जननमरणयो मोक्षमैकरक्ता ॥

२

यत्र देवोऽविमुक्त• यो दृष्ट्वा ब्रह्माद्याऽपि च्युतकलिकलुपो जायते
शुद्धभाव• । अस्यामुत्तुङ्गशृङ्गस्फुटशशि किरिणा ॥

३

प्रतुलिविविधजनपदश्रीविलासाऽभिराम विद्या वेदान्ततन्त्रव्रतजप•
नियमव्यग्रचक्राभिजुष्ट ॥ श्रीमरस्थान सुसेव्य ॥

४

तत्राऽभूत् सार्थनामा शिशुरपि विनयव्यापद्दो भद्रमूर्त्ति• त्यागी धीर•
कृतज्ञः परिलघविभवोप्यात्मवृत्याभिजोर्वी ।

५

वर्णा चडनरोत्तमांगरचितव्यालम्बिमालोत्कटा ।
सर्पत्सर्पविवेष्टिताङ्गरपशुव्याविद्धशुष्कामिपा लीला नृत्यरुचिपिलोप्प

६

यस्यापि न तस्य तुष्टिरभवत् यावत् भवानीग्रह शुशिलष्टा ऽमलसन्धि
वन्धघटितं घट्टानिनादोज्ज्वलं । रम्य दृष्टिहर शिलोच्चयाय ॥
ध्वज चामर सुकृति नाश्रेयोऽर्थिना कारितं

७

इस लेख के उपसंहार काल में मणिकर्णिका घाट का अवशिष्ट वर्णन करता हू । अब जो सांप्रत घाट वर्तमान है वह अहल्यावाई का वनवाया हुआ है और दो वड़े वड़े शिवालय भी घाट की सीमा पर उन्ही के वनाए हैं और उन पर ये श्लोक लिखे हैं ।

श्रीमान् होलकरोपाख्यख्यातो राजन्यदर्पहा।
मल्लारिरावनामाऽभूत् खंडेरावस्तु तत्सुतः॥ १॥
विलासी गुणकल्पद्रुः शूरो वीराभिसम्मतः।
तत्पत्नी पुण्यचरिता कुलद्वयविभूषणं॥ २॥
अहल्याख्या नया ख्याता तृषु लोकेषु कीर्तये।
वद्धोघट्टस्सुसोपानो मणिकर्ण्यांस्सुविस्तृतः॥ ३॥
तत्पार्श्वयोर्विधाये मौ प्रासादावुन्नतौ पृथक्।
तयोः पश्चिमदिक्संस्थे स्थापितो गौतमेश्वरः॥ ४॥
प्राक् संस्थे तारकेशांक अहल्योद्धारकेश्वरः।
स्थापितो वसुवेदैह विधुसम्मतवैक्रमे॥ ५॥
रामेन्दुदधि भूयुक्ते शालिवाहनजेशके।
राधशुक्लद्वितीयायां गुरौ दुंदुभिवत्सरे॥ ६॥
घट्टोत्सर्गः सुसम्पन्नः यजमान्यभ्यनुज्ञया।
स्वामिकार्यहितैकेच्छु जीवाजीशर्म्म हस्ततः॥ ७॥
(शाके १७१३)

काशी में बिन्दुमाधव घाट सम्वत् १७६२ में श्री छत्रपति महाराज के पन्त प्रतिनिधि परशुराम के पुत्र श्री श्री निवास की स्त्री श्रीमती राधाबाई ने बनवाया है और ऐसा अनुमान होता है जब यह घाट नहीं बना था तभी से इस का नाम नरसिंह दाढ़ा था, क्योंकि नरसिंह दाढे का नाम उस श्लोक में पड़ा है जो बाई साहब के काल का बना है। निश्चय है कि नरसिंह दाढ़ा के नाम से लोग सोचेंगे कि यह कौन वस्तु है, परन्तु मैं इतना ही कह सकता

है कि यह नरसिंह वाला एक पत्थल का केवल मुख का आकार है जो रामानन्द की मढ़ी में हनुमान जी की बांई ओर दीवार में लगा है और जब वहां तक पानी चढ़ता है तब इन्द्रदमन का नहान लगता है। ऐसा अनुमान होता है कि यह इसी नाप के हेतु बनाया हो वा यह किसी पुरानी मूर्ति का मुंह है जो नरसिंह जी के मुंह के नाम से पूजता है। पर कोई कहते हैं कि वह रामानन्द गोसाईं का मुंह है। जो हो, मुंह तो गोल पुराना मुड़मुंडा सा है।

यही श्लोक वहां खुदा है।

स्वस्ति श्री विक्रमार्केक्षितनगरधरासमिते १७८२ क्रोधनाब्दे।
मासीषे शुक्लके दिक्तिथिहरिमयुते त्वाग्निविश्वेशतुष्ट्यै॥
श्रीशाहोः श्रीनिवासः प्रनिनिधिपदगः पर्शुरामात्मजस्त।
ज्ज्ञायाराधाकृतोच जयतिनृहरिदंष्ट्राख्यबद्धः सुवद्धः॥ १॥
प्रत्यंतरमिदं ऊर्ध्वं श्लोकस्यहारिदीपवत्।
अकारिबालकृष्णेन स्वामिकार्यनिरूपकं॥ २॥

तथा काशी में जो वृद्धकाल महादेव का मन्दिर है वह भी किसी छत्रपति के आश्रितों में मेघश्याम के पुत्र बाचिक उपनामक देवराज ने बनाया है और एक तो कालेश्वर के लिङ्ग का जीर्णोद्धार किया और अपने नाम देवराजेश्वर एक शिव और बैठाया है जो इन श्लोकों से प्रगट है।

अब्देत्वीश्वरसंज्ञके शुभदिने संस्थाप्य कालेश्वरं।
प्राचीनं प्रणतार्तिभजनपर श्रीदेवराजेश्वरं॥
शाहुछत्रपतेः कृपालुवशगः श्रीदेवरायः स्वय।
मेघश्यामसुतः शिवालयमहो काश्यामबध्नात्प्रभुं॥ १॥

श्रीमत्प्रौढ़प्रतापप्रगटितयशसः शाहुभूपालकस्य ।
प्राज्ञस्याज्ञानुकारिद्विजहितविहितश्चाविकोदेवरायः ।
धाम्नब्देमोरभट्टानुमितमुपवनं गेहशालाविशालं ।
काश्यांविश्वेश्वरस्यत्रिजगदधनुषः प्रीतयेर्निमाय ॥ २ ॥

पापभक्षेश्वर भैरव का मन्दिर भी बाजीराव का बनाया है। जो हो, अब काशी मे जितने मन्दिर वा घाट है उन में आधे से विशेष इन महाराष्ट्रों के बनाए हुए हैं।

शिवपुर का द्रौपदी कुण्ड।

यह बात प्रसिद्ध है कि शिवपुर काशी की पञ्चकोशी में कोई तीर्थ नही केवल लोगों के वहां टिकते टिकते वह टिकान हो गई है और देवता बिठा दिये गए है। पर अयको द्रौपदी कुण्ड में एक पत्थर के देखने से ज्ञात हुआ कि यह प्राचीन तीर्थ है और तीन सौ बरस पहिले भी यहां पाण्डवो का मन्दिर था। वरंच "सुकृति हृति हितेषी" पद जो उस में राजा टोडरमल का विशेषण दिया है उस से ज्ञात होता है कि उन्हों ने भी किसी के बनाये हुए कुण्ड का जीर्णोद्धार किया है इस से उस की और भी प्राचीनता सिद्ध होती है। यह बावली राजा टोडरमल ने सं० १६४६ में बनवाई थी और "पांडव मण्डपे" इस पद से स्पष्ट है कि वहां उस काल में पाडवों का मन्दिर था। इस का पहिला श्लोक नहीं पढ़ा गया बाकी के तीन श्लोक पाठकों के विनोदार्थ यहां प्रकाशित होते है।

प्रत्यर्थिक्षितिपालकालनसु ***** ** ने दूनिका ।
मुद्राङ्क प्रकटप्रतापतपनप्रोद्दा सिताशामुखे ॥ १ ॥
क्षोणीशेश्वरे प्रशासति मही तस्मिन् नृपालावलिस्फूर्जन्मौ-
लिमरीचिवीचिरुचिरोदञ्चत्पादाम्भोरुहे ॥ २ ॥
तद्राज्यैकधुरन्धरस्य वसुधा साम्राज्यदीक्षागुरोः ।
श्रीमद्दण्डनवशमण्डनमणेः श्रीटोडरक्मापतेः ।
धर्मौघेकविधौ समाहितमतेरादेशतोऽचीकर-
द्वापी पाण्डवमण्डपे ॰ ॰ वनो गोविन्ददास. सुधी ॥ ३ ॥

ऋतुनिगमरसात्मासम्मिते १६४६ वत्सरेशे
सुकृतिकृतिहितैषी टोडरक्षोणिपालः ।
विहितविविधपूर्त्तोऽचीकरच्चारु वापीम्
विमलसलिलसारां वद्धसोपान पंक्तिम् ॥ ४ ॥

—*:⊙:*:—

पंपासर का दानपत्र ।

यह दानपत्र गोदावरी के तीर पर एक खेतवाले को मिला है। यह पांच टुकड़ों में अच्छा गहिरा खुदा हुआ कपाली लिपि में पांचो टुकड़े एक तामे की सिकड़ी में बंधे हुए एक तामे के डब्बे में बन्द और उसी डब्बे में शीसे की भांति किसी वस्तु के आठ टुकड़े और एक चोंगा जिस में सील लगी हुई थी निकला है। अनुमान होता है कि इस चोंगे में कागज रहा होगा, जो काल पाकर भीतर ही भीतर गल गया है। यह पत्र चन्द्रवंशी क्षत्री दो राजाओं के दिए

सं० ११७ के हैं और इन के पढ़ने से उस काल की बहुत सी चाल व्यवहार और उन के राज्य करने की नीति इत्यादि प्रगट होती है। इस से इनका यथास्थित संस्कृत का भाषानुवाद यहां प्रकाश होता है। इस वंश का और कही पता नहीं लगा है। केवल उन दोनों ताम्रपत्रों से जो कालेपानी से सं० १८५७ में एशियाटिकसोसाइटी में आए थे इन का सम्बन्ध ज्ञात होता है, क्योंकि उन में यही लिपि और इन्ही दोनों वंशो का वर्णन है पर नाम अलग अलग है और उन दोनों में सम्बन्ध भी नही है।

विजनजवन नामक क्षत्रियों के दो प्राचीन कुल थे जिन की संज्ञा ढढ़िया और पुछड़िया थी ॥ १ ॥

अपने वैरियों का सर्व्वस्व धन और धर्म्म नाश करके और भोग करके ढढ़िया वंश समाप्त हुआ।

पुछड़िया कुल के राजा जब दोनो कुलों के स्वामी हुए तब इन लोगों ने प्रजा का बड़ा आडम्बर से सत्कार किया और चक्रवर्त्ती हो गए ॥ ३ ॥

विद्या में बड़े बड़े पद और सभाओं में बड़ी बड़ी वक्तृता और आदर के अनेक आकाशी चिन्हों से इन के अनुयायी सदैव शोभित रहते थे ॥ ४ ॥

उदार ऐसे थे कि समाधि में भी रुपया नहीं बचने पाता था; चारो ओर केवल जाचक ही जाचक दिखाई देते थे ॥ ५ ॥

कलानिपुण ऐसे थे कि इन के सिवा और कोई था ही नही और राजनीति के छल बल के तो एकमात्र बृहस्पति थे ॥ ६ ॥

कहते हैं कि शौरसेन यादव वंश में बलदेव जी से इस वंश का साक्षात् सम्बन्ध है, क्योंकि अब तक ये जैसे हलीमद प्रिय भी हैं ॥ ७ ॥

ये उतने चतुर थे कि और सब जाति के लोग इन के सामने मूर्ख ज्ञात होते थे और पूनाल भी इतने कि इन की बात कभी दोहराई नहीं जाती थी ॥ ८ ॥

इन में वेणु के पुत्र सगर के पौत्र दीपसिंह के प्रपौत्र नाभाग और त्रिशंकु नामक दो राजा हुए ॥ ९ ॥

नाभाग को भोज मदमत्त और भगवान तीन पुत्र और त्रिशंकु को बावन नामक एक पुत्र था ॥ १० ॥

बावन को गौरचन्द्र और हनूमान दो पुत्र हुए, जो अब तमसा कृष्णा तक नीलगिरि से हिमगिरी के प्रान्त तक राज्य करते हैं ॥११॥

इन के अभिषेक के जलकण से और हाथियों के मद से तथा शूरों के परिश्रम और रति शूरों के स्वेद जल और इन के शत्रुओं की स्त्री के नेत्रजल से मिल कर इन की दान जलधारा नगर के चारो ओर खाई सी बन रही है ॥ १२ ॥

जिन लोगों को ये जीतते थे उन की ऐसी दुर्गति होती थी कि वे अन्न वस्त्र को भी हीन हो जाते थे तथापि ये ऐसे दयालु थे कि वही माल उन के शरण होते थे ॥ १३ ॥

प्राचीन कर सब इन लोगों ने क्षमा कर दिए। इन के काल में केवल आठ दस कर बच गए। उस पर भी प्रजा को दुःखी देख कर ये उन का बड़ा प्रतिपालन करते थे ॥ १४ ॥

वरच ये ऐसे दयालु थे कि और राजाओं की भांति आप कर लेने में ये ऐसे लज्जित होते थे जिस का वर्णन नही। इसी से पाठशाला धर्म्मशाला इत्यादि धर्म्म कार्य्य के हेतु कर संगृहीत हो कर उन्ही कामों में व्यय होता था॥ १५॥

शुकलानधान उसी को समझते थे जो इन के जातिवालों की नौकरी वा बनज के मिस आवे॥ १६॥

लक्ष्मी के एक मात्र आश्रय सरस्वती के पूरे दुर्गा के वर्ग तीनों शक्ति से ये सम्पन्न और त्रिदेव पुरजन के बड़े आग्रही थे॥ १७॥

इन धर्म्मावतारों ने पंपासर तीर्थ पर चन्द्रमा के पूर्ण ग्रास पर फाल्गुनी पौर्णिमा सम्वत् ११७ पूर्व्वा फाल्गुनी नक्षत्र व्यतीपात योग वैद्रुथ करण शनिवार कन्या पर गुरु मेष पर शुक्र मीन पर सूर्य कुम्भ में चन्द्रमा मिथुन में बुध करकट में मंगल और शनि में पपासर तीर्थ में स्नान कर परम धार्म्मिक परमेश्वर परम माहेश्वर भट्टारक महाराज गौरचन्द्र तथा हनुमच्चन्द्र भुपाल गोत्र गर्गाङ्गिरस भुपाल द्विजवर ठक्कुरनासो के पोत्र ठक्कुर उध्दट के पुत्र ठक्कुर पुप्पठ शर्मा को कलिगदेशान्तर्गत खातावी प्रगने के छीछल प्रगने का पसेसरी और कारस नामक दो ग्राम दे कर इस के सीर सायर आकास पाताल खेत खर्व्वट घाटी सिवारी जल थल सब पर इन का अधिकार करते हैं इन के वंश का जो होय यह उस को मानै कोई कर नहीं लगैगा।

मि० चैत शुक्ल १ सं० ११८ विक्रम के लिख सूत्रधार प्रवासी राय और ब्राह्मण ब्राह्ममथ ने शुभ।

(इस के आगे ये श्लोक लिखे हैं)

ये सर्वेस्युभोविन. पार्थिवेन्द्रान् तेभ्यो भूयोयाचते रामचन्द्रः।
सामान्योऽयं धर्म्मसेतुर्नृ पाणां काले काले रक्षणीयो भवद्भिः॥
स्वदत्तां परदत्तां वा ब्रह्मवृत्ति हरेत्युयः।
षष्ठि घर्ष सहस्राणि विष्ठायां जायते क्रिमिः॥

शुभम् श्रीः॥

कन्नौज का दानपत्र

यह दानपत्र राजा गोविन्दचन्द्र कनोज के राजा का है जो दिल्ली के बादशाही खज़ाने से सिख लोग लाहोर लूट कर ले गए थे और अब श्री पडित राधाकृष्ण चीफ परिडत लाहोर ने उस की एक प्रति हमारे पास भेजी है। इस राजवंश का पूर्व स्थापक गाहरवाल राजा था और करन्न इस का अन्तिम राजकुमार हुआ। उसी वंश की एक शाखा महिआल ने (वा महिआल का पुत्र) भोज हुआ जिस का काल ८८५ ईस्वी है। इन भोज और करन्न की कीर्ति समाप्त होने के पीछे उसी वंश की शाखा में यशोविग्रह राजा हुआ उस का पुत्र महीचन्द्र, उस का पुत्र चन्द्रदेव, उस का पुत्र मदनपाल और उस मदनपाल का पुत्र गोविदचन्द्र था, जिस ने यह दान किया है। यह राजा ऐसा दानी था कि इस के दिये हुये गावों के शतावधि दानपत्र मिले हैं। ये लोग वैष्णव वा वैष्णवों के अनुयायी थे, क्योंकि इन के दानपत्रों पर गरुड़ का चिन्ह है और गोविदचन्द्र की मोहर पांचजन्य शंख है। 'अकुण्ठोत्कुण्ठ' यह श्लोक प्रायः दानपत्रों पर है। यह दानपत्र संवत् ११८२ में माघ वदी ६ शुक्रवार को श्रीघमती (?) तीर्थ में गंगा में स्नान कर के राजा गोविदचन्द्र

ने गौतम गोत्र के गोतमाङ्गिरस मुद्‌गल विप्रवर के ब्राह्मण ठक्कर अल्हन के पुत्र छीभठ बाभठ दोनों भाइयों को हलद तालुके का गोंडली नाम गाँव दिया है।

स्वस्ति–'अकुण्ठोत्कुण्ठवैकुण्ठकण्ठलुठत्करः। संरम्भः सुरतारम्भे सश्रियः श्रेयसेऽस्तुवः ॥ १ ॥ आसीदशीतद्युति वंशजातक्ष्मापालमालासुदिवङ्गतासु। साक्षाद्विवस्वानिवभूरिधाम्ना नाम्ना यशोविग्रह इत्युदारः ॥ २ ॥ तत्सुतोऽभून्महीचन्द्रश्चन्द्रधामनिभंनिजम्। येनापारमकूपार पारेव्यापारितंयशः ॥ ३ ॥ तस्याभूत्तनयोनयैकरसिकः क्रांतद्विषन्मण्डलो विध्वस्तोद्धतवीरयोधतिमिरः श्रीचन्द्रदेवोनृपः। येनोदार तरप्रतापशमिताशेषप्रजोपद्रवस्। श्रीमद्गाधिपुराधिराज्यमसमं दोर्विक्रमेणार्जितम् ॥ ४ ॥ तीर्थानि काशिकुशिकोत्तरकौशलेन्द्रस्थानीयकानि परिपालयताभिगम्य। हेमात्मतुल्यमनिशंददता द्विजेभ्यो येनाङ्किता वसुमती शतशस्तुलाभिः ॥ ५ ॥ तस्यात्मजोविजयपालइतिक्षितीन्द्रचूडामणिर्विजयतेनिजगोत्रचन्द्रः। यस्याभिषेककलशोल्लसितैः पयोभिः प्रक्षालितंकलिरज पटलं धरित्र्याः ॥६॥ यस्यासीद्विजयप्रयाणसमये तुङ्गाचलोच्चैश्चलन्माद्यत्कुरिभपदक्रमासमभरभ्रस्यन्महीमण्डलम्। चूडारत्न विभिन्नतालुगलितस्त्यानासृगुद्भासित शेष पेषवशादिवक्षणमसौक्रोडेनिलीनाननः ॥७॥ तस्माज्जायत निजायत वाहुवल्लिवद्धावरुद्धनवराज्य गजोनरेन्द्रः। सान्द्रामृतद्रवमुचा प्रभवो गवां यो गोविन्दचन्द्रइति चन्द्रइवाम्बुराशेः ॥ ८ ॥ नकथमप्यलभन्तरणक्षमास्तिसृषुदिक्षुगजानथवज्रिणः। ककुभिवभ्रमुरभ्रमुवल्लभ प्रतिभटाइवयस्यघटागजाः ॥ ९ ॥

सोयं समस्तराजचक्रसंसेवितचरणः परमभट्टारक महाराजा-

धिराज परमेश्वर परममाहेश्वर निज भुजोपार्जित श्रीकान्यकुब्जाधिपत्य श्रीचन्द्रदेवपदानुध्यात परम भट्टारक महाराजाधिराज परमेश्वर परम माहेश्वराश्वपति गजपति नरपति राज्यत्रयाधि विविध विद्याविचारवाचस्पति श्रीमद्गोविन्दचन्द्रदेवो विजयी हल्दोपपत्तनायामगोंउलीग्राम निवासिनो निखिलजन पदानुपगतानपि च राजाराज्ञी युवराज मान्त्रिपुरोहित-प्रतिहार-सेनापति-भाण्डारिकाक्षपटलिकभिषग्नैमित्तिकान्त पुरिक-दूत-करि-तुरगपत्तनाकरस्थानगोकुलाधि पुरुषानाज्ञापयति बोधयत्यादिशतिच यथा विदितमस्तुभवता मयोपरिलिखितग्राम सजलस्थल सलोहलवणाकर समत्स्याकर सगर्तोखर समधूकाम्रवननाटिक विटपतृणयुतोगोचरपर्य्यन्त सोर्ध्वाधश्चतुर घाटविशुद्ध स्वसीमापर्य्यन्त द्वयधिकैकादशशत संवत्सरे ११८२ माघेमासि कृष्णपक्षे षष्ठ्यांतिथौ भृगावपिर्त श्रीयमुनोस्यतेगङ्गायां स्नात्वा विधिवन्मन्त्रदेव मुनिमनुजभूत पितृगणां स्तर्पयित्वा तिमिर पटल पाटन पटुमहसमुद्धतार्चिरमुपस्थायोषधिपतिसकलशेखरं समभ्यर्च्य त्रिभुवनत्रातुर्वासुदेवस्य पूजां विधायप्रचुरपायसेनहविषा हविर्भुजहुत्वा मातापित्रो रात्मनश्च पुण्ययशोभिवृद्धये ऽस्माभिरत्रे करणकुशलतायुतकमतुलोदक पूर्वगौतमगौत्राभ्यांगौतमाङ्गिर समुद्गलादि प्रवराभ्यांठक्कुर श्रीआलहनपुत्राभ्यां श्रीछीछुट श्रीवाछुट शर्म्मभ्यां आच न्द्रार्क यावच्छासनी कृत्यप्रदत्तामत्वा यथा दीयमानभागभोगकर प्रवणिकरतुरुष्कदण्ड सर्वादायनाज्ञां विधेयीभूयदास्यथेति । भवन्तिचात्र श्लोका ।

भूमिय प्रतिगृह्णाति यश्चभूमिंप्रयच्छति । उभौ तौपुण्यकर्माणौ नियतस्वर्गगामिनौ ॥ १ ॥ सम्बन्धमासनंछत्रं वराश्वावरवारणा । भूमिदानस्यचिन्हानि फलमेतत्पुरंदर ॥ २ ॥ सर्व्वानेतान्भाविन पार्थिवेन्द्रान्भूयो भूयो याचतेरामचन्द्र । सामान्योऽयं धर्मसेतुर्नृपाणां कालेकालेपालनीयोभवद्भि ॥ ३ ॥ वहुभिर्वसुधाभुक्ता राजभि सगरादिभि । यस्ययस्ययदाभूमिस्तस्यतस्यतदाफलम् ॥ ४ ॥ गामेकाम् स्वर्णमेकञ्च भूमेरप्येकमङ्गलम् । हरन्नरकमाप्नोति यावदाहूतसपल्वम् ॥ ५ ॥ तड़ागानां सहस्रेणाप्यश्च मेघशतेनच । गवांकोटिप्रदानेन भूमिहर्त्ता न शुद्धति " ॥ ६ ॥ इति ।

नागसंगला का दानपत्र ।

श्रीरङ्गपट्टन से १५ कोस उत्तर नागमंगल शहर में एक मन्दिर है । वहां पर निम्नलिखित लेख ६ ताम्रपत्रों पर खोदा हुआ मिला है जो कि एक मोटे धातु के कड़े से वेधित हैं, ये पत्रे १० इंच लम्बे और ५ इच चौड़े हैं ।

इस लेख से ज्ञात होता है कि पृथिवी निगुड़ राजा की स्त्री कुदेवी जो पल्लवाधिराज की पोती थी उस ने शके ६९९ में एक जैन मन्दिर स्थापित किया था। इसी के सहायता के कारण उस के पति को विजय स्कन्धावार के महाराज पृथ्वी कोगणि से उस के राज्य-प्राप्ति के पचास बरस बाद प्रार्थना करने पर यह दानपत्र मिला था ।

मर्कर के पत्रों के लेख से मिलता हुआ कुछ कोङ्गू राजाओं का वृत्तान्त इस लेख के पूर्व में है, जो सन् ४६६ से आरंभ होता है। इन लेखों में केवल इतना ही अन्तर है कि इस में प्रथम महाराज

का नाम कोङ्गणी वर्म्म धर्म्म महाधिराज और छठें का कोगणी महाधिराज लिखा है और केवल दानकर्त्ता को कोण्गणी लिखा है। इस शब्दके भिन्न भिन्न प्रकार के लिखे जाने से कुछ प्रयोजन नहीं। केवल इस से यह सूचना होती है कि कुर्ग में जो एक पत्थर पर खुदा लेख निकाला था और जिस को सत्यवाक्य कोङ्गिणी वर्म्म धर्म्म महाराजाधिराज ने सन् ८४० में लिखा था उस में भी इसी शब्द कोण्गणी ही का अपभ्रंश है और इस को कभी कभी कोडगू भी लिखते थे जो कि कोड़ागू से बहुत मिलता है। वह कोड़ागू उस देश का प्रचलित नाम है जिस को अंग्रेज़ लोग कुर्ग लिखते हैं।

मर्करा के लेख के सदृश इस से भी ज्ञात होता है कि दूसरे माधव और कदंबराजाओं में सम्बन्ध भया था अर्थात् पूर्वोक्त ने दूसरे की भगिनी से विवाह किया था, इस में विष्णु गोप के पुत्र गोद लेने और डिडिकरराय के राज्य का कुछ भी वर्णन नहीं है। इस समय से लेकर भूविक्रम के राज्य तक जिस ने सन् ५३१ में राज्यसिंहासन को सुशोभित किया दानपत्र और राज्य इतिहास दोनों में राजाओं की नामावली सम्पूर्ण मिलती है। इस के पश्चात् विलंड जिस का शुद्ध नाम राजा श्रीवल्लभाख्य था उस को इतिहास मे वर्त्तमान राजा का भाई लिखा है (प्रोफेसर डाउसन के अनुसार छोटा भाई और टेलर के अनुसार बड़ा)। यथार्थ में वह राजा और राज्यप्रबंध का कार्य सम्पादक दोनों था। दानपत्र में छोटे भाई का नाम नवकाम लिखा है। कोगणीमहाराज सोमेश्वर का वृत्तान्त जिस का शुद्ध नाम डाउसन शिवग महाराय टेलर शिवरामराय बताते हैं

पीछे लिखा है। इतिहास में तो यों है कि इस का पौत्र पृथ्वी कोंगणि महाधिराज था, जो सन् ७४६ में राज्यसिंहासन पर था। यही नाम दानकर्त्ता का है और यदि भीमकोप और राजाकेसरी इसी राजा के नामांतर मान लिये जायं जैसा कि सम्भव होता है तो इतिहास और उन पत्र का वृत्तांत एक मिल जाता है।

(१) स्वस्ति जितं भगवता गतघनगगनाभेन पद्मनाभेन श्रीमज्जान्हवेकुलामलव्योमावभासनभास्करः स्वखड्गैकप्रहारखंडितमहाशिलास्तंभलब्धबलपराक्रमोदारणारिगणविदारणोपलब्धवारणविभूषणविभूषितः काण्वायनसगोत्रश् श्रीमत्कोदग्निवर्माधर्ममहाधिराजः तस्य पुत्रः पितुरन्वागतगुणयुक्तो विद्याविनयविहितवृत्त सम्यक्प्रजापालनमात्राधिगतराज्यप्रयोजनो विद्वत्कविकांचननिकषोपलभूतो नीतिशास्त्रस्य वक्तृप्रयोक्तृकुशलो दत्तकसूत्रवृत्तेः प्रणेता श्रीमान्मामहाधिराजः तत्पुत्र-पितृपैतामहगुणयुक्तोऽनेकचतुर्दन्तयुद्धावाप्तचतुरुदधिसलिलास्वादितयशा श्रीमद्धरिवर्मामहाधिराजः, तत्पुत्रो द्विजगुरुदेवतापूजनपरो (२) नारायणचरणानुध्यात श्रीमान्विष्णुगोपमहाधिराज तत्पुत्रो त्र्यवकचरणाम्भोरुहराजपवित्रीकृतोत्तमाङ्ग स्वभुजबलपराक्रमक्रयक्रीतराज्य कलियुगबलपंकावसन्नधर्मवृषोद्धरणनित्यसन्नद्धः श्रीमान्माधवमहाधिराज तत्पुत्रश् श्रीमत्कदंबकुलगगनभक्तिमालिनकृष्णवर्महाधिराजस्य प्रियभागिनेयो विद्याविनयातिशयपरिपूरितांतरात्मा निरवग्रहप्रधानशौर्यो विद्वत्सु प्रथमगण्यः श्रीमान् कोंगणिमहाधिराज अविनीतनामा तत्पुत्रो विजृंभमाणशक्तित्रय "अंदरिह" "अलत्तूप" "पोंखलाते" पेलनराज्यानेकसमरमुखमखहुतशूरपुरुष

का नाम कोङ्गणी वर्म्म धर्म्म महाधिराज और छठे का कोगणी महाधिराज लिखा है और केवल दानकर्त्ता को कोण्गणी लिखा है। इस शब्दके भिन्न भिन्न प्रकार के लिखे जाने से कुछ प्रयोजन नहीं। केवल इस से यह सूचना होती है कि कुर्ग में जो एक पत्थर पर खुदा लेख निकाला था और जिस को सत्यवाक्य कोङ्गिणी वर्म्म धर्म्म महाराजाधिराज ने सन् ८८० में लिखा था उस में भी इसी शब्द कोण्गणी ही का अपभ्रंश है और इस को कभी कभी कोडगू भी लिखते थे जो कि कोड़ागू से बहुत मिलता है। यह कोड़ागू उस देश का प्रचलित नाम है जिस को अंग्रेज़ लोग कुर्ग लिखते हैं।

मर्करा के लेख के सदृश इस से भी ज्ञात होता है कि दूसरे माधव और कदंबराजाओं में सम्बन्ध भया था अर्थात् पूर्वोक्त ने दूसरे की भगिनी से विवाह किया था, इस में विष्णु गोप के पुत्र गोद लेने और डिडिकरराय के राज्य का कुछ भी वर्णन नहीं है। इस समय से लेकर भूविक्रम के राज्य तक जिस ने सन् ५३१ में राज्यसिंहासन को सुशोभित किया दानपत्र और राज्य इतिहास दोनों में राजाओं की नामावली सम्पूर्ण मिलती है। इस के पश्चात् वितांड जिस का शुद्ध नाम राजा श्रीवल्लभाख्य था उस को इतिहास में वर्तमान राजा का भाई लिखा है (प्रोफेसर डाउसन के अनुसार छोटा भाई और टेलर के अनुसार बड़ा)। यथार्थ में वह राजा और राज्यप्रबंध का कार्य सम्पादक दोनों था। दानपत्र में छोटे भाई का नाम नवकाम लिखा है। कोगणीमहाराज सोमेश्वर का वृत्तान्त जिस का शुद्ध नाम डाउसन शिवग महाराय टेलर शिवरामराय बताते हैं

पीछे लिखा है। इतिहास में तो यों है कि इस का पौत्र पृथ्वी कोण्-गणी महाधिराज था, जो सन् ७४६ में राज्यसिंहासन पर था। यही नाम दानकर्त्ता का है और यदि भीमकोप और राजाकेसरी इसी राजा के नामांतर मान लिये जायं जैसा कि सम्भव होता है तो इतिहास और उन पत्र का वृत्तांत एक मिल जाता है।

(१) स्वस्ति जितं भगवता गतघनगगनाभेन पद्मनाभेन श्रीमज्जान्हवेकुलामलव्योमावभासनभास्करः स्वखड्गैकप्रहारखंडितमहाशिलास्तंभलब्धवलपराक्रमोदारणारिगणविदारणोपलब्धवारणविभूषणविभूषितः काण्यायनसगोत्रश् श्रीमत्कोदङ्गिवर्माधर्ममहाधिराजः तस्य पुत्रः पितुरन्वागतगुणयुक्तो विद्याविनयविहितवृत्त सम्यक्प्रजापालनमात्राधिगतराज्यप्रयोजनो विद्वत्कविकांचननिकषोपलभूतो नीतिशास्त्रस्य वक्तृप्रयोक्तृकुशलो दत्तकसूत्रवृत्तेः प्रणेता श्रीमान्मामहाधिराजः तत्पुत्र. पितृपेतामहगुणयुक्तोऽनेकचतुर्दन्तयुद्धावाप्तचतुरुदधिसलिलास्वादितयशा. श्रीमद्धरिवर्मामहाधिराजः, तत्पुत्रो द्विजगुरुदेवतापूजनपरो (२) नारायणचरणानुध्यात श्रीमान्विष्णुगोपमहाधिराज तत्पुत्रो त्र्यवकचरणाम्भोरुहराजपविश्रीकृतोत्तमाङ्ग स्वभुजवलपराक्रमक्रयक्रीतराज्य. कलियुगवलपंकावसन्नधर्मवृषोद्धरणनित्यसन्नद्धः श्रीमान्माधवमहाधिराज तत्पुत्रश् श्रीमत्कदंवकुलगगभक्तिमालिन. कृष्णवर्म्महाधिराजस्य प्रियभागिनेयो विद्याविनयातिशयपरिपूरितांनरात्मा निरवग्रहप्रधानशौर्यो विद्वत्सु प्रथमगण्यः श्रीमान् कोगणिमहाधिराज. अविनितनामा तत्पुत्रो विजृम्भमाणशक्तित्रय "अंदरिह" "अलत्तूप" "पौरुलाले" पेलगराज्यानेकसमरमुखमखहुतशूरपुरुष

पशुप्रहारविघसविहस्तीकृतकृतान्ताज्ञिमुख किरातार्जुनीयपंचदश-सर्गा (३) दिकाकारो दुर्विनीतनामधेयः तस्य पुत्रो दुर्दान्तविमर्द-मिस्मृमितविश्वम्भरादिपचालिमालामकरन्दपुंजपिंजरीक्रीयमाणचर-णयुगलनलिनोमुष्करनामनामधेय तस्य पुत्रश्चतुर्दशविद्यास्थानाधि-गतविमलमति विशेषतो नवकोशस्य नीतिशास्त्रस्य वक्तृप्रयोक्तृ-कुशलो रिपुतिमिरनिकरनिराकरणोदयभास्करः श्रीविक्रमप्रथित-नामधेय तस्य पुत्रः अनेकसमरसम्पादितविजृंभितद्विरदरदनकुलि शघातव्रणसमरुद्धस्वास्थ्यद विजयलक्षणलक्षी कृतविशालवक्षस्थल समधिगतसकलशास्त्राधितत्वः समाराधितत्रिवर्गो निरवद्यचरित-प्रतिदिनवर्द्धमानप्रभावो भुविक्रमनामधेय अपिच ॥

नानाहेतिप्रहारप्रतिहतसुभटारामवाटोत्थितासृग् ।
भारास्वादामृताशत्क्षुधितपरिसरद्धु्ध्रसंरुद्धसीमे ॥
सामन्तान्पल्लवेन्द्रान्नरपतिमजयद्योविलन्दाभिधाने ।
राज्याश्रीवल्लभाख्य समरशतजयावाप्तलक्ष्मीविलास ॥

तस्यानुजो नतनरेन्द्रकिरीटकोटिरत्नार्कदीधितिविराजितपादपद्म ।
लक्ष्म्या स्वय वृतपतिर्नतकामलामाशिष्टप्रियोरिगणदारणगीतकीर्ति ।

तस्य कोगणिमहाराजस्य सोमेश्वरापरनामधेयस्य पौत्र समवन-तसमस्तसामन्तमुकुटतटघटितवकुलरजविलसदमरधनुष्काण्डम-ण्डितचरणनखमण्डलो नारायणे निहितभक्ति, शूरपुरुषतुरगनरवा-रणघटा संवट्टदारुणसमरशिरसिनिहितात्मकोपो भीमकोप प्रकट रतिसमय समनुवर्तनचतुरयुवतिजनलोकधूर्तो लोकधूर्त दुर्द्धरानेकयुद्धमूर्धन्यलब्धविजयसम्पदहितगजघटां (५) तकेसरीराजकेसरी अपिच ॥

यो गंगान्वयनिर्मलांबरतलव्याभासनप्रोल्लसन् ।
मार्तण्डोरिभयंकरः शुभकरः सन्मार्गरत्नाकरः ॥
सौराज्यं समुपेत्यराज्यसविताराजन्यतारोत्तमो ।
राजा श्रीपुरुषेश्वरो विजयते राजन्यचूडामणि ॥
कामः रामः सच्चापे दशरथतनयो विक्रमे जामदग्न्यः ।
प्राज्ये वीर्ये बलारिर्बहुमहसिरवि स्वप्रभुत्वेधनेशः ॥
भूयोनिख्यातशक्तिः स्फुटतरमखिलप्राणभाजांविधाता ।
धात्रास्मिन्प्रजानांपतिरितिकवयोचप्रशंसंतिनित्यम् ॥

तेन प्रतिदिनप्रवृत्तमहादानजनितपुण्याहघोषमुखरितमन्दि-रोदारेण श्रीपुरुषप्रथमनामधेयेन पृथ्वीकोंगणिमहाराजेन, अष्टान-वत्युत्तरषट्च्छतेषु शकवर्षेष्वतीतेष्वात्मनः प्रवर्द्धमानविजयवीर्य-संवत्सरेपंचाशत्तमेवर्द्धमाने मान्यपुरमधिवसति विजयस्कंदावारे श्रीमूलमूलशरणाभिनन्दितनन्दिसंगान्वयऍरूगित्तरंनाम्निगने मूलि॰कलगच्छे स्वच्छतरगुणाकरकीरप्रततिप्रल्हादितसकललोकः चन्द्र-इवापरः चन्द्रनन्दिनामगुरुरासीत् तस्य शिष्यः समस्तविबुधलोक-परिरक्षणक्षमात्मशक्तिः परमेश्वरलालनीयमहिमा कुमारवद्द्वितीय कुमारनन्दिनामा मुनिपतिरभवत् तस्यांतेवासी समधिगतसकलतत्त्वा-र्थसमर्पितबुधसार्द्धसंपत्संपादितकीर्तिः कीर्तिनन्द्याचार्यो नामा महामुनि समजनि, तस्य प्रियशिष्यः शिष्यजनकमलाकरप्रबोधज-नकः मिथ्याज्ञानजनितसमुत्ससन्मानात्मकसद्धर्मव्योमावभासनभा-स्करोविमलचन्द्राचार्यः समुदपादि, तस्य महर्षेर्धर्मोपदेशनयाश्री-मद्बाणकुलकमलः सर्वतपोमहानदीप्रवाहः बाहुदण्डमण्डलाखण्डि-तारिमण्डलद्रमन्मण्डो डुण्डुप्रथमनामधेयो निर्गुण्डयुवराजो जज्ञे,

तस्य प्रियात्मजः आत्मजनितनयविषनिशेषीकृतरिपुलोक लोकहित मधुरमनोहरचरित चरितार्तत्रिकर्णप्रवृत्ति परमगुणप्रथमधेय श्रीपृथ्वीनिर्गुण्डराजोऽजायत पल्लवाधिराज प्रियतमजायां सगरकुलतिलकात् मरुवर्मणो जातांकुण्डाख्यिनामधेयामुवाह भर्तृभावनाविर्भुवयातयाखंननप्रवर्तितधर्मकार्यया निर्मिताय श्रीपुरोत्तरदिशामलं कुर्वतेलोभतिलकधाम्नेजिनभवनाय खण्डस्फुटितनवसंस्कारदेवपूजादानधर्मप्रवर्तनार्थं तस्य पत्र पृथ्वीनिर्गुण्डराजस्य विज्ञापनया महाराजाधिराजपरमेश्वर श्रीजसहितदेवेन निर्गुण्डविषयांत पाति पोन्नालिनामाग्राम सर्वपरिहारोपेतोदत्त तस्य सीमातराणि पूर्वस्यांदिशि नोलिवेलदा वेगलेमालदि, पूर्वदक्षिणस्यांदिशिपाएयंगेरि, दक्षिणस्यांदिशि वेडगली गेरयादिल गेरयापल्लाडकुदल, दक्षिणपश्चिमायांदिशिजयद शकेय्यावेडगलमोलादुत्तरपश्चिमायादिशि हेनके वितालतुगजराकेलि, पश्चिमोत्तरस्यांदिशि पुणुसेयगोट्टगालाकालकुप्ये, उत्तरस्यांदिशि सामगेडेयपल्लदाह पेरसुडिक्के उत्तरपूर्वस्यांदिशि कलाम्बेल्यगद, ईशान्यामन्यादिक्षेत्राणि दत्तानि डुण्डु समुद्रदावयलुलकिलुदाडामेगेपदिरकं डुगंमणामपालेयरेनल्लुराजारपाक्र ट्टक्कण्डुगं श्रीवरदडुण्डगामण्डरातारण्डडापडुवयाण्डुताण्डु श्रीवरदावयलुल्लकम्मरगत्तिनल्लिरिकण्डुगं कालानिपेरगिल्यकेडगेआरमण्डुगं रेपूलिगिलेयाकोयेलगोदायदटं इरुपत्तगुण्डुगं भेद्य अदुबुश्रीवरवा वडगणापडुवणाकोनुणन् देवंगेशीमदप एद्दिन्मूवन्ताद्विन्दुमनेयमनेतान अस्य दानस्य साक्षिण अष्टादशप्रकृतय अस्य दानस्य साक्षिण पराणवति सहस्रविषयप्रकृतय योऽस्यापहर्ता लोभान्मोहात्प्रमादेन वा सपचभिर्महद्भि पातकै संयुक्तो भवति यो रक्षति सपुण्यभाग् भवति अपि चात्रमनुगीता श्लोका ।

स्वदातुं सुमहच्छक्यं दुःखमन्न्यस्य पालनं ।
दान वा पालनं वेति दानाच्छ्रेयो ऽनुपालनं ॥
देवस्वं तु विषं घोर न विषं विषमुच्यते ।
विषमेकाकिनं हन्ति देवस्वं पुत्रपौत्रकौ ॥

सर्वकलाधारभूतचित्रकलाभिज्ञेन विश्वकर्माचार्येणेदं शासनं लिखितं स्वतुष्करडुकश्री हिवीजमात छिकरडुककंगुदेतं तदपि ब्रह्मदेयमिव रक्षणीयं ।

चित्रकूट (चित्तौर) स्थ रमा कुंड प्रशस्तिः

ॐनम श्रीगणेशप्रसादात् सरस्वत्यै नम ॥ श्रीचित्रकोटाधिपति श्रीमहाराजाधिराज माहाराणा श्रीकुंभकर्ण पुत्री श्रीजीर्ण प्रकारे सोरठ पति महाराया राय श्रीमंडलीक भार्या श्रीरमाबाई ए प्रासाद रामस्वामि रु रामकुंड कारायिता संवत् १५५४ वर्षे चैत्र सुदि ७ रवौ मुहूर्त कृता । शुभ भवतु ।

श्रीमत्कुंभ नृपस्य दिग्गज रदातिक्रांत कीर्त्यं बुधे । कन्या यादव वश मडन ससि श्रीमडलीक प्रिया । सगीतागम दुग्ध सिधुजसुधा स्वादे परा देवता । प्राद्युम्न कुरुते वनीपक जनं कं न स्मरंतं रमा ॥ १ ॥ श्रीमत्कुंभल मेरु दुर्ग शिखरे दामोदरं मंदिर । श्रीकुंडेश्वर दक्षणा श्रित गिरे स्तीरे सर सुंदरं । श्रीमद्भूरि महाब्धि सिधु भुवने श्रीयोगिनी पत्तने भूय कुंड मचीकरत्किल रमा लोकत्रये कीर्त्तये ॥ २ ॥ श्रीकुंभोद्भवयां बुधि नियमित कि वा सुधा दीधिते र्निक्षेप स्त्रिदशैरशोषणं भिया किवाप्सरा सुंदर । प्राप्तुं पौर पुरध्रि वृं द मधुजद्भूमी तल मानसं चित्र रामशर प्रहार भयतो ब्धि वेह कडायते ॥ ३ ॥ यस्मिन्नीर विहारि कोक मिथुनं क्रीडासमुन्मीलिते

शीतांशा वितरेतरेण नितरां विश्लेष मासाद्य वा । लाणे नैव तनौ विभर्त्य विरतं सोपान भित्ति स्फुरत् स्त्रीयागे प्रनिबिंब संगम वशा-दूरेपि तीरे त्वरत् ॥ ४ ॥ पानीय हार विहार सुंदर सुदरी वदनं निजं प्रतिबिंब भूत मितीह निर्मल धीर नीरग सवुज । आदातु मुद्यत पाणिना जलदोलनेन गत श्रमा वितनोति कालन कुंभ पूरण सत्न विस्मय विभ्रमा ॥ ५ ॥ रसाल तरु मंजुल पिक विनोद नादो त्कलं क्वचित् कनक केतकोद्‌ग पराग पिंगांचलं । त्सशोकर सुशीतल सुरभि वृंद मंदा निलं यदीय मति निर्मल जयति चीर भूमी तलं ॥ ६ ॥ यदिय तट भूतलं हसित कुंद पुष्पोज्वल क्वचिद्विकच मालती कुसुम लोल भृंगे त्कलं । क्वचित् पारलसारणी तरल नीरता पेशलं स्तुवंति सुरयोषितः किमुत नंदना दप्यत ॥ ७ ॥ एतद्विप्ति तटालयेषु रुचिरो त्कोरौः सुरीणां गणौ. क्रीडो पागत पौरयौवत गुनोपांतै रवंते रपि । नत्वादकनतिविदिते रुपलसन्ना गांगना संगिभि र्मन्ये कुंड मिदं रमा विरचितं लोकत्रया दद्भुत ॥८॥ यद्वारुण प्रतिष्ठा समये समुपेत विबुध वृदस्य । कनकदुकूल विवरणं विदधाति रमेति लोलुपति सुराः ॥ ९ ॥ यावच्छेष शिरःसु शेखर पदं भूभूतधात्र्या मये मेरु र्मेरु गिरे रुपर्युपरितो ब्रह्मादि लोकत्रय । धत्ते यावदमुत्र वा दिनमणि माणिक्य नेराजनं तावत्खालतर रमा विरचितं कुडं चिरं नंदतु ॥ १० ॥

श्री रमा वर्णनं ।

उन्मीलद्गुण रत्नरोहण मही प्रौढप्रभालकृता सौंदर्यामृत वाहिनी मधुसुहृत्साम्राज्य सर्वस्वभूः । सौराष्ट्रेश्वर यादवान्वयमणेः श्रीमंडलीक प्रभो राज्ञी चारु रमावती वितनुते संगीत मानदद ॥१॥

कुंभब्रह्म सुमीरित क्रमसगा दुश्छिद्रक्षता यत्तितौ तत्प्रोद्धृत्य गिरीश भक्ति परमा रम्या रमा भारती। संगीत भरतादि गोत्र विधिना ब्रह्मैक तानोपमा सदानंद विधायक विलसति प्रोल्लासयंति परम् ॥ २ ॥ नादा नंद मयी वरोन्नतकरा लीलो ल्लसच्छल्लकी रागा रक्त गिरीश्वर स्वरकला शर्मोर्मिरम्यो ज्वला। लीलां दोलित राजहंस गमना सद्योगि भर्त्तुः सुता पद्मा मोदित मानसा विजयते वागी-श्वरी श्रीरमा ॥ ३ ॥ स्वजाता जलधे विवेक विधुरा धीरे ष्ववद्धादरा चापल्याऽभिरता प्रमोद मयते या पंकजानस्थितेः। विद्वत् कुंभ नृपोद्भवा गुण गणा पूर्णा प्रनीणा नदी धैर्य प्रीति मतीति तां विजयते श्रेयो न्वित श्रीरमा ॥ ४ ॥ राज द्रैवत भूधरां तररतं श्रीकांत माराधयत् कांतानंदित मानसा यदनिशं राधेव चावत्सल। मेरौ कुंभकृते महीप तनय श्रीमंडलीक प्रिया श्रीदामोदर मंदिरं व्यरचयत् कैलास शैलोज्वलं ॥ ५ ॥ श्रीरस्तु सूत्रधार रामा। अथ श्रीमहाराज श्रीमंडलीक प्रबंधः। इंदोर निदित कुल बहुबाहुजात वशेषु यस्य वसते रतुलं बभूव। श्रीमंडलेंद्र गिरि रैवतका धिवासो दामोदरो भवतु वः सुचिरं विभूत्यै ॥ १ ॥ श्रीमंडलीक दर्शन परितुष्ट मना महेश्वर सुकविः। श्रीमेदपाट वसति गुण निधि मेन यथा मति स्तौति ॥ २ ॥ आश्लिष्ट सुर विटपी संगति चिंतामणि मैत्रा कलितः। लब्ध सुवर्ण शिखरी मिलिते त्वयि मंडलाधीश ॥ ३ ॥ सुर विटपि विटप विशाल भुजदलकलित विपुल महाफलं। कवि चित्त चिंतामणि महागुण जाल जन्म महीतलं। अनवरत सुर सरि-दमलतमजल लुलित सुर शिखरि प्रभ कलयामि मंडल राज महमिह तोप मेमि हिम प्रभ ॥ ४ ॥ परि कलितः पुरुहूतो धन नाथो नयन

गोचरो रचित । साक्षात् कृतो रतीश स्त्वयि मिलिते मंडलाधीश ॥ ५ ॥ पुरुहूत मिव गुरु मंत्र यंत्रित मतुल मंगल मंडितं। धननाथ मिव धन दानं तोषित चंद्र मौलि मखंडितं । रति रमण मिव वर युवति कृतनुति महत विषम शरै युतं परिचित्य मंडल राज मह मिह मोद मगम मनुव्रतं ॥ ६ ॥ अंकुरिता शर्मलता कोरकिता चित्त चंपक व्रततिः । उल्लसिता तनु नलिनी मिलिते त्वयि मडलाधीश ॥ ७ ॥ कलधौत वितरण तरल करजात जनित शर्म सदंकुरं जन ां त चंपक कुसुम संभव मधुर तर मधु बंधुर। गणनैक मणि विस्फुरण पुलकित विपुल तनु नलिनी दलं अनुभूय मंडल राज मिद मपि भवति हृदय मनाकुलं ॥ ८ ॥ कर्पूरं नयन युगे वपुषि सुधा रश्मि परिषेक । हृदये परमानंद स्त्वयि मिलिते मंडलाधीश ॥ ९ ॥ घन सार सारसभाभि मार्दवलोचनं हिमनिर्भरे सकल प्लुतं वपु रद्य हिमहिम धाम धामनि निर्भरे। मम मनसि परमानंद संपदुदारतर मभि वर्द्धते नरनाथ मयति विलोकिते सति मडलेश शुचिस्मिते ॥ १० ॥ सुर तरु रद्य नरेश गेहद्यश मम कलयति । सुरगिरि रिति यदुराज राजमान संकलयति। सुरपति रयमिति मति रुदेति। सप्रति नर नायक पतिरिति नयना नुरक्ति रुद्यति। दृढ़सायक अनुपमतम महिम महीप सुतमंडल सकल कला। अष्ट भूति भवमवधि नवनिधि सन्निधि रधिकमता ॥ *

गोविंद देवजी के मन्दिर की प्रशस्ति।

"सम्वत ३४ श्री शकयन्ध अकबरशाह राज्ये श्रीकुर्मकुल श्रीपृथीराजाधि। राजवश महाराज श्रीभगवन्तदास सुत श्रीमहा-

* अत्र अतिमा पांक्ति पठना शक्यत्वा त्परित्यक्ता।

राजाधिराज श्रीमानसिंहदेव श्रीवृन्दावन जोग पोठस्थानकरा श्रीगोविन्ददेव को।"

इस के प्रारम्भ होने का यह संवत् जानना चाहिए।

"श्रीवृन्दाविपिने शिवादिदिविषद्वृन्दावलीवन्दिते श्री गोविन्द ण्णक्सदाराजते ॥ १ ॥ श्रीमानर्कवरोयदा भुवमयात्त्व- र्वीं तदैवाधुनासर्वः सौख्यम . गणैः स्वधर्मसुच्चैर्भजन् । श्रीगोविन्द पदंतदेतदयिते वासायसद्धैष्णवालम्भंल तस्मै सदैवा० पः ॥ २ ॥ तस्मिंस्तस्यसदान्वितक्षितिपति श्रीमानसिंहाभिधः पृथ्वीराज बिराज धे श्चन्द्रमा । भूभृद्भारहमल्लजात भगवद्दासात्मजोमन्दिरं कुर्वन्निन्दिरयावलादचलया ॥ ३ ॥ · स्तथाविधमहाराजाधिराजो- प्यसौ येनैवारि दिगतेन विजयीध्वस्त भ्रमः क्रीडति सश्रीमान ० सिंह नथायुद्धेयस्य नियत्य दिव्य पितृयाः कीर्त्तिध्रज- त्वगना' ॥ ४ ॥ यः क० धिपजांतिरेष विजयीश्री मानसिंहोनृपः सदा विजत दास सुधीः । श्रीगोविन्दपदारविन्द ·स्तनमन्दिर संसदान् कुर्वन्नुदयसमग्रतूर्णं ·पू · ॥ ५ ॥ ·· श्रीमानसिंहाद्भुतस्य ॥ ६ ॥ इन्द्रप्रस्थनिवासि ·सुगुरुर्गोविन्ददा- साभिध. । ·भवदाविष्य दखिल श्रीवैष्णवानांसुखं श्रीकर्ता हरिणासदानि जदयाया० याविनि ·· ॥ ७ ॥ श्रीग्रसेनः कृत्ती, तौद्वौश्रीयुतमानसिंहनृपति प्रस्थायितौनन्द तास् । किम्वाग्नद्धवनीय ·प्रतिपद सौख्यंग्म हद्धिन्दतु ॥ ८ ॥ मुनिवेदर्तुचन्द्राह्व १६४७ सम्व न्मन्दिर सम्भवे ·॥ ६ ॥ कलिलुप्तातत० तौश्री युतवृन्दावनेशितु सेवाम् । श्रीमद्रूयसनातननामानौतौभजेतज ॥ १० ॥"

इन पद्यों का अविकल न होने से अर्थ लिखना हम उचित नहीं समझते। केवल एक दो बात स्मरण रखने के योग्य है॥

१ म, अकबर का संस्कृत नाम " अर्कवर " है प्राय भाषा-रसिक और संस्कृत-रसिक लोगों के उपयोगी है। २ य मानसिंह की वंश-परम्परा यह है, राजा भारठमल्ल (वा भारामल्ल) राजा भागवन दास वा भगवन्तदास राजा मानसिंह। ३ य श्रीरूपगोस्वामी और श्री सनातन गोस्वामी की प्रशंसा जैसी आज काल है वैसी तीन सौ बरस पहिले भी थी लोग आधुनिक कीर्त्ति कल्पना न समझें।

इस लिपि के निकट ही जगमोहन के द्वार के ठीक सामने भूमि पर एक पत्थर की चट्टान में यह सफल सम्बन्धी लिपि है "राणा श्री अमर सिंह जी सुतश्री वागजीसुतश्री सबलसिंहजी की जात्रा सफल सम्वत् सतरे से अगरोतरामगसेर सुद ७ सो मे लखन्त प्रोहेत जी जनारादास पधारो सम्वत् १७७८।

५ छोटे २ शिखर के दक्षिण, उत्तर में दो मन्दिर, दक्षिण मन्दिर की शिखर कुछ फूटी है और मन्दिर का द्वार दो किष्कु ऊंचा है। सीढ़ी के योग से चढ़ते हैं। भीतर एक तल घर में वृन्दादेवी (वा पातालदेवी) विराजती हैं। घुमाव की बारह पक्की सीढ़ी उतर कर नीचे दर्शन करना होता है। देवी की मूर्त्ति श्वङ्खर (संगमरमर) पाषाण की अष्टभुजी एवं सिंहवाहिनी ११ इञ्च ऊंची और ६ इञ्च चौड़ी है। पास ही एक श्वङ्खर की छोटीसी चौकी पर श्रीराधिका जी के चरणचिन्ह हैं। चौकी के तट पर यह पद्य लिखा है।

तप्तकाञ्चनगौराङ्गि राधेवृन्दावनेश्वरि।
वृषभानुसुतेदेवि प्रणमामिहरिप्रिये॥

एक मोरी जिस का निकास बाहर की ओर उत्तर दिशा में है उस के ऊपर यह प्रशस्ति है।

"सम्वत ३४ श्रीशकबन्ध अकबर महाराज श्री कर्म कुल श्री पृथीराजधिराज वंश श्री महाराज श्रीभगवन्तदास सुत श्रीमहाराजाधिराज श्रीमानसिंहदेव श्रीवृन्दावन जोग पीठ स्थान मन्दिर कराज्ो श्रीगोविन्ददेव को काम उपरि श्रीकल्याणदास आज्ञा कारि माणिकचन्द चोपड़० शिलपकारि गोबिन्ददास दीलवारिकारिगरद. गोरषदासवीभवल ॥"

मन्दिर के चारो ओर सङ्कीर्ण कच्चे चौक में कोई उत्तम स्थान नही है, केवल पूर्व द्वार की बाईं ओर कुछ थोड़ी फुलवारी है और पश्चिम द्वार की ओर अति निकट एक छत्री है। यह छत्री प्रथम नाट्य मन्दिर के सामने थी, परन्तु अबकी जीर्णोद्धार में परिष्कार एवं संस्कार कर के पश्चिम प्रान्त में एक चौतरे पर स्थापित कर दी गई। इस में चरणचिन्ह शृङ्खर के बने हैं और एक स्तम्भ पर लिपि है। ज्ञात होता है कि इस में किसी के अस्थि समूह सञ्चित थें, क्योंकि चरणचिन्ह का व्यवहार प्रायः ऐसे ही स्थान में होता है। दूसरे राजाओं में ऐसी रीति भी प्रचलित है पुण्य-स्थान मे अस्थि सञ्चय किया जाय।

" सम्वत् १६६३ वरषे कातिक वदि ५ शुभदिने हजरत श्री३ शाहजहां राज्ये राणा श्रीअमरसिंह जी को बेटो राजाश्रीभीम जी राणी श्रीरम्भावती चौखण्डी सौराई छेजी।"

बौद्धमत का श्लोक जो सारनाथ की धमेख में मिला था।

७ ये धर्म्महेतु प्रभवाहेतुतेषां तथा गता ह्यवदत्

तेषांचयो निरोध एवंवादी महाश्रमण।

विहार के जिले में बहुतेरी प्राचीन बोध मूरतों पर यह श्लोक खुदा हुआ है, वरन् राजग्रह के प्रसिद्ध जैन मन्दिर में भी जो वस्ती मे है एक मूर्ति पर यही श्लोक खुदा है, और इसी कारण हम उस को प्राचीन बौधमती अनुमान करते हैं।



जेनरल कनिङ्गहाम साहिब ने जो दो हज़ार वरस के लगभग पुराने राजा वासुदेव को अथवा राजा वासुदेव के सम्वत् नव्वे में वनवाई महावीर स्वामी की मूर्त्ति मथुरा मे पायी है उस पर ६० का अंक लिखा है। जेनरल साहिब ने जो उस मूर्ति पर से हर्फों का छापा लिया है उस के एक (पहले) टुकड़े मे (सिद्ध ओं नमो अरहत महावीरस्य · राजा वासुदेवस्य संवत्सरे ६०) लिखी है। अफसोस है कि हर्फों के घिस जाने के सबब इस से अधिक उस की इवारत पढ़ी ही नहीं जा सकती है।



जिला गया के प्रसिद्ध स्थान देवसंगा में एक सूर्य्य का मन्दिर है उस पर यह श्लोक खुदा है। इस लेख से अत्यन्त आश्चर्य होता है कि इतने दिनो का लेख वर्त्तमान हो।

शून्यव्योमनभोरसेंदुकरभेहीने द्वितीयेयुगे।
माघेवाणतिथौ शिते गुरुदिने, देवो दिनेशालयं॥
प्रारंभेदृष्टदांचयेरचयितुं सौम्यादिलायांभवो ।
यस्या सोतसनराधिप प्रभुतया लोकोविशोकोभुवि॥

अर्थ—दूसरे युग अर्थात् त्रेता युग के १२१६००० वर्ष वीतने पर माघ शुक्ल पंचमी गुरुवार के दिन ऐलपुरूरवा जो बुध से इला में

उत्पन्न हुआ था उस ने पाषाणादिकों से दिनेश अर्थात् सूर्य्य का मन्दिर बनाना प्रारम्भ किया था। जब यह राज्य करता था तब इस की प्रभुता से सब प्रजा भूमि में सुखी थी।

— * —

प्राचीन काल का सम्वत् निर्णय।

माधवाचार्य्य लिखित किसी की टीका से राजावली ग्रन्थ से उद्धृत।

यह राजावली ग्रन्थ किसी ज्योतिषी ने सं० १८१६ में बनाया है। इस में सवत्सर प्रतिपदा के विधान और कालादिक का अनेक निर्णय किया है और फिर कलियुग के राजाओं का और अन्य युग के राजाओं का नाम 'राजाधिराज माधवाचार्य्य टीकाया मुक्तं' कह के उस ने माधवाचार्य्य के किसी ग्रन्थ की टीका से उद्धृत किया है। यह सम्वत् और नामादिक प्राचीन इतिहास के उपयोग जान कर यहां प्रकाश किये जाते हैं।

सत्ययुग में—कृष्णावतार में अमरेश्वरलिङ्ग। पुष्करतीर्थ बौद्ध-पत्तनपीठ। राजकृतसज्ञ कृतपुत्र कृतदेव त्यागी मेन मुचकुन्द भैरव नन्द अन्धक हिरण्यकशिपु प्रह्लादविरोचन बलि, वाणासुर गमासुर कपिलभद्र निर्वोपा मान्धाता वेणु। कश्यप सूर्य्य मनु महामनु तत्तक अनुरञ्जन विश्वावसु विमना प्रद्युम्न धनञ्जय महीदास यौवनाश्व मान्धाता मुचकुन्द पुरूरवा बलि सुकान्ति वीर।

त्रेता में—नैमिषारण्य तीर्थ, सोमेश्वर लिङ्ग, जालन्धर पीठ राजा रुद्र, पुरूरवा, प्रोपध, वैराय, नैषध, त्रिशृङ्ग, मरीचि, इक्षु, मनु, दिलीपि, रघु, त्रिशङ्कु, हरिश्चन्द्र, रोहिताश्व, धुन्धुमार, जन्हु, सगर, भगीरथ, वेणु, वत्स, भूपाल, अज, अतिथि, नल, नील, नाभ, पुण्डरीक, क्षेमक, शतधन्वा, शतानीक, परिजातक, बलनाभ, पुष्पसेन, अजपाल, दशरथ, श्रीराम, लवकुश, अङ्गस्वामी, अग्निवर्ण।

द्वापर में—कुरुक्षेत्र तीर्थ। केदारेश्वलिङ्ग। अवन्ती पत्तन। राजा—भर्तृहरि, पृथु, अनुविरुरु, अन्यरु, फेन, इन्द्र, ब्रह्मा, अत्रि, सोम, बुध, धनुर्जय, शतनु, गव्य, गवाक्ष, असमञ्जस, निर्वाप, प्रजापति, अक्रूरउपचीर, अनुसन्धि, ज्येष्ठभरत, कनिष्ठभरत, धर्मध्वज, सान्तनु, पाण्डु, नरवाहन, क्षेमक, ययाति, नान्त, चित्र, पार्थ, अर्जुन, अभिमन्यु, परक्षित, जन्मेजय।

कलियुग में—गङ्गा तीर्थ। कालीदेवना प्रतिष्ठान पुरनगर। कल्किअवतार इस ने अलग तीन चाल पर यहां लिखा है और उन के परस्पर जन्मदिन पिता माता के नामादिक सब अलग २ हैं। कलियुग के आरम्भ से ३०४४ वर्ष के भीतर युधिष्ठिर, परीक्षित, जन्मेजय, वत्सराज, क्षेमसिंह, सोमसिंह, राणकराय, अंबुसेन, रामभद्र, भरतसिंह, पठाणसिंह, विक्रमसिंह, नरसिंह, आदित्यसिंह, ब्रह्मसिंह, वसुधासिंह, हर्षसेन, भर्तृहरि। ३०४४ में विक्रम का राज्य ३१७६ में शालिवाहन का राज्य, फिर सूर्य्यसेन, शक्तिसिंह, खड्गसेनसुखसिंह, मम्मलसेन, मुञ्ज भरत, श्रीपाल जयानन्द, रामचन्द्र, छत्रचन्द्र, अनूप सिंह, तुम्बरपाल, ननश्रहाण, रणवादी, शालपाल, कीर्त्तिपाल, अनङ्गपाल, विशालाक्ष, सोमदेव, बलदेव,

नामदेव, कीर्त्तिदेव, पृथ्वीपति इतने प्रसिद्ध राजा हुए। फिर म्लेच्छों का राज्य आरम्भ हुआ। सिकन्दरशाह ने विश्वेश्वर का अपराध किया। इस के पीछे मुसलमानों का वर्णन है।

फिर कालनिर्णय यो किया है—व्यासादिक का काल ५१५४ वर्ष कलियुग लगने के पूर्व्व । श्री कृष्णावतार द्वापर की सन्ध्या प्रारम्भ कलियुग के पूर्व्व क्योंकि कलि का काल होते भी उस ने प्रावल्य नही पाया था। क्षेमक तक युधिष्ठिर का वंश सुमित्र तक इक्ष्वाकु का वंश और रिपुञ्जय तक जरासंध का वंश एक सहस्र वर्ष कलियुग वीते समाप्त हो चुका था। फिर १३८ वर्ष प्रद्योतनो का राज्य गत कलि ११३८ वर्ष। शिशुनाग वंश का राज्य ३६२ वर्ष ग० क० १५०० वर्ष। फिर शुद्ध क्षत्रियों का राज्य छूटकर नन्दादिकों का राज्य हुआ। नन्दों का राज्य १३७ वर्ष ग० क० १६३७ वर्ष। फिर कण्वंश के राजा उन का राज्य ५५७ वर्ष ग० क० २११४ वर्ष। फिर आन्ध्रराजा का राज्य ४५६ वर्ष ग० क० २६५० वर्ष। फिर सात आभीर और दस गर्दभिल राजों का राज्य ३६४ वर्ष ग० क० ३०४४ वर्ष। फिर विक्रमों का राज्य १३५ वर्ष ग० क० ३१२६ वर्ष। अन्त के विक्रम को शालिवाहन ने मारा फिर शालिवाहन वंश ने १५५ वर्ष राज्य किया। शेष पुत्र के वंशने १३६ शक्तिकुमार के वंश ने ११४ शूद्रक ने ६५ और इन्दुकिरीटी ने ४८। सब ४३७ वर्ष हुए। फिर ३३ वर्ष तोमर, ३४ वर्ष चिन्तामणि, ३० वर्ष राम, और ३६ वर्ष हेमाद्रि राजा ने राज्य किया। सब १३३ वर्ष हुए। तब शक ५७० था उसी के पीछे तुरुष्कलोगों का प्रवेश होने लगा। फिर भारतवंश के खण्डराज हुए। फिर चालेक्य वंश ने

४४४ वर्ष, पल्लोभदत्त ५५ वर्ष, गौड़राज २०, भिल्लराज ५० वर्ष राज्य तव शाके १००६ वर्ष कलि ४१८५, फिर यादवराजे २२७ वर्ष तव शक १२३३ वर्ष। इस वंश के देवगिरि के अन्तिम राजा रामदेव को शक १२१७ में अलाउद्दीन ने जीत कर राज्य फेर लिया, रामदेव ने ५६ वर्ष और राज्य किया फेर तुरकों का राज्य ३३४ वर्ष हुआ।



चरितावली

अर्थात्

अनेक प्रसिद्ध पुरुषों का जीवनचरित्र ।

भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित.

क्षत्रियपत्रिकासम्पादक म० कु० बाबू रामदीन सिह सङ्कलित·

राय साहिब रामरणविजय सिंह द्वारा प्रकाशित.



'खड्गविलास' प्रेस, बांकीपुर, पटना·

बाबू रामप्रसाद सिह द्वारा मुद्रित.

ह० स० ३२—१६१७.

दूसरी बार ।

चरितावली ।

विक्रम चरित्र ।

इस के पूर्व कि हम विक्रमादित्य का कुछ चरित्र लिखें हम को श्रीमद् बुहलर साहब का धन्यवाद करना चाहिए, जिन्हों ने विक्रमांकचरित नाम ग्रन्थ खोज कर प्रकाश किया। यह श्रीहर्ष-चरित्र के चाल का एक दूसरा ग्रन्थ है, जो अब प्रकाश हुआ। यह ग्रन्थ विल्हण कवि का है और अनेक छन्दों में अठारह सर्ग में लिखा हुआ है। इस के सत्रह सर्गों में विक्रमादित्य का चरित्र और अठारहवें सर्ग में कवि ने अपना वर्णन किया है। प्रसिद्ध है कि चौरपचासिका इसी विल्हण की बनाई हुई है। कहते हैं कि गुजरात के राजा वैरोसिंह की बेटी चन्द्रलेखा वा शशिकला को विल्हण पढ़ाता था और उस ने उससे गन्धर्व विवाह भी किया था। जब राजा ने इस बात से क्रुद्ध होकर विल्हण को फांसी की आज्ञा दिया, रास्ते में इस ने चौरपचाशिका बनाई, जिस्से प्रसन्न होकर राजा ने फांसी के बदले अपनी कन्या की बांह उसके गले में डाली। इन कथाओं पर हमारा कुछ ऐसा विश्वास नही, क्योंकि इस ग्रन्थ में विल्हण ने इन बातों को कहीं चर्चा नही की है। विल्हण अपना हाल यों लिखता है:— कश्मीर के देश में जिहलम और सिन्ध के मुहाने पर प्रवरपुर नाम का बड़ा सुन्दर नगर था। अनन्त देव वहां का बड़ा प्रतापी और धार्मिक राजा था। जिस की रानी

का नाम सुभटा था। उस रानी का भाई क्षितिपति भोज के समान कवियों का गुणग्राहक और बड़ा विष्णुभक्त था। अनन्त का बेटा कलश हुआ और कलश के पुत्र हर्षदेव और विजयमल्ल थे। प्रवरपुर के पास ही विजयवन में खोनमुख नाम का एक गांव था, जहां कुशिक गोत्र के ब्राह्मण बसते थे, जिन को गोपादित्य मध्य देश से बड़े आदर से लाया था। उन ब्राह्मणों में मुक्तिकलश सब से मुख्य था और उस को राज्य कलश और राज्य कलश को ज्येष्ठ कलश पुत्र हुआ। ज्येष्ठ कलश को इष्टराम, बिल्हण, आनन्द तीन पुत्र थे बिल्हण व्याकरण और काव्य अच्छी तरह पढ़ा था और श्री वृन्दावन में बहुत दिन तक उस ने काल बिताया और फिर कन्नौज प्रयाग, बनारस और अयोध्या में फिरता रहा और फिर कुछ दिन डाहाल के राज्य में, कुछ दिन धार में और कुछ दिन गुजरात में रहकर अपनी कविता से लोगों को प्रसन्न करता रहा। जब यह दक्षिण में चोल देश मे गया, तो वहां के राजा से इसको विद्यापति की पदवी मिली। उस की माता का नाम नागादेवी था। कर्ण के दरबार में गंगाधर कवि के मुकाबिले मे राम जी के चरित्र में काव्य बनाया। यह अपने ग्रन्थ में लिखता है कि किसी कारण से वह राजा भोज से न मिल सका। विक्रमांक चरित्र उस ने अपने बुढ़ापे में बनाया। विदित रहे कि बिल्हण ईसवी ग्यारवे शतक के मध्य और अन्त भाग में हुआ है, क्योंकि विक्रमादित्य ने (जिस के दरबार का यह पंडित था) सन् १०७६ से ११२७ तक राज्य किया था। बिल्हण की कविता में कई बातें विशेष जानने के योग्य है, जैसा उस ने कादम्बरी का अपने ग्रन्थ में वर्णन किया है, जिस्से स्पष्ट

जाना जाता है कि वाणकवि बिल्हण के पहिले हुआ है और उस के समय में भी वाण की कविता का माधुर्य्य भारतवर्ष में फैला हुआ था। फारसी (शिकस्त) के चाल के कोई अक्षर बिल्हण के समय में कश्मीर में लिखे जाते थे, क्योंकि उस ने कश्मीर के वर्णन में लिखा है कि वहां कायस्थ लोग अपने लिखावट की जाल से किसी को ठग नही सकते थे। बिल्हण गुजरातियों से बहुत नाराज था, क्योंकि वह लिखता है कि गुजराती राक्षसी बोली बोलते हैं और लांग नही बांधते और मैले होते हैं। बिल्हण के बाप ने महाभाष्य पर कोई तिलक किया था, परन्तु अब वह नही मिलता। बिल्हण की कविता वैदर्भी और ओज और प्रसाद गुण से पूर्ण है। कविता से जहां कवि के और गुण प्रकट होते हैं वहां साथ ही उस का अभिमान, उद्दण्डता और परिहास का स्वभाव भी पाया जाता है। *

इसी कवि ने विक्रमादित्य का चरित्र अठारह सर्गों में कहा है। इस समय हम इस बात का झगड़ा नही ले बैठते कि विक्रम कितने भए और किस २ समय में भए। यहां पर हम केवल उस विक्रम का चरित्र वर्णन करते हैं जा दक्षिण देश में राज्य करता

* बिल्हण का यह स्फुट श्लोक मिला है जिस से उस का अभिमान स्पष्ट प्रगट होता है।

वास शुभ्रमृतुर्वसन्तसमयः पुष्पशरन्मालिका।
धानुष्क कुसुमायुध परिमल कस्तूरिकाऽस्त्रवनुः॥
वाणीतर्वरसोज्वला प्रियतमा श्यामावयो यौवन।
देवोमाधवएत्रपचमलया गीतिर्कविर्विल्हण॥

था, कल्याण जिस की राजधानी थी और विक्रमादित्य जिस का नाम था। हमारे पाठक लोगो को यह जान कर बड़ा आश्चर्य्य होगा कि यह वह विक्रम नहीं है जिस का संवत् चलता है। और न इस विक्रमादित्य के हुए १९४१ वर्ष हुए।

इस विक्रमादित्य का जन्म चालुक्य * नामक क्षत्रीवंश में हुआ था। विल्हण लिखता है कि ब्रह्मा एक वेर अंजुली में जल लेकर अर्घ देना चाहते थे कि इन्द्र अपनी विपत्ति कहने लगा, जिस से ब्रह्मा ने अपनी अञ्जुली का जल गिरा दिया और उसी से चालुक्य नामक क्षत्रियों का कुल उत्पन्न हुआ। हारीत और मानव्य इस वंश के पूर्व पुरुष थे और पहले से ये लोग अयोध्या के राजाओं के अधिकार में अयोध्याजी में वसते थे। श्री रामचन्द्र के समय मे भी ये लोग उन को सेवा मे उपस्थित थे। फिर इन लोगो ने दक्षिण में अधिकार आरम्भ किया और धीरे २ वहां के राजा हो गए। काल पाकर श्री तैलप नामक इस वंश में एक राजा हुआ। इस ने सन् ९७३ से ९९७ तक राज्य किया। इस ने हिन्दुस्तान के वहुत से राजाओ को मार कर अपना अधिकार वढ़ाया। श्रीयुत बूलर साहव लिखते है मुंज को इसी ने मारा था और मालवा पर इस ने बड़े धूमधाम से चढाव किया था। उस के पीछे सत्याश्रय राजा हुआ, जिस ने ग्यारह वर्ष अर्थात् सन् १००८ तक राज्य किया। इसी का नामान्तर सत्यश्री था। इस के पीछे जै सिंह राजा हुआ, जिस ने सन् १०४० तक राज्य किया। इस के पीछे आहव मल्लदेव राजा हुआ इसी का नामान्तर त्रिभुवनमल्ल और त्रैलोक्य-

* "बून्दी राजवंश वर्णन" में देखिये।

मल्ल था। इस ने पवांरों * के देश मालव की राजधानी धारानगरी पर चढ़ाई किया। करनाटक, कुंतल और डाहल देश में इस का निज राज था, पर चोल केरल और द्राविड़ देश इस ने जीत के अपने राज्य मे मिला लिया था। विल्हण लिखता है कि अद्भुत कथा और दश रूप काव्य में इस राजा का वहुत सा वर्णन है। इस को पुत्र नही होता था इस से इस ने महादेव जी को घर ही में बड़ी आराधना की और काल पाकर सोमदेव विक्रमादित्य और जय सिंह तीन पुत्र हुए। विक्रम के शरीर में छोटेपन ही से शूरता इत्यादिक उत्तम गुण झलकते थे। जब यह जवान हुआ, तो पहिले इस ने बंगाले पर चढ़ाव किया और कामरूप जीता। समुद्रपार हो कर सिंहल पर† इस ने चढ़ाव किया और द्राविड़ और चोलों की

---

* "बून्दी राजवश वर्णन" और बाबू रामचरित्र सिंह सग्रहीत "नृपवशावली" और "राजस्थान" में देखिये।

† सिंहल के इतिहास में बङ्गाले का पहला हाल इतना लिखा है कि सिंहबाहु नाम एक बङ्गाले का राजा था। उस का बडा बेटा विजयसिंह प्रजाओं को पीडा देने के कारण जब देश से निकाला गया, तो सात सौ आदमियों के साथ जहाज में चढकर निकला। अनेक प्रकार के कष्ट सहने के उपरान्त सिंहल में जा पहुचा और वहा के लोगों को जीत कर उन का राजा बन गया। विजयसिंह के मरने के बाद उस का भतीजा पाडुवास जो बङ्गाल में रहता था सिंहलद्वीप के सिंहासन पर बैठा। यह सिंहलद्वीप के राजाओं में पहला राजा था। सिंहवश के राजा होने के कारण इस टापू का नाम सिंहलद्वीप हुआ। जिस साल बुद्धदेवका परलोक हुआ था उसी साल विजयसिंह सिंहल में पहुचा। यह साफ जान पडता है कि ५०० बरस इस्वी सन् के पहले बगाले में आर्यवश के लोगों का अधिकार बहुत बढ़ा था, क्योंकि उन लोगों ने भी समुद्र की राह से जहाज पर चढ कर दूर २ के देशों को जीता था।

राजधानी कांची तीन बेर लूटा। जब वह सिंहल जीतकर लौटा, तो गोदावरी के पास सुना कि तुंगभद्रा के किनारे पिता ने देह त्याग किया। यह उसी समय घर गया और इस का बड़ा भाई सोमदेव राजा हुआ। विल्हण लिखता है कि सोमदेव बड़ा मदोन्मत्त हो गया था और इन्दुमित्त नामक एक बुरा राजा उस को सहायता को मिल गया, इस से विक्रम ने इस का संग छोड़ा। इसी को चालुक्य कहते हैं। दिया और कोकण का राजा जयकेश इस से मिलकर दक्षिण में बहुत से देश जीते और अपना अपना अलग राज स्थापन किया। उस समय इस का छोटा भाई जयसिंह भी इस के साथ था। द्रविड़ देश के राजा ने अपनी कन्या देकर इससे मैत्री की और जब वह राजा मर गया तो विक्रम ने उस के बेटे अर्थात् अपने साले को बड़े धूमधाम से गद्दी पर बैठाया। और फिर गांगकुंडपुर होता हुआ तुंगभद्रा के किनारे आकर रहा। जब बँगों के राजा राजिक ने इस के साले को जीत लिया था तब यह बड़ी धूमधाम से उस से लड़ने को गया था। कहते हैं कि राजिक इस के बड़े भाई सोमदेव का मित्र था, इस से राजिक की ओर से सोमदेव भी लड़ने को आया था। यह लड़ाई बड़ी तैयारी से हुई और सोमदेव अन्त में पकड़ा गया। राजिक भागा और विक्रमादित्य अपने बाप की गद्दी पर बैठा। काहाट के राजा को कन्या ने स्वयम्बर किया था, जिस में विक्रमादित्य भो गया था। विल्हण ने यहां पर राजाओं के स्वाभाविक अभिमान और काम की चेष्टा के वर्णन में बहुत ही अच्छी स्वभावोक्ति दिखाई है और 'पारसीक तैल' से आतशबाज़ी के भांति की किसी वस्तु का वर्णन किया

है। स्वयम्वर में विल्हण ने नीचे लिखे हुए राजाओं का वर्णन किया है, जिस से प्रगट होता है कि इतने राज उस समय अलग २ वर्त्तमान और अच्छी दशा में थे, यथा अयोध्या, चन्देरी, कान्य-कुब्ज। (अर्जुन के कुल का राजा) चम्बल के तट का देश, कालिंजर, गोपाचल, मालव, गुजरात, मन्दराचल के समीप का पांड्यदेश और चोल। कन्या ने जयमाल विक्रमादित्य के गले में डाली और बड़ी धूमधाम से इस का विवाह हुआ।

इस राजा के बहुत से ऐश्वर्य्य और विहार वर्णन के पीछे विल्हण लिखता है कि एक दिन विक्रम ने दूत के मुख से सुना कि उस का छोटा भाई बागी हो गया है और चेंगों जीतने के पीछे विक्रम ने जो उसे देश और सैना दी थी उस पर सन्तोष न करके बहुत से सिपाही नौकर रख के सारे दक्षिण में लूट मार करता फिरता है और द्रविड़ के राजा [शायद विक्रम का साला] ने उसे बहुत ही बहकाया है और छोटे २ बहुत से उपद्रवी राजा उससे मिल गए हैं। यह सुन कर बहुत पछताया और सेना लेकर बाहर निकला। जब भाई की सैना के पास इस का डेरा पहुंचा, तो इस ने दूतों के और पत्रों के द्वारा उस को बहुत समझाया, पर वह न माना और अन्त में विक्रम से हारकर कहीं दूर जा रहा। विक्रम फिर सुख से राज्य करने लगा। एक बेर कांची पर फिर चढ़ा था, क्योंकि वहां का राजा इससे फिर गया था। कवि ने विक्रम के स्वाभाविक बहुत से गुण लिखे हैं, जिन में उदारता का बहुत ही सविशेष वर्णन है। इस ने ५१ वर्ष राज्य किया था।

ऊपर के लिखे अनुसार लोगों को विक्रम का जीवनवृत्त विदित होगा। कवि ने उस में जो जो सद्गुण लिखे हैं वह उस में रहे हों, पर अपने दो भाइयों को उस ने जीता और बड़े भाई को क़ैद करके आप गद्दी पर बैठा, इस से उस के चरित्र में हम को थोड़ा सन्देह होता है। क्योंकि जब उस के बड़े भाई के जीतने का कवि वर्णन करेगा, तो उस दोष के छिपाने के वास्ते उस के भाई को बुरा लिखै इस मे क्या सन्देह है। जो कुछ हो, विक्रम एक बड़ा राजा और गुणग्राही मनुष्य हो गया है और यह पंडितो के आदर ही का फल है कि उस का सपूर्ण वर्णन आज हम पाठकों को सुनाते हैं।

—.o◌o:—

कालिदास का जीवनचरित्र।

यह सब वार्ता केवल वंगदेशियों की है। पश्चिम प्रदेशीय पंडित लोग भारतवर्षीय कवियों में कालिदास को सर्वोच्चासन देते हैं। बम्बई के प्रसिद्ध पंडित भाऊदाजी ने केवल कालिदास की कविता ही नही पढ़ी वरन बहुत परिश्रम करके प्राचीन संस्कृत ग्रन्थ और ताम्रपत्रों से उन का जीवनवृत्तान्त संग्रह की। हम ने भी उन के ग्रन्थ से कई एक बातें ग्रहण किया है।

कालिदास विख्यात महाराजा विक्रम के नवरत्नो मे थे। इस के * व्यतिरिक्त उन के जीवन की और कोई प्रमाणिक बात लोग

---

* राजा लक्ष्मण सिंह रघुवश के उल्था में यों लिखते हैं:—"कालिदास नाम के कई हुए हैं। उन में दो मुख्य गिने जाते हैं—एक वह जो राजा बीर विक्रमार्जीत

नही जानते। बंगदेश के कई अभिमानी पंडितों ने कालिदास को लंपट ठहरा कर उन के नाम से हास्यरस की कविताओं का प्रचार किया। पाठशाला के युवा ब्राह्मण थोड़ा सा मुग्धबोध व्याकरण पढ़ के इन श्लोकों का अभ्यास करके धनिक लोगों का मनोरंजन करते हैं और इसी प्रकार धनी लोगों से प्रति वर्ष कुछ पाते हैं। यथार्थ में तो यह सब कविता कालिदास की नही है,परन्तु नवीन कवियों की बनाई हुई है। " प्रफुल्लित ज्ञान नेत्र " नामक पद्यमय पुस्तक बंगभाषा में मुद्रित हुई है। इस ग्रन्थ में लोगों ने मिथ्या कल्पना करके कालिदास में ऊपर लिखा हुआ दोष ठहराया है। इसी प्रकार से इन दिनों अंगरेजी भूमिका सहित एक रघुवंश की सटीक पोथी मुद्रित हुई है। इस में भी लोगों ने मिथ्या कल्पना किया है। कालिदास ने कोई भी ग्रन्थमें अपना वृत्तान्त कुछ भी नही लिखा है, केवल इतनाही प्रगट किया है।

धन्वन्तरिःक्षपणकोमरसिंहशंकुःवेतालभट्टघटखर्परकालिदासाः।
ख्यातोवराहमिहिरोनृपतेःसभायांरत्नानिवैवररुचिर्नवविक्रमस्य॥

केवल इतनाही परिचय नवरत्नों का लिखा है। अभिज्ञान शकुंतल ग्रन्थकर्ता इतनेही परिचय से सन्तुष्ट न रह के और २ संस्कृत ग्रन्थों से इस विषय का अनुसंधान करना उचित है। प्रायः

की सभा के नौरत्नों मे था,दूसरा जो राजा भोज के समय में हुआ। इन में भी पण्डित लोग पहले को दूसरे से श्रेष्ठ मानते हैं और उसी के रचे हुए रघुवंश, कुमारसम्भव, मेघदूत, ऋतुसंहार इत्यादि काव्य और शाकुन्तल नाटक विक्रमोर्वसी त्रोटक और और अच्छे अच्छे ग्रन्थ समझे गए हैं।

५०० वर्ष हुए कि कोलाचल मल्लिनाथ सूरि ने कालिदास' कृत काव्यों की टीका की है। उन्हीं ने यह टीका दक्षिणावरनाथ को टीका देख कर बनाई। परन्तु वह अब दुष्प्राप्य है। भाषातत्ववित् लासेन साहब ने यह लिखा है कि कालिदास ईस्वी दो सवत् में समुद्र गुप्त की सभा में वर्त्तमान थे। लासेस ने एक पत्थर देखा था, जिस पर यह लिखा था कि " समुद्र गुप्त कवि बंधु काव्य प्रिय " और इसी से वह अनुमान करते हैं कि कविश्रेष्ठ कालिदास उन के सभासद थे। वेन्टली ने एशियाटिक नामक पत्रिका में भोज प्रबंध का फारसीसी अनुवाद और " आईने अकबरी " को देख कर लिखा है कि भोज राजा के राज्य के ८०० वर्ष पश्चात् विक्रमादित्य के सभा में कालीदास वर्त्तमान थे, परन्तु यह बात कदापि नहीं हो सकती। बेल्ट्री ने स्वीय ग्रन्थों में कई एक ऐसी अशुद्ध बातें लिखी हैं जिन के पढ़ने से बोध होता है कि वह हिन्दुओं का इतिहास कुछ भी नहीं जानते।

कर्नेल उइलफोर्ड, प्रिन्सेप और एलफिनस्टन ने लिखा है कि कालिदास प्राय १४०० वर्ष पूर्व वर्त्तमान थे।

भोज प्रबंध के प्रमाणानुसार गुजरात, मालव और दक्षिण के पंडित कहते हैं कि कालिदास सन् ११०० ईस्वी में भोजराजा के सभासद थे। उज्जैन के राजसिंहासन पर कई विक्रमादित्य और भोजराज नामक राजा बैठे, परन्तु सब से अंत के भोज राजा तो संवत् ११०० ईस्वी में राज्य करते थे। और इस से बोध होता है कि अंत के विक्रम ही को भोजराज कहते हैं और उन्ही की नवरत्न की सभा थी। हम स्वयं "भोजप्रबंध" पाठ कर के देखा है कि उस में

यह लिखा है कि मालव देशांतर्गत धारानगराधिप भोज सिन्धुल के पुत्र और मुंजर के भ्रातृपुत्र थे। भोज के बाल्यावस्था में उन के पिता का परलोक हुआ तो उन के पितृव्य मुंज राजपद पर अभिषिक्त हुए और भोज ने उन के मंत्री बन कर बहुत विद्या उपार्जन किया और इसी प्रकार भोज दिन प्रति दिन विख्यात होने लगे। तो मुंज के मन में यह शंका हुई कि अब लोग हम को पदच्युत करेंगे और यह विचार करने लगे कि किसी प्रकार से भोज का प्राणनाश करूं। इसी हेतु मुंज ने वत्सराज राजा को बुला कर अपना दुष्ट विचार प्रकाशित किया और कहा कि भोज को शीघ्र ही आरण्य में लेजा कर इस का प्राणनाश करो। परन्तु इस राजा ने भोज को तो छिपा रक्खा और पशु के रक्त से भरे हुए खड्ग को राजा मुंज के पास भेज दिया। इस को देखकर उन्हों ने सानन्द चित्त से पूछा कि भोज ने मानव लीला समाप्त किया? यह सुन वत्स राजा ने एक पत्र पर लिख दिया कि—"मान्धाता जो भोज क्या एक समय नृप कुल का शिरोमणि था अब परलोक में है। रावणारि रामचन्द्र जिन्हों ने समुद्र में सेतु बांधा था वह कहां है? और बहुत से महोदय गण और राजा युधिष्ठिर ने स्वर्गारोहण किया है, परन्तु पृथ्वी उन के साथ नही गई। पर आप के साथ पृथ्वी अवश्य रसातल को जायगी।" इस पत्र के पढ़ते ही मुंजर का शरीर रोमांचित हुआ और भोज के लिये अत्यन्त व्याकुल हुए। परन्तु जब उन्हों ने सुना कि भोज जीता है, तो उन को वत्सराज से शीघ्र बुलवा कर धारानगर के राजसिंहासन पर बैठाया और आप ईश्वराराधन के निमित्त आरण्य में प्रवेश किया। भोज ने पितृसिंहा-

सन पा के बहुत से पंडितों को अपनी सभा में बुलाया। हम को भोजप्रबंध में कालिदास के सहित नीचे लिखे हुए पंडितों के नाम मिले हैं :—

कर्पूर, कलिंग, कामदेव, कोकिल, श्रीदचन्द्र, गोपालदेव, जयदेव, तारेचन्द्र, दामोदर, सोमनाथ, धनपाल, बाण, भवभूति, भास्कर, मयूर, मल्लिनाथ, महेश्वर, माघ, मुचकुन्द, रामचन्द्र, रामेश्वर, भल्लु, हरिवंश, विद्याविनोद, विश्ववसु, विष्णुकवि, शंकर, सामदेव, शुक, सीता, सोम, सुबंधु इत्यादि।

सीता अवश्य किसी स्त्री का नाम है और इसी से बोध होता है कि स्त्रीशिक्षा उस समय प्रचलित थी। तो हम नहीं समझते कि हमलोगों के स्वदेशीय अब इस को क्यों बुरा समझ के अपने देश की उन्नति नहीं होने देते। देखिये, अमेरिका में स्त्रीशिक्षा कैसी प्रचलित है और जो लोग एक समय अत्यन्त मूर्ख अवस्था में थे अब यूरप के लोगों को भी दबा लिया चाहते हैं तो यह देख कर हे हिन्दुस्तानियो! क्या तुम को थोड़ी भी लज्जा नहीं आती!

पण्डित शेषगिरि शास्त्री ने लिखा है कि वल्लालसेन ने १२० ईस्वी में भोजप्रबन्ध बनाया। इस से बोध होता है कि वे भोजराज के विद्योत्साही और उन के सन्मान के वृद्धि के हेतु कालिदास भवभूति इत्यादि कवियों को केवल अनुमान ही से भोजराज का सभासद ठहराया है। भोजचरित में इन सब कवियों के नाम मिलते हैं इस लिये भोज प्रबन्ध को कैसे प्रमाणिक ग्रन्थ कहें! इसी भोजराज ने चम्पू रामायण, सरस्वती कण्ठाभरण, अमरटीका राजवार्तिक पातंजलिटीका और चारुचार्य इत्यादि बहुत से ग्रन्थ

बनाये हैं, परन्तु कालिदास भवभूति आदि कवियों के नाम इन में से एक भी ग्रन्थ में नहीं लिखे हैं। विस्वगुणादर्शक ग्रन्थकार वेदान्ताचार्य कालिदास श्रीहर्ष और भवभूति एक समय भोजराज के सभा में वर्तमान थे, जैसा लिखा भी है।

माघश्चोरो मयूरो मुररिपुरेपरो भारविः सारविद्यः ।
श्री हर्षःकालिदासः कविरथ भवभूत्यादयो भोजराजः ॥

इस में वे भी भोजप्रबन्धप्रणेता बल्लाल के न्याय महाभ्रम में पतित हुए हैं, क्योंकि श्रीहर्ष कालिदास और भवभूति एक काल में वर्तमान नही थे। इस विषय में बहुत से प्रमाण भी हैं।

भारतवर्ष के बहुत से राजाओं का नाम विक्रमादित्य था। उज्जयिनी के अधीश्वर विक्रमादित्य जो ५७ खी० पू० में राज्य करते थे और जिन्हों ने 'सवत्' स्थापन किया है तो अब हम लोगों को देखना चाहिये कि कालिदास इस विक्रम की सभा में उपस्थित थे वा नहीं। हम्बोलट लिखते हैं कि कविवर होरेस और वर्जिल-कालिदास के समकालि थे। इस बात को बहुत से यूरोपीय पण्डितों ने स्वीकार किया है। कर्नैल टाड ने अपने राजस्थान के इतिहास में लिखा है कि "जब तक हिन्दू साहित्य वर्तमान रहेगा तब तक लोग भोजप्रमर और उन के नवरत्नों को न भूलेंगे"। परन्तु यह ठहराना बहुत कठिन है कि वह गुण पण्डित तीन भोजराजों में से किस भोजराज की नवरत्न की सभा थी। कर्नैल टाड ने यह निरूपण किया है—प्रथम भोजराज संवत् ६३१ में, द्वितीय ७२१ और तृतीय भोजराज संवत ११०० में वर्तमान थे। " सिंहासनबत्तीसी " "वेताल-

पच्चीसी'' और "विक्रमचरित्र" आदि ग्रन्थों में महाराज विक्रमादित्य की वहुत सी अलौकिक कथा भरी हुई है, इसी कारण इन में कोई सत्य इतिहास नहीं मिल सकता। मेरुतुंग कृत " प्रवंध चिन्तामणि " और राजशेखरकृत " चतुर्विंशति प्रवंध " में लिखा है कि महाराजा विक्रमादित्य अति शूर वीर और महावल पराक्रान्त नृपति थे। परन्तु उन में नवरत्न और कालिदास आदि कवियों का कुछ भी वृत्तान्त नहीं लिखा है।

जैन ग्रन्थों में लिखा है कि सिद्धसेन नामक जैनपुरोहित विक्रमादित्य के उपदेष्टा थे। परन्तु हम नही कह सकते कि यह वात कहां तक शुद्ध है और एक जैन लेखक कहते हैं कि ७२३ संवत् में भोजराज के राज्य में वहुत से लोग उज्जयिनी नगर में जा वसे थे। यह और वृद्ध भोज दोनो जेनमतावलंवी थे। ये सव वृत्तान्त जेन ग्रन्थों से ज्ञात होते हैं। और २ संस्कृत ग्रन्थों में ये सव प्रमाण नही मिलते। वृद्धभोज मनांतुग सूरि के शिष्य थे। मनांतुग और वाण, मयूर भट्ट के समकालिक जैनाचार्य्य थे। वाणकृत हर्पचरित पढ़ने से ज्ञात होता है कि उन्हों ने सन् ७०० ईस्वी मे श्रीकंठाधिपति हर्पवर्द्धन के साथ भेट किया था। यही कान्यकुब्जाधिपति हर्पवर्द्धन शिलादित्य थे और इन्ही की सभा में हियांग नामक चैनिक परिव्राजक वुलाए गए थे। वाण कवि ने हियांगसियांग के ग्रन्थ को पाठ करके अपना ग्रन्थ वनाया। हर्पवर्द्धन के साथ चेनिकाचार्य्य के भेट का वृत्तान्त हर्पचरित्र में "यवन प्रोक्त पुराण" नामक ग्रन्थ से लिया गया है।

महर्षि कन्व ने अपने " कथा सरित्सागर " के १८ वें अध्याय में नरवाहन दत्त को विक्रमादित्य का उपन्यास कहा है। उस में लिखा है कि विक्रमादित्य सन् ५०० ईस्वी में उज्जयिनी में राज्य करते थे। नरवाहन दत्त, जैन ग्रन्थ, कथा सरितसागर और मत्स्य-पुराण के मतानुसार शतानिक के पौत्र थे। नासिक में एक पत्थर की चट्टान मिली है जिस पर विक्रमादित्य का नाम लिखा है और उन को नभाग, नहुष, जन्मेजय, ययाति और वलराम के नाईं योद्धा वर्णन किया है। पाठक जनों को देखना उचित है कि एक विक्रमादित्य के इतिहास में कितनी गड़बड़ है। लोगों में जो केवल एक ही विक्रमादित्य प्रसिद्ध हैं, इस समय के भारतवर्षीय इतिहासो में कई एक विक्रमादित्यों के नाम मिले हैं। परन्तु हम को उस विक्रमादित्य का इतिहास ज्ञात होना आवश्यक है जिस से हम लोगों का सन्देह दूर हो और यह जान पड़े कि नवरत्नों के अमूल्य-रत्न कवि चक्रचूड़ामणि कालिदास का विक्रमादित्य से कुछ सम्बन्ध है वा नहीं।

श्री देवकृत विक्रमचरित में लिखा है कि विक्रमादित्य तीर्थंगकर वर्द्धमान के नाश होने के ४७० वर्ष परे उज्जयिनी में राज्य करते थे और इन्हों ने ही सवत् स्थापन किया है, परन्तु इस ग्रन्थ में कालिदास का नाम भी नहीं लिखा है।

पडित तारनाथ तर्कवाचस्पति कहते हैं कि महा कवि कालिदास ने ' रघुवंश ', 'कुमारसम्भव' और 'मेघदूत' बनाने के अनन्तर ३०६८ कलिगताब्द में " ज्योतिर्विदाभरण " नामक काल ज्ञान शास्त्र बनाया। मेघदूतप्रकाशक वाबू प्रान नाथ पंडित महाशय

ने भी इस बात को अपनी भूमिका में लिखा है, परन्तु यह किसी का ग्रन्थ नहीं दृष्टि पड़ता कि 'ज्योतिर्विदाभरण' रघुकार कालिदास रचित है। तर्कवाचस्पति महाशय के मत को सहायता देने के निमित्त "ज्योतिर्विदाभरण" के कतिपय श्लोकों का अनुवाद करके हम नीचे लिखते हैं, जैसा कालिदास ने लिखा।

मैं ने इस प्रफुल्लकर ग्रन्थ को भारतवर्षान्तर्गत मालव देश में (जिस में १८० नगर हैं) राजा विक्रमादित्य के राज्य के समय रचा है ॥ ७ ॥

शंकु, वररुचि, मणि, अंशुदत्त, जिष्णु, त्रिलोचन हरि, घटकर्पर, अमर सिंह और २ बहुत से कवियों ने उन के सभा को सुशोभित किया था ॥ ८ ॥

सत्य, वराहमिहिर, श्रुतिसेन, श्रीवादरायणी, मनित्थ, कुमार सिंह और कई एक महाशय ज्योतिशास्त्र के अध्यापक थे ॥ ९ ॥

धन्वन्तरि, क्षपणक, अमर सिंह, शंकु, वैतालभट्ट, घटकर्पर, कालिदास और वराहमिहिर और वररुचि, ये सब महाशय विक्रम नवरत्न थे ॥ १० ॥

विक्रम की सभा में ८०० छोटे २ राजा और उन के महा सभा में १६ वाग्मी, १० ज्योतिषी, ६ वैद्य और १६ वेद-पारग पंडित उपस्थित रहते थे ॥ ११ ॥

कोई कहते हैं कि यह कवि, मालवा के राजा हर्ष विक्रमादित्य के समय, हज़रत ईसा की छठवीं सदी में था। उस राजा की राजधानी उज्जैन नगरी थी। इसी कारण कालिदास भी वहां रहा था।

विक्रम की सभा में ९ रत्न थे, उन में से एक कालिदास था।

कहते हैं कि लड़कपन में इस ने कुछ भी नहीं पढ़ा लिखा, केवल एक स्त्री के कारण इसे यह अनमोल विद्या का धन हाथ लगा। इस की कथा यों प्रसिद्ध है, कि राजा शारदानन्द की लड़की विद्योत्तमा बड़ी पंडिता थी। उस ने यह प्रतिज्ञा की, कि जो मुझे शास्त्रार्थ में जीतेगा, उसी को ब्याहूंगी। उस राजकुमारी के रूप, यौवन विद्या की प्रशंसा सुनकर दूर २ से पंडित आते थे। पर शास्त्रार्थ के समय उस से सब हार जाते थे। जब पंडितों ने देखा, कि यह लड़की किसी तरह वश में नहीं आती और सब को हरा देती है, तो मन में अत्यन्त लज्जित होकर सब ने पक्का किया, कि किसी ढब विद्योत्तमा का विवाह किसी ऐसे मूर्ख के साथ करावें, जिस में वह जन्म भर अपने घमंड पर पछताती रहे। निदान वे लोग मूर्ख के खोज में निकले। जाते २ देखा, कि एक आदमी पेड़ के ऊपर जिस टहनी के ऊपर बैठा है, उसी को जड़ से काट रहा है। पंडितों ने उसे महा मूर्ख समझ कर बड़ी आव भगत से नीचे बुलाया और कहा, कि चलो हम तुम्हारा ब्याह राजा की लड़की से करा देवें। पर खबरदार राजा की सभा में मुंह से कुछ भी बात न कहो, जो बात करनी हो इशारों से कहियो। निदान जब वह राजा की सभा में पहुंचा, जितने पंडित वहां बैठे थे, सब ने उठकर उस की पूजा की, ऊंची जगह बैठने को दी और विद्योत्तमा से यों निवेदन किया कि ये बृहस्पति के समान विद्वान हमारे गुरु, आप के ब्याहने को आये हैं। परन्तु इन्हों ने तप के लिये मौन साधन किया है। जो कुछ आप को शास्त्रार्थ करना हो, इशारों से कीजिए। निदान उस राजकुमारी ने इस आशय से, कि ईश्वर एक है, एक उंगली

ने भी इस बात को अपनी भूमिका में लिखा है, परन्तु यह किसी का ग्रन्थ नहीं दृष्टि पड़ता कि 'ज्योतिर्विदाभरण' रघुकार कालिदास रचित है। तर्कवाचस्पति महाशय के मत को सहायता देने के निमित्त "ज्योतिर्विदाभरण" के कतिपय श्लोकों का अनुवाद करके हम नीचे लिखते हैं, जैसा कालिदास ने लिखा।

मैं ने इस प्रफुल्लकर ग्रन्थ को भारतवर्षान्तर्गत मालव देश में (जिस में १८० नगर हैं) राजा विक्रमादित्य के राज्य के समय रचा है ॥ ७ ॥

शंकु, वररुचि, मणि, अंशुदत्त, जिष्णु, त्रिलोचन हरि, घटकर्पर, अमर सिंह और २ बहुत से कवियों ने उन के सभा को सुशोभित किया था ॥ ८ ॥

सत्य, वराहमिहिर, श्रुतिसेन, श्रीबादरायणी, मनित्थ, कुमार सिंह और कई एक महाशय ज्योतिशास्त्र के अध्यापक थे ॥ ९ ॥

धन्वन्तरि, क्षपणक, अमर सिंह, शंकु, वैतालभट्ट, घटकर्पर, कालिदास और वराहमिहिर और वररुचि, ये सब महाशय विक्रम नवरत्न थे ॥ १० ॥

विक्रम की सभा में ८०० छोटे २ राजा और उन के महा सभा में १६ वाग्मी, १० ज्योतिषी, ६ वैद्य और १६ वेद-पारग पंडित उपस्थित रहते थे ॥ ११ ॥

कोई कहते हैं कि यह कवि, मालवा के राजा हर्ष विक्रमादित्य के समय, हज़रत ईसा की छठवीं सदी में था। उस राजा की राजधानी उज्जैन नगरी थी। इसी कारण कालिदास भी वहां रहा था।

१० विक्रम की सभा में ९ रत्न थे, उन में से एक कालिदास था।

कहते हैं कि लड़कपन में इस ने कुछ भी नहीं पढ़ा लिखा, केवल एक स्त्री के कारण इसे यह अनमोल विद्या का धन हाथ लगा। इस की कथा यों प्रसिद्ध है, कि राजा शारदानन्द की लड़की विद्योत्तमा बड़ी पंडिता थी। उस ने यह प्रतिज्ञा की, कि जो मुझे शास्त्रार्थ में जीतेगा, उसी को व्याहूंगी। उस राजकुमारी के रूप, यौवन विद्या की प्रशंसा सुनकर दूर २ से पंडित आते थे। पर शास्त्रार्थ के समय उस से सब हार जाते थे। जब पंडितों ने देखा, कि यह लड़की किसी तरह वश में नहीं आती और सब को हरा देती है, तो मन में अत्यन्त लज्जित होकर सब ने पक्का किया, कि किसी ढब विद्योत्तमा का विवाह किसी ऐसे मूर्ख के साथ करावें, जिस में वह जन्म भर अपने घमंड पर पछताती रहे। निदान वे लोग मूर्ख के खोज में निकले। जाते २ देखा, कि एक आदमी पेड़ के ऊपर जिस टहनी के ऊपर बैठा है, उसी को जड़ से काट रहा है। पंडितों ने उसे महा मूर्ख समझ कर बड़ी आव भगत से नीचे बुलाया और कहा, कि चलो हम तुम्हारा व्याह राजा की लड़की से करा देवें। पर खबरदार राजा की सभा में मुंह से कुछ भी बात न कहो, जो बात करनी हो इशारों से कहियो। निदान जब वह राजा की सभा में पहुंचा, जितने पंडित वहां बैठे थे, सब ने उठकर उस की पूजा की, ऊंची जगह बैठने को दी और विद्योत्तमा से यों निवेदन किया कि ये बृहस्पति के समान विद्वान हमारे गुरु, आप के व्याहने को आये हैं। परन्तु इन्हों ने तप के लिये मौन साधन किया है। जो कुछ आप को शास्त्रार्थ करना हो, इशारों से कीजिए। निदान उस राजकुमारी ने इस आशय से, कि ईश्वर एक है, एक उंगली

उठाई। मूर्ख ने यह समझकर कि धमकाने के लिये उंगली दिखा कर एक आंख फोड़ देने का इशारा करती है, अपनी दो उंगलियां दिखलाईं। पंडितों ने उन दो उंगलियों के ऐसे अर्थ निकाले, कि उस राजकुमारी को हार माननी पड़ी और विवाह भी उसी दम हो गया। रात के समय जब दोनों का एकान्त हुआ, किसी तरफ से एक ऊंट चिल्ला उठा। राजकन्या ने पूछा, कि यह क्या शोर है, मूर्ख तो कोई भी शब्द शुद्ध नहीं बोल सकता था, कह उठा उद्र चिल्लाता है। और जब राजकुमारी ने दुहराकर पूछा, तो उद्र की जगह उस्ट कहने लगा, पर शुद्ध उष्ट्र का उच्चारण न कर सका। तब तो विद्योत्तमा को पंडितों की दगाबाज़ी मालूम हुई और अपने धोखा खाने पर पछताकर फूट २ कर रोने लगी। वह मूर्ख भी अपने मन में बड़ा लज्जित हुआ, पहिले तो चाहा, कि जान ही दे डालूं पर सोच समझ कर घर से निकल विद्या उपार्जन में परिश्रम करने लगा। और थोड़े ही दिनों मे ऐसा पंडित हो गया, जिस का नाम आज तक चला जाता है। जब वह मूर्ख पंडित होकर घर में आया, तो जैसा आनन्द विद्योत्तमा के मन को हुआ, लिखने से बाहर है। सच है, परिश्रम से सब कुछ हो सकता है।

कालिदास के समय घटखर्पर, वररुचिआदि और भी कवि थे। कालिदास ने काव्य नाटकादि अनेक ग्रन्थ संस्कृत-भाषा में लिखे हैं। इन की काव्य-रचना बहुत सादी, मधुर और विषयानुसारिणी है। अंगरेज़ लोग कालिदास को अपने शेक्सपियर के सदृश उपमा देते हैं। इस के समय में भवभूति नामक एक कवि था। कहते हैं कि उस की विद्या कालिदास से अधिक थी। परन्तु कवित्वशक्ति

कालिदास की सी न थी। भवभूति कालिदास के श्रेष्ठत्व को मानता था।

कालिदास सारस्वत ब्राह्मण था। उस को आखेट आदि खेलों की बड़ी चाह थी, और उस ने अपने ग्रन्थ में इस का वर्णन किया है, कि मनुष्य के शरीर पर ऐसे खेलों से क्या २ उपकारी परिणाम होते हैं।

विक्रमादित्य ने उस को कश्मीर का राजा बनाया और यह राज्य उस ने चार बरस ६ महीने किया।

कालिदास उज्जेन में रहता था, परन्तु उस की जन्मभूमि कश्मीर थी। देशांतर होने पर स्त्री के वियोग से जो २ दुःख उस ने पाये, उन का बखान मेघदूत-काव्य में लिखा है। कालिदास बड़ा चतुर पुरुष था। उस की चतुराई की बहुत सी कहानियां हैं, और वे सब मनोरंजन हैं, यथा उन में से कई एक ये हैं।

(१) भोजराजा को कवित्व पर बड़ी प्रीति थी। जो कोई नया कवि उस के पास आता और कविताचातुर्य बताता, तो उस को वह अच्छा पारितोषिक देता, और चाहता तो अपनी सभा में भी रखता। इस प्रकार से यह कविमण्डल बहुत बढ़ गया। उस में कई कवि तो ऐसे थे कि, वे एक वार कोई नया श्लोक सुन लेते, तो उसे कण्ठ कर सकते थे। जब कोई मनुष्य राजा के पास आ कर नया श्लोक सुनाता था, तो कहने लगते थे, कि यह तो हमारा पहिले ही से जाना हुआ है और तुरन्त पढ़ कर सुना देते थे।

एक दिन कालिदास के पास एक कवि ने आकर कहा, कि महाराज, आप यदि राजा के पास ले चलें और कुछ धन दिला देवें, तो मुझ पर आप का बड़ा उपकार होगा। जो मैं कोई नया श्लोक बना कर राजसभा में सुनाऊं, तो उस का नूतनत्व मान्य होना कठिन है इस लिये कोई युक्ति बताइए।

कालिदास ने कहा कि तुम श्लोक में ऐसा कहो, कि राजा से मुझ को रत्नों का हार लेना है, और जो कुछ मैं कहता हूं, सो यहां के कई पंडितो को भी मालूम होगा। इस पर यदि पंडित लोग कहें कि यह श्लोक पुराना है, तो तुम को रत्नो का हार मिल जायगा, नहीं नए श्लोक का अच्छा पारितोषिक मिलेगा।

उस कवि ने कालिदास की बताई हुई युक्ति को मानकर वैसा ही श्लोक बनाया और जब उस को राजसभा में पढ़ा, तो कवि-मंडल चुपचाप हो रहा और उस कवि को बहुत सा धन मिला।

(२) एक समय कालिदास के पास एक मूढ ब्राह्मण आया और कहने लगा, कि कविराज मैं अति दरिद्री हूं और मुझ में कुछ गुण भी नही है, मुझ पर आप कुछ उपकार करें तो भला होगा।

कालिदास ने कहा, अच्छा हम एक दिन तुम को राजा के पास ले चलेंगे, आगे तुम्हारा प्रारब्ध। परन्तु रीति है कि जब राजा के दर्शन निमित्त जाते हैं, तो कुछ भेंट ले जाया करते हैं *-

---

* राजा कन्या ज्योतिषी, वैद गुरुतुर सिद्ध।
भरे हाथ इन पै गए, होय काय सब सिद्ध॥

इस लिये मैं जो ये सांटे के चार टुकड़े देता हूं सो ले चलो। ब्राह्मण घर लौटा और उन सांटे के टुकड़ों को उस ने धोती में लपेट रक्खा। यह देख किसी ठग ने उस के बिन जाने उन टुकड़ों को निकाल लिया और उन के बदले लकड़ी के उतने ही टुकड़े बांध दिए।

राजा के दर्शनों को चलने के समय ब्राह्मण ने सांटे के टुकड़ों को नहीं देखा। जब सभा में पहुंचा तब यह काष्ट की भेंट राजा को अर्पण की। राजा उस को देखते ही बहुत क्रोधित हुआ। उस समय कालिदास पास ही था। उस ने कहा, महाराज, इस ब्राह्मण ने अपनी दरिद्ररूपी लकड़ी आप के पास ला कर रक्खी है इस लिये कि उस को जला कर इस ब्राह्मण को आप सुखी करें! यह बात कवि के मुख से सुनते ही राजा बहुत प्रसन्न हुआ, और उस ब्राह्मण को बहुत धन दिया।

(२) एक समय राजाभोज कालिदास को साथ ले वनक्रीड़ा के हेतु अरण्य को गए, और घूमते २ थके मांदे हो, एक नदी के किनारे जा बैठे। इस नदी में पत्थर बहुत थे, उन पर पानी गिरने से बड़ा शब्द होता था। उस समय राजा ने कालिदास से विनोद करके पूछा, कि कविराज यह नदी क्यों रोती है? कालिदास ने उत्तर दिया कि महाराज वह छोटे ही पन में अपने मैके से ससुराल को जाती है।

कालिदास के प्रसिद्ध ग्रन्थ शकुन्तला, विक्रमोर्वशी, मालविकाग्निमित्र और मेघदूत हैं। शकुन्तला बहुत वर्णनीय ग्रन्थ है। उस का उलथा यूरप में सब देशों की भाषाओं में हो गया है।

एक समय कविवर कालिदास अपने मकान में बैठ कर अपने प्रिय पुत्र को अध्ययन कराता था, उसी समय क्षत्रिय-कुल-भूषण शकारि विक्रमादित्य संयोग से आ गए। कविवर कालिदास ने महाराज को देख प्रिय पुत्र का पढ़ाना छोड़ कर शिष्टाचार की रीति से महाराज का आदर मान किया। जब क्षत्रिय-कुल-भूषण राजा विक्रमादित्य ने पढ़ाने की प्रार्थना की तब फिर अध्ययन कराना प्रारम्भ किया। उस समय कविवर कालिदास अपने प्रिय पुत्र को यही पढ़ाता था कि राजा अपने देश ही में मान पाता है और विद्वान् का मान सब स्थानों में होता है। महाराज इस प्रकार की शिक्षा को सुनकर अपने मन में कुतर्क करने लगे कि कविराज कालिदास ऐसा अभिमानी पण्डित है कि मेरे ही सामने पण्डितों की बड़ाई करता है और राजाओं को वा धनवानों को वा मुझे नीचा देखता है। मैं पण्डितों का विशेष आदरमान करता हूं और जो मेरे वा राजाओं के वा धनवानों के यहां पण्डितों का आदर नहीं, तो कहां हो सकता है। ऐसा कुतर्क करते हुए अपने घर पर गए। महाराज विक्रमादित्य ने कविवर कालिदास को जो धन सम्पति दी थी उस को हर लेने के लिये मन्त्री को आज्ञा दी। मन्त्री ने वैसा ही किया जैसा महाराज ने कहा था। कविवर कालिदास की जीविका जब हर ली गई तब दुःखी होकर अपने बाल बच्चों के साथ अनेक देशों में भटकता अन्त में करनाटक देश में पहुंचा। करनाटक देशाधिपति बड़ा पण्डित और गुणग्राहक था। उस के पास जाकर कविवर कालिदास ने अपनी कविताशक्ति देखाई, तो उस पर करनाटक देशाधिपति

ने अति प्रसन्न हो कर बहुत सा धन और भूमि दे कर उस को अपने राज्य में रक्खा। कविवर कालिदास राजा से सन्मान पाकर उस देश में रह कर प्रति दिन राजसभा में जाने लगा। वहां राजा के सिंहासन के पास ऊंचे आसन पर बैठ सब राजकाजों मे उत्तम सलाह देने लगा। और अनेक प्रकार की कविताओं से सभासदों के मन की कली खिलाता हुआ सुख से रहने लगा। जब से कविवर कालिदास को विक्रमादित्य ने छोड़ा तब से वे बड़े शोक-सागर में डूबे थे। नवरत्नो मे कविवर कालिदास ही अनमोल रत्न था। इस के सिवाय जब राजा को राजकाज के कामों से फुरसत मिलती थी तब केवल कविराज कालिदास ही की अद्भुत कविताओं को सुन कर राजा का मन प्रफुल्लित होता था। इस लिये ऐसे गुणी मनुष्य के बिना राजा का सब वस्तुओं से मन उदास होने लगा। फिर राजा ने कविराज कालिदास का पता लगाने के लिये सब देशों में दूतों को भेजा। जब कही पता न लगा तब राजा आप ही भेष बदल कर खोजने के लिये निकले। कई देशों में घूमते फिरते जब करनाटक देश में गए, उस समय उन्हें पथव्यय के लिये एक हीरा जड़ी हुई अगूठी के छोड़ और कुछ नहीं था। उस अगूठी को बेंचने के लिए वे किसी जौहरी की दूकान पर गए। रत्न-पारखी ने ऐसे दरिद्र के हाथ में ऐसी अनमोल रत्न-जड़ित-अगूठी को देख कर मन में चोर समझा और कोतवाल के पास भेजा। कोतवाल राज-सभा में ले गया। वे चारो ओर देखते भालते जो आगे बढ़े तो कविवर कालिदास को देखा और कहा, महाराज मै ने जैसा किया वैसा ही फल पाया।

कविवर कालिदास उठ कर राजा को अंक में लगा कर करनाटक देशाधिपति से परिचय करा और सब व्योरा कह कर राजा वीर-विक्रमादित्य के साथ चला आया।

पर इन कथाओं से भी वही झंझट पाई जाती है और कविवर कालिदास का समय ठीक निश्चय होना कठिन है।

कोई कोई कहते हैं कि कविवर कालिदास की सहायता से एक ब्राह्मण ने राजाभोज से एक श्लोक पर अनेक रुपया इस चतुराई से लिया था।

उज्जैन नगरी में राजाभोज ऐसा विद्यारसिक और गुणज्ञ और दानशील था कि विद्या की वृद्धि के प्रयोजन से उस ने यह नियम प्रचलित किया था कि जो कोई नवीन आशय का श्लोक बना के लावे, तो उस को लाख रुपये दक्षिणा देवें। इस बात को सुन के देश देशांतर के पंडित लोग नये आशय के श्लोक बना के लाते थे, परन्तु उस की सभा में चार ऐसे पंडित थे कि एक को एक वार, दूसरे को दो वार, तीसरे को तीन वार और चौथे को चार वार सुनने से नया श्लोक कंठस्थ हो जाता था। सो जब कोई पर देशी पण्डित राजा की सभा में नवीन आशय का श्लोक बना के लाता तो वह राजा के सम्मुख पढ़के सुनाता था। उस समय राजा अपने पंडितों से पूछता था कि यह श्लोक नया है वा पुराना। तब वह मनुष्य जिस को कि एक वार के सुनने से कंठस्थ होने का अभ्यास था कहता कि यह पुराने आशय का श्लोक है और आप भी पढ़ के सुना देता था। इस के अनन्तर वह मनुष्य जिस को दो वार सुनने से कंठ हो जाता था पढ़ के सुनाता

और इसी प्रकार वह मनुष्य जिस को तीन वार और वह भी जिस को चार वार के सुनने से कंठस्थ होने का अभ्यास था। क्रम से सब राजा को कंठाग्र सुना देते। इस कारण परदेशी विद्वान अपने प्रयोजन से रहित हो जाते थे और इस बात की चर्चा देश देशांतर मे फैली। सो एक विद्वान ऐसा देश काल में चतुर और बुद्धिमान था कि उस के बनाये हुए आशय को इन चार मनुष्यों को भी अङ्गीकार करना पड़ा कि यह नवीन आशय है और वह श्लोक यही है।

श्लोक।

राजन् श्रीभोजराज त्रिभुवनविजयी धार्मिकस्ते पिताऽभूत।
पित्रा तेन गृहीता नवनवतिमिता रत्नकोटिर्मदीया॥
तां त्व देहि त्वदीयैः स्सकल बुध वरै ज्ञायते वृत मेत।
न्नोचेज्जानंतितेवैनवकृतमथ वा देहि लक्षं ततो मे॥ १॥

हे राजा भोज, तीनों लोक के जीतने वाले, तुम्हारे पिता बड़े धर्मिष्ट हुए हैं। उन्हों ने मुझ से निन्नानवे किरोड़ रत्न लिया है सो मुझे आप दीजिये और इस वृत्तांत को तुम्हारे सभासद् विद्वान् जानते होंगे उन से पूछ लीजिये। जो वह कहें कि यह आशय केवल नवीन कविता मात्र है, तो अपने प्रण के अनुसार एक लाख रुपया मुझे दीजिये। इस आशय को सुन कर चार विद्वानों ने विचारांश किया कि जो इस को पुराना आशय ठहरावें, तो महाराज को निन्नानवे किरोड़ द्रव्य देना पड़ता है और नवीन कहने में केवल एक लाख। सो उन चारों ने क्रम से यही कहा कि पृथ्वीनाथ, यह

नवीन आशय का श्लोक है। इस पर राजा ने उस विद्वान् को लाख रुपया दिया।

—:o—

श्री रामानुज स्वामी का जीवन चरित्र।

दक्षिण में पूर्व सागर के पश्चिम तट से बारह कोस दूर तोंडीर देश में भूतपुरी नामक नगरी है। वहां हारीत गोत्र के केशव नामक एक ब्राह्मण रहते थे। यह सन्तान-हीन होने के कारण बहुत दुखी रहा करते। एक बार चन्द्रग्रहण में पुत्रप्राप्ति के हेतु इन्हों ने यज्ञ भी किया था। कहते हैं स्वप्न में शेषजी ने दर्शन दे कर इन को आज्ञा किया कि हम तुम्हारे घर में अवतार लेंगे। तदनुसार श्री रामानुजाचार्य्य का केशव के घर चैत्र सुदी ५ को जन्म हुआ। लक्ष्मण आर्य्य और रामानुज यह दो नाम इन का रक्खा गया। सोलहवें बरस रक्षकाम्बा नामक एक स्त्री के साथ इन का विवाह हुआ। विवाह के पीछे केशव जी मर गए। तब रामानुज स्वामी विद्या पढ़ने को कांचीपुर गए और वहां यादव नामक प्रसिद्ध पंडित के पास विद्या पढ़ने लगे। जिन दिनों स्वामी वहां विद्या पढ़ते थे उन्हीं दिनों में कांचीपुर के राजा की कन्या को ब्रह्मपिशाच की बाधा हुई। रामानुज स्वामी ने अपना पैर छुला कर उस की पिशाचबाधा दूर कर दी। इस से प्रसन्न होकर राजा ने उन को बहुत सा द्रव्य दिया। उसी काल में स्वामी के मौसा गोविन्द नामक एक बड़े पंडित यादव पंडित से शास्त्रार्थ करने आए और रामानुज स्वामी का और इन का मत विषयक एक विश्वास होने

से दोनो में अत्यन्त प्रीति हुई। यादव पंडित जो वास्तव में मायावादी थे गोविन्द पंडित और स्वामी से वाद में वारम्बार पराभूत होने से इस कुविचार में फसे कि किसी भांति स्वामी के प्राण हरण किए चाहिए। इसी वास्ते प्रगट मे वहुत स्नेह दिखला कर स्वामी को साथ लेकर यात्रा के वहाने से प्रयाग की ओर चले। मार्ग मे गोंड़ा के जगल मे गोविन्द पण्डित ने स्वामी से यादव की सव कुप्रवृत्ति कह दिया। स्वामी भयभीत होकर जंगल में छिपे। वहां उस जंगल के देवता नारायण हस्त गिरिनाथ ने लक्ष्मी समेत व्याधमिथुन वन कर दर्शन दिया और अपनी रक्षा में उन को कांचीपुर ले आए।

इसी समय रंगपुर में यामुनार्य्य नामक एक त्रिदण्डी संन्यासी थे। उन को सर्वलक्षणसम्पन्न एक शिष्य करने की इच्छा हुई। उन्हों ने अपने चेलों को चारो ओर भेजा कि एक सर्वगुणसंयुक्त लड़का खोज लाओ। उन शिष्यों ने आचार्य्य से जा कर रामानुज स्वामी का कुल गुण विद्या आदि का वर्णन किया।

गोविन्द पण्डित इस समय कालहस्ति नगर में आ वसे और वहां एक शिव स्थापन कर के अध्यापन कराने लगे। यादव भी प्रयाग से कांची फिर आए और स्वामी का दैवी प्रभाव देख कर शिष्यों के द्वारा उन से मैत्री कर के रहने लगे।

यामुनाचार्य्य रामानुज स्वामी को देखने के हेतु कांचीपुर चले और मार्ग में हस्तिगिरि नारायण के दर्शन के हेतु और अपने शिष्य कांचीपूर्ण से मिलने को हस्तपुर में ठहरे। सयोग से रामानुज स्वामी आदि शिष्यों के साथ यादव पंडित भी हस्तिगिरि नाथ के

दर्शन को आए थे। वहां कांचीपूर्ण ने आचार्य्य से स्वामी का परिचय कराया और आचार्य्य इन को देख कर बहुत प्रसन्न हुए और कुछ दिन के पीछे सब लोग अपने २ नगर गए। एक दिन रामानुज स्वामी अपने गुरु यादव पंडित को तेल लगाते थे। उसी समय 'कप्यास्य' इस श्रुति का अर्थ यादव ने कुछ अशुद्ध किया, इस से स्वामी को बड़ा कष्ट हुआ और शास्त्रार्थ में स्वामी ने यादव को परास्त किया। इस से यादव ने क्रोधित होकर स्वामी को निकाल दिया। स्वामी वहां से हस्तिगिरि चले आए और कांचीपूर्ण के उपदेश से हस्तिगिरिनाथ वरदराज नारायण की सेवा करने लगे।

यह वृत्तान्त सुन कर यामुनाचार्य ने अपने शिष्य पूर्णाचार्य को अपने बनाए स्तोत्र देकर हस्तगिरि भेजा। एक दिन वरदराज स्वामी के सामने पूर्णाचार्य वह सब स्तोत्र पढ़ रहे थे कि रामानुज स्वामी ने सुन कर और उन की भक्तिपूर्ण रचना से प्रसन्न होकर पूर्णाचार्य्य से पूछा कि यह स्तोत्र किस के बनाए हैं। पूर्णाचार्य्य ने कहा कि यह सब स्तोत्र यामुनाचार्य के बनाए हैं और वे आप के दर्शन की बड़ी इच्छा रखते हैं। पूर्णाचार्य के उपदेश से रामानुज स्वामी यामुनाचार्य्य से मिलने रंगपुर चले और मार्ग में महापूर्णाचार्य से मिलाप हुआ। स्वामी का आना सुन कर यामुनाचार्य भी आगे से उन को लेने चले, किन्तु कावेरी के किनारे पहुंच कर शरीर छोड़ दिया। स्वामी भी शीघ्रता से वहां पहुंचे, तो देखा कि आचार्य्य ने शरीर छोड़ दिया है, परन्तु तीन अंगुली उठाए हुए हैं। स्वामी ने आचार्य्य का आशय समझ कर [अर्थात्

१ बौधायन मतानुसार ब्रह्मसूत्रादि का भाष्य बनाना, २ दिल्ली के तत्सामयिक बादशाह से श्रीराममूर्ति का उद्धार करना और ३ दिग्विजय पूर्वक विशिष्टाद्वैत मत का प्रचार] प्रतिज्ञा किया कि हम आप की इच्छा पूर्ण करेंगे, जो सुन कर सुखपूर्वक आचार्य्य वैकुण्ठ धाम गए और स्वामी भी कांची फिर आए। एक बेर कांचीपूर्ण के घर स्वामी भोजन करने गए थे, तब कांचीपूर्ण ने स्वमत विषयक उन को अनेक उपदेश किया और कहा कि आप रंगपुर जाकर पूर्णाचार्य्य से सब ग्रन्थ पढ़िए।

स्वामी उन के उपदेशानुसार रत्नपत्तन आए और विधिपूर्वक पंच संस्कार * दीक्षित होकर संस्कृत और द्राविड़ भाषा के ग्रन्थ सरहस्य पूर्णाचार्य्य से पढ़े। कुछ काल पीछे एक कुंए में से जल निकालते समय पूर्णाचार्य्य की स्त्री से और स्वामी की स्त्री से कुछ कलह हो गई, इस से स्वामी रक्षकाम्बा से उदास हो गए। एक यही नहीं, अनेक समय में रक्षकाम्बा के खरतर स्वभाव का परिचय मिलने से स्वामी का जी उस की ओर से खिंच गया था, इस से स्वामी ने उन को नैहर भेज दिया और आप भी सब धन गृह आदि का त्याग करके त्रिदण्ड संन्यास ग्रहण किया। कांचीपूर्ण ने इस पर अति प्रसन्न होकर 'यतिराज' को स्वामी की पदवी दिया।

कुछ दिन पीछे स्वामी के भांजे दाशरथि और अनन्तभट्ट के पुत्र कूरनाथ यह दोनों आकर कांची रहने लगे और स्वामी से विद्या

---

* दो०। ऊर्ध पुंड मुद्रा बहुरि, माला मंत्र विचार।
पंचकार ए वैष्णवो, धर्म कर्म को सार ॥ १ ॥

पढ़ने लगे। एक समय यादव पंडित कांची आए और शख चक्र से स्वामी का कलेवर चिन्हित देख कर बड़ा आक्षेप किया। इस पर स्वामी की इच्छा से कुरनाथ वे शास्त्रार्थ पूर्वक स्वमत स्थापन कर के यादव को निरुत्तर किया। यादव पंडित ने भी ज्ञान पाकर त्रिदंड ग्रहणपूर्वक गृहस्थाश्रम का परित्याग किया और दीक्षित होकर गोविन्ददास यह नाम पाया। इन्ही गोविन्ददास ने 'यति-धर्म्म समुच्चय' नामक ग्रन्थ बनाया है।

कुछ काल के पीछे यामुनाचार्य्य के पुत्र वररंग स्वामी रामानुज को लेने को हस्तिगिरि आए। यहां उन्हों ने नाटकों का अभिनय दिखला कर श्री वरदराज जी को मांगा और वहां से रामानुज स्वामी को ला कर रग नाथ जी को समर्पण किया, जिस से स्वामी अब रंगनाथ जी की सेवा का अधिकार और उस सम्प्रदाय का आचार्य्यत्व दोनो के अधिकारी हुए।

उसी समय में स्वामी के ममेरे भाई वेंकट गोविन्द पंडित से जो कि बड़े शैव थे वेंकटगिरि के निवासी श्री शैलपूर्ण नामक वैष्णव यति से बड़ा भारी शास्त्रार्थ हुआ, जिस मे गोविन्द पंडित ने पराजय पाकर श्री शैलपूर्ण का शिष्यत्व अङ्गीकार किया।

कुछ दिन पीछे पूर्णाचार्य्य के उपदेश से स्वामी रामानुज अठारह बेर शोष्ठीपुर में गोष्ठापूर्णाचार्य्य से तत्व पूछने की इच्छा से गए और यद्यपि पहिले उन्हों ने बहुत आनाकानी की पर अन्त में सब रहस्य स्वामी को उपदेश किया किन्तु यह कह दिया था कि यह किसी को बतलाना मत।

स्वामी रामानुज मन्त्रों का रहस्य पाकर ऐसे परितुष्ट हुए कि अनेक लोगों से उन्हों ने दयापूर्वक वह रहस्य कहा। जब गोष्ठीपूर्णाचार्य्य को यह बात मालूम हुई, तब उन्हों ने स्वामी को बुला कर पूछा कि "जो गुरु की आज्ञा उल्लंघन करे उस की क्या गति होती है?" स्वामी ने उत्तर दिया 'नर्क', तब गुरु ने पूछा कि फिर तुम ने हमारी आज्ञा उल्लंघन कर के रहस्य क्यों लोगों से कहा। इस पर स्वामी ने अपने दयापरवश उदार स्वभाव से निर्भय हो कर उत्तर दिया।

"पतिष्ये एक एवाहं नरके गुरुपातकात्।
सर्वे गच्छन्तु भवतां कृपया परमं पदम्॥"

अर्थात् आप की आज्ञा टालने से मैं एक नरक में पड़ूं किन्तु और लोग जिन से हम ने रहस्य का उपदेश किया है वे आप की दया से परम पद पावैं॥

गुरु उन के इस उदार वाक्य से ऐसे प्रसन्न हुए कि "मन्नाथ" अर्थात् हमारे भी स्वामी, उन का नाम रक्खा और वरदान दिया कि आज से यह वैष्णव सिद्धान्त रामानुज सिद्धान्त से प्रचलित होगा और संसार में तुम आचार्य रूप से प्रसिद्ध होगे।

कुछ काल पीछे स्वामी के भांजे दाशरथि स्वामी की आज्ञा से पूर्णाचार्य्य की बेटी के ससुराल में उस का काम काज सम्हालने को रहने लगे। वहां एक वैष्णव श्रुतियों का कुछ विरुद्ध अर्थ करता था। उस से शास्त्रार्थ कर के उस को उन्हों ने स्वामी के पास दीक्षित होने को भेज दिया और वह वैष्णव दास नाम पाकर इस मत का एक मुख्य पण्डित हुआ।

इस सम्प्रदाय में मालाधार नामक एक बड़े पण्डित थे। शठकोपाचार्य्य कृत सहस्रगीतिका स्वामी ने उन से व्याख्यान सुना। ऐसे ही अनेक वयोवृद्ध और ज्ञानवृद्धों से स्वमत का अनेक सिद्धान्त स्वामी ने लिया। वरञ्च अपने पुत्र सुन्दरबाहु को मालाधर ही से दीक्षित कराया।

रङ्गजी ठाकुर का आभूषण एक बार चोर लोग चुरा ले गए थे और उन लोगों को इस दोष से कारागार हुआ था। वे चोर स्वामी से बड़ा द्वेष रखते थे। इस से उन लोगों ने स्वामी के अंग-सेवकों को घूस देकर इन के भोजन में विष मिला दिया। किन्तु परमेश्वर ने यह सब वृत्त अनुभव द्वारा स्वामी को बतला दिया इस से उन की रक्षा हुई।

यज्ञमूर्ति नामक एक वेदान्त का बड़ा भारी सन्यासी पण्डित था। वह दिग्विजय करता हुआ रङ्गनगर में स्वामी से शास्त्रार्थ करने आया। स्वामी ने अठारह दिन पर्य्यन्त उस से शास्त्रार्थ कर के उस को परास्त किया और उस से प्रायश्चित्त करा के उस को फिर से शिखा सूत्र धारण कराया। देवराज देवमन्नाथ और मन्नाथ यह तीन नाम उस पण्डित के रक्खे गए और वह एक बड़े मठ का स्वामी नियत हुआ। इस पण्डित ने ज्ञानसार और प्रमेयसार नामक द्राविड़ भाषा में वैष्णव मत के दो बड़े सुन्दर ग्रन्थ बनाए हैं।

एक समय पुण्यनगर से अनन्ताचार्य्य बहुत से वैष्णवों के साथ स्वामी के दर्शन को आए। स्वामी ने उन को वेंकटाटगिरि की सेवा का अधिकार दिया। तब वे वेंकटगिरि गए और वहां

वृन्दावन वना कर रहने लगे। इन्हीं ने वेंकटनाथ स्वामी का "रामानुज" 'लक्ष्मण' इत्यादि नाम रक्खा है।

स्वामी इस के पश्चात् देशाटन करने को निकले और वेंकटगिरि होते हुए उत्तर की यात्रा को चले। मार्ग में दिल्ली में त्रिविक्रमाचार्य्य से भेंट किया। वहां से वदरीनाथादि होते हुए लौट कर अष्ट सहस्र गांव में आए। वहां वरदाचार्य्य और यज्ञेश नामक अपने दो शिष्यों को मठाधिपति नियुक्त किया। वहां से हस्तिगिरि आए और पूर्णाचार्य्यादि से मिल कर कापिल तीर्थ को गए। वहां कुछ दिन तक रहे और देश के राजा विट्ठलदेव को शिष्य किया। इस राजा विट्ठलदेव ने तोण्डीर मण्डलादिक अनेक गांव स्वामी को भेंट किए। वहां से वृषाचलादि स्थानो में अपना महात्म्य प्रकाश करते हुए रङ्गनगर स्वामी लौट आए।

स्वामी के मामा के पुत्र गोविन्दपण्डित को विराग में ऐसी रुचि हुई कि स्वामी ने वहुत कहा। परन्तु उन्हों ने गृहस्थाश्रम स्वीकार नहीं किया। तव स्वामी ने उन को सन्यास दिया।

एक वार केवल कूरेश को साथ लेकर स्वामी शारदापीठ गए क्योंकि वहां वशिष्टाद्वैत * मत का मूल ग्रन्थ वौधायन कृत ब्रह्मसूत्र वृत्ति की पुस्तक थी। जिस को देखकर स्वामी को तदनुसार भाष्य वनाना वहुत

---

* दो० कहहिं एक अद्वैतमत, द्वुतिय द्वैत मत जान।
त्रितिय विशिष्टाद्वैत है, ता मधि तीन प्रमान ॥ १ ॥
प्रगट लोक मत लोक में, द्वुतिय वेदमत जान।
तितिय सतमत करत जिहि, हरिजन अधिक प्रमान ॥ २ ॥

आवश्यक था। शारदापीठ के सब पंडितों को स्वामी ने शास्त्रार्थ में पराजित किया। जब वहां से लौटे तो बौधायन वृत्ति की पुस्तक स्वामी के साथ थी। किन्तु शारदापीठ के पंडितों ने द्वेष कर के रात को डांका डाला और वह पुस्तक लूट ले गए। स्वामी को इस से बड़ा दुःख हुआ। तब कुरेश ने कहा कि आप इतना दुःख क्यों सहते हैं। एकबार मैं ने आद्योपान्त उस पुस्तक को देखा है, इस से उस के प्रति अक्षर मुझ को कंठाग्र है। मैं सब आप को लिख दूंगा। तदनुसार एक श्रुतिधर कुरेशन ने बौधायन सूत्र वृत्ति सब स्वामी को लिख दी। इसी वृत्ति के अनुसार स्वामी ने वेदांत सूत्र पर श्रीभाष्य वेदान्तदीप, वेदान्तसार, वेदार्थसंग्रह, और गीताभाष्यादि ग्रन्थ बनाए।

इन ग्रन्थों के बनाने के पीछे बहुत से शिष्य को साथ लेकर स्वामी दिग्विजय करने निकले। क्रम से चोलमंडल, पांड्यमंडल कुरुक इत्यादि देशों में जाकर वहां के पंडितों को शास्त्रार्थ मे जीत कर उन को वैष्णव धर्म्म से दीक्षित किया और कुरगदेश के राजा को दीक्षित करके केरल देश के पंडितों को जीता। वहां से क्रम से द्वारिका, मथुरा, शालिग्राम, काशी, अयोध्या, वदरिकाश्रम, नैमिषारण्य और श्रीवृन्दावन आदि तीर्थों में होते हुए फिर से शारदापीठ गए। वहां सरस्वती ने प्रत्यक्ष होकर "कप्यास" इस श्रुति का तात्पर्य्य पूछा। स्वामी ने जो अर्थ कहा इस से प्रसन्न होकर सरस्वती ने श्री भाष्य अपने सिर पर चढ़ाकर स्वामी को दिया और उन का दोनों हाथ पकड़ कर "भाष्यकार" नाम से पुकारा। इस के अनन्तर स्वामी ने वहां के पंडितों को शास्त्रार्थ में

पराजित करके पुरुषोत्तम क्षेत्र गमन किया। वहां जाकर देखा कि बौद्ध और कापालिक लोग पुरुषोत्तम की सेवा में नियुक्त हैं। स्वामी ने उन को जीतकर वैष्णवगण को सेवा मे नियुक्त किया और वहां रामानुज मठ बना कर रहने लगे। स्वामी को इच्छा थी कि पंचरात्र के विधि से जगन्नाथ जी की सेवा हो परन्तु पंडे लोग अपने मन से सब काम करते थे और श्री जगन्नाथ जी भी इसी से प्रसन्न थे। क्योंकि जब स्वामी ने इस बात में आग्रह किया, तो एक रात देवगण ने स्वामी को सोते हुए उठा कर कूर्म्मक्षेत्र में रख दिया। जाग कर स्वामी ने यह चरित्र देखा और भगवदिच्छा मुख्य समझ कर फिर इस विषय में आग्रह न किया।

कुछ दिन कूर्माचल रहकर स्वामी सिंहाचल, अहोवलक्षेत्र, गरुड़ाचलादि तीर्थों मे गए और वहां से फिर वेंकटगिरि जाकर वहां के शैवो को शास्त्रार्थ में परास्त किया।

कुछ काल पीछे कूरेश को व्यास पराशर के अंश के दो पुत्र एक साथ उत्पन्न हुए। स्वामी ने एक का नाम पराशर और दूसरे का व्यास वा श्री रामदेशिक रक्खा। इन्हीं पराशर को रंगेश ने अपुत्र होने के कारण गोद लेकर बड़े धूमधाम से विवाह किया था। गोविन्द को भी कालान्तर में पुत्र हुआ, तो स्वामी ने परांकुश उस का नाम रक्खा।

मथुरा के एक धनिक धनुर्दास को उस की भार्या हेमांगना समेत स्वामी ने वैष्णव दीक्षा दी। यह धनुर्दास ऐसा उत्तम वैष्णव हुआ है कि रंगनाथ जी के उत्सव में स्वामी एक बार उस को मित्र

की भांति पकड़े हुए थे और इस पर उन लोगों ने पूछा तो स्वामी ने उस की वैष्णवता की बड़ी स्तुति की।

उसी समय में चोलदेश का एक बड़ा भारी शैव राजा क्रिमिकंठ हुआ था जिस ने चित्रकूट तक विजय किया था। इस ने एक बार शास्त्रार्थ के हेतु प्रार्थनापूर्वक स्वामी को बुलाया। स्वामी उस के यहां जाते थे कि मार्ग में चेलाचलाम्बा और उस के पति को दीक्षित किया। और बहुत से बौद्धों को शास्त्रार्थ में जय किया। इसी प्रकार कुछ दिन भक्तनगर में रहे। वहां स्वप्न देखने से इन्हों ने यादवाचल जाकर वहां छिपी हुई भगवन्मूर्त्ति को निकाला और शके १०१२ में उस मूर्त्ति को यादवाचल में प्रतिष्ठित किया।

एक बार स्वामी को खबर मिली कि दिल्ली के राजा के घर में रामप्रिय नामक एक नारायण की मूर्त्ति है। स्वामी यह सुन कर दिल्ली गए और वहां कुछ दिन रह कर राजा से वह मूर्त्ति ले आए। कहते हैं कि दिल्ली के राजा की बेटी उस भगवद्विग्रह पर ऐसी आसक्त थी कि भक्ति प्रभाव से आज तक नारायण की मूर्त्ति उस के पास तथा यादवाचल में वर्त्तमान है।

इस के पीछे विष्णुचित्त की बेटी गोदा को स्वामी ने उपदेश दिया। इन के ७४ शिष्य बड़े प्रसिद्ध हुए हैं। इन में भी आंध्रपूर्ण की बड़ी महिमा है।

इस प्रकार स्वामी रामानुज आचार्य्य एक सौ बीस वर्ष पृथ्वी पर रहे और चारो ओर वैष्णव सम्प्रदाय का प्रचार करके सब शिष्यों को भगवद्भक्ति का उपदेश करके माघ सुदी १० को परम धाम पधारे। इनके पीछे रंगनाथ जी के मन्दिर का अधिकार परा-

शर को मिला और दाशरथि, पूर्णाचार्य, गोविन्द और कुरुक ये चार मत शाखा प्रवर्त्तक हुए।

इस संप्रदाय के मुख्य बड़े बड़े लोग शठकोपाचार्य्य, रंगेश, वेंकटेश, वरद, वकुलाभरण, सुन्दर, यामुनाचार्य, वररंग, पूर्णाचार्य, गोष्ठीपूर्ण, मासभद्र, माधवदास, कासार, भक्तिसार, फणिकृष्ण, कुलशेखर, भट्टनाथ, पद्मराज और अनन्ताचार्य आदिक हैं।

दानपत्रादिकों से और दक्षिण राजाओं के घर के लेखों से निश्चय होता है कि ईस्वी सन् १०१० वा इसके आस पास किसी संवत् में स्वामी का जन्म हुआ था और द्वादश शताब्दी के पूरे पूरे भोग में ये वर्त्तमान थे।

इनका मत विशिष्टाद्वैत है और उपास्यदेव साकार ब्रह्मनारायण है। ये भुजा पर तप्त शंख चक्र की छाप देते हैं। हिन्दुस्तान के सब प्रान्त में इस मत के लोग मिलते हैं। और बहुत बड़े बड़े पंडित इस मत में हुए हैं। वड़गल और तिङ्गल ये दो शाखा इस मत की बहुत प्रसिद्ध हैं पीछे तो रामानन्द आदि अनेक शाखा इस की हुई हैं। इनके संप्रदाय के वैष्णव श्री वैष्णव कहलाते हैं।

—:※:—

श्रीशंकराचार्य्य का जीवन चरित्र।

इन्दीवरदलश्याममिन्दिरानन्दकन्दलम्।
वन्दारुजनमन्दारं वन्देऽहं यदुनन्दनम्॥

धन्य वह ईश्वर है जो अपनी सृष्टि में अनेक अद्भुत शक्ति के मनुष्यों को उत्पन्न करता है और उनके द्वारा लोगों की पहिली

चाल चलन को बदल देता है। फिर कुछ काल के अनन्तर दूसरे को उत्पन्न करता हुआ उस से भी वैसा ही कराता है, इसी प्रकार से अपने सृष्टिक्रम को निरन्तर चलाता है।

देखो कुछ न्यूनाधिक ११०० वर्ष हुए इस सारे भारतवर्ष में बौद्धमत फैल गया था और लोग उसी मत पर चलते थे और जो उस मत को स्वीकार करने में अप्रसन्न थे उन को अनेक प्रकार के क्लेश सहने पड़ते थे। प्रायः कन्याकुमारी अन्तरीप से चीन देश तक और ब्रह्मा के देश से ईरान तक जहां देखो बौद्धमत के मनुष्य देख पड़ते थे। फाहियान और ह्वानसांग जो चीन देश से यात्रा के लिये यहां आए थे और जिन के स० ३९९ और ६४० ईस्वी निश्चित किये गए हैं, अपने ग्रन्थ में उस समय का भारतवर्ष का वृत्तान्त लिखते हैं कि बौद्धधर्म की बड़ी उन्नति है, राजाओं ने बौद्ध भिक्षुकों को गांव बाग, घर विहार बनाने के लिये दे दिये हैं और उन में श्रमण लोग सुख से वास करते हैं, मांस खाने का बड़ा निषेध किया गया है, कोई यज्ञ योग करने नहीं पाते, न देवी के सामने बलिदान कर सकते हैं, और पटने में जिसे पाटलिपुत्र भी कहते हैं शाक्यमुनि बुद्ध का बड़ा उत्सव होता है, और प्रायः बड़े बड़े नगरों में स्तूप* और विहार देख पड़ते हैं।

---

* "गोरखपुर दर्पण" में एक लेख यों लिखा है :—

भगलपुर के निकट १ पत्थर की लाट है जिस पर पुराने अक्षर खुदे हुए हैं। उन अक्षरों को प्रिन्सिप साहिब ने बनारस में पढ़ा था। सहिया गांव परगने सलेमपुर मझौली में हैं। वहां एक पुराना मन्दिर है जिस के बीच एक बुद्ध की मूर्त्ति वर्त्तमान है और कहाव जो सलेमपुर से ६ मील पश्चिम है उस गांव में एक लाट २४ फुट ऊंची

ह्वात्सांग लिखता है कि बौद्धमत केवल भारतवर्ष ही में फैला न था परन्तु तूरान और काबुल मे भी सौ से अधिक विहार बने थे और उन दिनों में गज़नी काबुल इत्यादि पश्चिम के देश इसी भारतवर्ष के राजाओं के अधीन थे। सब मिल के ८० राजा गिने जाते थे। जालन्धर से गङ्गासागर तक और हिमालय से महानदी तक देश कन्नौज के बौद्ध राज हर्षवर्धन के अधीन थे और मगध देश में बौद्ध राजा राज करते थे।

गढी है और उस पर ६ फुट लम्बे १६ कोने के कलश पर १ बुद्ध की मूर्त्ति स्थापित है। उस पर जो पुराने अक्षर अंकित हैं उन का उल्था नीचे लिखा जाता है।

मूल—यस्योपस्थानभूमिर्नृपतिशतशिरः पातवातावधूता ।
गुप्ताना वंशजस्य प्रविसृतयशसस्तस्य सर्वोत्तमर्द्धेः ॥
राज्ये शक्रोपमस्य क्षितिपशतपते स्कन्दगुप्तस्य शान्ते ।
वर्षे त्रिंशद्दशैकोत्तरकशततमे ज्येष्ठमासि प्रपन्ने ॥ १ ॥
ख्यातऽस्मिन् ग्रामरत्नेककुभरति जनै स्साधुसंसर्गपूते ।
पुत्रोयस्सोमिलस्य प्रचुरगुणनिधेर्भट्टिसोमो महार्थे ॥
तत्सूनूरुद्रसोमः प्रथुलमतियशाव्याघ्र इत्यन्यसज्ञा ।
मद्रस्तस्यात्मजोऽभूद्विज गुरुययतिषु प्रायश प्रीतिमान्य ॥ २ ॥
पुण्यस्कध स चक्रे जगदिदमखिल ससरद्वीक्ष्य भीतो ।
श्रेयोर्थ भूतभूत्यै पथि नियमवता मर्हता मादिकर्त्तॄन् ॥
पञ्चेन्द्रानस्थापयित्वा धरणिधरमयान्सन्निखातस्ततोऽय ।
शैलस्तम्भ सुचारु गिरिवर शिखराग्रोपमः कीर्त्तिकर्त्ता ॥ ३ ॥

उल्था—राजा स्कन्धगुप्त जिस के प्रस्थान के समय अर्थात् जब वह अपने मन्दिर से बाहर निकलता था सैकडों राजाओं के सिर के मुकुट उस के चरणों पर झुकते थे। वडा यशस्वी और प्रचुर रत्न से युक्त था। उस के स्वर्ग वास करने से ३२१ वर्ष के

इस से यह न समझना चाहिए कि भारतवर्ष में वैदिक मत लुप्त हो गया था। बहुत से ऐसे ऐसे देश दक्षिण में और काशी, कुरुक्षेत्र, काश्मीर इत्यादि उत्तर में थे जहां वैदिक मत के लोग रहते थे और यज्ञ योगादिक सब अपने कर्म करते थे।

जब इस प्रकार से बौद्धमत भारतवर्ष में फैल गया, ईश्वर ने सोचा कि अब वैदिक मत डूबने पर है, जो इस की सहायता न करेंगे तो इस का चलना कठिन है। द्राविड़ देश में जो अब मन्दराज हाते में है चिदम्बरपुर में द्राविड़ ब्राह्मण के कुल में सर्वज्ञ नामक तपस्वी का जन्म हुआ। उस की स्त्री का नाम कामाक्षी था और वे दोनों चिदम्बरेश्वर की जो आकाशलिंग कर के दक्षिण देश में प्रसिद्ध है सेवा करने लगे। और एक कन्या उन को हुई उस का नाम विशिष्टा रक्खा। आठवें वर्ष उस कन्या का विवाह विश्वजित् ब्राह्मण से कर दिया और वह विशिष्टा भी सर्व काल अपने मा बाप के सदृश उसी महादेव की सेवा करती थी। उस का पति

अनन्तर ज्येष्ठ महीने में राजा गोभिल का बेटा भट्टिसोम, उस का बेटा रुद्रसोम जिस का व्याघ्र भी नाम है, उस का बेटा मद्रसोम जिन की भक्ति ब्राह्मण गुरु और सन्यासियों में अधिक थी जगत् का समकरण अर्थात् दिन दिन नाश अवलोकन करके बहुत भययुक्त हुआ। और उस से अपनी और अपनी प्रजा की रक्षा के लिये ककुभ ग्राम में जिस को अब कहाव कहते हैं और जिस में साधु जन अधिक बसते थे, जिन के रहने से वह पवित्र गिना जाता था, एक यज्ञ किया। उस यज्ञ में पांच इन्द्र पहाड़ों के बराबर अर्थात् पांच स्तम्भ पर इन्द्र की मूर्त्ति बना कर स्थापित की वह (१) कहाव में (२) भागलपुर में (३) सारण में (४) बेतिया के राज्य में (५) तराई में अब भी कई फुट के लम्बे गड़े हुये खड़े मौजूद हैं और उन के सिवाय एक और स्तम्भ स्थापन किया जो उस की कीर्त्ति को प्रकाश करता है।

विश्वजित् उस को छोड़ कर जङ्गल मे तप करने को गया, परन्तु विशिष्टा ने महादेव की सेवा नही त्यागी। ईश्वर उस से प्रसन्न हुआ और उस को एक लड़का उत्पन्न हुआ, जिस का नाम शङ्कराचार्य्य रक्खा। पुराण और तन्त्रों मे शङ्कराचार्य्य को शिव का अवतार लिखा है और इन के प्रतिवादी वैष्णव लोग भी इन को शिव का अवतार होने मे कुछ विवाद नही करते। इन की उत्पत्ति का समय अभी तक ठीक २ नही ज्ञात हुआ परन्तु शिष्य परम्परा से जो आचार्य्य के अनन्तर अभी तक चली आती है जान पड़ता है कि कुछ न्यूनाधिक एक हज़ार वर्ष हुए। डाक्टर डाकवेल साहब अपने ग्रन्थों में ६०० वर्ष लिखते है, और पण्डित जयनारायण तर्क पञ्चानन १२०० वर्ष के निकट अनुमान करता है।

उस नगर के निवासी ब्राह्मणों ने इनके जात कर्मादिक संस्कार किये और तीसरे वर्ष में चौल और पांचवें में यज्ञोपवीत किया। तब से श्रीशंकराचार्य जी ने आठवें वर्ष तक सकल विद्या का पूर्ण अभ्यास किया और सब विद्या में पारङ्गत हुए और शिष्यों को भी विद्या सिखलाई। आठवें वर्ष में श्रीगोविन्द योगीन्द्र के उपदेश से सन्यासाश्रम स्वीकार किया और इनके मुख्य शिष्य बारह थे, जिनके नाम पद्मपाद, हस्तामलक, समित्पाणि, चिद्विलास, ज्ञानकन्द, विष्णुगुप्त, शुद्धकीर्ति, भानुमरीचि, कृष्णदर्शन, बुद्धिवृद्धि, विरच-पाद, अनन्तानन्दगिरि थे। इनके समय में पचास से अधिक मत प्रचलित थे उन में जो जो कुछ मुख्य मत थे उन के नाम ये है। शैव, वैष्णव, सौर, गाणपत्य, शाक्त, कापालिक, कौल, पांचरात्र, भागवत, बौद्ध, जैन, चार्वाक इत्यादि। इन सब मतवालों के आचार्यों

को उन्हों ने शास्त्रार्थ में जीत लिया और उन सब को अपना शिष्य किया।

तब आचार्य जी काशी में गये और मध्यान्ह के समय मणि-कर्णिका पर स्नान करते थे इतने में श्रीव्यास जी बूढ़े ब्राह्मण का भेष लेकर वहां आये और शंकराचार्य से पूछा कि मैं ने सुना है कि आप ने ब्रह्मसूत्र में बहुत परिश्रम किया है। आचार्य ने उत्तर दिया, हां, जहां तुम्हारी इच्छा हो वहां पूछो। व्यास जी ने एक स्थल में पूछा, आचार्य जी ने उस का यथार्थ उत्तर दिया। इस पर व्यास जी फिर कुछ विवाद करने लगे, आचार्य जी को क्रोध आया और अपने पद्मपाद नामक शिष्य से कहा कि इस बूढ़े ब्राह्मण को बाहर निकाल दो, तब शिष्य ने यह श्लोक पढ़ा।

शङ्करः शङ्करः साक्षाद्व्यासो नारायणः स्वयम् ।
तयोर्विवादे सम्प्राप्ते किङ्करः किङ्करिष्यति ॥

आचार्य जी ने यह सुन कर कहा जो सचमुच यह बूढ़ा ब्राह्मण व्यास होगा, तो अवश्य हमारे उत्तर पर सन्तुष्ट हो के प्रत्यक्ष दर्शन देगा। व्यास जी यह सुन कर आप प्रत्यक्ष हुए और आचार्य जी से कहा कि मैं तुम्हारी परीक्षा लेने के वास्ते आया था। तुम तो शिव के अवतार हो तुम को कौन जीतने वाला है। फिर व्यास ने आचार्य को वर दिया और ब्रह्मा को बुला कर इन की आयु बढ़ा दी, तब से आचार्य का प्रताप द्विगुणित बढ़ गया। कुछ समय के अनंतर आचार्य जी रुद्रपुर में गए। वहां भट्टपाद जिसे कुमारिल कहते हैं और जिस ने मीमांसातन्त्रवार्तिक नामक एक बड़ा भारी ग्रन्थ बनाया है तुषाग्नि में बैठा था। आचार्य जी ने उस से भेंट

करके बाद भिक्षा मांगी, परन्तु भट्टपाद ने कहा कि मैं अब शरीर दग्ध होने के कारण तुम्हारे साथ शास्त्रार्थ करने में असमर्थ हू । मेरा बहनोई मंडनमिश्र जो हस्तिनापुर से आग्नेय दिशा में विजिलबिंदु नाम नगर में रहता है तुम से शास्त्रार्थ करेगा और उस से तुम्हारा गर्व शांत हो जायगा।

आचार्य जी यह वचन सुन कर वहां गये और लोगों से मंडन-मिश्र के घर का ठिकाना पूछा। लोगों ने उत्तर दिया कि जहां तोते और मैं ने शास्त्रार्थ करते है वही मंडनमिश्र का घर है। शंकराचार्य जी ने सोचा कि जो मै दर्वाजे से जाता हू तो मुझे बहुत काल लगेगा, इस लिये मन्त्र के बल से आकाशमार्ग से उस के घर में उतरे। कोई कहते हैं कि उस के घर के पीछे एक लंबा ताड़ का पेड़ था उस पर चढ़ कर घर में गये। उस समय मंडनमिश्र श्राद्ध करता था। इन को देखते ही बहुत क्रुद्ध हो गया क्योंकि ये सन्यासी थे और उस ने सन्यास का खंडन किया था और कहा, "कुतो मुण्डी" आचार्य जी ने उत्तर दिया, "आगलान्मुण्डी", मंडन ने कहा—"सुरापीता" शंकर जी ने कहा—"साहिश्वेता" इत्यादि दोनों के संवाद हुए। मिश्र जी श्राद्ध समाप्त करने के अनन्तर आचार्य से शास्त्रार्थ करने में प्रवृत्त हुए और उस की स्त्री सरसवाणी जिसे सरस्वती का साक्षात् अवतार कहते थे मध्यस्थ हुई। दोनों से सौ दिन तक शास्त्रार्थ हुआ। अन्त में मण्डनमिश्र का पराजय हुआ। और सन्यासाश्रम को स्वीकार किया। पुराण में मंडनमिश्र को ब्रह्मा का अवतार लिखा है।

जब मंडनमिश्र सन्यास लेने लगे उन के पहिले ही सरसवाणी अपना पूर्व शरीर छोड़ कर ब्रह्मलोक को जाने लगी। शंकराचार्य ने वनदुर्गा मंत्र से उस को आकर्षण किया और कहा कि मुझ से शास्त्रार्थ करके चली जाओ। उस ने कहा कि मैं ने वैधव्य के भय से अपने पति के सन्यास के पहले ही पृथ्वी को त्याग किया। अब पृथ्वी पर नहीं आ सकती। क्योंकर तुम से शास्त्रार्थ करूं। आचार्य ने उत्तर दिया कि आकाश में भूमि से छः हाथ दूरी पर खड़ी होके मुझ से शास्त्रार्थ कर। उस ने आचार्य के कहने के अनुसार शास्त्रार्थ किया अन्त में हार गई, तब उस ने सोचा कि यह सन्यासी है इस को काम शास्त्र नहीं आता होगा इस में जो इसे पूछेंगे तो उत्तर नहीं दे सकेगा। फिर सरसवाणी ने कहा कि काम शास्त्र में विवाद करो शंकराचार्य्य इस वचन को सुन कर चुप हो गए और कहा कि छः महीने के अनन्तर तुम से इसी शास्त्र में विवाद करूंगा।

तब शंकराचार्य्य अमृतपुर में गए। वहां का राजा मर गया था। इस का नाम अमरु करके प्रसिद्ध था। उस का शरीर जलाने के लिये चिता पर रक्खा था इतने में शंकराचार्य ने अपने शरीर से प्राण निकाल कर परकायप्रवेश विद्या के बल से उस राजा के मृत शरीर में प्रवेश किया और शिष्यों ने आचार्य का शरीर एक पहाड़ की गुफा में रक्खा। कहीं लिखा है इस राजा की सौ रानी थी उन में जो बड़ी थी उस ने देखा कि इस पति की चेष्टा पहले ऐसी नहीं है केवल पहला शरीर मात्र वही है और इस की आत्मा किसी योगी की जान पड़ती है नहीं तो इतना चातुर्य इस में कहां से होता। रानी ने आज्ञा दी कि जहां कहीं मृत शरीर मिले उसी क्षण

उस को जला दो। राजदूतों ने आचार्य का शरीर गुफा में पाया और उस को जलाने के लिये चिता पर रक्खा और आग लगा दी। आचार्य के शिष्यों ने देख कर राजा की स्तुति की। उस का अभिप्राय यही था कि राजा, तू शंकराचार्य्य है दूसरा कोई नहीं उसी क्षण राजा के शरीर से प्राण ने निकल कर उस चिता पर रक्खे हुए शरीर में प्रवेश किया और अग्नि शान्त होने के लिये नृसिंह की स्तुति की। नृसिंह ने प्रसन्न हो के वर दिया। वहां से सरस्वती के पास आये, और उस को जीत लिया और उस को साथ लेकर शृंगपुर में आये जिस को अब शृंगेरी कहते हैं और जो तुंगभद्रा के तीर पर है उसी स्थल पर सरस्वती की स्थापना की और भारति संप्रदाय की शिष्य परम्परा करने की रीति स्थापन की।

शंकराचार्य्य की गुरुपरम्परा इस प्रकार से लिखी है। पहिले नारायण, फिर ब्रह्मा, वशिष्ट, शक्ति, पराशर, व्यास, शुक, गौड़पाद गोविन्द, योगिन्द्र, श्री शंकाराचार्य्य इन के १२ मुख्य शिष्य हुए उन के नाम पहिले लिख आये हैं।

शृंगेरी में १२ बरस रह कर कांचीपुर में गये। वहां कामाक्षी देवी की स्थापना की और कांची का नगर बसाया और विष्णु-कांचि में वरदराज विष्णु का और शिवकांची में शिव का मन्दिर बनवाया और अवताम्रपर्णी नदी के तीर पर रहने वाले लोगों को शिष्य किया। प्राय सब भारतवर्ष में इन की शिष्यशाखा फैली॥

श्री शंकराचार्य्य जी ने व्यास सूत्र पर अद्वैत भाष्य और दस महोपनिषदों और गीता पर भी भाष्य बनाये और कई एक ग्रन्थ बनाये हैं वे सब अब तक मिलते हैं इनका मत यह था कि इस

प्रपञ्च में ब्रह्म को छोड़ कर जो कुछ दिखाई देता है सब मिथ्या है, सब ब्रह्म रूप है, और ईश्वर और जीव एक ही है इत्यादि उन के ग्रन्थों को देखने से जान पड़ता है। इसी लिये किसी मत को जिस में ईश्वर की सत्ता मानी जाती है सर्वथा खंडन नहीं किया। नास्तिक मत को छोड़ कर सब मतों को स्थापन किया और ३२ बरस के वय में परलोक को चले गये। शक्तिसंगम तन्त्रादिक ग्रन्थों में तो १८ ही वर्ष लिखे हैं परन्तु शंकर विजयादि ग्रन्थों से ज्ञात हुआ कि जो ऊपर संख्या लिखी है ठीक है क्योंकि इतना कृत्य इतने थोड़े समय में नहीं हो सकता। इन की कीर्ति अब तक इस भारत वर्ष मे चली जाती है और प्रायः यहां के लोग भी इसी मत पर चलते हैं॥

मैं ने शंकराचार्य्य का जीवनवृतान्त बहुत सक्षेप से लिखा है यदि इस में कहीं शीघ्रता के हेतु भूल हो तो पढ़ने वाले उस पर क्षमा करें क्योंकि शास्त्र में लिखा है कि भ्रांति पुरुष का धर्म है॥

महा कवि श्री जयदेव जी का जीवनचरित्र।

जयदेव जी की कविता का अमृत पान करके तृप्त, चकित, मोहित और घूर्णित कौन नहीं होता और किस देश में कौन सा ऐसा विद्वान है जो कुछ भी संस्कृत जानता हो और जयदेव जी की काव्य माधुरी का प्रेमी न हो। जयदेव जी का यह अभिमान कि अंगूर और ऊख की मिठास उन की कविता के आगे फीकी है बहुत सत्य है। इस मिठाई को न पुरानी होने का भय है न चींटी का डर है, मिठाई है, पर नमकीन है यह नई बात है। सुनने पढ़ने की बात है पर गूंगे का गुड़ है। निर्जन में जंगल पहाड़ में

जहां बैठने को बिछौना भी न हो वहां गीतगोविन्द सब आनन्द सामग्री देता है, और जहां कोई मित्र-रसिक भक्त-प्रेमी न हो वहां यह सब कुछ बन कर साथ रहता है। जहां गीतगोविन्द है वहीं वैष्णव गोष्ठी है, वही रसिक समाज है, वही वृन्दावन है, वही प्रेमसरोवर है, वहीं भाव समुद्र है, वही गोलोक है और वही प्रत्यक्ष ब्रह्मानन्द है। पर यह भी कोई जानता है कि इस परब्रह्म रस प्रेम सर्वस्व शृङ्गार समुद्र के जनक जयदेव जी कहां हुए? कोई नही जानता और न इस की खोज करता। प्रोफेसर लैसेन ने लैटिनभाषा में और पूना के प्रिन्सिपल आरनल्ड साहब ने अङ्गरेज़ी में गीतगोविन्द का अनुवाद किया, परन्तु कवि का जीवनचरित्र कुछ न लिखा। केवल इतना ही लिख दिया कि सन् ११५० के लगभग जयदेव उत्पन्न हुए थे। किन्तु धन्य हैं बाबू रजनीकान्त गुप्त कि जिन्हों ने पहिले पहल इस विषय में हाथ डाला और "जयदेवचरित्र" नामक एक छोटा सा ग्रन्थ इस विषय पर लिखा। यद्यपि समयनिर्णय में और जीवनचरित्र में हमारे उन के मत में अनेक अनैक्य है तथापि उन के ग्रन्थ से हम को अनेक सहायता मिली है, यह मुक्त कण्ठ से स्वीकार करना होगा। और इस में कोई संशय नहीं कि उन्हीं के ग्रन्थ ने हमारी रुचि को इस विषय के लिखने पर प्रबल किया है।

वीरभूमि से प्राय दस कोस दक्षिण* अजयनद के उत्तर

---

* अजयनद भागीरथी का करद है। यह भागलपुर जिला के दक्षिण में निकल कर सौंताल परगने के दक्षिण भाग दक्षिण की ओर और फिर वर्द्धमान और वीरभूमि के जिले के बीच में से पश्चिम की ओर बह कर कटवा के पास भागीरथी से मिला है। (ज० च० बंगदेश विवरन)।

किन्दुबिल्व* गांव में श्रीजयदेव जी ने जन्म ग्रहण किया था।

संभव है कि कन्नौज से आए हुए ब्राह्मणों में से जयदेव जी का वंश भी हो। इन के पिता का नाम भोजदेव और माता का नाम रामादेवी था †। इन्हों ने किस समय अपने आविर्भाव से धरातल को भूषित किया था यह अब तक नहीं हुआ। श्रीयुक्त सनातन गोस्वामि ने लिखा है कि बंगाधिपति महाराज लक्ष्मणसेन की सभा में जयदेव जी विद्यमान थे। अनेक लोगों का यही मत है और इस मत को पोषण करने को लोग कहते हैं कि लक्ष्मणसेन के द्वार पर एक पत्थर खुदा हुआ लगा था, जिस पर यह श्लोक लिखा हुआ था "गोवर्द्धनश्चशरणो जयदेव उमापतिः। कविराजश्चरत्नानि समितौ लक्ष्मनस्यच ॥"

श्रीसनातन गोस्वामि के इस लेख पर अब तीन बातों का निर्णय करना आवश्यक हुआ। प्रथम यह कि लक्ष्मणसेन का काल क्या है। दूसरे यह कि यह लक्ष्मणसेन वही है जो बंगाले का प्रसिद्ध लक्ष्मणसेन है कि दूसरा है। तीसरे यह कि यह बात श्रद्धेय है कि नहीं कि जयदेव जी लक्ष्मणसेन की सभा में थे।

---

* किन्दुबिल्व बीरभूमि के मुख्य नगर सूरी से नौ कोस है। यहां श्रीराधा दामोदर जी की मूर्ति प्रतिष्ठित है। वैष्णवों का यह भी एक पवित्र क्षेत्र है।

† बम्बई की छपी हुई पुस्तक में राधा देवी जो इन की माता का नाम लिखा है वह असङ्गत है। हां, वामादेवी और रामादेवी यह दोनों पाठ अनेक हस्त लिखित पुस्तकों में मिलते हैं। बंगला में र और व में केवल एक बिन्दु के भेद होने के कारण यह भ्रम उपस्थित हुआ है।

प्रसिद्ध इतिहास लेखक मिरहाजिउद्दीन ने तवक़ाते नासरी में लिखा है कि जब बख़्तियार खिलजी ने बंगाला फतह किया तब लछमनिया नाम का राजा बंगाले मे राज करता था। इन के मत से लछमनिया बंगदेश का अन्तिम राजा था। किन्तु बंगदेश के इतिहास से स्पष्ट है कि लछमिनिया नाम का कोई भी राजा बंगाले में नही हुआ। लोग अनुमान करते हैं कि बल्लालसेन के पुत्र लक्ष्मणसेन के माधव सेन और केशवसेन "लाक्ष्मनेय" इस शब्द के अपभ्रंश से लछमनिया लिखा है।

राजशाही के जिले से मेटकाफ साहब को एक पत्थर पर खोदी हुई प्रशस्ति मिली है। यह प्रशस्ति विजयसेन राजा के समय में प्रद्युम्नेश्वर महादेव के मंदिर निर्म्माण के वर्णन में उमापति धर की बनाई हुई है। डाक्टर राजेन्द्र लाल मित्र के मत से इस की संस्कृत की रचना प्रणाली नवम वा दशम वा एकादश शताब्दी की है। शोच की बात है कि इस प्रशस्ति में संवत् नहीं दिया है, नहीं तो जयदेव जी के समय निरूपण में इतनी कठिनाई न पड़ती। इस में हेमन्तसेन, सुमन्तसेन और वीरसेन यही तीन नाम विजयसेन के पूर्वपुरुषों के दिये हैं, जिस से प्रगट होता है कि वीरसेन ही वंशस्थापनकर्त्ता है। विजयसेन के विषय में यह लिखा है कि उस ने कामरूप और कुरुमण्डल [मद्रास और पुरी के बीच का देश] जय किया था और पश्चिम जय करने को नौका पर गङ्गा के तट में सैना भेजी थी। तवारीखों में इन राजाओं का नाम कहीं नहीं है। कहते हैं आईनेअकबरी का सुखसेन (बल्लालसेन का पिता) विजयसेन का नामान्तर है, क्योंकि

बाकरगंज की प्रस्तरलिपि में जो चार नाम हैं वे विजयसेन, बल्लालसेन, लक्ष्मणसेन और केशवसेन इस क्रम से हैं। बल्लालसेन बड़ा पण्डित था और दानसागर और वेदार्थ स्मृति सग्रह इत्यादि ग्रन्थ उस के कारण बने। कुलीनों की प्रथा भी बल्लालसेन की स्थापित है। उस के पुत्र लक्ष्मणसेन के काल में भी संस्कृतविद्या की बड़ी उन्नति थी। भट्ट नारायण (वेणी संहार के कवि) के वंश में धनञ्जय के पुत्र हलायुध पण्डित उस के दानाध्यक्ष थे, जिन्हों ने ब्राह्मण सर्वस्व बनाया और इन के दूसरे भाई पशुपति भी बड़े स्मार्त आन्हिककार थे। कहते हैं कि गौड़ का नगर बल्लालसेन ने बसाया था, परन्तु लक्ष्मणसेन के काल से उस का नाम लक्ष्मणावती (लखनौती) हुआ। लक्ष्मणसेन के पुत्र माधवसेन और केशवसेन थे। राजावली मे इन के पीछे सुसेन वा शूरसेन और लिखा है और मुसलमान लेखकों ने नौजीव (नवद्वीप ?) नारायण लखमन और लखमनिया ये चार नाम और लिखे हैं वरञ्च एक अशोकसेन भी लिखा है, किन्तु इन सबो का ठीक पता नहीं। मुसलमानों के मत से लखमनियां अन्तिम राजा है, जिस ने ८० बरस राज्य किया और बख्तियार के काल मे जिस ने राज्य छोड़ा। यह गर्भ ही से राजा था। तो नाम का क्रम वीरसेन से लछमनियां तक एक प्रकार ठीक हो गया, किन्तु इन का समय निर्णय अब भी न हुआ, क्योंकि किसी दानपत्र में संवत् नहीं है। दानसागर के बनने का समय समय प्रकाश के अनुसार १०१९ शके (१०९७ ई०) है इस से बल्लालसेन का राजत्व ग्यारहवीं शताब्दी के अन्त तक अनुमान होता है और यह आईनेअकबरी के समय

से भी मेल खाता है। वल्लालसेन ने १०६६ में राज्य आरम्भ किया था। तो अब सेनवंश का क्रम यों लिखा जा सकता है।

वीरसेन	
सामन्तसेन	
हेमन्तसेन	
विजयसेन वा सुखसेन	
वल्लालसेन	१०६६
लक्ष्मणसेन	११०१
माधवसेन	११२१
केशवसेन ...	११२२
लछमनिया	११२३

वल्लालसेन का समय १०६६ ई० समय प्रकाश के अनुसार है। यदि इस को प्रमाण न मानें और फारसी लेखकों के अनुसार लछमनियां के पहले नारायण इत्यादि और राजाओं को भी मानैं तो वल्लालसेन और भी पीछे जा पड़ैंगे। तो अब जयदेव जी लक्ष्मणसेन की सभा में थे कि नहीं यह विचारना चाहिए। हमारी बुद्धि से नहीं थे। इस के कई दृढ़ प्रमाण हैं। प्रथम तो यह कि उमापतिधर जिस ने विजयसेन की प्रशस्ति बनाई है वह जयदेव जी का सम सामयिक था, तो यदि यह मान लें कि जयदेव उमापति गोवर्द्धनादिक सब सौ बरस से विशेष जिए हैं तब यह हो सकता है कि ये विजयसेन और लक्ष्मण दोनों की सभा में थे। दूसरे चन्द कवि ने जिस का जन्म ११५० सन् के पास है अपने

रायसा में प्राचीन कवियों की गणना में जयदेव को लिखा है। नो सौ डेढ़ सौ वर्ष पूर्व हुए विना जयदेव जी की कविता का चंद के समय तक जगत् में आदरणीय होना असम्भव है। गोवर्द्धन ने अपनी सप्तशती में "सेन कुल तिलक भूपति" इतना ही लिखा, नाम कुछ न दिया, किन्तु उस की टीका में "प्रवरसेन नामा इति" लिखा है। अब यदि प्रवरसेन, हेमन्तसेन या विजय-सेन का नामान्तर मान लिया जाय और यह भी मान लिया जाय कि जयदेव जी की कविता बहुत जल्दी संसार में फैल गई थी और समय प्रकाश का बल्लाल का समय भी प्रमाण किया जाय तो यह अनुमान हो सकता है कि विजयसेन के समय में वा उस से कुछ ही पूर्व सन् १०२५ से १०५० तक में किसी वर्ष में जयदेव जी का प्राकट्य है और ऐसा ही मानने से अनेक विद्वानों की एक

---

*भुजगप्रयात—प्रथम भुजगी सुधारी ग्रहन। जिनं नाम एक अनेक कहन ॥
दुती लम्भय देवत जीवतेम। जिनं विश्वरास्यों बलीमत सेम ॥
चव वेद बभ हरी किति भाषी। जिनं ध्रम्म साध्रम्म ससार साषी ॥
तृती भारती व्यास भारत्थ भाष्यो। जिनें उत्त पारत्थ सारत्थ साष्यो ॥
चव सुक्खदेव परीषत्त पाय। जिनें उद्धर्यौ श्रव्व कुवंस राय ॥
नर रूप पचम्म श्रीहर्ष सार। नलैराय कठ दिने पद्ध हार ॥
छट कालिदास सुभाषा सुवद्ध। जिनें बागवानी सुबानी सुबद्ध ॥
कियो कालिका मुक्ख वास सुसुद्ध। जिनैं सेत बध्योति भोज प्रबद्ध ॥
सत डडमाली उलाली कवित्त। जिनैं बुद्धि तारग गागा सरित्त ॥
जयदेव अट्ठ कवी कब्बिराय। जिनें केवल किति गोविंद गाय ॥
गुर सब्ब कव्वी लहू चद कव्वी। जिनैं दर्सियं देवि सा अग हव्वी ॥
कवी कित्तिकित्ति उकत्ती सुदिक्खो। तिनैं कोउ चिष्टोकवीचद भक्खी ॥

वाक्यता भी होती है। यहां पर समय विषयक जटिल और नीरस निर्णय जो बंगला और अङ्गरेज़ी ग्रन्थों में है वह न लिख कर सार लिख दिया है। इस से "जयदेव चरित" इत्यादि बंगला ग्रन्थों में जो जयदेव जी का समय तेरहवी वा चौदहवी शताब्दी लिखा है वह अप्रमाण होकर यह निश्चय हुआ कि जयदेव जी ग्यारहवी शताब्दी के आदि में उत्पन्न हुए हैं।

जयदेव जी की बाल्यावस्था का सविशेष वर्णन कुछ नहीं मिलता। अत्यन्त छोटी अवस्था में यह मातृपितृविहीन हो गए थे यह अनुमान होता है। क्योंकि विष्णुस्वामि चरितामृत के अनुसार श्री पुरुषोत्तमक्षेत्र में इन्हों ने उसी सम्प्रदाय के किसी पण्डित से पढ़ी थी। इन के विवाह का वर्णन और भी अद्भुत है। एक ब्राह्मण ने अनपत्य होने के कारण जगन्नाथ देव की बड़ी आराधना कर के एक कन्या रत्न लाभ किया था। इस कन्या का नाम पद्मावती था। जब यह कन्या विवाह योग्य हुई तो जगन्नाथ जी ने स्वप्न में उस के पिता को आज्ञा किया कि हमारा भक्त जयदेव नामक एक ब्राह्मण अमुक वृक्ष के नीचे निवास करता है, उस को तुम अपनी कन्या दो। ब्राह्मण कन्या को लेकर जयदेव जी के पास गया। यद्यपि जयदेव जी ने अपनी अनिच्छा प्रकाश किया तथापि देवादेशानुसार ब्राह्मण उस कन्या को उन के पास छोड़ कर चला आया। जयदेव जी ने जब उस कन्या से पूछा कि तुम्हारी क्या इच्छा है तो पद्मावती ने उत्तर दिया कि आज तक हम पिता की आज्ञा में थे, अब आप की दासी हैं। ग्रहण कीजिए वा परित्याग कीजिए, मैं आप का दासत्व

न छोड़ूंगी। जयदेव जी ने उस कन्या के मुख से यह सुन कर प्रसन्न हो कर उस का पाणिग्रहण किया। अनेक लोगों का मत है कि जयदेव जी ने पूर्व में एक विवाह किया था, उस स्त्री के मृत्यु के पीछे उदास होकर पुरुषोत्तमक्षेत्र में रहते थे। पद्मावती उन की दूसरी स्त्री थी। इन्हीं पद्मावती के समय, संसार में आदरणीय कविता रत्न का निकष गीतगोविन्द काव्य जयदेव जी ने बनाया।

गीतगोविन्द के सिवा जयदेव जी की और कोई कविता नहीं मिलती। प्रसन्नराघव पक्षधरी चन्द्रालोक और सीताविहार काव्य विदर्भ नगर वासी कौंडिन्य गोत्रोद्भव महादेव पण्डित के पुत्र दूसरे जयदेव जी के बनाए हैं, जिन का काव्य में पीयूषवर्ष और न्याय में पक्षधर उपनाम था, वरञ्च अनेक विद्वानों का मत है कि तीन जयदेव हुए हैं, यथा गीतगोविन्दकार, प्रसन्नराघवकार और चन्द्रालोककार, जिन का नामान्तर पीयूषवर्ष है।

पद्मावती के पाणिग्रहण के पीछे जयदेव जी अपने स्थापित इष्टदेव की सेवा निर्वाहार्थ द्रव्य एकत्र करने की इच्छा से वा तीर्थाटन और धर्म्मोपदेश की इच्छा से निज देश छोड़ कर बाहर निकले। श्रीवृन्दावन की यात्रा करके जयपुर वा जयनगर होते हुए जयदेव जी मार्ग में चले जाते थे कि डाकुओं ने धन के लोभ से उन पर आक्रमण किया और केवल धन ही नहीं लिया, वरञ्च उन के हाथ पैर भी काट लिए। कहते हैं कि किसी धार्मिक राजा के कुछ भृत्य लोग उसी मार्ग से जाते थे। उन लोगों ने जयदेव जी की यह दशा देखा और अपने राज्य में उन को उठा ले गए।

वहां औषध इत्यादि से कुछ इन का शरीर स्वस्थ हुआ। इसी अवसर में चोर भी उस नगर में आए और साधु वेश में उस नगर के राजा के यहां उतरे। तव राजा के घर में जयदेव जी का बड़ा मान था और दान धर्म सब इन्हीं के द्वारा होता था। जयदेव जी ने इन साधु वेशधारी चोरों को अच्छी तरह पहचान लिया और यदि वे चाहते तो भली भांति अपना बदला चुका लेते, परन्तु उन के सहज उदार और दयालु चित्त में इस बात का ध्यान तक न आया, वरञ्च दानादिक देकर उन का बड़ा आदर किया। बिदा के समय भी उन को बड़े सत्कार से अच्छी विदाई देकर बिदा किया और राजा के दो नौकर साथ कर दिये कि अपनी सरहद तक उन को पहुंचा आवे। मार्ग में राजा के अनुचर ने उन चोरों से पूछा कि इन साधू जी ने और लोगों से विशेष आप का आदर क्यों किया। इस पर उन चाण्डाल चोरों ने यह उत्तर दिया कि जयदेव जी पहिले एक राजा के यहां रहते थे, इन्हों ने कुछ ऐसा दुष्कर्म्म किया कि राजा ने हम लोगों को इन के प्राण हरने की आज्ञा दिया, किन्तु दया परवश हो कर हम लोगो ने इन के प्राण नहीं लिए, केवल हाथ पैर काट के छोड़ दिया। इसी बात के छिपाने के हेतु जयदेव ने हमलोगों का इतना आदर किया। कहते हैं कि मनुष्यों को आधारभूता पृथ्वी इस अनर्थ मिथ्याप्रवाद को न सह सकी और द्विधा विदीर्ण हो गई। वे चोर सब उसी पृथ्वीगर्त में डूब गए और परमेश्वर के अनुग्रह से जयदेव जी के भी हाथ पैर फिर से यथावत् हो गए। अनुचरों के द्वारा यह वृत्तान्त सुन कर और जयदेव जी से पूर्ववृत्त जान कर राजा अत्यन्त ही चमत्कृत

हुआ। आश्चर्य घटना अविश्वासी विद्वानों का मत है कि जयदेव जी ऐसे सहृदय थे कि उन के सहज स्वभाव पर रीझ कर लोगों ने यह गल्प कल्पित कर ली है।

तदनन्तर जयदेव जी ने अपनी पत्नी पद्मावती को भी वहीं बुला लिया। कहते हैं कि एक बेर उस राजा की रानी ने ईर्षा-वश पद्मावती की परीक्षा करने को उस से कह दिया कि जयदेव जी मर गए। उस समय जयदेव जी राजा के साथ कहीं बाहर गए थे। पतिप्राण पद्मावती ने यह सुनते ही प्राण परित्याग कर दिया। जब जयदेव जी आए और उन्हों ने यह चरित्र देखा तो श्रीकृष्ण नाम सुना कर उस को पुनर्जीवन दिया, किन्तु उस ने उठ कर कहा कि अब आप हम को आज्ञा ही दीजिए, हमारा इसी में कल्याण है कि हम आप के सामने परमधाम जायं और तद-नुसार उस ने फिर शरीर नहीं रक्खा। जयदेव जी इस से उदास होकर अपनी जन्मभूमि केंदुली ग्राम में चले आए और फिर यावत् जीवन वहीं रहे।

श्री जयदेव जी के गीतगोविंद के जोड़ पर गीतगिरीश नामक एक काव्य बना है, किन्तु जो बात इस में है वह उस मे सपने में भी नहीं है।

गीतगोविंद के अनेक टीकाकार भी हुए हैं, यथा उदय जो खास गोवर्द्धनाचार्य का शिष्य था और जयदेव जी से भी कुछ पढ़ा था। एक टीका उस की बनाई है और पीछे से अनेक टीका बनी हैं। उदयन की टीका जयदेव जी के समय में बन चुकी थी

और इस में भी कोई सन्देह नही कि गीतगोविंद जयदेव जी के जीवन काल ही से सारे संसार में प्रचलित हो गया था। गीतगोविंद दक्षिण मे बहुत गाया जाता है और वाला जी में सीढ़ियों पर द्राविड़ लिपि में खुदा हुआ है। श्री वल्लभाचार्य्य सम्प्रदाय में इस का विशेष भाव है, वरञ्च आचार्य्य के पुत्र गोसाईं विट्ठलनाथ जी की इस के प्रथम अष्टपदी पर एक रसमय टीका भी बड़ी सुन्दर है, जिस में दशावतार का वर्णन शृङ्गार परत्व लगाया है। वैष्णवो में परिपाटी है कि अयोग्य स्थान पर गीतगोविंद नही गाते, क्योकि उन का विस्वास है कि जहां गीतगोविंद गाया जाता है वहां अवश्य भगवान का प्रादुर्भाव होता है। इस पर वैष्णवों में एक आख्यायिका प्रचलित हैं। एक वुढ़िया को गीतगोविंद की "धीर समीरे यमुना तीरे" यह अष्टपदी याद थी। वह वुढ़िया गोवर्द्धन के नीचे किसी गांव में रहती थी। एक दिन वह वुढ़िया अपने वेंगन के खेत में पेड़ों को सींचती थी और अष्टपदी गाती थी, इस से ठाकुर जी उस के पीछे पीछे फिरें। श्रीनाथ जी के मन्दिर में तीसरे पहर को जब उत्थापन हुए तो श्री गोसाईं जी ने देखा कि श्रीनाथ जो का वागा फटा हुआ है और वैंगन के कांटे और मिट्टी लगी हुई है। इस पर जब पूछा गया तो उत्तर मिला कि अमुक वुढ़िया ने गीतगोविद गाकर हम को वुलाया इस से कांटे लगे, क्योंकि वह गाती गाती जहां जहां जाती थी मैं उस के पीछे फिरता था। तब से यह आज्ञा गोसाईं जी ने वैष्णवों में प्रचार किया कि कुस्थान पर कोई गीतगोविंद न गावे।

किम्वदन्ती है कि जयदेव जी प्रति दिवस श्रीगङ्गा स्नान करने जाते थे। उन का यह श्रम देख कर गङ्गा जी ने कहा कि तुम इतनी दूर क्यों परिश्रम करते हो, हम तुम्हारे यहां आप आवैंगे। इसी से अजयनद नामक एक धार में गङ्गा अब तक कैंदुली के नीचे बहती है।

जयदेव जी विष्णुस्वामी सम्प्रदाय में एक ऐसे उत्तम पुरुष हुए हैं कि सम्प्रदाय की मध्यावस्था में मुख्यत्व कर के इन का नाम लिया गया है। यथा—

विष्णुस्वामिसमारम्भा जयदेवादिमध्यगा। श्रीमद्वल्लभपर्य्यन्तास्तुमोगुरुपरम्पराम ॥१॥

जयदेव जी का पवित्र शरीर कैंदुली ग्राम में समाधिस्थ है। यह समाधि मन्दिर सुन्दर लताओं से वेष्टित हो कर अपनी मनोहरता से अद्यापि जयदेव जी के सुन्दर चित्त का परिचय देता है।

" जयदेव जी नितान्त करुण हृदय और परम धार्म्मिक थे। भक्ति विलसित महत्व छटा और अनुपम प्रीति व्यञ्जक उदार भाव यह दोनों उन के अन्तःकरण मे निरन्तर प्रतिभासित होते थे। उन्हों ने अपने जीवन का अर्द्ध काल केवल उपासना और धर्म्मघोषणा में व्यतीत किया। वैष्णव सम्प्रदाय मे इन के ऐसे धार्म्मिक और सहृदय पुरुष विरले ही हुए हैं "।

जयदेव जी एक सत्कवि थे, इस में कोई सन्देह नहीं। यद्यपि कालिदास भवभूति भारवि इत्यादि से वह बढ़ कर कवि थे यह नही कह सकते, पर इन की अपेक्षा इन को सामान्य भी नही कह सकते। बङ्गभूमि में तो कोई ऐसा सत्कवि आज तक हुआ नहीं।

" ललितपद विन्यास और श्रवण मनोहर अनुप्रास छटा निबन्धन से जयदेव की रचना अत्यन्त ही चमत्कारिणी है। मधुर पद विन्यास में तो बड़े २ कवि भी इस से निस्सन्देह हारे है "।

जयदेव जी का प्रसिद्ध ग्रन्थ गीतगोविन्द बारह सर्गों में विभक्त है। जिस में पूर्व में श्लोक और फिर गीत क्रम से रक्खे हैं। इस ग्रन्थ में परस्पर विरह, दूती, मान, गुण कथन और नायक का अनुनय और तत्पश्चात् मिलन यह सब वर्णित है। जयदेव जी परम वैष्णव थे। इस से उन्हों ने जो कुछ वर्णन किया अत्यन्त प्रगाढ़ भक्ति पूर्ण हो कर वर्णन किया है। इन्हों ने इस काव्य में अपनी रसशालिनी रचना शक्ति और चित्तरञ्जक सद्भाव शालित्व का एक शेष प्रदर्शन दिया है। पण्डितवर ईश्वरचन्द्रविद्यासागर स्वप्रणीत संस्कृत विषयक प्रस्ताव मे लिखते हैं " इस महाकाव्य गीतगोविन्द की रचना जैसी मधुर कोमल और मनोहर है उस तरह की दूसरी कविता संस्कृत-भाषा मे बहुत अल्प है। वरञ्च ऐसे ललित पद विन्यास, श्रवन मनोहर, अनुप्रास छटा और प्रसाद गुण और कहीं नहीं है।" वास्तव में रचना विषय में गीतगोविन्द एक अपूर्व पदार्थ है। और तालमानों के चातुर्य्य से और अनेक रागों के नाम के अनुकूल गीतों में अक्षर से स्पष्ट बोध होता है कि जयदेव जी गाना बहुत अच्छा जानते थे। कहते हैं कि गीतगोविन्द को अष्टपदी और अष्टताली नाम से भी लोग पुकारते हैं।

अनेक विद्वानों ने लिखा है गीतगोविन्द विक्रमादित्य की सभा में गाया जाता था। किन्तु यह कथा सर्वथा अश्रद्धेय है।

यह कोई और विक्रम होंगे जिन की सभा में गीतगोविन्द गाया जाता था, क्योंकि शकारि विक्रम के अनेक सौ वर्ष पश्चात् जयदेव जी का जन्म है। हां, कलिङ्ग कर्णाट प्रभृति देश के राजाओं की सभा में पूर्व से गीतगोविन्द निस्सन्देह गाया जाता था। वरञ्च जोनराज ने अपनी राजतरंगिणी में लिखा है कि श्रीहर्ष जब क्रम सरोवर के निकट भ्रमण करते थे उन दिनों गीतगोविन्द उन की सभा में गाया जाता था।

कहते हैं कि "प्रिये चारुशीले" इस अष्टपदी में "स्मरगरल खण्डन मम शिरसि मण्डनं" इस पद के आगे जयदेव जी की इच्छा हुई कि "देहि पद पल्लव मुदार" ऐसा पद दें, किन्तु प्रभु के विषय में ऐसा पद देने को उन का साहस नहीं पड़ा, इस से पुस्तक छोड़ कर आप स्नान करने चले गए। भक्तवत्सल, भक्त-मनोरथपूरक भगवान इस समय स्नान से फिरते हुए जयदेव जी के वेश में घर में आए। प्रथम पद्मावती ने जो रसोई बनाई थी उस को भोजन किया, तदनन्तर पुस्तक खोल कर "देहि पद पल्लवमुदारं" लिख कर शयन करने लगे। इतने में जयदेव जी आए तो देखा कि पतिप्राणा पद्मावती जो बिना जयदेव जी को भोजन कराये जल भी नहीं पीती थी वह भोजन कर रही है। जयदेव जी ने भोजन का कारण पूछा तो पद्मावती ने आश्चर्य-पूर्वक सब वृत्त कहा। इस पर जयदेव जी ने जाकर पुस्तक देखा तो "देहि पदपल्लवमुदारं" यह पद लिखा है। वह जान गए कि यह सब चरित्र उसी रसिकशिरोमणि भक्तवत्सल का है। इस से आनन्द पुलकित हो कर पद्मावती की थाली का अन्न खा कर ने को कृतार्थ माना।

कहते हैं कि पुरी के राजा सात्विकराय ने ईर्षापरवश होकर एक जयदेव जी की कविता की भांति अपना भी गीतगोविन्द बनाया था। इस झगड़े को निबटाने को कि कौन गीतगोविन्द अच्छा है दोनो गीतगोविन्दों को पण्डितों ने जगन्नाथ जी के मंदिर में रख कर बन्द कर दिया। जब यथा समय द्वार खुला तो लोगों ने देखा कि जयदेव जी का गीतगोविन्द श्री जगन्नाथ जी के हृदय में लगा हुआ है और राजा का दूर पड़ा है। यह देखकर राजा आत्महत्या करने को तयार हुआ। तब श्रीजगन्नाथ जी ने उस के सम्बोधन के वास्ते आज्ञा किया कि हम ने तेरा भी अङ्गीकार किया, शोच मत कर।

गीतगोविन्द अङ्गरेज़ी गद्य में सर विलियम जोन्स कृत, पद्य में आनरल्ड साहब कृत, लेटिन में लासिन कृत, जर्मन में रुकार्ट कृत, ऐसे ही अनेक भाषाओं में अनेक जन कृत अनुवादित हुआ है। हिन्दी में इस के छन्दोवद्ध तीन अनुवाद हैं। प्रथम राजा डालचन्द की आज्ञा से रायचन्द नागर कृत, द्वितीय अमृतसर के प्रसिद्ध भक्त स्वामी रत्नहरीदास कृत और तृतीय इस प्रवन्ध के लेखक हरिश्चन्द्र कृत। इन अनुवादों के अतिरिक्त द्राविड़ और कार्णाटादि भाषाओं में इस के अपरापर अन्य अनेक अनुवाद हैं।

लोग कहते हैं कि जयदेव जी ने गीतगोविन्द के अतिरिक्त एक ग्रन्थ रतिमञ्जरी भी वनाया था, किन्तु यह अमूलक है। गीतगोविन्द-कार की लेखनी से रतिमञ्जरी सा जघन्य काव्य निकले यह कभी सम्भव नहीं। एक गङ्गा की स्तुति में सुन्दर पद जयदेव जी का वनाया हुआ और मिलता है वह उन का वनाया हुआ हो तो हो।

इस भांति अनेक सौ बरस हुए कि श्रीजयदेव जी इस पृथ्वी को छोड़ गए। किन्तु अपनी कविता बल से हमारे समाज में वह सादर आज भी विराजमान हैं। इन के स्मरण के हेतु केन्दुली गांव में अब तक मकर की संक्रान्ति को एक बड़ा भारी मेला होता है, जिस में साठ सत्तर हज़ार वैष्णव एकत्र हो कर इन की समाधि के चारों ओर संकीर्त्तन करते हैं।



महिम्न और पुष्पदन्ताचार्य्य।

यह स्तोत्र अब ऐसा प्रसिद्ध है कि आर्ष की भांति माना जाता है, वरंच पुराणों में भी कहीं २ इस का माहात्म्य मिलता है। एक प्रसंग है कि जब पुष्पदन्त ने महिम्न बना के शिवजी को सुनाया तब शिवजी बड़े प्रसन्न हुए, इस से पुष्पदन्त को गर्व हुआ कि मैं ने ऐसी अच्छी कविता किया कि शिवजी प्रसन्न हो गए। यह बात शिवजी ने जाना और अपने भृङ्गी-गण से कहा कि मुह तो खोलो। जब भृङ्गी ने मुह खोला, तो पुष्पदन्त ने देखा कि महिम्न के बत्तीसों श्लोक भृङ्गी के बत्तीसो दांत में लिखे हैं। इस से यह बात शिव जी ने प्रगट किया कि ये श्लोक तुम ने नहीं बनाए हैं। वरंच यह तो हमारी अनादि स्तुति श्लोक है। यह बात प्रसिद्ध है कि पुष्पदन्त जब शाप से ब्राह्मण हुआ था तब यह स्तोत्र बनाया है और ऐसी ही अनेक आख्यायिका हैं। अब वह पुष्पदन्त कौन है और कब वह ब्राह्मण हुआ इस का विचार करते हैं। कथासरित-सागर में एक पहिला ही प्रसंग है, जिस से यह प्रसंग बहुत स्पष्ट

होता है, उस में लिखते हैं कि पार्वती जी का मान छुड़ाने को शिवजी ने अनेक विचित्र इतिहास कहे और उस समय नन्दी को आज्ञा दी थी कि कोई भीतर न आवै, परन्तु पुष्पदन्त गण ने योगवल से नन्दी से छिप कर भीतर जा कर वह सब कथा सुनी और अपनी स्त्री जया से कही और जया ने फिर पार्वती से कही। यह सुन कर पार्वती ने बड़ा क्रोध किया और पुष्पदन्त और उस के मित्र माल्यवान् को शाप दिया कि दोनों मृत्युलोक में जन्म लो। फिर जब उन सबों ने पार्वती को बहुत मनाया तब पार्वती ने कहा कि अच्छा विन्ध्याचल में सुप्रतीक नाम यक्ष काणभूति पिशाच हुआ है उस को देख कर पुष्पदन्त जब यह सब कथा कहेगा तब दोष दूर होगा और काणभूति से जब माल्यवान् सुनेगा तब शाप से छूटेगा। वही पुष्पदन्त वररुचि नामक कवि कौशाम्बी में हुआ और सुप्रतिष्ठ नगर में माल्यवान् गुणाढ्य कवि हुआ। यथा—

अवदच्चचन्द्रमौलिः कौशाम्बीत्यास्तियामहानगरी।
तस्या सपुष्पदतो वररुचि नामा प्रिये जातः॥ १॥
अन्यश्च माल्यवानपि नगरे सुप्रतिष्ठाख्ये।
जातो गुणाढ्य नामा देवितयो रेषवृत्तान्तः॥ २॥"

कौशाम्बी नगरी सोमदत्त वा अग्निशिख नामा ब्राह्मण की स्त्री वसुदत्ता से वररुचि का जन्म हुआ और पिता छोटे ही पन में मर गया, इस से माता ने बड़े कष्ट से इस का पालन किया। यह छोटे ही पन में ऐसा श्रुतिधर था कि एक बेर जो सुनता वा जो

कला देखना कण्ठ कर लेता और जान जाता। एक समय वेतस-पुर के देवस्वामी और कदम्बक नामा ब्राह्मण के पुत्र इन्द्रदत्त और व्याड़ि इस के घर में आए। वहां इन दोनों ने वररुचि को एक श्रुतिधर सुन के प्राति शांख्य पढ़ा और वररुचि ने उन दोनों को वह ज्यों का त्यों सुना दिया और वररुचि के पिता का मित्र भवानद नामक नट उस रात्रि को कहीं अभिनय करता था। वह देख कर वररुचि ने अपने माता के सामने ज्यों का त्यों फिर कर दिखाया। उन दोनों ब्राह्मणों को इस की एक श्रुतिधरता से बड़ी प्रसन्नता हुई, क्योंकि जब इन दोनों ने विद्या के हेतु तप किया था तब इन को वर मिला था कि पाटलिपुत्र में वर्ष नामक उपाध्याय से सब विद्या पाओगे। वर्ष उपवर्ष यह दो भाई शकर स्वामि ब्राह्मण के पुत्र थे। उन में उपवर्ष पण्डित और धनी था और वर्ष मूर्ख और दरिद्री था। उपवर्ष की स्त्री से अनादर पा कर वर्ष ने विद्या के हेतु तप किया और स्कन्द से सब विद्या पाई, परन्तु स्कन्द ने कहा था कि जो एक श्रुतिधर हो उस के सामने तुम अपनी विद्या प्रकाश करना। सो जब वर्ष के पास ये दोनों ब्राह्मण गए तब उस की स्त्री ने कहा कि एक श्रुतिधर कोई हो तो ये अपनी विद्या प्रकाश करें, अन्यथा न प्रकाश करेंगे। इसी से वे दोनों ब्राह्मण वररुचि को एक श्रुतिधर पा कर बड़े प्रसन्न हुए। वररुचि की माता से उन दोनों ने सब वृत्तांत कह कर वररुचि को साथ लिया और फिर पाटलिपुत्र में आए, क्योंकि उस की माता से भी आकाशवाणी ने कहा था कि तेरा पुत्र एक श्रुतिधर होगा और वर्ष

से सब विद्या पढ़ेगा और व्याकरण का आचार्य्य होगा। वर्ष ने तब उन तीनों को विद्या पढ़ाया और बहुत प्रसन्न हुआ, क्योंकि वररुचि एक श्रुतिधर द्वि श्रुतिधर व्याड़ि और इन्द्रदत्त त्रि श्रुतिधर था। वर्ष को नगर के लोग मूर्ख जानते थे, पर जब एकाएकी उस के विद्या का प्रकाश हुआ तो सब ब्राह्मणवर्ग बड़े प्रसन्न हुए और नंद राजा ने भी बहुत सा धन वर्ष को दिया। फिर इन तीनों ने बड़ी विद्या पढ़ी और वररुचि ने उपवर्ष की कन्या उपकोषा से विवाह किया और उपकोषा अपने पातिव्रत और चरित्र से नन्द की भगिनी हुई। वर्ष के एक पाणिनी * नामा मूर्ख शिष्य ने शिव

---

* राजा शिवप्रसाद यों लिखते हैं —"समय के उलट फेर में हमारे पडित लोग जो कुछ अपनी पडिताई दिखलाते हैं लिखने योग्य नहीं है। इसी एक बात से सोच लो कि जिस पडित से पाणिनि वैय्याकरण का जमाना पूछोगे छूटते कहेगा कि सत्ययुग में हुआ था। लाखों बरस बीते परतु इस से इन्कार न करेगा कि कात्यायन की पतजलि ने टीका लिखी और पतजलि की व्यास ने। अब हमचन्द्र अपने कोश में कात्यायन का नाम बररुचि बतलाता है और कश्मीर का सोमदेव भट्ट अपने कथा-सरित्सागर में लिखता है कि कात्यायनवररुचि कौशाम्बी में, जो अब प्रयाग के पास जमना के किनारे कोसम गाव कहलाता है, पैदा हुआ, पाणिनि से व्याकरण में शास्त्रार्थ किया और राजा नन्द का मत्री हुआ। मुद्राराक्षस इत्यादि बहुत ग्रथों से साबित है कि नन्द के बाद ही चन्द्रगुप्त राज्यसिंहासन पर बैठा और चन्द्रगुप्त का जमाना ऐसा निश्चय ठहर गया है कि जैसे पलासी की लड़ाई अथवा नादिरशाही अथवा पृथ्वीराज और विक्रम का कहो कि हम पाणिनि का जमाना अब अढाई हजार बरस से इधर मानें या लाखों बरस से उधर? पतजलि चन्द्रगुप्त के पीछे हुआ इस में किसी तरह का सदेह नहीं, क्योंकि उस ने अपने भाष्य में "सभाराजा मनुष्य पूर्वा" इस सूत्र पर "चन्द्रगुप्तसभम्" ऐसा उदाहरण दिया है।"

जी से वर पा कर व्याकरण बनाया और जब वररुचि ने उस से वाद किया तो शिव जी ने हुंकार के वररुचि का इन्द्रमत का व्याकरण भुला दिया, इस से वररुचि ने फिर तपस्या कर के शिवजी से पाणिनि व्याकरण सीखा। यह वररुचि बहुत दिन तक योगानन्द का मन्त्री रहा और इस का नामान्तर कात्यायन था, परन्तु यह नन्द का मन्त्री कैसे हुआ और कब तक रहा यह यहां नहीं लिखते, क्योंकि प्रसङ्ग के बाहर है। यह वन २ फिरने लगा। जब शकटार ने चाणक्य द्वारा नन्दवंश का नाश किया तब

Dr Rajendra Lal Mitra L L D in his Indo-Aryans No 1 P 19 says, "According to Dr Goldstucker, the Grammar of Panini was composed between the 9th and the 11th centuries before Christ Professor Max Muller brings down the age of the Grammar to the 6th century B C"

पाणिनीय व्याकरण के समय मे निम्न लिखित बातें होती थीं।

१ उस समय के लोगों मे हंसी करने की चाल थी। एहिमन्ये ओदन भोक्ष्यसे इति भुक्तः सोऽतिथिभिः—मानो भात खाने आया है सब खा पी गया।

२ श्राद्धों मे नाती को अवश्य बुलाने की चाल थी। निमन्त्रण, आवश्यके श्राद्ध भोजनादौ दौहित्रादेः प्रवर्तन—निमन्त्रण, अर्थात् जैसे नाती वगैरह को श्राद्ध भोजन मे बुलाना।

३ नृत्य और नृत्य मे भेद। गात्र विक्षेपमात्र नृत भाडों का तमाशा, बदन तोडना इत्यादि। पदार्थाभिनयोनृत्य—भावादिकों का दिखलाना।

४ बहुत सी कहावते उस समय के लोग जानते थे। जैसा—नविश्वसेदविश्वस्त—जिस का विश्वास एक बेर गया फिर उस का विश्वास न करना।

उदास हो कर और विन्ध्याचल में काणभूति पिशाच को देख कर अपना पूर्व जन्म स्मरण कर के उस से सब कथा कह कर वदरिकाश्रम मे जा कर योग से अपनी गति को गया और शाप से छूटा। गन्धर्व से भी पहिले जन्म में यह गङ्गातीर के अहार नामक ग्राम मे गोविन्ददेव ब्राह्मण अग्निदत्ता ब्राह्मणी का पुत्र देवदत्त था और प्रतिष्ठानपुर के राजा की कन्या से विवाह किया था। उस कन्या ने पहले दांत में फूल दवा कर उस को संकेत बताया था।

---

५ आलिङ्गन करने की रीति थी। आश्लिषत् कन्या देवदत्त—देवदत्त ने कन्या को आलिङ्गन दिया।

६ लड़कियों को गहना पहिनाने की चाल। उपस्कृता कन्या—अलकार पहिनाई गई कन्या।

७ मुहाविरेदार बोलने की चाल। हस्तयते—हाथी पर चढके जाता है। पादयते—लात मारता है।

८ लोग बहुत भावुक थे। सिद्धशब्दो ग्रन्थान्ते मङ्गलार्थ——ग्रन्थ के अन्त में। सिद्ध——ऐसा लिखो, क्योंकि यह मङ्गल है।

९ वृषस्यतिगौः —गाय उठी है।

१० महल बना करते थे। कुटीयति प्रासादे। महल में बैठ कर झोपडी समझता है।

११ भिक्षुक लोग राजा के पास जाया करते थे। भिक्षुकः प्रभुमुपातिष्ठते।

१२ मल्लयुद्ध हुआ करता था। आह्वयते—मैदान में खड़े होकर पुकारना। नहीं तो आह्वयति।

१३ खिराज दिया जाता था। कर विनयते—कर देने को निकालता है।

१४ शास्त्र की चर्चा रहा करती थी। शास्त्रेवदते—शास्त्र में बोल सकता है।

इस से जब वह ब्राह्मण वरदान पाकर शिवगण हुआ तब उस की स्त्री भी जया प्रतिहारी हुई।

इस कथा के व्याख्यान से यह स्पष्ट होता है कि वर्णन नन्द के राज्य के समय का है और उस समय के देवता शिव और स्कन्ध थे और व्याकरण का बड़ा प्रचार था। कातन्त्र कालाप एन्द्र पाणिनी इत्यादि मत में परस्पर बड़ा विरोध था। संस्कृत प्राकृत पैशाची और देश भाषा बहुत प्रसिद्ध थी, परन्तु पांच और भाषा भी प्रचलित थी। पाटलिपुत्र नया बसा था, प्रतिष्ठानपुर और अयोध्या भी बहुत बसती थी। धूर्तता फैल गई थी और हिन्दुस्तान मे पश्चिम देश बहुत मिला हुआ था, इत्यादि।

इस बृहत्कथा में ऐसे ही गुणाढ्य कवि के भी तीनो जन्म लिखे हैं और उस का बृहत्कथा का पैशाची भाषा में निर्माण करना, उस में छः लाख ग्रन्थ जला देना और एक लाख ग्रन्थ नर वाहन दत्त के चरित्र का राजा शात वाहन को देना, इत्यादि, सविस्तर वर्णित है।

अब यह बृहत्कथा कब बनी है और किस ने बनाया है इस के विचार में चित्त बहुत दोलायित होता है, क्योंकि इस का काल ठीक निर्णीत नहीं होता। नन्द के समय की भी नहीं मान सकते, क्योंकि इसी बृहत्कथा में विक्रमादित्य उदयन ऐसे प्राचीन नवीन अनेक राजाओं का वर्णन है, परन्तु इतना कह सकते हैं कि इस का मूल प्राचीन काल से पड़ा है और उस को अनेक काल में अनेक कवि बढ़ाते गए हैं, क्योंकि " कात्यायनाद्यैः कृतिः, तत्-

पुष्पदन्तादिभिः" इत्यादि पदो मे आदि शब्द मिलता है। वा अनेक प्राचीन सुनी हुई कथाओं को किसी ने एकत्र कर के आदर के हेतु उस मे पुष्पदन्त का नाम रख दिया हो तो भी आश्चर्य नही, क्योंकि कात्यायन वररुचि का होना खीस्ताब्दीय के १२० वर्ष पूर्व लोग अनुमान करते है और विक्रम का काल पण्डितों ने ५०० खीस्ताब्द के लगभग निश्चय किया है और ऐसा मानने से प्रोफेसर गोल्डस्टकर इत्यादि इतिहासवेत्ताओं का दो वररुचि मानने वाला मत भी स्पष्ट खण्डित होता है, क्योंकि बृहत्कथा में जब विक्रम का चरित्र है तब उसी विक्रमादित्य वाले वररुचि का नाम कात्यायन सम्भव है।

परन्तु हमारा कथन यह है कि संस्कृत बृहत् कथा गुणाढ्य की बनाई ही नही है, क्योंकि उस में स्पष्ट लिखा है कि गुणाढ्य ने संस्कृत बोलना छोड़ दिया था, इस से पिशाच भाषा में बृहत्कथा बनाया। तो इस दशा में सम्भव है कि किसी ने यह बृहत्कथा बना कर वररुचि गुणाढ्य पुष्पदन्त इत्यादि का नाम आदर और प्रमाण पाने के हेतु रख दिया हो।

अब जो बृहत्कथा मिलती है वह तीस हज़ार श्लोक मे रामदेव भट्ट के पुत्र सोमदेव भट्ट की बनाई है, जो उस ने कश्मीर के राजा संग्रामदेव के पुत्र अनन्त देव की रानी सूर्यवती के चित्तविनोद के हेतु बनाई है और इसी अनन्तदेव के पुत्र कमलदेव हुए और कमलदेव के पुत्र श्री हर्षदेव हुए। कश्मीर के इन राजाओं के नाम चित्त को और भी संशय में डालते हैं, क्योकि "रत्नावली

वाला श्रीहर्ष कालिदास के पहिले का है, क्योंकि कालिदास ने मालविकाग्नि मित्र में धावक कवि का नाम प्राचीन कवियों में लिखा है। अब इस दशा में विरोध का परिहार यों होसकता है कि जिस विक्रम का चरित्र बृहत्कथा में है वह नवरत्न वाला विक्रम नहीं, किन्तु कोई प्राचीन विक्रम है। और यह बृहत्कथा धाव के थोड़े ही काल पहिले कश्मीर में सोमदेव ने बनाई है, क्योंकि इस में नन्द और विक्रम के नाम की भांति भोज, कालिदास इत्यादि का नाम नहीं है और नवरत्न वाला वररुचि दूसरा था, क्योंकि उस काल में राजा और कवियों के वही नाम बारम्बार होते थे, इस से बृहत्कथा संवत् और ख्रिस्तसन के पूर्व बनी है और गुणाढ्य और वररुचि कुछ इस से भी पहिले के हैं।

परन्तु बृहत्कथा के किसी लेख का हम प्रमाण नहीं करते, क्योंकि यह बड़ा ही असंगत ग्रन्थ है। जैसा अनन्त पंडित की बनाई मुद्राराक्षस की पूर्व पीठिका में नन्द का नाम सुधन्वा लिखा है और इस में योगनन्द है। उस में जो वररुचि के मन्त्री होने का प्रसंग है वह इस पीठिका में कहीं मिलताही नहीं और पाणिनी, वर्ष, कात्यायन, व्याड़ि, इन्द्रदत्त और अनेक व्याकरण के आचार्य बृहत्कथा के मत से एक काल के थे, पर बुद्धिमानों ने इन सब के काव्य में बड़ा भेद ठहराया है। इस से इतिहास विषय में बृहत्कथा अप्रमाणिक है।

बृहत्कथा का वर्णन और गुणाढ्य इत्यादि कवियों का वर्णन आर्य्या सप्तशती बनानेवाले गोवर्द्धन कवि ने किया है और

गोवर्द्धन कवि का काव्य जयदेव जी के काल से निश्चित होगा। बंगाली लेखकों ने जयदेव जी का समय पन्द्रहवां शतक ठहराया है, पर इस निर्णय मे परम भ्रांत हुए हैं, क्योंकि जयदेव जी का काल एक सहस्र वर्ष के पूर्व है और इस में प्रमाण के हेतु पृथ्वीराज रायसा में चंद कवि का जयदेव जी का और गीतगोविन्द वर्णन ही प्रमाण है। जयदेव जी ने गोवर्द्धन कवि का वर्णन वर्त्तमान क्रिया से किया है। इस से अनुमान होता है कि उस काल मे गोवर्द्धन कवि था। बङ्गाली लोगों में कोई बारहवें शतक में लक्ष्मन सेन के काल में जयदेव को मानते हैं और उस के समकालीन गोवर्द्धन इत्यादि कवियों को लक्ष्मन सेन की सभा के पञ्चरत्न मानते हैं। यह बात भी असम्भव है, क्योंकि पृथ्वीराज ग्यारहवें शतक में था और चन्द भी तभी था। तो जयदेव के चन्द के सैकड़ो वर्ष पहिले निस्सन्देह हुए हैं, क्योंकि चन्द ने प्राचीन कवियों की गणना में बड़ी भक्ति से जयदेव जी का वर्णन किया है। हां, यदि लक्ष्मन सेन को पृथ्वीराज के पहिले मानो तो जयदेव उस की सभा के पण्डित हो सकते हैं, नही तो समझ लो कि आदर के हेतु इन कवियों का नाम लक्ष्मन सेन ने अपनी सभा में रक्खा है। इससे चल सखि कुञ्जं की भाषा और अङ्गरेजी इतिहास वेत्ताओं का मत लेकर बंगालियों ने जयदेव जी का जो काल निर्णय किया है वह अप्रमाण है यह निश्चय हुआ और वृहत्कथा उस काल के भी पहिले बनी है यह भी सिद्धान्तित हुआ।

श्री वल्लभाचार्य्य का जीवनचरित्र।

दोहा—तम पाखंड हि हरन करि, जन मन जलज विकास।
जयति अलौकिक रवि कोउ, श्रुति पथ करन प्रकास॥

जो लोग बहुत प्रसिद्ध हैं और जिन को लाखों मनुष्य सिर झुकाते हैं उन के जीवनचरित्र पढ़ने या सुनने की किस को इच्छा न होगी। इस हेतु यहां पर श्री वल्लभाचार्य्य का जीवनचरित्र संक्षेप से लिखा जाता है।

मन्द्राज हाते में, तैलङ्गदेश के आर्कट्ट जिले में कांकरवल्लि गांव में भारद्वाज गोत्र, तैलंग ब्राह्मणजाति, पंचप्रवर, यजुर्वेद, तैत्तिरीयशाखा, दीक्षित सोमयागी उपनाम, यज्ञनारायण भट्ट के प्रसिद्ध वंश में, लक्ष्मण भट्ट जी की धर्मपत्नी इल्लमगारु के गर्भ से, चम्पारण्य में इन का जन्म हुआ।

लक्ष्मण भट्ट जी के तीन पुत्र थे। बड़े रामकृष्ण भट्ट जी युवावस्था ही में सन्यस्त हो गये और केशव पुरी नाम से प्रसिद्ध हुए। संझले पूर्वोक्ताचार्य और छोटे रामचन्द्र भट्ट जी, जिन के कृष्णकुतूहल गोपाल लीला इत्यादि अनेक ग्रन्थ हैं। इन्हों ने अपने नाना की वृत्ति पाई थी, परन्तु विवाह न करके अपना सब जीवन अयोध्या में बिताया।

लक्ष्मण भट्ट जी अपने घर के खान पान से बहुत दुखी थे। वे जब काशी में अपने जाति के ब्राह्मणों का सत्कार करने आये तो मार्ग में बितिया के इलाके में चौरा गांव के पास चम्पारण्य में

संवत् १५३५ वैशाख वदी ११, (१) आदित्यवार को मध्याह्न समय आचार्य का जन्म हुआ। जब ये पांच वर्ष के हुए तब चैत सुदी ६ के दिन अपने पिता से गायत्री उपदेश लिया और कृष्णदास मेघन को उसी दिन अष्टाक्षर मंत्र का उपदेश करके प्रथम वैष्णव किया।

उसी साल असाढ़ सुदी ८ को काशी के प्रसिद्ध पंडित माधवानन्द तीर्थ त्रिदण्डी से विद्याध्ययन किया और छोटेपन ही में पत्रावलम्बन ग्रन्थ कर के विश्वनाथ के दरवाजे पर लगा दिया और डौंड़ी पीट कर काशी के पण्डितों से पहला शास्त्रार्थ किया। जब इन के पिता काशी से चले, तो लक्ष्मणबाला जी में उन का देहान्त हुआ। उन की क्रियादिक के पीछे आचार्य पृथ्वी परिक्रमा को चले और विद्यानगर में जाकर, कृष्णदेव राजा की सभा में सब पण्डितों को जीत कर आचार्य पद पाया। सम्वत् १५४८ के वैशाख वदी २ को ब्रह्मचर्य धर्म से पहिली पृथ्वी परिक्रमा

---

(१) वल्लभदिग्विजय में लिखा है —सम्वत् १५३५ शाके १४०० वैशाख मास कृष्णपक्ष ११ रविवार मध्याह्न। एक पद श्री द्वारकेश जी कृत ॥ रागसारंग ॥

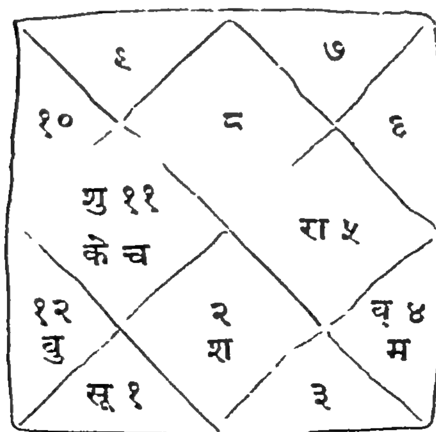
तत्व गुनवान ध्रुव माधवासित तरणि प्रथम सौभग दिवस प्रकट लक्ष्मण सुवन।
धन्य चम्पारन्य धन्य त्रैलोक्य जन धन्य अवतार भुवि है न ऐसो भवन ॥१॥
लग्न वृश्चिक कुंभ केतु कवि इन्दु सुख मीन बुध उच्च रवि वैरि नाशे।
मन्द वृष कर्क गुरु भौम युत सिंह में तमस के योग ध्रुव यश प्रकाशे ॥२॥
ऋच्छ धनिष्टा प्रतिष्टा अधिष्टान स्थिर विरह वदनानलाकार हरि को।
यह निश्चय द्वारकेश इन के शरण और को श्री वल्लाधीश सर को ॥३॥

करने चले और पण्डरपुर त्र्यम्बक उज्जैन होते हुए बृज आए और चार महीने श्रीवृन्दावन मे रह कर श्रीमद्भागवत का परायण किया और फिर सोरों अयोध्या वो नेमिषारण्य होते हुए काशी आए।

राह में जो पण्डित मिलते उन से शास्त्रार्थ करते और वैष्णव धर्म फैलाते थे।

काशी जी से गया और जगन्नाथ जी होते हुए फिर दक्खिन चले गए और सम्वत् १५५४ में अपना पहिला दिग्विजय समाप्त किया। दूसरे दिग्विजय में बृज में गोवर्द्धन पर्वत पर श्रीनाथ जी का स्वरूप प्रगट कर के उन की सेवा स्थापन किया, और तीन पृथ्वी परिक्रमा कर के सारे भारतखंड में वैष्णव मत फैलाकर बावन वर्ष की अवस्था में संवत् १५८७ आषाढ़ सुदी २ को काशी जी में लीला में प्राप्त भए। इन के

श्री महाप्रभुन की जन्मकुण्डली ऊपर के कीर्तन अनुसार।



दो पुत्र बड़े श्री गोपीनाथ जी, छोटे श्री विट्ठलनाथ जी। गोपीनाथ जी के पुत्र श्री पुरुषोत्तम जी, पर उन के आगे वंश नहीं। श्री विट्ठलनाथ जी के सात पुत्र, जिन में बड़े गिरधर जी और छोटे पुत्र यदुनाथ जी का वंश अब तक वर्त्तमान है। इन का मत शुद्धाद्वैत अर्थात् जगत्ब्रह्म के सच्चित्रूप से अभिन्न और सत्य, परन्तु भक्ति विना ब्रह्मस्वरूप का ज्ञान फलदायक नहीं। परमोपास्य श्रीकृष्ण और विष्णुस्वामी परमाचार्य, साधन सेवा मुख्य, प्रमाण ग्रन्थ, वेदव्याससूत्र, गीता और भागवत। तिलक दो रेखा का लाल ऊर्द्ध पुंड्र शङ्ख चक्र शीतल।

आचार्य ने अणुभाष्य, तत्वदीप, निवन्ध, रसमंडन, श्री मद्भागवत पर सुवोधिनी टीका, सिद्धान्त मुक्तावली, पुष्टिप्रवाह मर्यादा, पुरुषोत्तम सहस्र नाम, सिद्धान्त रहस्य, अन्तःकरण प्रवोध, भक्ति प्रकरण, नवरतन, विवेक धैर्य्याश्रय, पत्रावलम्वन, कृष्णाश्रय, भक्तिवर्द्धिनी, जलभेद संन्यासनिर्णय, जैमिनी सूत्रभाष्य, चित्त-प्रवोध, निरोधलक्षण, व्यासविराध लक्षण, परिवृढ़ाष्टक और वेद्यवल्लभ ये चौवीस ग्रन्थ वनाये हैं, जिन में दोनों सूत्रों का भाष्य और भागवत की टीका वहुत वड़े ग्रन्थ हैं।

सूरदास जी का जीवनचरित्र।

दो०–हरि पद पंकज मत्त अलि, कविता रस भरपूर।
दिव्य चक्षु कवि कुल कमल, सूर नौमि श्री सूर॥

सव कवियों के वृत्तान्त में सूरदास जी का वृत्तान्त पहिले लिखने के योग्य है, क्योंकि यह सव कवियों के शिरोमणि हैं और

कविता इन की सब भांति की मिलती है। कठिन से कठिन और सहज से सहज इन के पद बने हैं और किसी कवि में यह बात नहीं पाई जाती। और कवियों की कविता में एक एक बात अच्छी है और कविता एक ढंग पर बनती है, परन्तु इन की कविता में सब बात अच्छी है और इन की कविता सब तरह की होती है, जैसे किसी ने शाहनशाह अकबर के दरबार में कहा था—

दो०–उत्तम पद कवि गंग को, कविता को बल बीर।
केशव अर्थ गम्भीर को, सूर तीन गुन धीर॥

और इस के सिवाय इन की कविता में एक असर ऐसा होता है कि जी में जगह करे। जैसे एक वार्ता है कि किसी समय में एक कवि कहीं जाता था और एक मनुष्य बहुत व्याकुल पड़ा था। उस मनुष्य को अति व्याकुल देख कर उस कवि ने एक दोहा पढ़ा।

दो०–किधौं सूर को सर लग्यो, किधौं सूर की पीर।
किधौं सूर को पद सुन्यौ, जो अस विकल शरीर॥

इस वार्ता के लिखने का यह अभिप्राय है कि निस्सन्देह इन के पदों में ऐसा एक असर होता कि जो लोग कविता समझते हैं उन के जी पर इस की चोट लगै।

ये जाति के ब्राह्मण थे और इन के पिता का नाम बाबा राम दास जी था, जो गाना बहुत अच्छा जानते थे और कुछ धुरवपद इत्यादि भी बनाते थे और देहली या आगरे या मथुरा इन्हीं [illegible]रों में रहा करते थे और उस समय के नामी गुनियों में गिने

जाते थे। उन के घर यह सूरदास जी पैदा हुए। यह इस असार संसार के प्रपञ्च को न देखने के वास्ते आंख वन्द किए हुए थे। इन के पिता ने इन को गाना सिखाने में बड़ा परिश्रम किया था और इन की बुद्धि पहिले ही से बड़ी विलक्षण और तीव्र थी। सम्वत् १५४० के कुछ न्यूनाधिक में इन का जन्म हुआ था और आगरे में इन्हों ने कुछ फारसी विद्या भी सीखी थी। इन की जवानी ही में इन के पिता का परलोक हुआ और यह अपने मन के हो गए और भजन तभी से बनाने लगे। उस समय में इन के शिष्य भी बहुत से हो गए थे और तब यह अपना नाम पदों में सूर स्वामी रखते थे। इन्ही दिनों मे इन ने महाराज नल और दमयन्ती के प्रेम की कथा में एक पुस्तक बनाई थी जो अब नहीं मिलती। उस समय इन की पूर्ण युवा अवस्था थी। और उन दिनों में ये आगरे से नौ कोस मथुरा के रास्ते के बीच में एक स्थान जिस का नाम गऊघाट है, वहीं रहते थे और बहुत से इन के शिष्य इन के साथ थे। फिर ये आचार्य्य कुल शिरोरत्न श्री श्री वल्लभाचार्य्य महाप्रभु के शिष्य हुए। तव से यह अपना नाम पदों में सूरदास रखने लगे। ये भजनों में नाम अपना चार तरह से रखते थे—सूर, सूरदास, सूरजदास और सूरश्याम। जब यह सेवक हुए थे तब इन्हों ने यह भजन बनाया था।

भजन—चकई री चलि चरन सरोवर, जहं नहिं प्रेम वियोग।
जहं भ्रम निसा होत नहि कबहूं सो सागर सुख जोग॥ १॥

सनक से हंस मीन शिव मुनि जन नख रनि प्रभा प्रकास ।
प्रफुलित कमल निमेपन ससि डर गुंजन निगम सुबास ॥ २ ॥
जेहि सर सुभग मुक्ति मुक्ताफल सुकृत विमल जल पीजे ।
सो सर छाड़ि कुबुद्धि विहङ्गम इहां कहा रहि कीजे ॥ ३ ॥
जहां श्री सहस्र सहित नित क्रीड़त सोभित सूरज दास ।
अवन सुहाई विपै रस छीलर वा समुद्र की आस ॥ ४ ॥

फिर तो इन की सामर्थ्य बढ़ती ही गई और इन्हों ने श्री मद्भागवत को भी पदों में बनाया और भी सब तरह के भजन इन्हों ने बनाए। इन के श्रीगुरु इन को सागर कह कर पुकारते थे, इसी से इन ने अपने सब पदों को इकट्ठा कर के उस ग्रन्थ का नाम सूरसागर रक्खा। जब यह वृद्ध हो गए थे और श्री गोकुल में रहा करते थे, धीरे धीरे इन के गुण शाहनशाह अकबर के कानों तक पहुंचे। उस समय ये अत्यन्त वृद्ध थे और बादशाह ने इन को बुलवा भेजा और गाने की आज्ञा किया। तब इन ने यह भजन बना कर गाया।

मन रे करि माधो सो प्रीति।

फिर इन से कहा गया कि कुछ शाहनशाह का गुणानुवाद गाइए। उस पर इन्हों ने यह पद गाया।

केदारा—नाहिं न रह्यो मन में ठौर।
नन्द नन्दन अछत कैसे आनिये उर और ॥ १ ॥
चलत चितवत दिवस जागत सुपन सोवत राति।
हृदय तें वह मदन मूरति छिनु न इत उत जाति ॥ २ ॥

कहत कथा अनेक ऊधो लोग लोभ दिखाइ।
कहा करो चित प्रेम पूरन घट न सिंधु समाइ ॥ ३ ॥
श्यामगात सरोज आनन ललित गति मृदु हास।
सूर ऐसे दरस कारन मरत लोचन खास ॥ ४ ॥

फिर सम्वत् १६२० के लगभग श्री गोकुल में इन्हों ने इस शरीर को त्याग किया। सूरदास जी ने अन्त समय यह पद किया था।

विहाग—खंजन नैन रूप रस माते।
अतिशय चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते॥
चलि चलि जात निकट श्रवनन के उलटि फिरत ताटंक फंदाते।
सूरदास अंजन गुन अटके नातरु अब उड़िजाते॥
दो०—मन समुद्र भयो सूर को, सीप भए चख लाल।
हरि मुक्ताहल परतही, मूंदि गए तत काल॥

संसार में जो लोग भाषा काव्य समझते होंगे वह सूरदास जी को अवश्य जानते होंगे और उसी तरह जो लोग थोड़े वहुत भी वैष्णव होंगे वह इन का थोड़ा वहुत जीवनचरित्र भी अवश्य जानते होंगे। चौरासी वार्ता, उस की टीका, भक्तमाल और उस की टीकाओं में इन का जीवन विवृत किया है। इन्ही ग्रन्थों के अनुसार संसार को और हम को भी विश्वास था कि ये सारस्वत ब्राह्मण हैं, इन के पिता का नाम रामदास, इन के माता पिता दरिद्री थे, ये गऊघाट पर रहते थे, इत्यादि। अब सुनिए, एक पुस्तक सूरदास जी के दृष्टिकूट पर टीका [टीका भी सम्भव होता है उन्हीं की, क्योंकि टीका में जहां अलङ्कारों के लक्षण दिए

है वह दोहे और चोपाई भी सूर नाम से अङ्कित हैं] मिली है। इस पुस्तक में ११८ दृष्टिकूट के पद अलङ्कार और नायिका के क्रम से हैं और उन का स्पष्ट अर्थ और उन के अलङ्कार इत्यादि सब लिखे हैं। इस पुस्तक के अन्त में एक पद में कवि ने अपना जीवनचरित्र दिया है, जो नीचे प्रकाश किया जाता है। अब इस को देख कर सूरदास जी के जीवनचरित्र और वंश को हम दूसरी ही दृष्टि से देखने लगे। वह लिखते हैं कि 'प्रथजगात [१]' प्रार्थज गोत्र वंश में इन के मूल पुरुष ब्रह्मराव [२] हुए जो बड़े सिद्ध और देवप्रसाद लब्ध थे। इन के वंश में भोचन्द [३] हुआ। पृथ्वीराज [४] जिस को ज्वाला देश दिया उस के चार पुत्र, जिन में पहिला राजा हुआ। दूसरा गुणचन्द्र। उस का पुत्र सीलचन्द्र उस का वीरचन्द्र। यह वीरचन्द्र रनभ्रमर [रण-थम्भोर प्रसिद्ध हम्मीर [५] के साथ खेलता था। इस के वंश में

---

१ 'प्रथ जगात' इस जाति वा गोत के सारस्वत ब्राह्मण सुनने में नहीं आए। पण्डित राधाकृष्ण सगृहीत सारस्वत ब्राह्मणों की जाति माला में 'प्रथ जगात' 'प्रथ' वा 'जगात' नाम के कोई सारस्वत ब्राह्मण नहीं होते। जगा वा जगातिआ तो भाट को कहते हैं।

२ ब्रह्मराव नाम से भी सन्देह होता है कि यह पुरुष या तो राजा रहा हो या भाट।

३ 'भौ' का शब्द हुआ अर्थ मे लीजिए तो केवल चन्द्र नाम था। चन्द्र नाम का एक कवि पृथ्वीराज की सभा मे था ? आश्चर्य !!!

४ पृथ्वीराज का काल सन् ११७६।

५ हम्मीर चौहान, भीमदेव का पुत्र था। रणथम्भौर के किले में इसी की रानी इस के अलाउद्दीन (दुष्ट) के हाथ से मारे जाने पर सहस्रावधि स्त्री के साथ सती

हरिचन्द [६] हुआ उस के पुत्र को सात पुत्र हुए, जिन में सब से छोटा [कवि लिखता है] मैं सूरजचन्द था। मेरे छः भाई मुसलमानों के युद्ध [७] मे मारे गए। मैं अन्धा कुबुद्धि था। एक दिन कूंए में गिर पड़ा, तो सात दिन तक उस [अंधे] कूंए में पड़ा रहा, किसी ने न निकाला। सातएं दिन भगवान ने निकाला और अपने स्वरूप का (नेत्र दे कर) दर्शन कराया और मुझ से बोले कि वर मांग। मैं ने वर मांगा कि आप का रूप देख कर अब और रूप न देखें और मुझ को दृढ़ भक्ति मिलै और शत्रुओं (८) का नाश हो। भगवान ने कहा ऐसा ही होगा। तू सब विद्या में निपुण होगा। प्रबल दक्षिण के ब्राह्मण-कुल (९) से शत्रु का

हुई थी। इसी का वीरत्व यश सर्व्वसाधारण में 'हमीर हठ' के नाम से प्रसिद्ध है (तिरिया तेल हमीर हठ, चढै न दूजो बार) इसी की स्तुति में अनेक कवियों ने वीर रस के सुन्दर श्लोक बनाए हैं "मुञ्चति मुञ्चति कोष भजति च भजति प्रकम्प-मग्विर्ग। हमीर वीर खड्गे त्यजति च त्यजति क्षमा माशु"। इस का समय सन् १२६० (एक हमीर सन ११९२ में भी हुआ है)।

६ सम्भव है कि हरिचन्द के पुत्र का नाम रामचन्द्र रहा हो जिसे वैष्णवों ने अपनी रीति के अनुसार रामदास कर लिया हो।

७ उस समय तुगलकों और मुगलों का युद्ध होता था।

८ शत्रुओं से लौकिक अर्थ लीजिए तो मुगलों का कुल [इस से सम्भव होता है इन के पूर्व पुरुष सदा से राजाओं का आश्रय कर के मुसलमानों को शत्रु समझते थे या तुगलकों के आश्रित थे इस से मुगलों को शत्रु समझते थे] यदि अलौकिक अर्थ लीजिए तो काम क्रोधादि।

९ सेवा जी के सहायक पेशवा का कुल जिस ने पीछे मुसलमानों का नाश

नाश होगा। और मेरा नाम सूरजदास सूर सूरश्याम इत्यादि रखकर भगवान अन्तर्ध्यान हो गए। मैं व्रज में बसने लगा। फिर गोसाईं (१०) ने मेरी अष्ट (११) छाप में थापना की। इत्यादि। इस लेख से और लेख अशुद्ध मालूम होते हैं, क्योंकि जैसा चौरासी वार्त्ता की टीका में लिखा है कि दिल्ली के पास सीही गांव में इन के दरिद्र माता पिता के घर इन का जन्म हुआ यह बात नहीं आई। यह एक बड़े कुल में उत्पन्न थे और आगरे वा गोपाचल में इन का जन्म हुआ। हां, यह मान लिया जाय कि मुसलमानों के युद्ध में इतने भाइयों के मारे जाने के पीछे भी इन के पिता जीते रहे और एक दरिद्र अवस्था में पहुंच गए थे और उसी समय में सीही गांव में चले गए हों तो लड़ मिल सकती है। जो हो, हमारी भाषा कविता के राजाधिराज सूरदास जी एक इतने बड़े वंश के हैं यह जान कर हम को बड़ा आनन्द हुआ।

किया। अलौकिक अर्थ लीजिय तो सूरदास जी के गुरु श्री वल्लभाचार्य्य दक्षिण-ब्राह्मण-कुल के थे।

१० 'गोसाईं' श्री विट्ठलनाथ जी श्री वल्लभाचार्य्य के पुत्र।

११ अष्ट छाप यथा सूरदास, कुम्भनदास, परमानन्ददास और कृष्णदास ये चार महात्मा आचार्य्य जी के सेवक और छीत स्वामि गोविंद स्वामि, चतुर्भुज दास और नन्ददास ये गोसाईं जी के सेवक। ये आठो महा कवि थे।

दोहा—श्री वल्लभआचार्य्य के, चारि शिष्य सुखरास।
परमानन्द अरु सूर पुनि, कृष्णरु कुभन दास ॥ १ ॥
विट्ठलनाथ गोसाईं के, प्रथम चतुर्भुज दास।
छीतस्वामि गोविन्द पुनि, नन्ददास सुख बास ॥ २ ॥

इस विषय में कोई और विद्वान जो कुछ और विशेष पता लगा सके तो उत्तम हो ।

भजन—प्रथमही प्रथ जगते में प्रगट अद्भुत रूप ।
ब्रह्मराव विचारि ब्रह्मा राखु नाम अनूप ॥
पान पय देवी दियो सिव आदि सुर सुर पाय ।
कह्यौ दुर्गा पुत्र तेरो भयो अति अधिकाय ॥
पारि पायन सुरन के सुर सहित अस्तुति कीन ।
तासु वंस प्रसिद्ध मैं भौचन्द चारु नवीन ॥
भूप पृथ्वीराज दीन्हों तिन्हें ज्वाला देस ।
तनय ताके चार कीन्हों प्रथम आप नरेस ॥
दूसरे गुनचन्द ता सुत सीलचन्द सरूप ।
वीरचन्द प्रताप पूरन भयो अद्भुत रूप ॥
रन्तभार हमीर भूपत सग खेलत आय ।
तासु वस अनूप भो हरिचन्द अति विख्याय ॥
आगरे रहि गोपचल में रहौ ता सुत वीर ।
पुत्र जनमें सात ताके महा भट गम्भीर ॥
कृष्णचन्द उदारचन्द जु रूपचन्द सुभाइ ।
बुद्धिचन्द प्रकाश चौथी चन्द भे सुखदाइ ॥
देवचन्द प्रबोध संसृत चन्द ताको नाम ।
भयो सतो नाम सूरज चन्द मन्द निकाम ॥
सो समर करि स्याहि सेवक गए विध के लोग ।
रहो सूरज चन्दद्रगते होन भर वर सोक ॥

परो कूप पुकार काहू सुनी ना संसार।
सातएं दिन आइ जदुपति कीन आपु उधार॥
दियोचख दै कही सिसु सुनु मांगु बर जो चाइ।
हों कही प्रभु भगति चाहत सत्रु नास सुभाइ॥
दूसरो ना रूप देखो देखि राधा स्याम।
सुनत करुनासिन्धु भाखि एवमस्तु सुधाम॥
प्रबल दच्छिन विप्र कुलतें सत्रु ह्वै है नास।
अखिल बुद्धि बिचारि विद्यामान माने सास॥
नाम राखो मोर सूरज दास सूर सुश्याम।
भए अन्तर धान बीते पाछली निसि जाम॥
मोहि पन सोइ है व्रजकी बसेसु खिन्चित थाप।
थापि गोसांई करी मेरी आठ मद्धे छाप॥
विप्र प्रथ जगात को है भाव भूरि निकाम।
सूर है नदनन्द जू को लयो मोल गुलाम॥

सुकरात का जीवनचरित्र।

इतिहासों से प्रगट है कि यूनान देश प्राचीन काल मे हर तरह की विद्या शिल्प विज्ञान आदि के लिये अति प्रसिद्ध था, बरन हर एक विद्याओं की खान या उत्पत्ति भूमि कहा जाय तो कुछ अनुचित न होगा। वहीं के बड़े २ विद्वान और विज्ञानों मे एक सुकरात भी था। यह ईसाई सन् ४७१ वर्ष पहिले आसीनिया में पैदा हुआ था और " होनहार विरवान के होत चीकने

पात " इस कहावत के अनुसार छोटो ही उमर मे अपने वाप के सौदागरी पेशे का काम झटपट सीख सिखाय भलीभांति प्रखर हो गया। तव यह हर तरह की विद्याओं के सीखने में प्रवृत्त हुआ और अपना समय यूनान देश के विद्वानों में काटने लगा, जिन के सत्संग से कुछ दिनो के उपरान्त अपनो विमल वुद्धि के कारण यह सम्पूर्ण विद्या विज्ञान और शिल्पशास्त्र मे भली भांति कुशल हो यूनान के वड़े २ विद्वान् और दार्शनिको से भी वादा विवाद में भिड़ जाता था। उन का पक्ष खंडन कर अपनी वात अनेक युक्तियो से सिद्ध करता था। यहां तक कि कुछ दिनो में संपूर्ण यूनान-भर में इस को लोकोत्तर चमत्कार वुद्धि की धूम मच गई। एक वार सुकरात का वाप कहीं वाहर सफर को जाते समय इसे चार हजार लूर जो उस समय का यूनानी सिक्का था इस के निज के खर्च के लिए दे गया था। पर इस ने उन सब रुपयों को वतौर ऋण के अपने एक मित्र को दे दिया। उस ने रुपये इसे फिर लौटा कर न दिए, पर सुकरात ने इस वात का कुछ भी ख्याल न किया और न रुपए उस्से कभी मांगे। मेसिडोनिया का राजा अर्किलीस वहुत कुछ चाहा कि सुकरात एक वार उस्से किसी वात के लिए कुछ कहे, पर इस ने कभी इस वात की ओर ध्यान भी न किया। इस वुद्धिमान हकीम मे धीरज इतना था कि किसी तरह की तकलीफ या रंज जो इस पर आ पड़ते थे तो यह किसी प्रकार और लोगों को उस मानसी व्यथा को नहीं प्रगट होने देता था। उस के मन की सव से वड़ी अभिलाषा जिस के लिए वह अत्यन्त लौलीन रहा किया यह थी कि जिस तरह हो

जिसे हम अपनी जन्मभूमि को कुछ फाइदा पहुंचा सकें और सब लोग कुमार्ग से बच सक्ते और सीधे राह पर चलें, एक दूसरों की बुराई कभी न चेतें। यद्यपि इस सज्जन पुरुष ने कोई स्कूल या वाज करने की कोई जगह नहीं बनवाया पर अक्सर जहां लोगों की बहुत भीड़ भाड़ रहती उन के बीच यह खड़ा हो घंटों तक सदुपदेश किया करता था और दिन रात मनसा वाचा कर्मणा अपने देश के लोगों के हित में तत्पर रहा। हकीम अफलातून सुकरात का बहुत बड़ा शागिर्द था। मरती बार सुकरात ने तीन बात के लिये अपनी प्रसन्नता प्रगट की और हाथ जोड़ कर कहा, हे जगदीश्वर, मैं तुझे कोटि कोटि धन्यवाद देता हूं कि तू ने मुझे बातों के मर्म समझने की बुद्धि दी, यूनान ऐसे देश में जन्म दिया और अफलातून ऐसा शिष्य मुझे दिया। एक दिन अटिका का राजा अलसोबिडीस बड़े घमंड में भर यह डून हांक रहा था कि मेरे पास बड़ा धन है और मैं बड़े भारी राज्य का स्वामी हूं। जब सुकरात ने उस की यह घमंड की बात सुनी उससे कहा, अलसीबिडीस, तनिक इधर आ और भूगोल के नक्शे की ओर ध्यान कर, और बता तेरा राज्य अटिका कहां पर है। जब उस ने नक्शे को देखा, घमंड के नशे में जो चूर चूर था सब उतर गया और उस को आंख खुल गई। सिर नीचा कर कहा कि मेरा मुल्क यूनान जो संपूर्ण यूरोप का एक छोटा सा देश है उस का भी एक अत्यन्त छोटा प्रदेश है। उस की यह बात सुन सुकरात ने कहा, तो ए प्यारे, फिर क्यों इतनी डून की हांक रहा है? घमंड बहुत बुरा होता है, सर्व शक्तिमान जगदीश्वर के करतब से इस

भूमंडल पर एक से एक चढ़ वढ़ कर पड़े हैं, उन के सामने तू किस गिनती में है ? थोड़े दिन बाद यूनान के बहुत से अत्याचारी निष्ठुर मनुष्यों ने ईर्ष्या से उनहत्तरवें वर्ष में सुकरात पर यह दोष लगाया कि यह बुड्ढा असीना नगर के नव युवा लोगों को बुरे चालचलन की ओर रुजू करता है, उन के बाप दादाओं के पुराने वर्त्ताव और मत से हटा कर उन्हें नास्तिक बनाया चाहता है और उन के देवी देवताओं की निन्दा करता है। इन दोषों के कारण वह अदालत के सपुर्द हुआ। अदालत ने इसे विष पीकर मर जाने की सजा तजवीज की। उस निर्दोषी पर प्राणान्त दण्ड की सजा का हुकुम सुन जब सब उस के बन्धु भाई और मित्र विलाप कर और पछता रहे थे, सुकरात अत्यन्त धैर्य के साथ विष का प्याला उठा कर घूंट गया और अपने मरने तक सबों को सदुपदेश देता रहा। जब विष इस के सर्वाङ्ग में व्याप्त हो गया, यहां तक कि बोल भी न सकता था, तब इस ने आंख बन्द कर ली और सिधार गया।

महाराजाधिराज नैपोलियन का जीवनचरित्र।

९ वीं जनवरी सन् १८७३ ई० को बारह बज के २५ मिनट पर महाराजाधिराज ३ नैपोलियन ने इस असार संसार को त्याग किया। जो मनुष्य मरने के अढ़ाई वर्ष पूर्व एक प्रधान देश का राजा और संसार के सब मनुष्यों में मुख्य वीर और बुद्धिमान था और पांच लाख योद्धा जिस के साथ चलते थे और जिस ने एक सामान्य मेला किया था उस में सारे संसार के राजा

सके हम अपनी जन्मभूमि को कुछ फाइदा पहुंचा सकें और सब लोग कुमार्ग से बच सच्चे और सीधे राह पर चलें, एक दूसरे की बुराई कभी न चेतें। यद्यपि इस सज्जन पुरुष ने कोई स्कूल या वाज करने की कोई जगह नहीं बनवाया पर अक्सर जहां लोगों की बहुत भीड़ भाड़ रहती उन के बीच यह खड़ा हो घंटों तक सदुपदेश किया करता था और दिन रात मनसा वाचा कर्मणा अपने देश के लोगों के हित में तत्पर रहा। हकीम अफलातून सुकरात का बहुत बड़ा शागिर्द था। मरती बार सुकरात ने तीन बात के लिये अपनी प्रसन्नता प्रगट की और हाथ जोड़ कर कहा, हे जगदीश्वर, मैं तुझे कोटि कोटि धन्यवाद देता हूं कि तू ने मुझे बातों के मर्म समझने की बुद्धि दी, यूनान ऐसे देश में जन्म दिया और अफलातून ऐसा शिष्य मुझे दिया। एक दिन अटिका का राजा अलसीबिडीस बड़े घमंड में भर यह दून हांक रहा था कि मेरे पास बड़ा धन है और मैं बड़े भारी राज्य का स्वामी हूं। जब सुकरात ने उस की यह घमंड की बात सुनी उससे कहा, अलसीबिडीस, तनिक इधर आ और भूगोल के नक़्शे की ओर ध्यान कर, और बता तेरा राज्य अटिका कहां पर है। जब उस ने नक़्शे को देखा, घमंड के नशे में जो चूर चूर था सब उतर गया और उस की आंख खुल गई। सिर नीचा कर कहा कि मेरा मुल्क यूनान जो संपूर्ण यूरोप का एक छोटा सा देश है उस का भी एक अत्यन्त छोटा प्रदेश है। उस की यह बात सुन सुकरात ने कहा, तो ए प्यारे, फिर क्यों इतनी दून की हांक रहा है? घमंड बहुत बुरा होता है, सर्व शक्तिमान जगदीश्वर के करतब से इस

भूमडल पर एक से एक चढ़ वढ़ कर पड़े हैं, उन के सामने तू किस गिनती में है? थोड़े दिन वाद यूनान के वहुत से अत्याचारी निष्ठुर मनुष्यों ने ईर्ष्या से उनहत्तरवें वर्ष में सुकरात पर यह दोष लगाया कि यह बुड्ढा असीना नगर के नव युवा लोगों को बुरे चालचलन की ओर रुजू करता हैं, उन के वाप दादाओं के पुराने वर्त्ताव और मत से हटा कर उन्हें नास्तिक वनाया चाहता है और उन के देवी देवताओं की निन्दा करता है। इन दोषों के कारण वह अदालत के सपुर्द हुआ। अदालत ने इसे विष पीकर मर जाने को सजा तजवीज की। उस निर्दोषी पर प्राणान्त दण्ड की सजा का हुकुम सुन जव सव उस के वन्धु भाई और मित्र विलाप कर और पछता रहे थे, सुकरात अत्यन्त धैर्य के साथ विष का प्याला उठा कर घूंट गया और अपने मरने तक सवो को सदुपदेश देता रहा। जव विष इस के सर्वाङ्ग में व्याप्त हो गया, यहां तक कि वोल भी न सकता था, तव इस ने आंख वन्द कर ली और सिधार गया।

महाराजाधिराज नैपोलियन का जीवनचरित्र।

६ वीं जनवरी सन् १८७३ ई० को वारह वज के २५ मिनट पर महाराजाधिराज ३ नैपोलियन ने इस असार ससार को त्याग किया। जो मनुष्य मरने के अढ़ाई वर्ष पूर्व्व एक प्रधान देश का राजा और संसार के सव मनुष्यों में मुख्य वीर और वुद्धिमान था और पांच लाख योद्धा जिस के साथ चलते थे और जिस ने एक सामान्य मेला किया था उस में सारे संसार के राजा

और महाराज दौड़े आए थे, वही नैपोलियन इङ्गलैण्ड के एक गांव में एक छोटे घर में मरा ! ! ! इस से बढ़ के और क्या दुःख होगा कि जिस के एक लेख में रूम और रूस के महाराज पारिस की गलियों में दौड़ते थे उस के शव के साथ वही ग्राम निवासी लोग ! ! ! क्यों धन के अभिमानियो ! तुम अब भी अपने धन का अभिमान करोगे और अपने से छोटों को दुःख देने में प्रवर्त्त होगे ? यह वही नैपोलियन है जिस का दादा ऐसा प्रतापी था जिस ने सारे यूरप को हिला दिया था और सब अगरेज़ों को दांतो चने चबवा दिए थे। जर्मनी के युद्ध में नेपोलियन पराजित हुआ इस का कुछ शोच नहीं, क्योंकि जिस काल में नैपोलियन के स्थान का वा उस की समाधि का वा उस युद्धस्थान का भी चिन्ह भी न मिलेगा उस समय तक उन का नाम वर्त्तमान रहेगा।

महाराज नैपोलियन चिजिलहर्स्ट नामक स्थान में गाड़े गए। उस समय बोनापार्ट के वंश के सब लोग और पारिस के समस्त शिल्पविद्या के गुणियों का समाज विमान के आगे था। लार्डसाइडनी और लार्डस्फोल्ड महारानी विक्टोरिया और युवराज की ओर से आए थे और पचास सहस्र मनुष्य केवल कौतुक देखने को एकत्र थे और राजकुमार और विधवा महारानी भी साथ थी। शव को समाधि करने के पीछे बोनापार्ट के वंश के सब लोगों ने राजकुमार को पिता के स्थानापन्न भाव से वन्दना किया। इङ्गलैंड रूस इत्यादि सब राजकीय कार्य्यालय दस दिवस तक शोक भेष में रहे।

हम को लिखने में अत्यन्त खेद होता है कि पृथ्वी पर का एक

महा विख्यात पुरुष समाप्त हुआ। इस मनुष्य की सब आयुष्य प्रारम्भ से अंत तक चमत्कारित और फेरफार की एक विलक्षण शृङ्खला थी। कुछ काल तक राजा और कुछ काल तक रंक, सांप्रत के सब पराक्रमी राजा उस का आदर करते थे, तो क्या अब उस को तुच्छ मान कर उस की अप्रतिष्ठा करनी चाहिए ?

यद्यपि वे राजसिंहासन पर न थे और इंग्लैण्ड में केवल एक साधारण मनुष्य के समान रहते थे तथापि उन के मरण की दुःख-वार्त्ता श्रवण कर के राजकीय और राजसभा के अधिकारियों के चित्त अवश्य चकित होंगे और फ्रांस के राज्य प्रबंधों में इन के मृत्यु से कुछ विलक्षण फेरफार होगा। यह नैपोलियन फ्रेंच लोगों के मुख्य महाराज थे। और इन को तीसरे नेपोलियन कहते थे और बड़े नैपोलियन बोनापार्ट के भतीजे थे। इन का जन्म २० अप्रैल सन् १८०८ में फ्रांस देश में हुआ था और इन के पिता का नाम लुई बोनापार्ट था, जो लालैंड के महाराज थे। जब यह सात वर्ष के हुए थे तब प्रथम नैपोलियन का अंत का पराभव हुआ था। अनंतर इन को और इन के माता को फ्रांस छोड़ कर के अन्य देश में जाना पड़ा। इन्हों ने स्विटज़रलैंड में विद्याभ्यास आदि किया। पीछे इन को वहां की सेना में रहने की आज्ञा मिली। कुछ दिवस पर्य्यन्त थन सरोवर के तट के तोपखाने में अभ्यास किया। तद-नन्तर सन् १८३० में फ्रांस देश में राज्य संबंधी हलचल देखकर के फिर अपने स्वदेश में आने का उद्योग किया। परन्तु वह सफल न हुआ; बलटी सीमा के बाहर रहने की आज्ञा हुई। एक वर्ष के अनंतर स्विटजरलैण्ड छोड़ कर के टस्कनी में जाकर रहना पड़ा और

और महाराज दौड़े आए थे, वही नैपोलियन इङ्गलैण्ड के एक गांव में एक छोटे घर में मरा ! ! ! इस से बढ़ के और क्या दुःख होगा कि जिस के एक लेख में रूम और रूस के महाराज पारिस की गलियों में दौड़ते थे उस के शव के साथ वही ग्राम निवासी लोग ! ! ! क्यो धन के अभिमानियो ! तुम अब भी अपने धन का अभिमान करोगे और अपने से छोटों को दुःख देने में प्रवर्त्त होगे ? यह वही नैपोलियन है जिस का दादा ऐसा प्रतापी था जिस ने सारे यूरप को हिला दिया था और सब अगरेज़ो को दांतों चने चबवा दिए थे। जर्मनी के युद्ध में नैपोलियन पराजित हुआ इस का कुछ शोच नही, क्योकि जिस काल में नैपोलियन के स्थान का वा उस की समाधि का वा उस युद्धस्थान का भी चिन्ह भी न मिलेगा उस समय तक उन का नाम वर्त्तमान रहेगा।

महाराज नैपोलियन चिजिलहर्स्ट नामक स्थान में गाड़े गए। उस समय बोनापार्ट के वंश के सब लोग और पारिस के समस्त शिल्पविद्या के गुणियों का समाज विमान के आगे था। लार्डसाइडनी और लार्डस्फोल्ड महारानी विक्टोरिया और युवराज की ओर से आए थे और पचास सहस्र मनुष्य केवल कौतुक देखने को एकत्र थे और राजकुमार और विधवा महारानी भी साथ थी। शव को समाधि करने के पीछे बोनापार्ट के वंश के सब लोगो ने राजकुमार को पिता के स्थानापन्न भाव से वन्दना किया। इङ्गलैंड रूस इत्यादि सब राजकीय कार्य्यालय दस दिवस तक शोक भेष में रहे।

हम को लिखने में अत्यन्त खेद होता है कि पृथ्वी पर का एक

महा विख्यात पुरुष समान हुआ। इस शताब्दी के आदि के प्रारम्भ में फ्रांस तक राज्यक्रान्ति और फेरफार की एक विचित्र शृङ्खला थी। कुछ काल तक राजा और कुछ काल तक एक सम्राट के सब पराक्रमी राजा उस का आदर करते थे, तो क्या हम उस को तुच्छ मान कर उस की अप्रतिष्ठा करनी चाहिए?

यद्यपि वे राजसिंहासन पर न थे और इङ्गलैण्ड में केवल एक साधारण मनुष्य के समान रहते थे तथापि उन के मरण की दुःख-वार्त्ता श्रवण कर के राजकीय और राजसभा के अधिकारियों के चित्त अवश्य चलित होंगे और फ्रांस के राज्य प्रबन्धों में इन के मृत्यु से कुछ विलक्षण फेरफार होगा। यह नेपोलियन फ्रांस वालों के मुख्य महाराज थे। और इन को तीसरे नेपोलियन कहते थे और बड़े नेपोलियन बोनापार्ट के भतीजे थे। इन का जन्म २० अप्रैल सन १८०८ में फ्रान्स देश में हुआ था और इन के पिता का नाम लुई बोनापार्ट था, जो हालैण्ड के महाराज थे।

रोम के युद्ध में मिल गए। इतने में उन के ज्येष्ठ भ्राता का देहांत हुआ। फिर वहां से निकल कर इंगलैंड में जाकर रहे। सन् १८३२ से सन् १८३५ पर्य्यंत काल ग्रंथ लिखने में व्यतीत किया। इसी काल में उन के चचेरे भाई, प्रथम नेपोलियन के पुत्र नेपोलियन की सहायता करके उसे दूसरा नैपोलियन कहला कर राजसिंहासन पर बैठावें, फ्रांस देश के कई एक मुख्य निवासियों के चित्त मे यह बात आई थी। फ्रांस के सीमा तक आगमन की इच्छा करते थे तो इतने मे उन का भी देहांत हुआ, इससे फ्रांस के राजखिंहासन पर बैठने का अधिकार उक्त नैपोलियन को प्राप्त हुआ और वह संपादन करने का विचार उन के चित्त मे आया। सन् १८३६ पर्य्यन्त प्रयत्न कर के स्ट्रासवर्ग पर चढ़ाई किया, परंतु यह प्रयत्न सफल न होकर आपही पकड़े गए। अंत में पारिस में उन को ले गए। उन की माता और दूसरे महाशयों के उद्योग से इन का प्राण बचा और ये युनाइटेड स्टेट्स के पास भेजे गए। वहां एक दो वर्ष रहकर स्विटज़रलैंड में लौट आए, तो वहां उन के माता का देहांत हुआ। सन् १८३८ मे उन की अनुमति से एक महाशय ने स्ट्रासवर्ग के चढाई का वर्णन लिखा, इस से फ्रेंच सरकार को बड़ा खेद हुआ और उक्त महाशय को दंड दिया और नैपोलियन को स्विटज़रलैंड से निकाल देने के हेतु वहा के सरकार को लिख भेजा। परतु नैपोलियन आपही स्विटजरलैंड छोड़ कर पुनः इगलैण्ड में गए। वहां दो वर्ष रहकर सन् १८४० में फ्रांस का राज्य मिलने के हेतु प्रयत्न करते रहे और बोलोन पर चढ़ाई किया, परंतु वह भी प्रयत्न निष्फल हुआ और पकड़े गए और इन के सहकारी जितने मनुष्य थे सभों को जन्म भर के हेतु

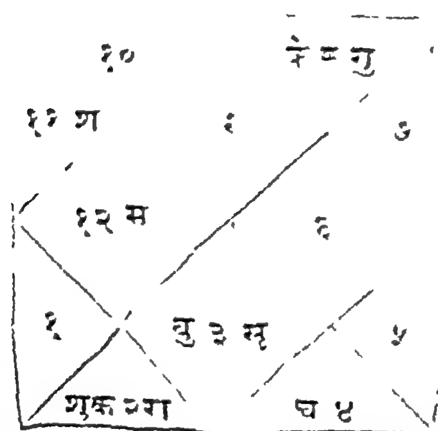
वहां के दुर्ग में कारागार हुआ। इस दुर्ग में छः वर्ष पर्यंत रहे। अनन्तर सन् १८४६ के मई महीने के २५ वीं तारीख को मजूर वेश धारण कर के बेलजियम में भाग कर फिर इंगलैंड में गए। सन् १८४८ के फ्रांस के युद्ध तक वहां रहे। इस युद्ध के समय फ्रांस के निवासियों ने उन को न्याशनल असेम्ब्ली का सभासद नियत किया तदनन्तर उन्हीं सभासदों ने उन का अध्यक्ष नियत किया। तारीख २ दिसम्बर सन् १८५१ को उन्हों ने कई सभासदों के विचार से और पारसी के सर्व प्रसिद्ध राजकीय सभासदों को घेर कर कारागार में डाल दिया और न्याशनल असेम्ब्ली को तोड़ कर के स्वतः मुख्याधिकारी डिक्टेटर नाम से आप प्रसिद्ध हुए। कुछ सेना नगर में रख कर प्रबंध किया। नगर का प्रबन्ध करने के तदनन्तर सकल देश का इस को दस वर्ष अध्यक्ष का अधिकार मिला यह प्रसिद्ध किया और उन्हीं के इच्छानुसार सब अधिकार उन को प्राप्त हुआ और उन्हों ने फ्रेंच लोगों की सम्मति से तारीख २ दिसम्बर सन १८५२ को अपने को महाराज तीसरा नेपोलियन कहाया।

इंग्लेण्ड के सरकार ने प्रथम उन को मान्य किया और पश्चात् यूरोपियन सब राजाओं ने धीरे धीरे उन को फ्रेंच का महाराज कहना स्वीकार किया। सन् १८५३ के जनवरी की १३ तारीख को उन्हों ने विवाह किया। तदनंतर १८५४ में रशिया के युद्ध का आरंभ हुआ और सन् १८५६ में समाप्त हुआ। इस युद्ध से उन की बड़ी प्रतिष्ठा हुई। सन् १८५६—६० इस वर्ष में उन्हों ने विक्टर इमानुअल की सहायता कर के इटली को आस्ट्रिया के अधिकार से निकाल कर स्वतंत्र किया और आस्ट्रिया का पराभव करने से

उन की और भी विशेष प्रतिष्ठा बढ़ी और उन को कुछ देश भी इसी कारण मिला। इसी समय में महाराज नैपोलियन ने अत्युच्च पद की प्राप्ति किया, यह समझना चाहिए। तदनंतर मेक्सिको में इन्हों ने प्रयत्न और लड़ाई करके अपना राज्य स्थापन किया, परन्तु इस का परिणाम अत्यन्त दुःखकारक हुआ। अंत में सन् १८७० में प्रशिया और उन के युद्ध का आरम्भ होकर इन का भली भांति पराभव ता० २ सेप्टेंबर सन् १८७० में हुआ। तदनतर कुछ दिवस जरमनी के दुर्ग में बद्ध रह कर छूट गए। पश्चात् इंग्लेण्ड मे आप और अपनी रानी और पुत्र चिरंजीव प्रिन्स नैपोलियन यह सब तारीख २० मार्च सन् १८७१ को एकत्र हुए। इस पुत्र का जन्म ता० १६ मार्च सन् १८५६ में हुआ था। अंत का समय इन का साधारण मनुष्य के समान परदेश में और परराष्ट्र में व्यतीत हुआ। उन को कई दिन से रोग हुआ, पर शास्त्रोपाय बहुत करते थे, परन्तु उस से कुछ न्यून न हुआ और बहुत कृष्ट हो गए। तारीख ६ को दिन के साढ़े बारह बजे उन का देहांत हुआ। जब ये राज-सिंहासन पर थे इन्हों ने रोम के प्रथम प्रख्यात महाराज जुलियस-सीज़र का इतिहास लिखा। इन सब वृत्तान्त से स्पष्ट विदित होगा कि इन को जन्म भर फेरफार उलट पुलट करते व्यतीत हुआ; उन को भली भांति स्वस्थता कभी नहीं हुई थी। प्रशियन लोगों से इन का पराभव होने तक सर्व पृथ्वी में इधर दश वर्ष पर्य्यन्त इन के समान बुद्धिमान और वीर सर्व सामान्य गुणयुक्त दूसरा पुरुष नहीं हुआ। ऐसा लोग कहते हैं कि इन को शीघ्र इस दशा में पहुंचने का मुख्य कारण यही है कि इन से कोई परोप-

कार नहीं हुआ और उन के हाथ केवल अभिमान से [illegible] निष्काम और परोपकार से रहित थे और अपनी बुद्धि से कोई उत्तम कृत्य नहीं किया इसी कारण इन की कीर्ति का उदय और अस्त अल्पकाल में हुआ यद्यपि यह मनुष्य अति उच्च पद को प्राप्त कर के पतन हुआ और परिणाम अत्यन्त खेदजनक हुआ। इस से सकल मनुष्यों को खेद हुआ यह बातें प्रसिद्ध है।

महाराज जंगबहादुर का जीवनचरित्र।



श्रीमन्महाराज जंगबहादुर का बैकुण्ठवास होना सब पर विदित है और बहुत से समाचारपत्रों में यह समाचार प्रकाश हो चुका है, परन्तु हमारी लेखनी इस शोच से काले आंसुओं से न रुदन करे यह चित्त नहीं सहन कर सकता। बादशाह रंजीत सिंह को सब लोग भारतवर्ष का अंतिम मनुष्य कहते थे, परंतु महाराज जंगबहादुर ने अपने अमेय बल से उन्हीं लोगों से यह कह-

लाया कि महाराज जंगबहादुर भी हिन्दुस्तान में एक मनुष्य हैं। पूर्वोक्त महाराज ने १८७७ फरवरी की पचीसवीं तारीख को वीर प्रसू भारतभूमि को पुत्रशोक दिया। यों तो अनेक जननी यौवन-कुठार नित्य जनमते और मरते ही हैं, पर यह एक ऐसा पुरुष मरा कि भारतवर्ष के सच्चे हितकारी लोगों का जी टूट गया। भादों की गहरी अंधेरी में एक दीप जो टिम २ कर के झिलमिला रहा था वह भी बुझ गया। क्या इस अभागिन भारतमाता को फिर ऐसे पुत्र होंगे? नीति के तो मानो ये मूर्तिमान अवतार थे। ऐसे प्रदेश मे रह कर जो चारो ओर भिन्न भिन्न राज्यों से घिरा हो, स्वामी की उन्नति साधन करते हुए आस पास के कठिन महाराजो को प्रसन्न रखना नीति सूत्र के परम चतुर सूत्रधार का काम है। हम लोगो के भाग्य ही ऐसे हैं; यह रोना कहां तक रोएं।

पूर्वोक्त महाराज प्रतिवर्ष की भांति दौरा करते हुए शिकार खेलते थे कि एकाएक सुगौली में जो पहुचे तो रोगाक्रान्त हो गए। कहते हैं कि उवान्त और दस्त होने से एक साथ बहुत व्याकुल हो गए और उसी समय कहारो को आज्ञा दी कि बाघमति गङ्गा पर पालकी ले चलो। बड़ी महारानी महाराज के साथ थीं और उन्हों ने अत्यन्त सावधानी से अपने जगत् विख्यात प्राणपति की उभयलोकसाधिनी अन्तिम सेवा की। कहारो के बदले पालकी क्षत्रियों ने उठाई थी। जब नदी पर सवारी पहुंची तब दानादिक कर के महाराज ने इस असार संसार का त्याग किया। उन के भाई जनरल रणोद्दीप सिंह बहादुर उसी समय काठमांडू गए और महाराज से एकान्त में यह शोक समाचार

कहा। महाराजाधिराज ने उसी समय उन को महारानी का पद और उन के भाई को जो जो अधिकार प्राप्त थे रद्द किए। महाराज रणदीप सिंह ने बाहर आकर चालीस हजार सेना में से बीस हजार को बाहरी और सीमा के प्रान्तों पर और बीस हजार को नगर के चारों ओर उपस्थित रहने की आज्ञा दिया जिस से किसी प्रकार के उपद्रव की शंका न हो। इस सेना भेजने की आज्ञा केवल स्वकीय रक्षा के निमित्त थी। राजधानी में दो दिन तक यह समाचार छिपा रहा, दूसरी रात्रि को एक साथ यह वज्रपात सा समाचार नगर में फैल गया जिस से सारी राजधानी में महा हाहाकार फैल गया। महाराज के संग एक बड़ी रानी और दो छोटी रानी अत्यन्त प्रसन्नता पूर्वक सती हुईं। कहते हैं कि जिन रानियों से विशेष प्यार था और सदा महाराज के साथ रहना। होना प्रकाश करती थीं वे न सती हुईं और इन दोनों छोटी रानियों से प्रकाश में प्रेम विशेष नहीं था और ये सती हुईं। हा! हा! इस ओर देश की स्त्रियां, आवैं, और आंख खोल कर भारतभूमि का प्रेम और पातिव्रत देखें और लाज से सिर झुका लें।

—:o—

जज्ज द्वारकानाथ मित्र का जीवनचरित्र।

स्वर्गीय आनरेबुल द्वारकानाथ मित्र ने सन् १८३१ में हुगली ज़िला के अन्तर्गत आपता से एक कोस दूर अगुनाशी गांव में एक साधारण हुगली और हवड़ा की कचहरी के मुख्तार विश्वनाथ मित्र के घर जन्म लिया था। बंगाली पाठशाला और हुगली ब्रांच स्कूल में पढ़कर हुगली कालेज में इन्हों ने अंगरेज़ी विद्याध्ययन कर के

अपनी बुद्धि के चमत्कार से सब शिक्षकादिकों को अचंभित किया। ये अंगरेज़ी भाषा की पारङ्गतता के अतिरिक्त हिसाब किताब भी बहुत अच्छी भांति जानते थे। हुगली कालेज से ये हिन्दू कालेज में आए, जब इन के शील, औदार्य, चातुर्य, स्वातन्त्र्य इत्यादि गुण सब छोटे बड़े के चित्त पर भली भांति खचित हो गए थे। हुगली कालेज में मुख्य छात्र वृत्ति पाना तथा अपने पहिले ही लेख पर पारितोषिक पाना, कौन्सल आफ एजुकेशन के रिपोर्ट में इन की स्थिति का लिखा जाना, और कलकत्ता युनिवर्सिटी के फेलोशिप के हेतु इन का चुना जाना ही इन के गुणों और विद्या का प्रत्यय देता है। एक कानूनी मनुष्य के पुत्र होने के कारण इन को चित्त-वृत्ति एक साथ कानून की ओर फिरी और उस मे योग्य क्षमता पाकर सन् १८५६ मे ये वकीली की परीक्षा मे उत्तीर्ण हुए और उसी वर्ष के मार्च में अपना वर्त्तमान इन्टरप्रिटर का पद छोड़ कर इन्हों ने सदर कचहरी में वकीली करना आरंभ किया। इन्हो ने केवल अपने व्यय से एक औषधालय नियत किया और द्रव्यहीन छात्रों को उत्तम परीक्षा होने तक सहायता करते थे और इन के सत्य-प्रियता, निष्पक्षपातिता, दीनों पर दया, मुकद्दमो के सूक्ष्म भावार्थों की समुझ और कार्य में चातुर्य इत्यादि गुण हाकिमो से लेकर चपरासियों तक विदित हो गए थे। और जज्ज लोग इन को विवाद की जड़ समझने और समझाने से बहुत ही प्यार करते थे। विशेष कर के आनरेबुल पण्डित शंभूनाथ अपनी वकीली से लेकर के जज्ज होने की अवस्था तक इन्हें बहुत प्यार करते थे। ठकुरानी दासी के कर-सम्बन्धी बड़े मुकद्दमे में १५ जज्जों के फुलबेंच के

सामने मिस्टर डाइन ऐसे प्रसिद्ध वकील और अनेक अंगरेज़ वकीलों को सात दिन तक अनवरत शास्त्रार्थ करने से और कानून सम्बन्धी सूक्ष्म बातों की तर्क से परास्त करके हिन्दू वकीलों में इन्हों ने चिरकीर्त्ति का ध्वज स्थापित किया और गवर्नमेंट की इन पर विशेष दृष्टि से उस समय में जब कि इन की आमदनी एक लाख रुपये साल की थी ये गवर्नमेंट के मुख्य वकील हुए। और पण्डित शम्भुनाथ के मृत्यु पर सन १८६७ में ये बिना इच्छा किये भी जस्टिस पीकाक की प्रार्थनानुसार गवर्नमेंट से प्रधान जज नियत किये गये और विचारासन पर बैठ कर जैसी योग्यता और शुद्ध चित्त से सावधान होकर इन्हों ने काम किया वह हिन्दू-समाज में चिरस्मरणीय है। जस्टिस पीकाक के अतिरिक्त कोई जज इन की योग्यता के तुल्य नहीं गिने जाते थे और एक व्यभिचारिणी के दाय भाग के बड़े मुकद्दमे के समय बीमार होकर सात बरस जजी का काम करके अपने ग्राम में अपनी वृद्धा माता, तीसरी स्त्री, दो बालक और दो विवाहिता बालिका को छोड़ कर ये भारतवर्ष को शून्य कर के अपनी ४३ वर्ष की अवस्था में ता० २५ फेब्रवरी १८७४ बुध के दिन परलोक को सिधारे।

श्री राजाराम शास्त्री का जीवनचरित्र।

श्रीयुत् पण्डितवर राजाराम शास्त्री वेद श्रौतादि विविध विद्यापारीण श्रीयुत् गोविंदभट कार्लेकर के तीन पुत्रों में कनिष्ठ थे। जब ये दस वर्ष के लगभग थे तब इन के पितृचरण परलोक को सिधारे। फिर त्रिलोचन घाट पर एक ऋषितुल्य महातपस्वी

अपनी बुद्धि के चमत्कार से सब शिक्षकादिकों को अचंभित किया। ये अंगरेज़ी भाषा की पारङ्गतता के अतिरिक्त हिसाब किताब भी बहुत अच्छी भांति जानते थे। हुगली कालेज से ये हिन्दू कालेज में आए, जब इन के शील, औदार्य, चातुर्य, स्वातन्त्र्य इत्यादि गुण सब छोटे बड़े के चित्त पर भली भांति खचित हो गए थे। हुगली कालेज में मुख्य छात्र वृत्ति पाना तथा अपने पहिले ही लेख पर पारितोषिक पाना, कौन्सल आफ एजुकेशन के रिपोर्ट में इन की स्थिति का लिखा जाना, और कलकत्ता युनिवर्सिटी के फेलोशिप के हेतु इन का चुना जाना ही इन के गुणो और विद्या का प्रत्यय देता है। एक कानूनी मनुष्य के पुत्र होने के कारण इन की चित्त-वृत्ति एक साथ कानून की ओर फिरी और उस मे योग्य क्षमता पाकर सन् १८५६ मे ये वकीली की परीक्षा मे उत्तीर्ण हुए और उसी वर्ष के मार्च में अपना वर्त्तमान इन्टरप्रिटर का पद छोड़ कर इन्हों ने सदर कचहरी मे वकीली करना आरंभ किया। इन्हो ने केवल अपने व्यय से एक औषधालय नियत किया और द्रव्यहीन छात्रों को उत्तम परीक्षा होने तक सहायता करते थे और इन के सत्य-प्रियता, निष्पक्षपातिता, दीनों पर दया, मुकद्दमों के सूक्ष्म भावार्थों की समुझ और कार्य में चातुर्य इत्यादि गुण हाकिमो से लेकर चपरासियों तक विदित हो गए थे। और जज्ज लोग इन को विवाद की जड़ समझने और समझाने से बहुत ही प्यार करते थे। विशेष कर के आनरेबुल पण्डित शंभूनाथ अपनी वकीली से लेकर के जज्ज होने की अवस्था तक इन्हें बहुत प्यार करते थे। ठकुरानी दासी के कर सम्बन्धी बड़े मुकद्दमे में १५ जज्जों के फुलबेंच के

सामने मिस्टर डाइन ऐसे प्रसिद्ध वकील और अनेक अंगरेज़ वकीलों को सात दिन तक अनवरत वाग्धारा वर्षण से और कानून सम्बन्धी सूक्ष्म बातों की झार से परास्त कर के हिन्दू वकीलों में इन्हों ने चिरकीर्त्ति का ध्वज स्थापित किया और गवर्नमेंट की इन पर विशेष दृष्टि से उस समय में जब कि इन की आमदनी एक लाख रुपये साल की थी, ये गवर्नमेंट के मुख्य वकील हुए। और पण्डित शंभूनाथ के मृत्यु पर सन् १८६७ में ये बिना इच्छा किये भी जस्टिस पीकाक की प्रार्थनानुसार गवर्नमेंट से प्रधान जज्ज नियत किये गये और विचारासन पर बैठ कर जैसी योग्यता और शुद्ध चित्त से सावधान होकर इन्हों ने काम किया वह हिन्दू-समाज में चिरस्मरणीय है। जस्टिस पीकाक के अतिरिक्त कोई जज्ज इन की योग्यता के तुल्य नहीं गिने जाते थे और एक व्यभिचारिणी के दाय भाग के बड़े मुकद्दमे के समय बीमार होकर सात बरस जज्जी का काम करके अपने ग्राम में अपनी वृद्धा माता, तीसरी स्त्री, दो बालक और दो विवाहिता बालिका को छोड़ कर ये भारतवर्ष को शून्य कर के अपनी ४३ वर्ष की अवस्था में ता० २५ चैत्र वदी १८७४ बुध के दिन परलोक को सिधारे।

श्री राजाराम शास्त्री का जीवनचरित्र।

श्रीयुत् पण्डितवर राजाराम शास्त्री वेद श्रौतादि विविध विद्यापारीण श्रीयुत् गोविंदभट कार्लेकर के तीन पुत्रों में कनिष्ठ थे। जब ये दस वर्ष के लगभग थे तब इन के पितृचरण परलोक को सिधारे। फिर त्रिलोचन घाट पर एक ऋषितुल्य महातपस्वी

श्रीयुत् रानडोपनामक हरिशास्त्री विद्वान् ब्राह्मण रहते थे, उन के पास इन्हों ने अपनी तरुण अवस्था के प्रारंभ में काव्य और कौमुदी पढ़ कर आस्तिकनास्तिकोभयविध द्वादश दर्शनाचार्यवर्य परम मान्य जगद्विदित कीर्त्ति श्रीयुत् दामोदर शास्त्री जी के पास तर्कशास्त्राध्ययन प्रारम्भ किया। थोड़े ही दिनों में इन की अतिलौकिक प्रतिभा देख कर इन को उक्त शास्त्री जी महाशय ने अपनी वृद्ध अवस्था के कारण पढ़ाने का आयास अपने से न हो सकेगा, जान कर श्रीमान् कैलास निवास परमानंदनिमग्न दिगङ्गनाविख्यातयशोराशि प्रसिद्ध महा पण्डितवर्य श्रीयुत् काशीनाथ शास्त्री जी के जिन के नाम श्रवणमात्र से सहृदय पंडितवर समूह गद्गद होकर सिर डुलाते हैं स्वाधीन कर दिया। और इन के प्रतिभा का अत्यन्त वर्णन कर के कहा कि मैं यह एक रत्न आप को पारितोषिक देता हूं जो आप के सुविस्तीर्ण शाखाकांडमंडित कुसुमच्चयाकीर्ण यशोवृक्ष को अपनी यशश्चन्द्रिका से सदा अम्लान और प्रकाशित रक्खेगा। फिर इन्हों ने उक्त महाशय के पास व्याकरणादि विविध शास्त्र पढ़ कर चित्रकूट में जाकर उत्तम २ पंडितों के साथ विप्रतिपत्तियों में अत्युत्तम प्रतिष्ठा पाई और श्रीमन्त विनायक राव साहेब ने बहुत सन्मान किया। फिर जब संस्कृतादिक विविध विद्या कलादि गुण-गण मंडित श्रीमान् जान म्यूर साहब श्री काशी में आए और पाठशाला में विविध विद्या पारगम पण्डिततुल्य विद्यार्थियों की परीक्षा ली तब उक्त शास्त्री जी महाशय के विद्यार्थिगण में इन की अद्भुत प्रतिभा और अनेक शास्त्रोपस्थिति देख

होकर केवल इस अभिप्राय से कि ऐसे उत्तम पण्डित रत्न का

अपने पास रहना यशस्कर है और आजिमगढ़ के जिले मे उक्त साहेब महाशय प्राड्विवाक थे इस लिये कही कहीं हिन्दू धर्म शास्त्र के अनुसार निर्णय करने के विमर्श मे और उन को बनाई हुई अनेक सुन्दर सुन्दर कविता के परिशोधन मे सहायता के लिए इन को अपने साथ ले गए। उन के साथ चार पांच वर्ष के लगभग रह कर ग्वालियर में गए, वहां बहुत से उत्तम २ पण्डितो के साथ शास्त्रार्थ मे परम प्रतिष्ठा और राजा की ओर से अत्युत्तम सन्मान पूर्वक विदाई पाकर संवत् १९१२ के वर्ष में काशी में आए। तब यद्यपि विधवोद्वाहशङ्कासमाधि अर्थात् पुनर्विवाह खण्डन श्रीमान् परम गुरु श्री काशीनाथ शास्त्री जी तैयार कर चुके थे तथापि उस को इन्हां ने अपूर्व २ अनेक शंका और समाधानों से पुष्ट किया। इसी कारण उक्त शास्त्री जी महाराज ने अपने नाम के पहिले इन्हीं का नाम उस ग्रन्थ पर लिख कर प्रसिद्ध किया। संवत् १९१३ के वर्ष मे श्रीमान् यशोमात्रा विशेष बालण्टेन साहेब महाशय ने सांख्यशास्त्राध्यापन के कार्य्य में इन को नियुक्त किया। उस कार्य पर अधिष्ठित होकर सपरिश्रम पाठन आदि में अनेक विद्यार्थियो को ऐसे व्युत्पन्न किया जिन की सभा में तत्काल अपूर्व कल्पनाओं को देख कर प्राचीन प्रतिष्ठित पण्डित लोग प्रसन्न हो कर श्लाघा करते थे। संवत् १९२० के वर्ष मे राजकीय श्री संस्कृत पाठशालाध्यक्ष श्रीमान् ग्रिफिथ साहेब महाशय ने इन को धर्मशास्त्राध्यापक का पद दिया। तब से बराबर पढ़ा २ कर शतावधि विद्यार्थियो को इन्हो ने उत्तम पण्डित किया, जो संप्रति देशदेशान्तर मे अपने २ विद्यार्थि गण को पढ़ा कर इन की कीर्त्ति को

आसमुद्रांत फैला रहे हैं। कुछ दिन हुए श्रीमान् नन्दन नगर की पाठशाला के संस्कृताध्यापक मोक्षमूलर साहिब महाशय की बनाई हुई अंगरेजी और संस्कृत व्याकरण की पुस्तक का परिशोधन और कई स्थलों में परिवर्तन किया था, जिस से उक्त साहिब महाशय ने अति प्रसन्न हो कर इन की कीर्त्ति अनेक द्वीपान्तर निवासियों मे विख्यात की, यहां तक कि जब उन्हो ने अपने पुस्तक की द्वितीया वृत्ति छपवाई तब उस की भूमिका मे लिखा है कि इन के समान संस्कृत व्याकरण जानने वाला इस द्वीप मे तो क्या संसार भर मे दूसरा कोई नही है। वे उक्त पण्डित वर राजाराम शास्त्री संप्रति पांच चार वर्ष से विरक्त हो कर योगाभ्यास मे लगे थे और अपने दीन बांधवों का पोषण और दीन विद्यार्थी प्रभृति के परिपालन ही के हेतु अर्जन करते थे और आप साधारण ही वृत्ति से जीवन करते हुए मठ में निवास करते थे। संवत १९३७ श्रावण शुक्ल १२ के के दिन संन्यास लेकर उसी दिन से अन्न परित्याग पूर्वक परमार्थ का अनुसन्धान करते २ मरण काल से अव्यवहित पूर्व तक सावधानता पूर्वक परमेश्वर का ध्यान करते २ भाद्रपद कृष्ण ३ गुरुवार को प्रातःकाल ८ बजते २ परमपद को प्राप्त हो कर यशोमात्रावशिष्ट रह गए।

लार्ड म्योसाहिब का जीवनचरित्र।

हा! यह कैसे दुःख की बात है कि आज दिन हम उस के मरण का वृत्तान्त लिखते हैं जिस की भुजा की छांह में सब प्रजा सुख से काल क्षेप करती थी और जो हम लोगों का पूरा हित-

कारी था। ऐसा कौन है जो इस को पढ़कर न कम्पित होगा और परम शोक से किस की आंखो से आंसू न बहैंगे ? मनुष्य की कोई इच्छा पूरी नहीं होने पाती और ईश्वर और ही कुछ कर देता है। कहां युवराज के निरोग होने के आनन्द से हम लोग मग्न थे और कैसे कैसे शुभ मनोरथ करते थे, कहां यह कैसा विज्ज्रुपात सा हाहाकार सुनने में आया। निस्सन्देह भरतखण्ड के वृत्तान्त में सर्व्वदा इस विषय को लोग बड़े आश्चर्य्य और शोक से पढ़ेंगे और निश्चय भूमि ने एक ऐसा अपूर्व्व स्वामी खो दिया है जैसा फिर आना कठिन है। तारीख १२ को यह भयानक समाचार कलकत्ते में आया और उसी समय सारा नगर शोकाक्रान्त हो गया।

गुरुवार ८वीं तारीख को श्रीमान् लार्ड म्यौ साहिब पोर्ट ब्लेयर उपद्वीप में ग्लासगो नामक जहाज़ पर आए और ढाका और नेमिसिस नाम के दो जहाज़ और भी संग आए और साढ़े नौ बजे उन टापुओं में पहुंचे और ग्यारह बारह के भीतर श्रीमान् ने वर्मा के चीफ कमिश्नर इत्यादि लोगों के साथ कैदियों की बारक गोराबारिक और दूसरे प्रसिद्ध स्थानों को देखा। उस समय श्रीमान् की शरीर रक्षा के हेतु बहुत से सिपाही, कांस्टेब्ल और गार्ड बड़ी सावधानी से नियत किए गए और थोड़ी देर जेनरल स्टुअर्ट साहिब की कोठी पर ठहर कर सब लोग जहाज़ों को फिर गए। अढ़ाई बजे सब लोग फिर उतरे और इन टापुओं के लोगों का स्वभाव जानकर सब लोग बड़ी सावधानी से चले और बड़े यत्न से सब लोग श्रीमान् की रक्षा करते रहे। उस समय श्रीमती लेडी

म्यौ और सब स्त्रियां ग्लासगो जहाज़ पर ही थीं। ये लोग अबर दीन और ऐडो होते हुए वाइपर टापू में पहुंचे। यह स्थान रास के टापू से ढाई कोस है और यहां १३०० कैदी रहते हैं, जो अपने बुरे कर्म्मों से काले पानी भेजे गए हैं। भय का स्थान समझ कर कांस्टेबल् और सरकारी पलटन रक्षा के हेतु संग हुई और जेल· खाना इत्यादि स्थानों को देख कर चथाम टापू में गए और वहां कोयले की खान देख कर फिर जहाज़ पर फिर आने का विचार करने लगे। अब ५ बजने का समय आया और सब लोग जहाज़ पर जाने को घबड़ा रहे थे कि श्रीमान् ने कहा कि हम लोग हिरात की पहाड़ी पर चढ़ैं और वहां से सूर्य्यास्त की शोभा देखैं। यह पहाड़ी इसी टापू में है और इसके ऊपर कोई बस्ती नहीं है, परन्तु नीचे होप टौन नामक एक छोटी बस्ती है, जिस में कुछ कैदी काम करने वाले रहते हैं। यद्यपि सबेरे ऐसा लोगों ने सोचा था कि समय मिलैगा तो इस पहाड़ी पर जायंगे, पर ऐसा निश्चय नहीं था और न वहां कुछ तयारी थी। ऐलिस साहिब इस पहाड़ी पर नहीं चढ़े और यहां पलटन के न होने से चथाम से पलटन बुलाई गई कि वह श्रीमान् की रक्षा करै और वहां से आठ कांस्टेबल् रक्षा के हेतु संग हुए। श्रीमान् एक छोटे टट्टू पर चलते थे और सब लोग पैदल थे। ऊपर बहुत से ताड़ और सुपारी के पेड़ों से स्थान घना हो रहा था और चोटी पर पहुंच कर श्रीमान् पाव घंटे तक सूर्य्यास्त की शोभा देखते रहे। यद्यपि सूर्य्यास्त हो चुका था, पर ऊपर प्रकाश इतना था कि नीचे की घाटी दिखाती थी और अंधकार होता जान कर सब लोग नीचे उतरने

लगे। मार्ग में केवल दो छुटे हुए कैदी मिले और उन लोगो ने कुछ विनती करना चाहा। पर जेनरल स्टुअर्ट ने उन को टोका और कहा कि जब श्रीमान् स्वस्थ रहें तब आओ। इन के अतिरिक्त और कोई मार्ग मे नहीं मिला। कप्तान लकउड और कौंट वाल्गमून आगे बढ़ गए थे और एक चट्टान पर बैठे उन लोगो का मार्ग देखते थे। इस समय अंधेरा हो गया था, परन्तु कुछ मार्ग दिखाई देता था और उन लोगों ने केवल कुछ मनुष्यो को पानी ले जाते देखा और कोई नही मिला। श्रीमान् सवा सात बजे नीचे पहुंचे और उस समय सम्पूर्ण रीति से अंधेरा हो गया था और एक अफसर ने मशाल लाने की आज्ञा दिया इस से कई मनुष्य भी संग के उन को बुलाने के हेतु दौड़ गए। जब कैदियो के झोपड़े के आगे बढे, जेनरल स्टुअर्ट एक ओवर्सियर को आज्ञा देने के हेतु पीछे ठहर गए और श्रीमान् आगे बढ़ गए। उस समय श्रीमान् के आगे दो मशाल और कुछ सिपाही थे और उन के प्राइवेट सेक्रीटरी मेजर बर्न और जमादार भी कुछ दूर हो गए थे और कलनल जरव्स और मि० टाकिन और मि० एलिन भी पीछे छूट गए थे कि इतने में एक मनुष्य उन के बीच से उछला और श्रीमान् को दो छुरी मारी, जिस में से पहिली दहिने कन्धे पर और दूसरी बांएं पर लगी। यह नहीं जाना गया कि वह किस मार्ग से वहां आया, क्योंकि चारो ओर लोग घेरे थे। पर ऐसा अनुमान होता है कि चट्टानो के नीचे छिप रहा था। श्रीमान् चोट लगते ही उछले और पास ही पानी के गड्ढे में गिर पड़े। यद्यपि लोगों ने उन को उठाकर खड़ा किया, पर ठहर न सके और तुरत फिर गिर पड़े। उन

के अन्त के शब्द यह हैं " They've hit me Burne" " बर्न उन लोगों ने मुझे मारा " और फिर जो दो एक शब्द कहे वह समझ न पड़े और उन के शरीर को लोग उठाकर जहाज़ पर लाने लगे, परन्तु श्रीमान् तो पूर्वही शरीर त्याग कर चुके थे और वीरों की उत्तम गति को पहुंच चुके थे। उस दुष्ट को अर्जुन सिंह नामक क्षत्रिय ने बड़े साहस से पकड़ा। कहते हैं कि उस ने पहिले तो उस हत्यारे के मुख पर अपना दुपट्टा डाल दिया और फिर आप उस पर एक साहिब की सहायता से चढ़ बैठा और फिर तो सब लोगों ने उस को हाथो हाथ पकड़ लिया और यदि उस समय विशेष रक्षा न की जाती तो लोग क्रोधावेश में उस को मार डालते। कहते हैं कि जिस समय उन का शरीर जहाज़ पर लाए हैं उस समय अनवर्त रुधिर बहता था। जब श्रीमान् का शरीर ग्लासगो पर लाए उस समय लेडी म्यो के चित्त की दशा सोचनी चाहिये ! हा ! कहां तो वह यह प्रतीक्षा करती थी कि प्यारा पति फिर के आता है, अब उस के साथ भोजन करेंगे और यात्रा का वृत्तान्त पूछेंगे, कहां उस पति का मृतक शरीर सामने आया। हाय हाय ! कैसा दारुण समय हुआ है !! परन्तु वाह रे इन का धैर्य्य कि उसी समय शोक को चित्त में छिपा कर सब आज्ञा उसी भांति किया जैसी श्रीमान् करते थे। जब यह समाचार कलकत्ते में १२ वीं तारीख को पहुंचा उसी समय आज्ञा हुई दुर्गध्वज अधोमुख हो और ३१ मिनिट पर सायंकाल तोप छुटे। कानून के अनुसार लार्ड नेपियर गवर्नर जेनरल हुए और उसी टापू से एक जहाज़ उन के लाने को भेजा गया और श्रीमान् के

भाई भी फेर बुला लिए गए, परन्तु लार्ड नेपियर के आने तक आनरेब्ल स्ट्रेची स्थापन गवर्नर जेनरल हुए। कहते हैं कि लार्ड नेपियर १९ तारीख को चले। जिस दिन ये वहां से चले थे उस दिन सब लोग शोक वस्त्र पहरे हुए इन को विदा करने को एकत्र हुए थे। श्रीमान् का शरीर कलकत्ते में आया और वहां से आयर्लैण्ड गया। लेडी म्यो और श्रीमान् के दोनो भाई और पुत्र तो बम्बई जायगे, वहां से जहाज़ पर सवार होंगे, पर श्रीमान् का शरीर सीधा कलकत्ते से ग्लासगो पर जायगा।

नीचे लिखा हुआ आशय का पत्र कलकत्ते के छापे वालो को सर्कार की ओर से मिला है। आठवीं तारीख बृहस्पति के दिन श्रीमान् गवर्नर जेनरल बहादुर पोर्टब्लोर नाम स्थान पर पहुंचे और रास नाम स्थान को भली भांति निरीक्षण कर वाइपर नामे टापू मे पहुंचे, जहां महा दुष्ट गण रहते हैं। स्टीवर्ट साहेब सुपरिन्टेन्टेन्ट ने श्रीमान् के शरीर रक्षा के हेतु बहुत अच्छा प्रबन्ध किया था कि कोई मनुष्य निकट न आने पावे। पुलीस के व्यतिरिक्त एक विभाग पदचारियों का साथ था, परन्तु यह श्रीमान् को क्लेशकर जान पड़ता था और उन्हों ने कई वार निषेध किया। यहां से लोग चाथम में गए, जहां आरे चलते हैं और लकड़ी काटी जाती है। परन्तु यह सब कर्म पांच बजे के भीतर ही हो गया, तो श्रीमान् ने कहा कि होपटाउन प्रदेश में चल कर हरियट पर्वत पर आरोहण कर के प्रदोष काल की शोभा देखना चाहिये। यह स्थिर कर सब लोग उसी ओर चले और साढ़े पांच बजे वहां पहुंचे। थोड़े से पुलीस के सिपाही साथ में थे, क्योंकि वहां यह

के अन्त के शब्द यह हैं " They've hit me Burne" " बर्न उन लोगों ने मुझे मारा " और फिर जो दो एक शब्द कहे वह समझ न पड़े और उन के शरीर को लोग उठाकर जहाज़ पर लाने लगे, परन्तु श्रीमान् तो पूर्वही शरीर त्याग कर चुके थे और वीरों की उत्तम गति को पहुंच चुके थे। उस दुष्ट को अर्जुन सिंह नामक क्षत्रिय ने बड़े साहस से पकड़ा। कहते हैं कि उस ने पहिले तो उस हत्यारे के मुख पर अपना दुपट्टा डाल दिया और फिर आप उस पर एक साहिब की सहायता से चढ़ बैठा और फिर तो सब लोगो ने उस को हाथो हाथ पकड़ लिया और यदि उस समय विशेष रक्षा न की जाती तो लोग क्रोधावेश में उस को मार डालते। कहते हैं कि जिस समय उन का शरीर जहाज़ पर लाए हैं उस समय अनवर्त रुधिर बहता था। जब श्रीमान का शरीर ग्लासगो पर लाए उस समय लेडी म्यो के चित्त की दशा सोचनी चाहिये। हा! कहां तो वह यह प्रतीक्षा करती थी कि प्यारा पति फिर के आता है, अब उस के साथ भोजन करेंगे और यात्रा का वृत्तान्त पूछेंगे, कहां उस पति का मृतक शरीर सम्मुख आया। हाय हाय! कैसा दारुण समय हुआ है!! परन्तु वाह रे इन का धैर्य्य कि उसी समय शोक को चित्त में छिपा कर सब आज्ञा उसी भांति किया जैसी श्रीमान् करते थे। जब यह समाचार कलकत्ते में १२ वीं तारीख को पहुंचा उसी समय आज्ञा हुई दुर्गध्वज अधोमुख हो और ३६ मिनिट पर सायंकाल तोप छुटे। कानून के अनुसार लार्ड नेपियर गवर्नर जेनरल हुए और उसी टापू मे एक जहाज़ उन के लाने को भेजा गया और श्रीमान् के

भाई भी फेर बुला लिए गए, परन्तु लार्ड नेपियर के आने तक आनरेब्ल स्ट्रेची स्थापन गवर्नर जेनरल हुए। कहते हैं कि लार्ड नेपियर १८ तारीख को चले। जिस दिन ये वहां से चले थे उस दिन सब लोग शोक वस्त्र पहरे हुए इन को विदा करने को एकत्र हुए थे। श्रीमान् का शरीर कलकत्ते मे आया और वहां से आयलैण्ड गया। लेडी म्यौ और श्रीमान् के दोनो भाई और पुत्र तो बम्बई जायगे, वहां से जहाज़ पर सवार होंगे, पर श्रीमान् का शरीर सीधा कलकत्ते से ग्लासगो पर जायगा।

नीचे लिखा हुआ आशय का पत्र कलकत्ते के छापे वालों को सर्कार की ओर से मिला है। आठवीं तारीख बृहस्पति के दिन श्रीमान् गवर्नर जेनरल बहादुर पोर्टब्लोर नाम स्थान पर पहुंचे और रास नाम स्थान को भली भांति निरीक्षण कर वाइपर नामे टापू में पहुंचे, जहां महा दुष्ट गण रहते हैं। स्टीवर्ट साहेब सुपरिन्टेन्डेन्ट ने श्रीमान् के शरीर रक्षा के हेतु बहुत अच्छा प्रबन्ध किया था कि कोई मनुष्य निकट न आने पावे। पुलीस के व्यतिरिक्त एक विभाग पदचारियों का साथ था, परन्तु यह श्रीमान् को क्लेशकर जान पड़ता था और उन्हों ने कई वार निषेध किया। यहां से लोग चाथम में गए, जहां आरे चलते हैं और लकड़ी काटी जाती है। परन्तु यह सब कर्म पांच बजे के भीतर ही हो गया, तो श्रीमान् ने कहा कि होपटाउन प्रदेश में चल कर हरियट पर्वत पर आरोहण कर के प्रदोष काल की शोभा देखना चाहिये। यह स्थिर कर सब लोग उसी ओर चले और साढ़े पांच बजे वहां पहुंचे। थोड़े से पुलीस के सिपाही साथ में थे, क्योंकि वहां यह

आशा न थी कि कोई दुष्कर्मा मिले—वहां सब रोग ग्रसित और श्रमित लोग रहते हैं। श्रीमान् बहुत दूर पर्यंत एक टट्टू पर आरूढ़ थे और उन के सहचारी लोग भूमि पर चलते थे। हारियट पर्वत पर पहुच कर लोगों ने किञ्चित्काल विश्राम किया और फिर तीर की ओर चले। मार्ग में दो एक श्रमित व्यक्ति मिले और श्रीमान् से कुछ कहने की इच्छा प्रकट की, परन्तु स्टीवर्ट साहेब ने उन से कहा कि तुम लोग लिख कर निवेदन करो। दो साहेब आगे थे और और लोग साथ में थे। उन लोगों के तीर पर पहुंचने के पूर्व ही अन्धकार छा गया और श्रीमान् के पहुचते २ "मशाल" जल गए। तीर पर पहुंच कर स्टीवर्ट साहेब पीछे हट कर किसी को कुछ आज्ञा देने लगे। शेष २० गज आगे नहीं बढ़े थे कि एक दुष्कर्मी हाथ मे छुरी लिये द्रुतवेग से मडल में आया और श्रीमान् को दो छुरी मारी, एक तो वाम स्कन्ध पर और दूसरी दक्षिण स्कन्ध के पुट्ठे के नीचे। अर्जुन नाम सिपाही और हान्सि साहेब ने उसे पकड़ा और बड़ा कोलाहल मचा और "मशाल" बुत गए। उसी समय श्रीमान् भी या तो करारे पर से गिर पड़े या कूद पड़े। जब फिर से प्रकाश हुआ तो लोगों ने देखा कि गवर्नर जेनरल बहादुर पानी में खड़े थे और स्कन्ध देश से रुधिर का प्रवाह बड़े वेग से चल रहा था। वहां से लोग उन्हें एक गाड़ी पर रख कर ले गए और घाव बांधा गया, परन्तु वे तो हो चुके थे। जब उन की लाश ग्लासगो नाम नौका पर पहुंची तो डाक्टरों ने कहा कि इन दोनों घाओं में एक भी प्राण लेने के समर्थ था। परन्तु उस समय लेडी म्यो का साहस प्रशंसनीय था।

उन को अपने "राज" नाश की अपेक्षा भारतखण्ड के राज के नाश और प्रजा के दुःख का बड़ा शोच हुआ। स्टुअर्ट साहेब ने इस विषय का गवर्न्मेन्ट को एक रिपोर्ट किया है और एक सर्टिफिकेट डाक्टरों की ओर से भी गवर्न्मन्ट को भेजा गया है।

हा! शनिश्चर (१७ वीं) को कलकत्ते की कुछ और ही दशा थी। सब लोग अपना २ उचित कर्म परित्याग कर के विषन्नवदन प्रिन्सेप घाट की ओर दौड़े जाते थे। बालक अपनी अवस्था को विस्मृत कर और खेल कुतूहल छोड़ उस मानव प्रवाह में बहे जाते थे, वृद्ध लोग भी अपने चिरासन को छोड़ लकुट हाथ में, शरीर कांपते हुए उन के अनुसरण चले।—स्त्री बेचारी कुलमर्याद सीमा परिबद्ध उद्विग्न चित्त हो कर खिड़कियों पर बैठी युगल नेत्र प्रसारनपूर्वक अपने हितैषी, परमविद्याशाली, और परमगुणवान उपराज के मृतक शरीर के आगमन की मार्ग प्रतीक्षा करती थी। मार्ग में गाड़ियों की श्रेणी बंध गई थी, नदी में सम्पूर्ण नौकाओं के पतावा शुष्क मस्तूल झुके रहे थे, मानो सब सिर पटक २ रो रहे हैं। दुर्ग से सेना धीरे २ आई और गवर्नमेन्ट हाउस से उक्त घाट पर्यन्त श्रेणी बद्ध होकर खड़ी हुई और प्रत्यक वर्ग के पुरुष समुचित स्थान पर खड़े थे। एक सन्नाटा बंध गया था कि पौने पांच बजे घाट पर से एक शतघ्नी (तोप) का शब्द हुआ और उस का प्रतिउत्तर दुर्ग और कानी नाम नौका पर से हुआ। बाजावालों ने बड़ी सावधानी से अपने २ वाद्य यन्त्रों को उठाया और कलकत्ते के वालन्टीयर्स लोग आगे बढ़े। एक तोप की गाड़ी पर इङ्गलैण्ड के राजकीय पताका से आच्छादित श्रीमान् गवर्नर

जेनरल का मृतक शरीर शवयात्रा के आगे हुआ। उस समय लोगों के चित्त पर कैसा शोच छा गया था उस का वर्णन नही हो सकता। ऐसा कौन पाहनचित होगा जिस का हृदय उस श्रीमान् के चञ्चल अश्व को देख कर उस समय विदीर्ण न हुआ होगा। उस के नेत्र से भी अश्रुधारा प्रवाहित होती थी। हा! अब उस घोड़े का चढ़नेवाला इस ससार मे नहीं है। उस से भी शोकजनक श्रीमान् के प्रिय पुत्र की दशा थी जो कि विषन्नवदन, अधोमुख, सजलनयन, बाल खोले अपने दोनो चचा के साथ पिता के मृतक शरीर के साथ चलते थे। हा! ऐसी वयस मे उन्हे ऐसी विपद पड़ी। परमेश्वर बड़ा विषमदर्शी दीख पड़ता है। वैसे ही मेजर बर्न भी देखे नही जाते थे। शोक से आंखे लाल और डबडबाई हुई थीं और अनाथ की भांति अपने स्वामी वरन उस मित्र के शोक मे आतुर थे, जिन्हे उन्हं अन्त में पुकारा और मरण समय उन्हीं का नाम लिया। हा! यह यात्रा निम्न लिखित रीति पर गवर्नमेन्ट हाउस मे पहुची। क्वार्टर मास्टर जेनरल के विभाग का एक अश्वारोही अफसर, फर्स्ट बेंगाल कवलरी (अश्वरोही सेना) का एक भाग। कलकत्ते के वालन्टीयर्स की रफल पलटन अस्त्र उलटा लिए हुए और श्री महारानी की १८ वी रेजिमेन्ट का शोकसूचक बाजा बजता हुआ।

श्रीमान् का बाजा
बाडी गार्ड (शरीररक्षक) पैदल
दुर्ग और कथीड्रल गिरजा के पादड़ी
श्रीमान् के चापलेन

डाक्टर जे फेअरर सी. एस. आई. करनेल डी. डिलेन

कमंडिंग

बाडी गार्ड

क. एफ एच ग्रेगरी

एडीकांग

डाक्टर ओ. वर्नेट

के एच. बी लाकउड

एडीकांग क टी एम जोन्स

आर. एन. एल. टी डीन

क आर एच. आंट एडिकांग

सुबादार मेजर और सरदार बहादुर शिवबक्स अवस्ती

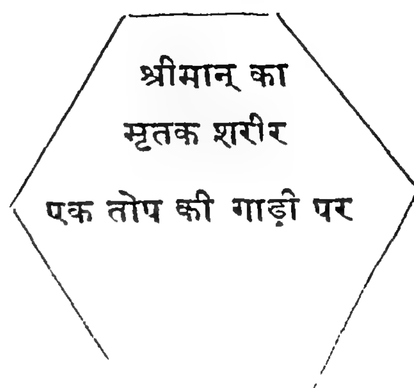
एडिकांग

क. सी. एल सी डी रोवक

एडिकांग

ले सी हाकिन्स आर. एन.

मेजर ओ टी वर्न प्राईवेट सेक्रेटरी।



मुख शोक प्रकाशक।

आनरेब्ल आर. योर्क, आनरएब्ल टी. योर्क, मेजर योर्क।

श्रीमान् का विश्वासपात्र क्लर्क वा लेखक।

श्रीमान् के सेवक।

श्रीमान् के पलटन के अफसर।

श्रीमान् के एतद्देशीय सेवक।

माझी नौकास्थ लोग और ग्लासगो और डाफनी नाम नौका का तोपखाना।

उक्त नौकाओं के अफसर।

अस्मिन् कालिक गवर्नर जेनरल।

बंगाल के लेफ्टिनेन्ट गवर्नर और श्रीमान् कमांडर इन चीफ।

बंगाल के चीफ जस्टिस, कलकत्ते के लार्ड बिशप, आर्क बिशप और पश्चिम बंगाल के विकार अपस्टालिक।

श्रीमान् गवर्नर जेनरल के सभा के सभासद।

कलकत्ते के पुइन जज्ज।

सभा के अधिक सभासद।

एतद्देशीय राजे।

कनसलस जेनरल। बरमा के चीफ कमिश्नर।

अन्य देशों के कन्सल एजेन्ट।

गवर्नमेन्ट के सेक्रेटरी।

इन के पीछे और बहुत से लोग पलटन के अफसर इत्यादि और लेफ्टिनेन्ट गवर्नर के साथ के लोग थे।

यद्यपि अनुचित तो है, परन्तु ऐसी शोभा कलकत्ते में कभी देखने में नहीं आई थी और ईश्वर करे न कभी देखने में आवे।

श्रीमान् का शरीर सर्वसाधारण लोगों के देखने के लिये तीन दिन पर्यन्त मारबलहाल रक्खा गया है और सब लोग श्रीमान् का अन्त का दरबार करने वहां जायगे।

हे भारतवर्ष की प्रजा! अपने परम प्रेमरूपी अश्रुजल से अपने उस अपराज्यार्थांश का तर्पण करो जो आज तक तुम्हारा स्वामी

था और जिस की बांह की छांह में तुम लोग निर्भय निवास करते थे और जो अनेक कोटि प्रजा लक्षावधि सैन्य के होते भी अनाथ की भांति एक क्षुद्र के हाथ से मारा गया और एक वेर सब लोग निस्सन्देह शोक समुद्र में मग्न हो कर उस अनाथ स्त्री लेडी म्यौ और उन के छोटे बालकों के दु:ख के साथी बनो। हा! लेखनी दुःख से आगे लिखने को असमर्थ हो रही है नहीं तो विशेष समाचार लिखती। निश्चय है कि पाठकजन इस असह्य दुःख रूपी वृत्त को पढ़ कर विशेष दुःखी होने की इच्छा भी न रक्खेंगे।

श्रीमान् स्वर्गवासी के मरण पर लोगो ने क्या किया।

जिस समय यह शोक रूपी वृत्त श्रीमती महाराणी को पहुंचा श्रीमती ने लेडी म्यौ और बर्क साहेब को तार भेजा कि हम तुम लोगों के उस अपार दु:ख से अत्यन्त दुःखी हुए और हम तुम लोगों के उस दुःख के साथी है जो श्रीमान् लार्ड म्यौ के मरने से तुम पर पड़ा है। सेक्रेटरी आफ स्टेट ने भी इसी भांति स्थानापन्न गवर्नरजेनरल को तार दिया कि "हम इस समाचार से अत्यन्त दु:खी हुए। निस्सन्देह भरतखण्ड ने एक अपना बड़ा योग्य स्वामी नाश किया और यह ऐसा अकत्नीय वृत्तान्त है कि इस समय हम विशेष कुछ नहीं कर सकते"। महाराज साम ने भी स्थानापन्न गवर्नरजेनरल को तार दिया है कि हम इस दुं:ख में लेडी म्यौ और भारत की प्रजा के साथ है, जो उन लोगों पर अकस्मात् एक योग्य स्वामी के नाश होने से आ पड़ा है। महाराज जयपुर को जब यह समाचार गया एक सङ्ग शोकाक्रान्त हो गए और राज

के किले का झंडा आधा गिरवा दिया और श्री पंचमी का बड़ा दर्बार बन्द कर दिया और बीस बीस मिनिट पर किले से शोक-सूचक तोंप छूटी और नगर में एक दिन तक सब काम बन्द रहा। सुना है कि महाराज कलकत्ते जायंगे। पटियाला के महाराज ने एक शोकसूचक इश्तिहार प्रकाशित किया और अपने दर्बारियों को आज्ञा दिया कि शोक का वस्त्र पहिरें। महाराज कपूरथला ने भी ऐसा ही किया और अवध अंजमन के सेक्रेटरी को एक पत्र भेजा कि उन के स्मरणार्थ उद्योग करै। कलकत्ते की दशा तो लिखने के योग्य ही नही है, न ऐसा कभी पूर्व्व में हुआ था और न ईश्वर करै होय। वसन्त पञ्चमी का नाच गान सब बन्द हो गया और नगर में दूकानें सब कई दिन तक बन्द रही, बरात नही निकली, कई लग्न टाल दिये गए। वहां के जस्टिस आफ दि पीस लोग मिल कर एक शोकपत्र श्री लेडी म्यो को देने वाले हैं और और भी अनेक शोकसूचक कृत्य हो रहे हैं। बम्बई में भी सब दूकानें बन्द हो गईं और सब कारखाने बन्द हो गए। बनारस में भी इस समाचार के आने से कई स्कूल बन्द हो गए और कई शोक-सूचक कमेटियां हुईं। बम्बई में फरासीस, इटली और प्रशिया इत्यादि देशों के राजदूतों ने अपनी कोठियों के राज के झंडे आधे आधे गिरा दिये और सब मिल कर शोक का वस्त्र पहिन कर वहां के गवर्नर के पास गए थे और वहां सब लोगों ने शोक भरी वार्त्ता किया और उस के उत्तर में लाट साहिब ने भी एक सुरस भाषण किया। हा ! ईश्वर फिर यह दिन न लावै ! !

०

उस चाण्डाल दुष्ट हत्यारे शेरअली के विषय में फ्रेंड आफ इंडिया के सम्पादक से हम पूर्ण सम्मति करते हैं। निस्सन्देह उस दुष्ट को केवल प्राण दण्ड देना तो उस की मुंह मांगी बात देनी है, क्योंकि मरने से डरता तो ऐसा कर्म्म न करता। सम्पादक महाशय लिखते हैं कि ये दुष्ट प्राण से प्रतिष्ठा और धर्म्म को विशेष मानते हैं इस से ऐसा करना चाहिये जिस में इन दुष्टों का मुख भंग हो और धर्म्म और प्रतिष्ठा दोनों को हानि पहुंचे। वह लिखते हैं (और बहुत ठीक लिखते हैं, अवश्य ऐसा ही वरन इस से बढ़ कर होना चाहिये) कि उस के प्राण अभी न लिये जायं और उसे खाने को वह वस्तु मिलें जो "हराम" हैं और वस्त्र के स्थान पर उस को सूअर के चर्म्म की टोपी और कुरता पहिनाया जांय। यावच्छक्ति उस को दुख और अनादर दिया जाय। ऐसे नीच के विषय में जितनी निर्दयता की जाय सब थोड़ी है और ऐसे समय हम-लोगों को कानून छप्पर पर रखना चाहिए और उस को भरपूर दुख देना चाहिये।

श्रीमान् लार्ड म्यो स्वर्गवासी के मरने का शोक जैसा विद्वानों को सच्ची में हुआ वैसा सर्व्वसाधारण में नहीं हुआ। इस में कोई सन्देह नहीं कि एक बेर जिस ने यह समाचार सुना घबड़ा गया, पर तादृश लोग शोकाक्रान्त न हो गए इस का मुख्य कारण यह है कि लोगों में राजभक्ति नहीं है। निस्सन्देह किसी समय में हिन्दुस्तान के लोग ऐसे राजभक्त थे कि राजा को साक्षात् ईश्वर की भांति मानते और पूजते थे, परन्तु मुसल्मानों के अत्याचार से यह राजभक्ति हिन्दुओं से निकल गई। राजभक्ति क्या इन दुष्टों

के पीछे सभी कुछ निकल गया; विद्या ही का वैसा आदर न रहा। अब हिन्दुस्तान में तीन बात का बड़ा घाटा है—वह यह है कि लोग विद्या, स्त्री, राजा का तादृश स्वरूप ज्ञान पूर्व्वक आदर नहीं करते। विद्या को केवल एक जीविका की वस्तु समझते हैं। वैसे ही स्त्री को केवल काम शान्त्यर्थ वा घर की सेवा करने वाली मात्र जानते हैं। उसी भांति राजा को भी केवल इतना जानते हैं कि वह मुझ से बलवान है और हम उस के वश में हैं। राजा का और अपना सम्बन्ध नहीं जानते और यह नहीं समझते कि भगवान की ओर से वह हम लोगों के सुख दुख का साथी नियत हुआ है, इस से हम भी उस के सुख दुःख के साथी हों।

हम आशा रखते हैं कि श्रीमान् गवर्नरजेनरल बहादुर के अकाल मृत्यु का समाचार अब सब को भली भांति पहुंच गया। हम लोगों ने जिस समय यह सम्वाद सुना शरीर शिथिलेन्द्रिय और वाक्य शून्य हो गया। यदि कोई आकर कहे कि चन्द्रमा में आग लगी है तो कभी विश्वास न होगा। उसी प्रकार भरतखण्ड के उपराज का एक कैदी के हाथ से मारा जाना किसी समय में एकाएकी ग्राह्य नहीं हो सकता। हाय! देश को कैसा दुःख हुआ! अभी वे ब्रह्म देश की यात्रा कर के अंडमन्स नाम द्वीपस्थित दुखियों के सहायार्थ उपाय करने को जाते थे और वहां ऐसी घटना उपस्थित हुई। चीफ जस्टिस नार्मन का मरण भूलने न पाया और एक उस से भी विशेष उपद्रव हुआ और फिर भी मुसल्मान के हाथ से। यद्यपि कई अंग्रेज़ी समाचार पत्र सम्पादकों ने लिखा है कि जो कारण नारमन साहेब के मारने का

था सो श्रीमान् के घात का कारण नही हो सकता, परन्तु इस में हमारी सम्मति नही है। क्योंकि यदि शेरअली के मन यह बात पहिले से ठनी न होती तो वह ऐसे निर्जन स्थान में छुरी ले कर छिपा क्यो बैठा रहता। फिर एक दूसरे कैदी के "इजहार" से स्पष्ट ज्ञात होता है जिस समय शेरअली ने अब्दुल्ला के और नार्मन साहेब के मरण का समाचार सुना कैसा प्रसन्न हुआ और लोगों का निमन्त्रण किया। यदि वह उस वर्ग का न होता जो कि तन मन से चाहते हैं कि सरकार "काफिर" है इस लिये उस के बड़े २ अधिकारियों के मारने से बड़ा "सवाब" होता है। प्रसन्नता और निमन्त्रण का क्या कारण था। फिर वह स्वत कहता है कि अपने मरण के पूर्व्व मैं एक बात कहूंगा। वह कौन सी बात हो सकती है! इन सब विषयों को भली भांति दृढ़ कर के तब उस को फांसी देना उचित है।

लार्ड लारेन्स का जीवनचरित्र।

सन् १८११ ई० ४ मार्च को उक्त महात्मा ने जन्म ग्रहण किया था। उन्हों ने पहिले कुछ दिन वर्ड लण्डन डेरी के काथेल कालिज मे शिक्षा लाभ की थी, बाद उस के हेलिवार कालिज में पढने लगे। १८२९ ई० में सिविलियन हो कर भारतवर्ष में आए। १८३१ ई० में दिल्ली के रेज़िडेण्ट और चीफ कमिश्नर सहकारी हुए। १८३२ ई० में प्रतिनिधि मजिस्ट्रर और कलक्टर हुए। १८३४ ई० मे पानीपत के प्रतिनिधि मजिस्ट्रर हो के गए। २ बरस के बाद गुड़गांव के एजण्ट मजिस्ट्रर और डिपटी

कलक्टर हुए। कई एक वर्षों के बाद दिल्ली के मजिस्ट्रेट हुए। उस समय यहां के गवर्नरजेनरल सर हेनरी हारडिङ्गटो थे। उन्हों ने इन की चमत्कार राजनीति देख कर इन को शतद्रु तीरस्थ प्रदेशो का कमिश्नर कर के भेज दिया। १८४८ ई० में लारेन्स लाहोर के रेज़िडेण्ट के प्रतिनिधि हुए। सिक्खो की दूसरी लड़ाई के बाद लार्ड डलहौसी ने पञ्जाब शासन करने के लिये एक एडमिनिष्ट्रेशन बोर्ड स्थापन किया। उस में यह और इन के बडे भाई सरहेनरी लारेन्स, चार्ल्स और मानसेल, सभ्य नियुक्त हुए। इन दोनों भाइयों ने राज्य शासन सम्बन्ध मे अति उत्तम क्षमता और निपुणता दिखाई। जान लारेन्स ने १८५७ ई० के गदर में अपनी अद्भुत शक्ति के प्रभाव से पञ्जाब को शांत रक्खा था, इसी लिये आज तक भारत साम्राज्य अव्याहत है। उस समय लारेन्स पञ्जाब के चीफ़ कमिश्नर थे। १८५६ ई० में लारेन्स को के. सी बी. की उपाधि मिली और बाद ही इन को जी. सी. बी. की भी उपाधि मिली थी। १८५८ ई० में यह महाराज बारनट हो कर प्रीवी कौंसिल के सभ्य हुए। १८६३ ई० के डिसेम्बर महीने में भारतवर्ष के गवर्नर जेनरल हो कर लार्ड एलगिन के उत्तराधिकारी हुए। १८६९ ई० के मार्च महीने में यह लार्ड उपाधि प्राप्त हो कर पार्लियामेण्ट में सभ्य हुए। लार्ड लारेन्स का धर्म विषय में विशेष अनुराग था। इन्हों ने भारतवर्ष के गवर्नमेंट स्कूल समूहों में बाइबल पढ़ाने का प्रस्ताव किया था। और और भी विशेष गुण इन में थे। आज कल यह पार्लियामेण्ट में भारतवर्ष सम्बन्धी विषयों की चर्चा विशेष करते

लगे थे। जिस में भारतवर्ष का मङ्गल हो, इन की यही इच्छा और चेष्टा रहती थी। ऐसे हितकारी मित्र को खोकर जो भारतवर्ष शोकाकुल न होगा, यह कहना वाहुल्य है। उन के सन्मानार्थ १ जुलाई को कलकत्ते के किले का निशान गिरा दिया था और ३१ तोपें दागी गई थीं। लार्ड हेस्टिङ्गस के वाद और किसी का ऐसा सन्मान नहीं किया गया था। वेष्टमिनिष्ट आदि में इन को समाधि दी गई है।

महाराजाधिराज ज़ार का संक्षिप्त जीवनचरित्र।

ता० १३ मार्च (१८८१ ई०) रविवार के दिन रूस के शाहनशाह ज़ार राजकीय गाड़ी में बैठकर भजन मन्दिर से अपने भवन में जाते थे कि इस वीच में किसी दुष्ट ने कुलफीदार गोला उन की गाड़ी के नीचे फेंका, परन्तु वार खाली गया। तव दूसरा फेंका। इस वेर गोला फूट गया और उस के भीतर की वारूद और गोलियों ने चारों ओर उड़ कर गाड़ी को विध्वंश किया। और ज़ार के पैरों का पता न लगा। केवल दो घण्टा प्राण रहा, पश्चात् शाहनशाह रूस पंचत्व को प्राप्त हुए। इस गोले ने कई मनुष्यों का प्राण लिया। इस दुष्ट घातक के पकड़ने का शोध हुआ और पकड़ा गया। इस की अवस्था केवल २१ वर्ष की है; नाम इस का रोसा काफ है। यह खनन विद्या में निपुण है। पहले तो इस दुष्ट ने अपने अपराध को अस्वीकार कर के वचाव किया था, पर यह गुप्तपाप कव छिपे। अन्त में इस ने सव कुछ अपने मुख से प्रगट किया। इस घोर विपत्ति से रूस में हाहाकार मचा है। यूरोप के

लोगों को भी बड़ा दुःख हुआ है। राजकुमार ज़ारविच् रूसी राज्य के उत्तराधिकारी अपने पिता के पद पर नियुक्त हुए। और उन का राजकीय नाम "तृतीय एलेक्ज्याण्डर" रक्खा गया है, ड्यूक आफ एडिम्बरा सपत्नीक सेण्टपीटर्सबर्ग में गये हैं। इङ्गलैंड मे एक मास भर अधिकारी लोग शोचसूचक वस्त्र धारण करेंगे। हाउस आफ कामंस और लार्ड्स की तरफ से दुःख शांत्वन पत्र भेजे जायेंगे। निहिलिष्ट लोग इस दुष्ट कर्म के करने में बहुत दिन से लगे हुए थे। और कई बेर जो नही सो कर चुके थे पर शाहन-शाह की आयुष्य थी, इस से इन का यत्न पूरा नही होता था। अब की इन्हो ने अपना दुष्ट सङ्कल्प पूरा किया। शाहनशाह रूस जैसे सूर और पराक्रमी थे सो समस्त भूमण्डल में प्रख्यात ही है।

इस महान् व्यक्ति का जन्म सन् १८१८ मे हुआ। उस समय इन के चाचा अलेक्ज़ांडर प्रथम रूस के राजसिंहासन पर थे। इन को पूरी सात वर्ष की अवस्था भी नहीं हुई थी कि इन के चाचा साहब स्वर्गवासी हुए। मृत अलेक्जांडर के भाई कांसटं-टाइन ने राज्य के भार से मुख मोड़ लिया था, इस कारण जार के पिता निकोलस को गद्दी मिली और ये युवराज हुए। इस के अनन्तर रूसी सैनिक लोगों में बलवा उत्पन्न हुआ और वह कई दिन तक रहा। इन बलवाइयों का नाम "डेकाब्रिस्ट्स" था और ये लोग राजकीय कुटुम्ब के पूर्ण शत्रु थे। इन का यह सकल्प था कि जैसे जर्मनी के छोटे २ हिस्से हो गए हैं, वैसे ही इस राज्य के भी हो जावें। परन्तु बहुत सी अन्य प्रामाणिक सैन्य समूह ने

प्रथम निकोलस को इन के पराजय करने में बड़ी ही सहायता दी, जिस से इन का दुष्ट संकल्प निर्मूल होगया। सन् १८२५ में राजकीय व्यवस्था भली भाति स्थापित करके निकोलस अपनी इच्छानुसार राज करने लगे। ज़ार की माता प्रुशिया के सम्राट् तृतीय फ्रेडरिक की कन्या थी। इन्हो ने स्वयं अपने लड़के ज़ार को विद्या सिखाई, परन्तु इस बात से इन के पिता अप्रसन्न रहते थे। उन्हों ने जार को फौजी गवर्नरों और निपुण शिक्षकों के पास विद्योपार्जन के निमित्त बैठाया। इस बात को जार ने अनहित समझ अपने को उस शिक्षा से हटाया और देश २ पर्यटन करने लगे और कुछ काल तक अपनी माता की सम्बन्धिनी स्त्रियों के सहवासी रहे। ये राजकीय प्रबन्धों से बहुत प्रसन्न रहते थे। सैनिक कामों में इन का मन कुछ भी न लगता, जो बात रूसी राजदरबार के सम्पूर्ण विरुद्ध थी। इस विषय में पूर्ण चिन्तना और यह कल्पना होने लगी कि इस युवराज के अधिकार में पुराने रूसी समूह क्योंकर रहने पावेंगे। यह बात इन के भाई ग्रांड्यूक कांस्टनटाइन के लिये परमोपयोगी थी। इन दोनों भाइयों में इस कारण ईर्षा उत्पन्न हुई। सामान्यतः इस बात की चर्चा होने लगी और कभी २ लड़ाई भी होती जाती थी।

एक समय की बात है कि इन के भाई कंस्टन्टाइन ने जो समुद्रीयसेना के ऐडमिरल थे, इतनी अधिक शत्रुता इन पर की कि ये कैद कर लिए गए। इस व्यवहार के पलटे निकोलस ने यही दण्ड देना कंस्टेन्टाइन को योग्य समझा। इस आपुस के विरोध से इन के पिता को बड़ा शोच रहता था। जब कि सन्

१८४३ में अलेकज़ैंडर का प्रथम पुत्र जन्मा तब निकोलस ने कांस्टेन्टाइन से शपथ ली कि वह युवराज का आज्ञाकारी रहेगा। निदान निकोलस ने अपने मरने के समय दोनो लड़कों को बुलाकर उन के समक्ष अलैक्ज़ैंडर को राज्याधिकार का तिलक दे दिया और इन दोनों से शपथ ली कि आपुस मे विरोध रहित राज्य प्रबन्ध में सन्नद्ध रहे, जिस से प्रजा और राज्य को हानि न पहुचे। यह सुन शाहज़ादे ने बड़े २ प्रधान मंत्रियों के सन्मुख प्रतिज्ञा की कि राज्य प्रबन्ध हम भलीभांति करेंगे और अपने को द्वितीय अलेक्ज़ैंडर के नाम से विख्यात किया। उसी दिन अपराह्न समय सब राजकीय और सैनिक कर्मचारियों ने जो सेन्टपीटर्सबर्ग मे थे आज्ञाकारी स्वीकार की और भेंटें दीं। एक कौंसिल जो नवीन अलेक्ज़ंडर के लिए नियत हुई थी उस में यह विचार ठहरा कि जो युद्ध उस से और अन्य राजों से हो रहा है वह हुआ करे। अलेक्ज़ैंडर का प्रथम काम यह था कि उस ने समग्र राज्यभर में अपने नाम और राज्यसिंहासन पर स्थित होने का विज्ञापन दिया और उस में यह आशय प्रगट किया कि मुख्य अभिप्राय मेरा यह है कि जिस प्रकार से पीटर कैथराइन, अलेक्ज़ेण्डर प्रथम और निकोलस प्रथम के समय से राज्य की प्रभा और वैभव बढ़ती आई है वैसी ही बढ़ा करे। जेनरल रूडीगर को वार्स नामक स्थान से बुलाकर राजकीयगार्ड की कमान दी और अपनी शान, शौकत के मुआफ़िक़ सेना भरती की; वाणिज्य की उन्नति में भी बड़ी चेष्टा की। राज्य में बहुत से गुलाम जो सरदार लोगों के पास थे उन में से २३०००००० गुलामों को दासत्व भाव से मुक्त कराया।

यही नहीं वरन उन को पेट भरने का उद्योग भी बतला दिया। नि:संदेह यह काम ज़ार का, जो सन् १८६१ में हुआ था, अत्यन्त प्रशंसा के योग्य है। इन्हों ने सरकारी कालेज स्थापित किए। देश २ में सभा नियत कराई। फेब्रुअरी सन् १८६८ में पौलेएड के लौंडी गुलामी को भी स्वाधीन किया। इस के करने का अभिप्राय यह था कि पौलेएड के सरदारों का ऐश्वर्य्य न्यून हो जाय, क्योंकि पूर्व्व में उस भूमि के स्वामी वेही लोग थे। ज़ार की विद्या विभाग की ओर दृष्टि इतनी अधिक बढ़ी थी कि उन्हों ने यूरप के कालिजों के समान अपनी राजकीय पाठशाला में बड़े २ पद स्थापित किए थे और यह प्रबन्ध बड़ा ही उत्तम था कि प्रत्येक सूबे की ओर से मेम्बर भरती होते थे। इन की सभा प्रथम सन् १८६५ में हुई थी, जिस से बहुत कुछ उपकार के पलटे अपकार की सम्भावना भी हुई। ज़ार ने अपनी प्रजा को युद्ध विद्या में बहुत निपुण किया और राज्य में पञ्चायती कोर्ट न्याय करने को स्थापित कर दिए। सन् १८६६ में इन्हों ने बुखारे के अमीर से लड़ाई प्रारम्भ की, जो डेढ़ वर्ष तक होती रही। इस में रूसी लोग विजयी हुए और समरकन्द पर अपना अधिकार जमा लिया। सन् १८६८ में ज़ार ने अपने अमेरिका प्रदेश में यूनाइटेड स्टेट्स का गवर्नमेन्ट अमेरिका के हाथ १४००००००) रुपये को बेच दिया। जब फ्रेञ्च और जर्मन में लड़ाई होने लगी और जर्मन में लोगों ने पेरिस नामक स्थान को घेर लिया तब ज़ार ने सन् १८५६ के सन्धिपत्र को (जिस से बलपक्सी की सीमा बांधी गई थी) मानना अस्वीकार किया। इस से बड़े बड़े राष्ट्रों को बड़ी कठिनता

देख पड़ने लगी। सन् १८७१ में इस निमित्त एक कान्फरेन्स हुआ, जिस में ज़ार के इच्छानुरूप सन्धिपत्र स्थापित हुआ। सन् १८७२ में जब ज़ार बर्लिन नगर को गए तो जर्मन और आस्ट्रिया के सम्राट् से भेंट किया। ये दोनों महाराज सेन्टपीटर्सबर्ग में थे। शाहनशाह की भेंट के लिए निमन्त्रित होकर आए थे। उस अवसर में बड़ा उत्सव हुआ था। सन् १८७३ में जेनरल काफमैन ने खीवा को अधिकार मे लाकर इस का कुछ खंड रूसी महाराज में जोड़ा था। सन् १८७४ मे इन्हों ने अपने राज्य के चारो ओर पर्य्यटन किया। जहां २ इन का गमन होता था वहां २ की प्रजा बड़ी धूम धाम से इन का आदर सन्मान करती थी। सन् १८७५ मे इन के जेनरल काफमेन ने कोखन्द नामक स्थान को सर किया और सब्ज़ दरिया का उत्तर भाग, अपने अधिकार में करके मस्कविट के राज्य को मिला लिया। सन् १८७६ मे जब टर्की और सर्विया के बीच में युद्ध प्रारम्भ हुआ, उन में इन्हो ने कुछ स्वय सहायता किसी को नहीं की। हां, रूसी लोग सर्विया की सैन्य समूह में गए थे। जब तुर्क लोगों ने अलेकजनाम को फते कर लिया उस समय कुस्तुन्तुनिया में रहने वाले वकील ने सुल्तान को छः सप्ताह तक युद्ध बन्द करने के लिए एक निवेदनपत्र प्रदर्शित किया था, जिसे सुल्तान ने मान्य किया। सन् १८७७ में टर्की और सर्विया के मध्य एक सन्धिपत्र हुआ और इसी वर्ष में यूरप के सब राजों के वकीलों का कुस्तुन्तुनियां में कान्फरेंस हुआ था, उस में जो व्यवस्था नियत हुई सो टर्की के सुल्तान को माननीय न हुई, इस कारण ज़ार ने टर्की से लड़ने का उद्देश प्रगट किया। इस युद्ध में तुर्क लोग बड़ी शूरता से लड़े, परन्तु तुर्की लोग पराजित हुए।

उस समय रूसी सेना कुस्तुन्तुनियां के द्वार तक पहुंची थी। सन् १८७८ ता० १६ फेब्रुअरी को एक सन्धिपत्र स्थान स्टेफेनों में हुआ, जिस के नियम वर्लिन के कान्फरेंस में कुछ परिवर्त्तन हुए थे। ज़ार का चित्त सर्वदा धर्म्म विषय में लगा रहता था, इसी कारण ये सब भजनमन्दिरो के अध्यक्ष हुए थे; परन्तु ये रोमनकेथलिक चर्च से द्वेष रखते थे। ज़ार के ऊपर दो मारण-प्रयोग हुए—प्रथम सन् १८६६ ता० १६ एप्रिल को ज्योही ये गाड़ी पर सवार होते थे कि एक काराकोसोक विद्यार्थी ने गोली चलाई, परन्तु एक कारीगर ने उसी क्षण अपने बुद्धिवल से उस विद्यार्थी के हाथ को फेर दिया, इस कारण निशाना उस का खाली गया।

इस वात को देख कर ज़ार ने उस कारीगर कामिसरोफ नामक को उच्च पदवी का सरदार वनाया। द्वितीय सन् १८६७ में ता० ६ जून को पारिस में पोल जाति के वरेजोवास्की नामक पुरुष ने इन पर गोली चलाई थी, उस समय ज़ार अपने दोनों पुत्र और शाहनशाह नेपोलियन के साथ गाड़ी में वैठे थे। परन्तु कुशल हुई, कि गोली किसी को न लगी, केवल एक अर्दली सवार का घोड़ा जख्मी हुआ। दूसरी गोली वह दुष्ट छोड़ता ही था कि वन्दूक की नली फट गई और उसी के हाथ में जा लगी। ज़ार का विवाह ता० २८ एप्रिल सन् १८४१ में हेंस की राजकन्या मेरिया एलेक्जान्द्रोवना से हुआ, जिस से सन्तति वहुत हुई। ज्येष्ठ पुत्र स्वर्णधारी निकोलस का जन्म ता० २२ सेप्टेम्वर सन् १८४३ में हुआ था, जो सन् १८६५ में मृत्यु के वश हुआ। द्वितीय पुत्र

एलेग्ज़ेंडर ता० १० मार्च सन् १८४५ में जन्मे और उन का विवाह ता० ६ नवम्बर सन् १८६६ में डेनमार्क की राजकन्या मेरियाफे-डोरवना से हुआ। इन की राजकन्या डचेज़मेरी का विवाह ता० २३ जनवरी सन् १८७४ में इङ्गलैण्ड के राजकुमार ड्यूक आफ एडिम्बरा से हुआ।

FRANCIS I KING OF FRANCE

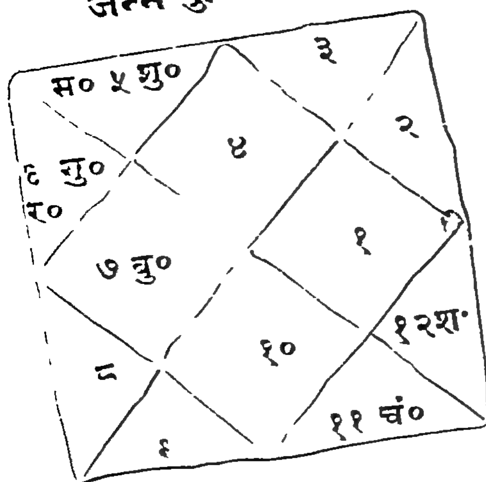
इन का जन्म सन् १४६४ सेप्टेम्बर की १२ वीं तारीख को दो पहर बाद १० घंटा ३७ मिनट पर। जन्मदेश का अक्षांश याम्य ४८ अंश, उस समय दशम का विषुवांश ३३ अंश ४८ कला, दशम लग्न ११ राशि ६ अंश, जन्म लग्न ३ राशि ५ अंश ५६ कला।

सायनाः स्पष्ट ग्रहाः ।

र०	चं०	बु०	शु०	मं०	गु०	श०	ग्रहाः
५	१०	६	४	४	५	११	रा०
२८	२७	१६	१५	२३	२३	१०	अ०
३६	३०	१०	५०	१५	५४	२२	क०

दक्षिण चन्द्र क्रांति. १० अंश २ कला। दक्षिण शनिक्रांतिः ६ अंश ४३ कला।

जन्म कुंडली ।



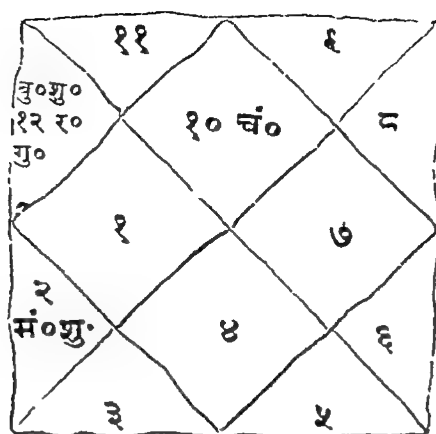
CHARLES V EMPEROR OF GERMANY

इन का जन्म सन् १५०० फेब्रुअरी की चौबीसवीं तारीख आधीरात के बाद २ घन्टा ३६ मिन्ट । जन्मस्थान का अक्षांश याम्य ५२ अंश । उस समय दशम का विषुवांश २२० अंश, दशम लग्न ७ राशि १२ अंश २७ कला, जन्म लग्न ६ राशि ५ अंश ४८ कला ।

सायनाः स्पष्ट ग्रहाः ।

र०	चं०	बु०	शु०	म०	गु०	श०	ग्रहाः
११	६	११	११	१	११	१	रा०
१४	८	१६	२६	२४	७	१७	अं०
३०	४५	३६	४०	४०	२६	३७	क०

जन्म कुंडली।



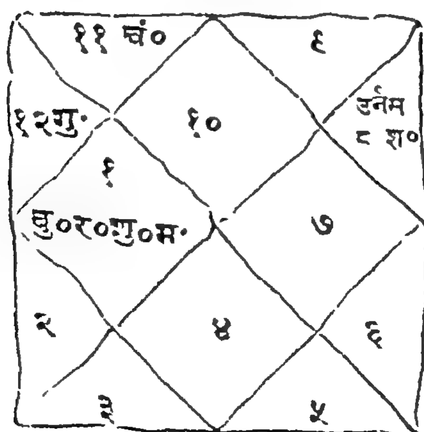
NAPOLEON III EMPEROR OF FRANCL

इन का जन्म सन् १८०८ अप्रिल को २० वी तारीख की आधीरात के बाद १ घंटा पर। जन्मस्थान प्यारिस, दशम का विषुवांश २२२ अंश ५६ कला, दशम लग्न ७ राशि १५ अंश २८ कला, जन्म लग्न ६ राशि १ अंश २४ कला।

सायनाः स्पष्ट ग्रहाः संक्रांतयः ।

र०	चं०	बु०	शु०	मं०	गु०	श०	उर्नस	ग्रहाः
०	१०	०	०	०	११	७	७	रा०
२१	२६	२	२	२१	१	२०	३	अ०
४५	२१	३२	२	५३	२४	२४	८	क०
का ३	का ६	का ६	का ६	का ३	का ६	का ६	का ६	
११	७	१	०	११	८	१५	१२	अ०
२४	४६	१८	३८	७	५५	२८	३	क०

जन्म कुण्डली



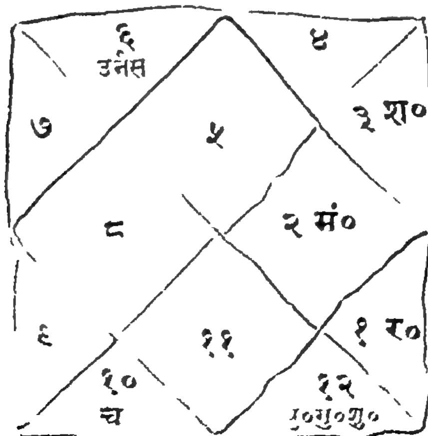
Frederic William V Emperor of Germany.

इन का जन्म सन् १७६७ मार्च की २२ वीं तारीख को दो पहर के बाद दो बजे पर। जन्मस्थान बर्लिन, दशम का विषुवांश ३० अंश ३० कला ४४ विकला, दशम लग्न १ राशि २ अंश ३: कला, जन्म लग्न ४ राशि १८ अंश ५१ कला।

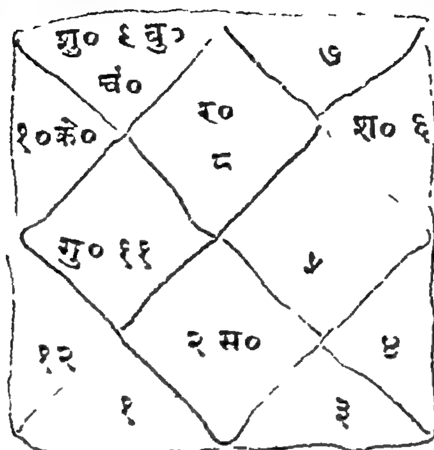
सायनाः स्पष्ट ग्रहाः संक्रांतयः

र०	च०	बु०	शु०	मं०	गु०	श०	उर्नस	ग्रहा
०	६	११	११	१	११	२	५	रा०
२	२५	७	१४	१५	२७	२१	६	अं०
२५	२४	२२	५२	२८	३६	४८	५६	क०
क्रा ३	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ३	
०	२३	१०	७	१७	१	२२	८	अं०
५८	३०	४६	११	२	५६	१२	३५	क०

जन्म कुण्डली



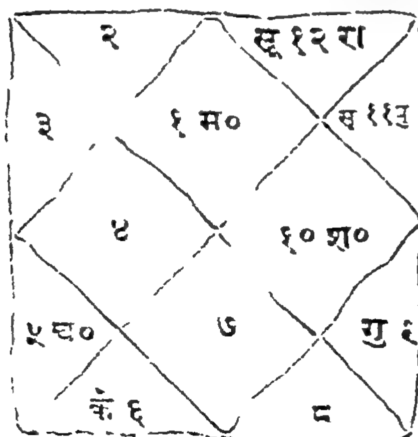
महाराज मल्हार राव की जन्म कुण्डली



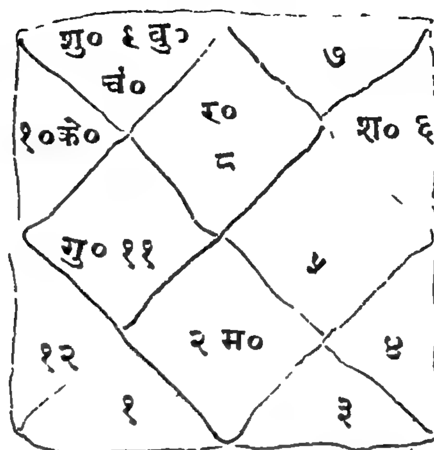
महाराज के प्रस्तुत दशा का कारण लग्नेश ७, भौम है दशमेश रवि १ तनु भावि दोनों का परस्पर दृष्टि योग है ।

लग्नकर्माधिनतारौ अन्योन्याश्रयि सस्थितौ ।
राजयोगाविति प्रोक्तौ विख्यातो विजयी भवेत् ॥ १ ॥

टीपू सुल्तान की जन्म कुण्डली ।



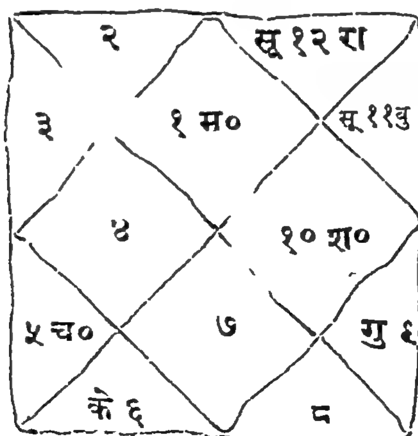
महाराज मल्हार राव की जन्म कुण्डली



महाराज के प्रस्तुत दशा का कारण लग्नेश ७, भौम है दशमेश रवि १ तनु भावि दोनों का परस्पर दृष्टि योग है।

लग्नकर्माधिनेतारौ अन्योन्याश्रयि सस्थितौ।
राजयोगाविति प्रोक्तौ विख्यातौ विजयी भवेत् ॥ १ ॥

टीपू सुल्तान की जन्म कुण्डली।



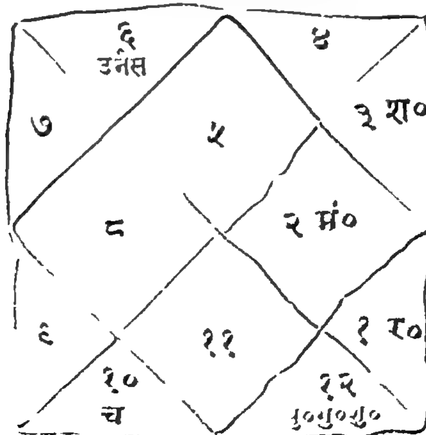
Frederic William V Emperor of Germany.

इन का जन्म सन् १७६७ मार्च की २२ वीं तारीख को दो पह
के बाद दो वजे पर। जन्मस्थान बर्लिन, दशम का विषुवां
३० अंश ३० कला ४४ विकला, दशम लग्न १ राशि २ अंश ३
कला, जन्म लग्न ४ राशि १८ अंश ५१ कला।

सायनाः स्पष्ट ग्रहाः संक्रांतयः

र०	चं०	बु०	शु०	मं०	गु०	श०	उर्नेस	ग्रहा
०	६	११	११	१	११	२	५	रा०
२	२५	७	१४	१५	२७	२१	६	अं०
२५	२४	२२	५२	२८	३६	४८	५६	क०
क्रा ३	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ३	
०	२३	१०	७	१७	१	२२	८	अं०
५८	३०	४६	१६	२	५६	१२	३५	क०

जन्म कुण्डली



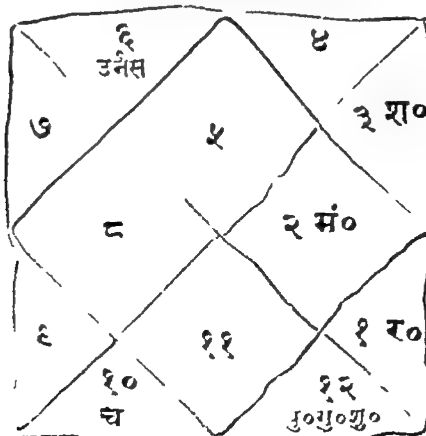
Frederic William V Emperor of Germany.

इन का जन्म सन् १७१७ मार्च की २२ वीं तारीख को दो पह के बाद दो बजे पर। जन्मस्थान बर्लिन, दशम का विषुवांश ३० अंश ३० कला ४४ विकला, दशम लग्न १ राशि २ अंश ३ कला, जन्म लग्न ४ राशि १८ अंश ५१ कला।

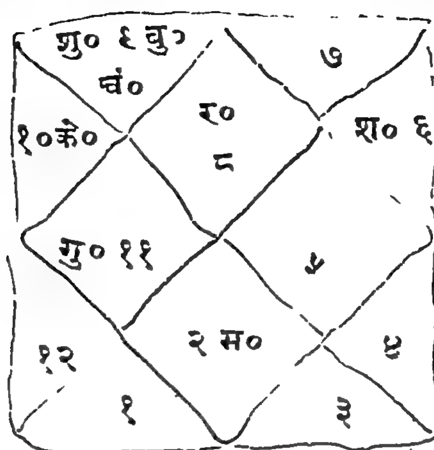
सायनाः स्पष्ट ग्रहाः संक्रांतयः

र०	चं०	बु०	शु०	म०	गु०	श०	उर्नस	ग्रहा
०	६	११	११	१	११	२	५	रा०
२	२५	७	१४	१५	२७	२१	६	अं०
२५	२४	२२	५२	२८	३६	४८	५१	क०
क्रा ३	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ६	क्रा ३	क्रा ३	
०	२३	१०	७	१७	१	२२	८	अं०
५८	३०	४६	११	२	५६	१२	३५	क०

जन्म कुण्डली



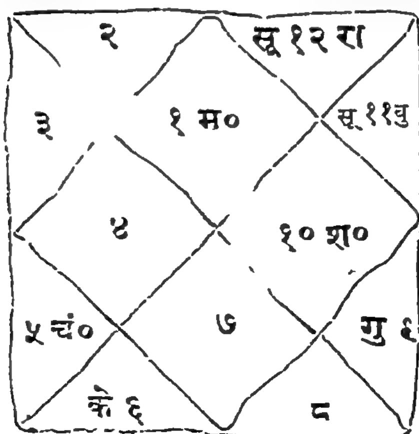
महाराज मल्हार राव की जन्म कुण्डली



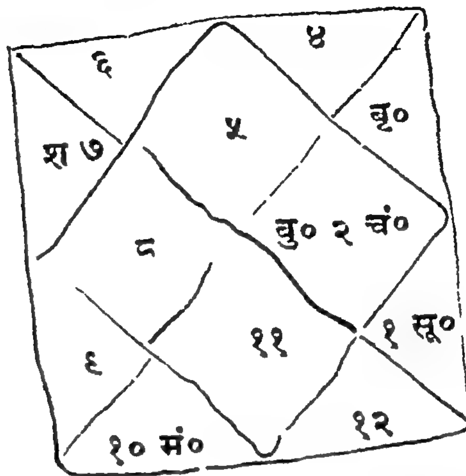
महाराज के प्रस्तुत दशा का कारण लग्नेश ७, भौम है दशमेश रवि १ तनु भावि दोनों का परस्पर दृष्टि योग है।

लग्नकर्माधिनेतारौ अन्योन्याश्रयि सस्थितौ।
राजयोगाविति प्रोक्तौ विख्यातौ विजयी भवेत् ॥ १ ॥

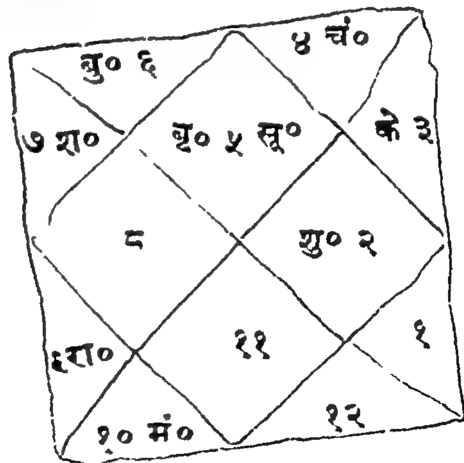
टीपू सुल्तान की जन्म कुण्डली।



सिकन्दर की जन्म कुण्डली ।



रावण की जन्म कुंडली ।



पंच पवित्रात्मा ।

अर्थात्

मुसलमानी मत के मूलाचार्य महात्मा मुहम्मद, आदरणीय अली,
बीबी फातिमा, इमाम हसन
और
इमाम हुसैन की संक्षिप्त जीवनी ।

भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित.

क्षत्रियपत्रिकासम्पादक मं० कु० बाबू रामदीन सिंह सङ्कलित

राय साहिब रामरणविजय सिंह द्वारा प्रकाशित.



'खड्गविलास' प्रेस, बांकीपुर, पटना
बाबू रामप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित.
ह० स० ३२—१६१७

दूसरी बार।

पंच पवित्रात्मा ।

———o:o———

महात्मा मुहम्मद ।



जिस समय अरव देश वाले बहुदेवोपासना के घोर अन्धकार मे फंस रहे थे उस समय महात्मा मुहम्मद ने जन्म ले कर उन को एकेश्वर वाद का सदुपदेश दिया । अरव के पश्चिम ईसामसीह का भक्तिपथ प्रकाश पा चुका था, किन्तु वह मत अरव फारस इत्यादि देशों में प्रवल नही था और न अरव ऐसे कट्टर देश में महात्मा मुहम्मद के अतिरिक्त और किसी का काम था कि वहां कोई नया मत प्रकाश करता । उस काल के अरव के लाग मूर्ख, स्वार्थतत्पर, निर्दय और वन्यपशुओं की भांति कट्टर थे । यद्यपि उन में से अनेक अपने को इवराहीम के वंश का वतलाते और मूर्ति पूजा वुरी जानते, किन्तु समाजपरवश होकर सव वहु देवोपाशक वने हुए थे । इसी घोर समय में मक्के से मुहम्मदचन्द्र उदय हुआ और एक ईश्वर का पथ परिष्कार रूप से सव को दिखलाई देने लगा ।

महात्मा मुहम्मद इवराहीम के वंश में इस क्रम से हैं —इवराहीम, इसमाईल, कवजार, हमल, सलमा, अलहौसा, अलीसा, ऊद,

आद, अद्नान, साद, नजार, मजर, अलपास, बद्रका, खरीमा, किनाना, नगफर, मालिक, फहर, गालिब, लवी, काब, मिरह, कलाब, फजी, अबद्मनाफ, हाशिम, अब्दुल मतलब, अब्दुल्लाह और इन के अबुल कासिम मुहम्मद।

अबदुलमतलब के अनेक पुत्र थे। जैसा हमजा, अब्बास, अबूतालिब अबुलहब, अईदाक। कोई कोई हारिस, हजब, हकूम, जरार जुबैर, कासमे असगर, अबदुलकावा और मकूम को भी कुछ विरोध से अबदुल मतलब का पुत्र मानते हैं। इन में अबदुल्लाह और अबीतालिब एक मां से हैं। अबीतालिब के तीन पुत्र अकील, जाफर और अली। यह अली महात्मा मुहम्मद के मुसलमानी सत्य मत प्रचार करने के मुख्य सहायक और रात दिन के इन के दुख सुख के साथी थे और यह अली जब महात्मा मुहम्मद ने दूतत्व का दावा किया तो पहिले पहल मुसलमान हुए।

महात्मा मुहम्मद की मा का नाम आमिना है, जो अबद्मनाफ के दूसरे बेटे वहब की बेटी हैं और आदरणीय अली की मा का फातमा है जो असद की बेटी है और यह असद हाशिम के पुत्र हैं, इस से मुहम्मद और अली पितृकुल और मातृकुल दोनों रीति से हाशिमी हैं।

महात्मा मुहम्मद १२ वीं रबिउलअौवल सन् ५६९ ईस्वी को मक्का में पैदा हुए।

महात्मा मुहम्मद के पिता के इन के जन्म से पूर्व [एक लेखक के मत से इन के जन्म के दो वर्ष पीछे] मर जाने से उन के दादा [illegible] का लालन पालन करते थे। अरब के उस समय की असभ्य

रीति के अनुसार कोई दाई अनाथ लड़के को दूध नहीं पिलाती थी और इस में वहां की स्त्रियां अमंगल समझती थीं, किन्तु अलीमा नामक * एक स्त्री ने इन को दूध पिलाना स्वीकार किया। इस दाई को बालक ऐसा हिल लग गया कि एक दिन अलीमा ने आकर महात्मा मुहम्मद की माता अमीना से कहा कि मक्के में संक्रामक रोग बहुत से होते हैं इस से इस बालक को मैं अपने साथ जंगल मे ले जाऊंगी। उन की मा ने आज्ञा दे दी और साढ़े चार बरस तक महात्मा मुहम्मद अलीमा के साथ वन में रहे। परन्तु इन के दैवी चमत्कार से कुछ शङ्का कर के दाई फिर इन को इन की माता के पास छोड़ गई। इन की छ बरस की अवस्था में इन की माता अमीना का भी परलोक हुआ और आठ बरस की अवस्था में इन के दादा अबदुल मतलब भी मर गए। तब से इन के सहोदर पितृव्य अबीतालीब पर इन के लालन पालन का भार रहा। अबीतालिब महात्मा मुहम्मद के बारह और पितृव्यों में इन के पिता के सहोदर भ्राता थे। हाशिम महात्मा मुहम्मद के परदादा का नाम था और यह मनुष्य ऐसा प्रसिद्ध हुआ कि उस के समय से उस के वंश का नाम हाशिमी पड़ा। यहां तक कि मक्का और मदीने का हाकिम अब भी "हशिमियों के राजा" के पद से पुकारा जाता है। अबदुल मतलब महात्मा मुहम्मद को बहुत चाहते थे और यह नाम भी उन्हीं का रक्खा हुआ था। इस हेतु मरती समय अबीतालिब को बुला कर महात्मा मुहम्मद की बांह पकड़ा कर उन के पालन के विषय में बहुत कुछ

*An Athiopian Female Slave.

कह सुन दिया था। अबीतालिब ने पिता की शिक्षा अनुसार महात्मा मुहम्मद के साथ बहुत अच्छा बरताव किया और इन को देश और समय के अनुसार शिक्षा दिया और व्यापार भी सिखलाया।

उन्हो ने रीति मत विद्या शिक्षा किया था इस का कोई प्रमाण नही मिला। पचीस बरस की अवस्था तक पशु चारण के कार्य मे नियुक्त थे। चालीस बरस की अवस्था में उन का धर्म भाव स्फूर्ति पाया। ईश्वर निराकार है, और एक अद्वितीय है; उन की उपासना बिना परित्राण नही है। यह महासत्य अरब के बहु-देवोपासक आचार भ्रष्ट दुर्दान्त लोगो में वह प्रचार करने को आदिष्ट हुए। तेंतालिस बरस की अवस्था के समय मे अग्निमय उत्साह और अटल विश्वास से प्रचार मे प्रवृत्त हुए। "रजोत नहुवा" नामक मुहम्मदीय धर्म ग्रन्थ में उन की उक्ति कह कर ऐसा उल्लिखित है। "हमारे प्रति इस समय ईश्वर का यह आदेश है कि निशा जागरण कर के दीन हीन लोगों की अवस्था हमारे निकट निवेदन करो, आलस्य शय्या में जो लोग निद्रित हैं उन लोगों के बदले तुम जागते रहो, सुख ग्रह मे आनन्द विह्वल लोगों के लिये अश्रुवर्षण करो।" पैगम्बर महम्मद जब ईश्वर का स्पष्ट आदेश लाभ कर के ज्वलन्त उत्साह के साथ पौत्तलिकता के और पापाचार के विरुद्ध खड़े हुए और ईश्वर एक मात्र अद्वितीय है" यह सत्य स्थान स्थान में गम्भीरनाद से घोषना करने लगे, उस समय वह अकेले थे। एक मनुष्य ने भी उन को सम विश्वासी रूप से परिचित होकर उन के उस कार्य्य मे सहानुभूति दान नही

किया। किन्तु उन्हो ने किसी की मुखापेक्षा नहीं किया, किसी का अनुमात्र भय नही किया, बुद्धि विचार तर्क की तृसीमा से भी नही गये, प्रभु का आदेश पालन करना ही उन का दृढ़ व्रत था। जब वह ईश्वर के आदेश से "ला इलाह एलिल्लाह" (ईश्वर एक मात्र अद्वितीय हैं) इस सत्य प्रचार में प्रवृत्त हुए, तब सब अरबी लोग उन के कई एक पितृव्य और समस्त ज्ञाति सम्बन्धी निज अवलम्बित धर्म के विरुद्ध वाक्य सुन कर भयानक क्रोधान्ध हुए और उन के स्वदेशीय और आत्मीय गन " महम्मद मिथ्यावादी और एन्द्रजालिक है" इत्यादि उक्ति कह के उन के प्रति और सबों का मन विरक्त और अविश्वस्त करने लगे। स्वजन सम्बन्धियो के द्वारा क्लेश अपमान प्रहार यन्त्रना आदि उन को जितनी सह्य करनी पड़ी थी उतनी दूसरे किसी महापुरुष को नहीं सहनी पड़ी। विपरीत लोगों के प्रस्तराघात से उन का शरीर क्षत विक्षत हुआ था। किसी के प्रस्तराघात से उन का दो दांत भग्न और ओठ विदीर्ण तथा ललाट और बाहु आहत हुआ था। किसी शत्रु ने उन को आक्रमण कर के उन का मुख मण्डल कंकड़ मय मृत्तिका में घर्षन किया था, उस से मुंह क्षत विक्षत और शोनिताक्त हुआ था। एक दिन किसी ने उन के गले में फांसी लगा कर स्वास रोध्य कर के उन को वध करने का उपक्रम किया था। एक दिन किसी ने उन का गला लक्ष कर के करवालाघात किया था तब गह्वर में छिपकर उन्हों ने अपने प्राण की रक्षा किया था। कई वार उन की जीवनाशा कुछ भी नहीं थी। एक दिन उन के पितृव्य और जातिवर्ग उन को वध करने को कृत संकल्प हुए थे। उन की

प्रियतमा दुहिता फातिमा ने जान कर रोते रोते उन से निवेदन किया, उस में धर्म्मवीर विश्वासी महम्मद अकुतोभय भाव से बोले कि वत्से ! मत रो, हम को कोई वध नहीं कर सकेगा, हम उपासनारूप अस्त्र धारण करेंगे, विश्वास वर्म्म से आवृत होंगे। जब हजरत महम्मद को प्रहार क्षत कलेवर और निःसहाय देख कर उन के पितृव्य हमज़ा महाक्रोध से अबुलहब और अबुजोहल प्रभृति मुहम्मद के परमशत्रु पितृव्य और दूसरे २ ज्ञाति सम्बन्धियों को प्रहार करने जाते थे, उस समय वह बोले, "जिन ने हम को सत्यधर्म्म प्रचार के हेतु मनुष्य मण्डली में प्रेरण किया है, उस सत्य परमेश्वर के नाम पर शपथ कर के हम कहते हैं, यदि तुम सुतीक्ष्ण करवाल के द्वारा नीच बहुदेवोपासक लोगों को निहत करो और उसी भाव से हमारी सहायता करने को अग्रसर हो तो तुम अपने को शोणित में कलंकित कर के पुन्यमय सत्य परमेश्वर से दूर जा पड़ोगे। ईश्वर के एकत्व में और हम उस के प्रेरित हैं इस सत्य का विश्वास जब तक न करोगे तब तक तुम को युद्ध विवाद में कोई फल नहीं होगा। पितृव्य यदि तुम वात्सल्यरूप औषध हम को प्रदान करने चाहते हो, और हमारे आहत हृदय में आरोग्य का औषध लेपन करना चाहते हो, तो "ला इलाह इल्लेल्लाह महम्मद रसुलल्लाह" (ईश्वर एकमात्र अद्वितीय और मुहम्मद उस का प्रेरित है) यह वाक्य उच्चारण करो। यह सुन कर हमजा विश्वासी होकर कलमा उच्चारण पूर्वक एक ईश्वर के धर्म्म में दीक्षित हुए। तीन बरस शत्रु मण्डली से अवरुद्ध होकर हजरत महम्मद को महा क्लेश से एक गिरिगुहा

में कालयापन करना पड़ा था। इस बीच में बहुत से मनुष्यों ने उन के साथ उस उन्नत विश्वास में योग दिया था और उन के निकट एक ईश्वर के धर्म्म में दीक्षित हुए थे। ईश्वर की आज्ञा-पालन के लिए वह दश बरस मक्का नगर में अपरिसीम क्लेश और अत्याचार सहन कर के पीछे मदीना नगर में चले गए। वहां शत्रु-गन से आक्रान्त होकर उन लोगों के अनुरोध से और आवाहन से युद्ध करने को बाध्य हुए। वह विपन्न अत्याचारित होकर कभी तनिक भी भीत और संकुचित नहीं हुए थे। जितनी बाधा और विघ्न उपस्थित होता था उतना ही अधिक उत्साहानल से प्रज्वलित हो उठते थे। सब विघ्न अतिक्रम कर के अटल विश्वास से वह ईश्वरादेश पालन व्रत में दृढ़ व्रती थे। वह ईश्वर और मनुष्य के प्रभु भृत्य का सम्बन्ध अपने जीवन में विशेष भांति प्रदर्शन करा गए है। वह स्वामी आदेश शिरोधार्य कर के स्वर्गीय तेज और अलौकिक प्रभाव से कोटि कोटि मनुष्य को अन्धेरे से ज्योति में लाए। लक्ष लक्ष जन का सांसारिक बल एक विश्वास के बल से चूर्ण कर के जगत् में अद्वितीय ईश्वर की महिमा को महीयान् किया। एकेश्वर की पूजा और सत्य का राज्य प्रतिष्ठित किया। प्रभु का आदेशपालन के हेतु सब प्रकार का दारिद्र क्लेश अपमान और आत्मीय जन का निग्रह अम्लान वदन से सिर नीचा कर के सहन किया। धन्य! ईश्वर के विश्वास किङ्कर महम्मद! आज मुसलमान धर्म्म के प्रवर्त्तक ईश्वर के आज्ञाकारी विश्वस्त भृत्य मुहम्मद के नाम और उन के प्रवर्त्तित पवित्र एकेश्वर के धर्म्म में एशिया से योरोप आफ्रिका तक कोटि कोटि

मुसलमान एक सूत्र में ग्रथित है। वह ऐसा आश्चर्य धर्म्म का वन्धन जगत् मे संस्थापन कर गए हैं कि आज दिन उस के खोलने की किसी को सामर्थ्य नही है।

बीबी फ़ातिमा।

अब हम लोग उस का जीवनचरित्र लिखते हैं जिस को करोड़ो मनुष्य सिर झुकाते है और जिस के दामन से प्रलय पीछे करोड़ो मनुष्य को ईश्वर के सामने अपने अपराधों की क्षमा मिलने की आशा है। यह बीबी फातिमा मुसलमान धर्म्मोद्याचार्य्य महात्मा मुहम्मद को प्यारी कन्या थी। महात्मा मुहम्मद जैसे दुहितृ-वत्सल थे वेसे ही बीबीफातिमा पितृभक्त थी। यह बाल्यावस्था ही मे मातृहीना हो गईं, क्योंकि इन की माता महात्मा मुहम्मद की प्रथमा स्त्री बीबी खदीजा इन को शैशवावस्था ही में छोड़ कर परलोक सिधारीं। यद्यपि महात्मा मुहम्मद को अनेक सन्तति थीं पर औरों का कोई नाम भी नही जानता और इन को आबाल-वृद्ध वनिता सब जानते हैं। मुहम्मद ने अपने मुख से कहा है कि ईश्वर ने संसार की सब स्त्रियों से फातिमा को श्रेष्ट किया। इन्हों ने आठ बरस तक जिस असाधारण निष्ठा और परम श्रद्धा से पिता की सेवा की पराकाष्टा की है वैसी सन्देह है कि किसी स्त्री ने भी न की होगी और न ऐसी पितृगतप्राणा नारी-रत्न और कही उत्पन्न हुई होगी। महात्मा मुहम्मद क्षण भर भी दृष्टि से दूर रखने में कष्ट पाते थे। पिता के अलौकिक दृष्टान्त और उपदेशों के प्रभाव से शैशवावस्था ही से इन को अत्यन्त

धर्म्मनिष्ठा थी। इन का मुख भोला भाला सहज सौन्दर्य्य से पूर्ण और सतोगुणी तेज से देदीप्यमान था। कभी इन्हों ने सिंगार न किया। सांसारिक सुख की ओर यौवनावस्था में भी इन्हो ने तृणमात्र चित्त न दिया। धर्म्म की विमल ज्योति और ईश्वरीय प्रताप इन के चिहरे से प्रगट था। धर्म्मसाधन और कठिन वैराग्य व्रतपालन ही में इन को आनन्द मिलता था और अनशानादिक नियम ही इन का व्यसन था। इन के समस्त चरित्र में से दो एक दृष्टान्त स्वरूप यहां पर लिखे जाते हैं।

महात्मा मुहम्मद के चचेरे भाई और परम सहायक आदरणीय अली से इन का विवाह हुआ और सुप्रसिद्ध हसन हुसैन इन के दो पुत्र थे।

एक वेर कुरेशवंशीय अनेक संभ्रान्तजन महात्मा मुहम्मद के पास आए और बोले कि यद्यपि हमारा आप का धर्म सम्बन्ध नहीं है पर हम आप एक ही वंश के और एक ही स्थान के हैं इस से हम लोगों की इच्छा है कि हम लोगों के यहां जो अमुक आप सम्बन्धी का अमुक से विवाह होनेवाला है उस कार्य को आप की पुत्री फातिमा चल कर अपने हाथ से सम्पादन करैं। महात्मा मुहम्मद ने अच्छा कह कर विदा किया और फातिमा के निकट आ कर कहने लगे—वत्से! लोगों से सद्भाव, तथा शत्रुओं का उत्पीड़न सहन करना और शत्रुतारूपी विष को कृतज्ञता रूपी सुधा भाव से पान ही हमारा धर्म है। आज अरब के अनेक मान्य लोगों ने अपने विवाह में तुम को बुलाया। यह हमारी इच्छा है कि तुम वहां जाओ, परन्तु तुम्हारी क्या अनुमति है हम जानना

चाहते है। फातिमा ने कहा ईश्वर और ईश्वर के भेजे हुए आचार्य्य की आज्ञा कौन उल्लघन कर सकता है? हम तो आप की आज्ञाधीना दासी है, इस से हमारी सामर्थ्य नहीं कि आप की आज्ञा टालें। हम विवाह सभा मे जायंगे, परन्तु शोच यह है कि हम कौन सा वस्त्र पहन के जायंगे। वहां और स्त्री लोग महामूल्य वस्त्राभरणादिक धारण कर के आवेंगी और हमारी फटी चद्दर देख कर वे लोग हमारा और आप का उपहास करेंगी। अबूजुहल की बहिन आनवा की स्त्री और शिवा की बेटी इत्यादि अनेक अरब की स्त्री कैसी असभ्यचारिणी और मन्दप्रकृति हैं यह आप भली भांति जानते हैं और हमालन की बेटी आप के चलने की राह मे कांटा विछा आती थी तथा अबुसफिनान की स्त्री को आप की निन्दा के सिवा और कोई काम ही नही है, यह भी आप को अविदित नहीं। सब उस सभा में उपस्थित रहेगी और स्म और मिस्र के बहुमूल्य अलङ्कार धारण कर के मणिपीठ के ऊंचे आसन पर बड़े गर्व्व से बैठेंगी। उस सभा में आप की कन्या को एक मैली फटी पुरानी चद्दर ओढ़ कर जाना होगा। हम को देख कर वे सब कहेंगी कि इस कन्या को क्या हुआ। इस की माता की अतुल सम्पत्ति क्या हो गई जो इस वेश से यहां आई है। पिता! इन लोगों को धर्म्मज्ञान और अन्तरचक्षु नहीं है, केवल जगत् के वाह्याडम्बर में भूले हैं, इस से हम को देख कर वह आप की निन्दा करेंगी और केवल हमारे कारण आप का अपमान होगा।

फातिमा पिता से यह कहती थीं और उन के नेत्रों से जल बहता था। महात्मा महम्मद ने उत्तर दिया—बेटी! तुम किञ्चिन्मात्र भी सोच मत करो। हमारे पास उत्तम वस्त्राभरण और धन तो निस्सन्देह कुछ भी नहीं है, परन्तु निश्चय रक्खो कि जो आज लाल पीले वस्त्र पहन कर अलङ्कार के उद्यान में फूली फूली दिखाई पड़ती हैं वे अपने दुष्कर्मों से कल तृण से भी तुच्छ हो कर नर्क की अग्नि में जलेंगी। हम लोगों का वस्त्र और शोभा वैराग्य है। महात्मा महम्मद और भी कुछ कहा चाहते थे कि फातिमा ने कहा, पिता! क्षमा कीजिये अब विलम्ब करने का कुछ प्रयोजन नहीं, आप की आज्ञा हम को सर्व्वथा शिरोधार्य्य है।

यह कह कर बीबी फातिमा घर से निकली * और उस विवाह सभा की ओर अकेली चली, परन्तु लिखा है कि ईश्वर के अनुग्रह से उन के अङ्ग पर दिव्य अमूल्य वस्त्राभरण सज्जित हो गये। कुरेशवंश में और अरब की स्त्री लोग अभिमान से फातिमा की मार्ग की परीक्षा कर रही थी और कहती थीं कि आज हम लोगों की सभा में महात्मा महम्मद की बेटी फटा कपड़ा पहन कर आवेगी और हम लोगों के उत्तम वस्त्राभूषण देख के आज वह भली भांति लज्जित होगी। इतने में विद्युल्लता की भांति साम्हने से

---

* हमारे पुराणों में भी लिखा है कि सती जब उदास हो कर दक्ष के यज्ञ में बिना सिंगार किये ही चलीं तो मार्ग में कुवेर ने उन को उत्तम २ वस्त्राभरण पहिना दिया। वैसे ही अनुमान होता है कि अपने आचार्य्य महात्मा मुहम्मद की बेटी को वस्त्रहीन देख कर उन के किसी धनिक सेवक ने अमूल्य वस्त्राभरण से उन को सजा दिया।

फातिमा की शोभा चमकी और विवाह-मण्डप में इन के आते ही एक प्रकाश हो गया। फातिमा ने नम्र भाव से सब स्त्रियों को यथायोग्य अभिवादन किया, परन्तु वे सब स्त्रियां ऐसी हतबुद्धि और धैर्यरहित हो गईं कि सलाम का उत्तर न दे सकी। फातिमा का मुखचन्द्र देख कर अभिमानिनी स्त्रियों के हृदय कमल मुरझा गये और आंखों में चकचौंधी छा गई। सब की सब घबड़ा कर उठ खड़ी हुई और आपस में कहने लगीं कि यह किस महाराज की कन्या और किस राजकुमार की स्त्री है। एक ने कहा, यह देवकन्या है। दूसरी बोली, नहीं, कोई तारा टूट कर गिरा है। कोई बोली, सूर्य्य की ज्योति है। किसी ने कहा, नहीं नहीं, आकाश से चन्द्रमा उतरा। परन्तु जिन के चित्त में धर्म्मवासना थी उन्हो ने कहा कि यह ईश्वरीय ज्योति है, यह अनेक अनुमान तो लोगों ने किये, परन्तु यह सन्देह सब को रहा कि कोई होय पर यह यहां क्यो आई है? अन्त में जब लोगों ने पहचाना कि यह बीबी फातिमा है तो सब को अत्यन्त लज्जा और आश्चर्य्य हुआ। सब से ऊंचे आसन पर उन को लोगों ने बैठाया और आप सब सिर झुका कर उन के आस पास बैठ गईं। कई उन में से हाथ जोड़ कर बोलीं, हे महा-पुरुष महम्मद की कन्या! हम लोगों ने आप को बड़ा कष्ट दिया, हम लोगों के कारण जो आप के नित्य कर्म्म में व्यवधान पड़ा हो उसे क्षमा कीजिये और हमारे योग्य जो कार्य्य हो आज्ञा कीजिये। हम लोगों को जैसा आदेश हो वैसा भोजन और शरबत आप के वास्ते सिद्ध करें। बीबी फातिमा ने विनय पूर्वक उत्तर

हमारे पितृदेव का विषय में विराग सहज स्वभाव है। अनशन व्रत हम लोगों को सुस्वाद भोजन के वदले अत्यन्त प्रिय है। हमारा और हमारे पिता का सन्तोष ईश्वर की प्रसन्नता है। तुम लोग देवी, देवता, भूत, प्रेत इत्यादि की पूजा और पाखण्ड छोड़ कर सत्य धर्म के प्रकाश में आओ, एक परमेश्वर की भक्ति करो, परस्पर वैर का त्याग और आपस में प्रीति करो। अनेक स्त्रियां फातिमा का यह अतुल प्रभाव देख कर उसी समय मुसलमान हुईं और जिन्हों ने उन का धर्म्म नही ग्रहन किया उन्हों ने भी उन का बड़ा आदर किया।

किसी विशेष रोग के कारण इन की मृत्यु नहीं हुई। पितृ-वियोग का शोक ही इन की मृत्यु का मुख्य कारण है। कहते हैं कि महात्मा महम्मद की मृत्यु के पीछे फातिमा शोक से अत्यन्त विह्वल रही। किसी भांति भी इन को बोध नहीं होता था, रात दिन रोती थीं और वारम्वार मूर्च्छित हो जाती थीं। एक दिन उन्हों ने कुछ स्वप्न देखा और मृत्यु के हेतु प्रस्तुत हो कर अपने प्रिय स्वामी आदरणीय अली को वुला कर कहा "कल पितृदेव को स्वप्न में देखा है जैसे वह चारो ओर नेत्र फैला कर किसी के मार्ग की प्रतीक्षा कर रहे हैं। हम ने कहा, पिता! तुमारे विच्छेद से हमारा हृदय विदग्ध और शरीर अत्यन्त जीर्ण हो रहा है। उन्हों ने उत्तर दिया, पुत्री! हम भी तो मार्ग ही देख रहे हैं। फिर हम ने ऊंचे स्वर से कहा, पिता! आप किस का मार्ग देख रहे हैं? तव उन्हों ने कहा, कि तुम्हारा मार्ग देख रहे हैं। पुत्री फातमा! हमारा तुमारा वियोग वहुत दिन रहा, इस से तुमारे विना अव हमारे

प्राण व्याकुल हैं। तुमारे शरीर त्याग का समय उपस्थित है; अब तुम अपनी आत्मा को शरीर सम्पर्क शून्य करो। इस निकृष्ट संकीर्ण जगत् का परित्याग कर के उस प्रसारित उन्नत देदीप्यमान आनन्दमय जगत् में गृहस्थापन करो। संसाररूपी क्लेश कारागार से छुट कर नित्य सुखमय परलोक उद्यान की ओर यात्रा करो। फ़ातिमा ! जब तक तुम न आओगी तब तक हम नहीं जायंगे। हम ने कहा, पिता ! हम भी तुम्हारी दर्शनार्थी हैं, तुम्हारी सहवास सम्पत्ति लाभ करें यही हमारी भी आकांक्षा है। इस पर उन्हों ने कहा, तो फिर विलम्ब मत करो, कल ही हमारे पास आओ। इस के पीछे हमारी नीद खुली, अब उस उन्नत लोक में जाने के लिये हमारा हृदय व्याकुल है। हम को निश्चय है कि आज सांझ या पहर रात तक हम इस लोक का त्याग करेंगे। हमारे पीछे तुम अत्यन्त शोकाकुल रहोगे, इस से जिस में हमारे सन्तान भूखे न रहें हम आज रोटी कर के रख देते हैं और पुत्र कन्या का वस्त्र भी धो देते हैं। हमारे पीछे यह कौन करेगा इस हेतु हम आप ही इन कामों से छुट्टी कर रखते हैं। हमारे अभाव में हमारे पुत्रों को कौन प्यार करेगा ? हमारी इच्छा थी कि आज इन का सिर सवांरें, परन्तु हम को सन्देह है कि कल कोई उन के मुंह की धूल भी न झारेगा"।

अली यह सुन कर अत्यन्त शोकाकुल हो कर रोने लगे और कहा कि फ़ातिमा ! तुम्हारे पिता के वियोग से हृदय में जो जख्म है वह अब तक पूरा नहीं हुआ और उन महात्मा के स्मरण [illegible] बिना जो शोक है वह किसी प्रकार से नहीं जाता। इस पर

तुम्हारा वियोग भी उपस्थित हुआ। यह आघात पर आघात और विपत्ति पर विपत्ति पड़ी। फ़ातिमा ने कहा, अली! उस विपत्ति में धैर्य किया है और इस में भी करो, इस क्षण मे एक मुहूर्त भर भी हम से अलग मत रहो, हमारे श्वासवायु अवसान का समय निकट है, नित्यधाम में हम तुम फिर मिलेंगे यह प्रतिज्ञा रही।

बीबी फ़ातिमा यह कहती थी और हसन हुसैन के मुख की ओर देख कर दीर्घश्वास के साथ अश्रुवर्षन करती जाती थीं। माता की यह बात सुन कर हसन हुसैन भी रोने लगे। फ़ातिमा ने कहा, प्यारे बच्चो! थोड़ी देर के वास्ते तुम लोग मातामह के समाधि-उद्यान में जाओ और हमारे हेतु प्रार्थना करो। वे लोग माता के आज्ञानुसार चले गये। फातिमा तब बिछौने पर लेट गई और अली से कहा, प्रिय! तुम पास बैठो। विदा का समय उपस्थित है। अली बैठे और शोक से रोने लगे। तब फ़ातिमा ने आसमा नाम की दासी को बुला कर कहा कि अन्न प्रस्तुत रक्खो, हमारे प्यारे हसन हुसैन आ कर भोजन करेंगे। जब वे घर आवें तब उन लोगों को अमुक स्थान पर बैठाना और भोजन कराना। उन को हमारे निकट मत आने देना, क्योंकि हमारी अवस्था देख कर वे घबड़ायेंगे। आसमा ने वैसा ही किया। इधर फ़ातिमा ने अली से कहा—हमारा सिर तुम अपनी गोद में ले बैठो, अब जीवन में केवल कुछ क्षण बाकी है। अली ने कहा, फ़ातिमा! तुम्हारी ऐसी बातें हम नहीं सुन सकते। फ़ातिमा ने उत्तर दिया, अली! पथ खुला है, हम प्रस्थान करहींगे और मन अत्यन्त शोकाकुल है और तुम से कुछ कहना भी अवश्य है। हमारी बात सुनो और

हमारे वियोग का शर्बत वाध्य हो कर पान करो। अली फ़ातिमा का सिर गोद में ले कर बैठे। फ़ातिमा ने नेत्र खोल कर अली के मुख की ओर देखा; उस समय अली के नेत्रों से आंसू के बूंद फ़ातिमा के मुख पर टपकते थे। अली को रोते देख कर फातिमा ने कहा, नाथ! यह रोने का समय नहीं है, अवकाश बहुत थोड़ा है। अन्तिम कथा सुन लो। अली ने कहा, कहो क्या कहती हो? फातिमा ने कहा, हमें चार बात कहनी है, पहली यह कि हम तुम्हारे सग बहुत दिन तक रहे। यदि हम से कोई अपराध हुआ हो तो क्षमा करो। अली रोने लगे, और बोले—कभी तुम ने आज तक कोई ऐसी बात ही नहीं किया जो हमारे प्रतिकूल हो। प्यारी! तुम तो सर्व्वदा हमारी मनोरञ्जनी रहीं, भूल कर भी तुम ने हम को कोई कष्ट नहीं दिया, तुम ने सब आपत्ति अपने ऊपर सहन किया, परन्तु हम को दुख न दिया, तुम उपकारिणी थीं, अपकारिणी नहीं। तुम को हम ने कोमल पुष्पमाला की भांति अपने हृदय पर धारण किया, कण्टक की भांति नहीं। बोलो, और बोलो और कौन बात है? फातिमा ने कहा, दूसरे यह कि हमारे प्यारे हसन हुसैन की रक्षा करना। जिस लाड़ प्यार और राव चाव से हम ने उन को पाला है उस में कुछ न्यूनता न हो, उन की सब अभिलाषा पूरी करना। तीसरे यह कि हमारे सब को रात्रि को भूमिशायी करना, क्योंकि जीवन दशा में जैसे पर पुरुष की दृष्टि हमारे शरीर पर नहीं पड़ी है वैसाही पीछे भी हो। चौथे, हमारी समाधि पर कभी २ आजाना। इतने में हसन हुसैन भी आ गए और माता की यह अवस्था देख कर बहुत रोने लगे। फातिमा ने किसी प्रकार

समझा कर फिर बाहर भेजा और दासी को बुला कर बीबी फ़ातिमा * ने स्नान किया और एक धौत वस्त्र परिधान कर के एक निर्जन गृह में दक्षिण पार्श्व से शयन कर के ईश्वर का स्मरण करने लगीं। इसी अवस्था में उन्हों ने परलोक गमन किया।

आदरणीय अली की मृत्यु का समाचार।

परम धार्म्मिक सुप्रसिद्ध अली मुसलमान धर्म्म के प्रवर्त्तक हज़रत महम्मद के जामाता और शीआ सम्प्रदाय के पहिले एमाम (आचार्य) थे। हजरत महम्मद के लोकान्तर गमन पीछे मुसलमान धर्म्म की स्थिति और उन्नति अली के ही ऊपर निर्भर थी। जैसे भक्तिभाजन ईसा को उन के शिष्य जूडा ने त्रिशत मुद्रा के लोभ से शत्रुहस्त में सम्पर्ण कर के वध किया था वैसे ही इब्नमुलज़म नामक एक व्यक्ति ने एक दुश्चारिनी नारी के प्रलोभन में उस की कुमन्त्रना से स्वीय धर्म्माचार्य अली को स्वयं करवालाघात से निहत किया। यह उस से भी भयङ्कर व्यापार है। इब्नमुलज़म के भाव चरित्र की चञ्चलता देख कर पहिले ही उस के ऊपर अली का सन्देह हुआ था। एक दिन इब्नमुलज़म ने अली को एक उत्कृष्ट सामग्री उपहार दी थी। अली उस उपहार के प्रति अनादर प्रदर्शन कर के बोले कि हम तुम्हारे इस उपढौकन ग्रहण में नहीं प्रस्तुत हैं; तुम परिणाम में हम को जो उपढौकन प्रदान करोगे उस के लिए हम विशेष चिन्तित हैं। इस के कुछ

* इफ़ताम अरबी में बच्चे को दूध से छुड़ाने को कहते हैं। इन का फातिमा नाम इसी हेतु पड़ा था कि छोटेपनही में इन की माता की मृत्यु हुई थी।

दिन पीछे अली शिष्य मण्डलीकसाथकूफानगर में उपस्थित हुए। वहां इवन्मुलज़म ने कुत्तामा नाम की एक दुश्चरित्रा विधवा युवती के सौंदर्य से मुग्ध होकर उस से परिनय अभिलाषा प्रगट की। कुत्तामा ने उस को प्रलोभन जाल में आवद्ध कर के कहा, हमारे तीन पण हैं सो पूर्ण करने से हम तुम्हारे साथ व्याह में सम्मत हैं। एक सहस्र दिरहम (ताम्रमुद्रा विशेष) एक जन सुगायिका सुन्दरी दासी और मुहम्मद के जामाता अली का वध-साधन। यह सुन कर इवन्मुलज़म बोला—पहिले दोनों पण कठिन नही हैं वह ससाधन कर सकेंगे, किन्तु तीसरा पण गुरुतर है इस के ससाधन में हम अक्षम हैं। कुत्तामा बोली, शेषोक्तपण ही सब में प्रधान है अली हमारे पितृकुल का शत्रु है, उस का प्राणसंहार बिना किए कोई भांति विवाह नही हो सकता है। दुरात्मा एवन् मुलज़म उस का सुदृढ़ पण देख कर उस में भी सम्मत हुआ। एवं विषाक्त तीक्ष्ण करवाल के द्वारा गुरु को हत्या करने का सुयोग देखने लगा। एक दिन निशीथ समय में अली कूफा की जामा मस्जिद के दरवाजे पर खड़े होकर नमाज में प्रवृत्त हैं, उस समय सुयोग समझ कर अनर्कित भाव से उस ने अली के सिर में एक आघात किया। अली आघात पाकर चिल्ला कर भूनलशायी हुए। शोनित स्रोत से मस्जिद साचिन हो गई। उन के आहत मस्तक से मस्तिष्क उद्भिन्न हो कर गिरा। दुरात्मा इवन्मुलज़म उसी क्षण धृत हो कर वन्दी हुआ। पीछे उस ने दुष्कर्म का समुचित प्रतिफल भोग किया। अली ने दो दिवस विष की विषम यंत्रना भोग कर के वन्धु वर्ग को शोकसागर में मग्न कर

के परलोक गमन किया। मृत्युकाल में स्वीय प्रियतम पुत्र हसन को यह अनुमति दिया कि हमारा देह निशीथ समय में किसी निभृत स्थान में निहित करना; वही कार्य में परिणत हुआ। जब हसन पितृदेह भूमि निहित कर के लौटते थे उस समय एक व्यक्ति के रोने का शब्द सुन पड़ा। वह क्रन्दन का लक्ष कर के वहां उपस्थित हुए देखा कि एक दरिद्र अन्ध वृद्ध आकुल हो कर रो रहा है। हसन ने रोने का कारण पूछा, तो वह बोला कि प्रति दिन रात को एक महापुरुष आकर हम को आहार देते थे और सुमिष्ट वचन से परितोष करते थे। आज तीन दिन से वह नहीं आते हैं, और वह मधुर वचन नहीं सुनने पाते हैं, हम अनाहार हैं। हसन ने पूछा, उन का नाम क्या है? अन्धा बोला, उन्हों ने हम को अपना परिचय नहीं दिया। परिचय पूछने से वह कहते थे, हमारे परिचय से तुम्हारा कोई प्रयोजन नहीं है, तुम हमारी सेवा ग्रहण करो। उन का कंठस्वर ऐसा था, वह अल्ला अल्ला की सदा ध्वनि करते थे। हसन अन्धे की बात से जान गए कि वह महापुरुष उन के पिता थे। तब अश्रुपात कर के बोले, कि आज वह महात्मा परलोक सिधारे हैं। अभी उन की अन्त्येष्टि क्रिया समाधान कर के हम चले आते हैं। वृद्ध यह सुन कर शोक से मूर्च्छित हो गिर पड़ा। पीछे रोते रोते बोला, तुम लोग हम को अनुग्रह कर के उन की पवित्र समाधि भूमि में ले चलो। हसन हाथ पकड़ कर वृद्ध को वहां ले गए। वृद्ध ने वहां शोक और अनाहार से प्राण त्याग किया।

एक दिन किसी विपथगामी ईश्वरविरोधी व्यक्ति ने परम प्रेमिक अली से पूछा था कि, हे ज्ञानवान् अली ! गृह चढ़ा और उच्च प्रासाद शिखर पर भी ईश्वर तुम्हारे रक्षक है, यह तुम स्वीकार करते हो ? अली बोले "हां, शैशव में, यौवन में, सर्वक्षण सर्वस्थान मे वह हमारे प्राण के रक्षक है।" यह बात सुन कर वह बोला, तुम अपने को, इस अट्टालिका पर से गिरा कर ईश्वर तुम का रक्षा करते हैं, इस विश्वास को पूर्णता प्रदर्शन करो, तब तुम्हारे विश्वास का हम विश्वास करेगे और तुम्हारी ईश्वरनिष्ठा प्रमाण युक्त होगी। तब अली बोले, चुप रहो और चले जाओ और स्पर्द्धा कर के जीवन को कलंकित मत करो। मनुष्य का क्या साध्य है कि ईश्वर को परीक्षा में बुलावे। केवल उन को परीक्षा करने का अधिकार है। वह प्रति मुहूर्त्त मे मनुष्य के निकट परीक्षा उपस्थित करते हैं। वह हम लोगो के पास है। हमलोग क्या है, वह प्रकाश कर देते हैं। अन्तर में हम लोग किस भांति धर्म्मभाव रखते हैं, वह दिखला देते हैं। कौन मनुष्य ईश्वर को ऐसी बात कह सकता है कि यह सब पाप अपराध कर के हम ने तुम्हारी परीक्षा किया। हे ईश्वर ! देखें, तुम्हारी कितनी सहिष्णुता है ! हा ! ऐसा कहने का किस को अधिकार है ? तुम्हारी बुद्धि अत्यन्त दुष्ट हुई है। तुम्हारी यह उक्ति सब पापों से बढ़ कर है। जो यह सुविशाल नभोमण्डल का रचयिता है, उस की तुम परीक्षा करने क्या जानो ? तुम अपना शुभाशुभ तो जानते ही नही हो। पहिले अपनी परीक्षा करो, पीछे दूसरे की परीक्षा करना। पथप्रदर्शक अग्रगामी गुरु की जो शिष्य परीक्षा करता है वह मूर्ख है। जिस को तुम ने परीक्षक

किया है, हे अविश्वासी, यदि उन्ही की धर्म्ममार्ग में तुम परीक्षा करो, तो तुम्हारी दु साहसिकता और मूर्खता प्रकाश होगी। तुम ईश्वर की क्या परीक्षा करोगे? धूलिकणिका क्या पर्वत की परीक्षा कर सकती है? मनुष्य अपने बुद्धिगत अनुमान से तुला यन्त्र प्रस्तुत कर के ईश्वर को उस में स्थापन करने जाता है, किन्तु ईश्वर बुद्धि के अनायत्त है, उन के द्वारा बुद्धि निर्मित परिमाण यन्त्र चूर्ण हो जाता है। ईश्वर की परीक्षा करना और उन को आयत्त करना एक ही है। तुम एतादृश महाराज को आयत्त करने की चेष्टा मत करो, चित्रित वस्तु किस प्रकार से चित्रकार की परीक्षा करेगा। उन के असीम ज्ञान में जो सब चित्र विद्यमान हैं उन के पास परिदृश्यमान विश्वचित्र क्या पदार्थ है। जब परीक्षा ग्रहण की कुबुद्धि के द्वारा तुम आक्रान्त होते हो, तब जानना तुम को संहार करने के लिए दुर्भाग्य उपस्थित हुआ है। अकस्मात् ईश्वर में ऐसी कुबुद्धि उपस्थित हो तो भूमिष्ठ प्रणत होना। भूमि को शोकाश्रुस्रोत से अभिषिक्त करना और कहना, हे ईश्वर! इस कुचिन्ता से हमारी रक्षा करो। तब परम परीक्षक ईश्वर तुम को रक्षा करेंगे।

इमाम हसन और इमाम हुसैन।

महात्मा मुहम्मद के जन्म का समाचार पूर्व में लिखा जा चुका है। इन को १८ सन्तति हुई, किन्तु वंश किसी के आगे नहीं चला, केवल बीबी फातिमा को वंश हुआ। यह बीबी फातिमा आदरणीय अली से व्याही थी। जब तक यह जीती थीं और

विवाह आदरणीय अली ने नहीं किया केवल इन्ही को अली मान कर इन्ही के सुखपंकज के अली बने रहे। बीबी फातिमा को पांच सन्तति हुई, तीन पुत्र हसन हुसैन और मुहसिन, और जैनब और उम्म कुलसुम यह दो बेटियां थीं। इन में मुहसिन छोटेपन ही में मर गए। अली ने बीबी फातिमा के मरने के पीछे उलनबीन से विवाह किया, उस से चार पुत्र अब्बास जाफर, उसमान और अब्दुल्लाह उत्पन्न हुए, जो चारो अपने भाई इमाम हुसेन के साथ करबला में वीर गति को गए। इन में से अब्बास को सन्तति चली। तीसरी स्त्री कैसी, उस से अब्दुल्लाह और अबूबकर यह दोनो भी करबला में मारे गए। चौथी स्त्री इसमानित से मुहम्मद और यहिया दो पुत्र हुए। इन चारो को सन्तति नही है। पांचवी स्त्री सहबाई से उमर और रकिया, जिन में से उमर की सन्तति है। छठवी स्त्री अम्मामा। इस को मुहम्मद मध्यम नामक पुत्र हुआ, किन्तु आगे सन्तति नहीं। सातवीं स्त्री इन की खूला है, जिन के पुत्र बड़े मुहम्मद हुए, जिन का वंश वर्त्तमान है। आदरणीय अली को इन बेटों के सिवा चौदह बेटियां भी हुईं। इन सब से इमाम हसन, इमाम हुसैन, अब्बास मुहम्मद और उमर का वंश है, जिन में इमाम हसन और इमाम हुसेन की सन्तति सैयद कहलाती है और शेष तीनों की साहबजादों के नाम से पुकारी जाती है। किन्तु शीया लोगों में अनेक इमाम हसन के वंश को भी सैयद नही कहते हैं और कहते हैं कि ठीक सैयद केवल इमाम जनलाबदीन (इमाम हुसेन के मध्यम पुत्र) का वंश है। आदरणीय अली सब के पहिले मुसलमान हुए और दाहिनी भुजा की भांति महात्मा मुहम्मद के

सदा सहायक रहे। इन्ही अली के पुत्र इमाम हुसेन थे, जिन का दुष्टों ने करबला में वध किया, जिस का हम क्रम से वर्णन करते हैं।

महात्मा मुहम्मद के (६३२ ई०) मृत्यु के पीछे अबूबकर (६३२ ई०) खलीफ़ा हुए और उन के पीछे उमर (६३४ ई०) और फिर उसमान (६४४ ई०) इस में कुछ सन्देह नही कि महात्मा मुहम्मद पीछे उन के सब शिष्यो का धन और देश और शासन के लोभ ने ऐसा घेर लिया था कि सब धर्म्म को भूल गए थे। केवल आड़ के वास्ते धर्म्म था। यद्यपि उपद्रव तो मुहम्मद महात्मा की मृत्यु के साथ ही हुआ, किन्तु तीसरे खलीफ़ा (महन्त) के काल से उपद्रव बढ़ गया। यह हम पक्षपात छोड़ कर कह सकते हैं कि ऐसे घोर समय में आदरणीय अली ने बड़ा सन्तोष प्रकाश किया था। शाम (Asia minor) के लोग इन सब उपद्रवों की जड़ थे। उन में भी कूफा के सन् ६५६ में इन उपद्रवियों ने उसमान महन्त का व्यर्थ वध किया, और आदरणीय अली को खलीफ़ा बनाया। यही समय मुहर्रम के अन्याय की जड़ है। उसमान खलीफ़ा के समय में महात्मा मुहम्मद के निज शिष्यों में एक मनुष्य मुआविया (जो इन का गोत्रज भी था) नामक शाम और मिसर आदि देशों में गवर्नर था। जब अली खलीफ़ा हुए तो इस मुआविया ने चाहा कि उन को जय कर के आप खलीफ़ा हों। यहां तक कि अनेक युद्धों में मुसलमानों पर अपना अधिकार जमाता गया। सन् ६६१ में पांच बरस खलीफ़ा रह कर अली एक दुष्ट के हाथ से मारे गए। इन के पीछे इन के बड़े पुत्र

और महात्मा मुहम्मद के नाती इमाम हसन खलीफा हुए, किन्तु मुआविया ने इन को भी अपने राज्य लोभ से भांति २ का कष्ट देना आरम्भ किया। उस समय के लोग ऐसे क्रूर, लोभी और दुष्ट थे कि धर्म्म छोड़ कर लोभ से बहुत मुआविया से मिल गए और अपने परमाचार्य्य की एकमात्र सन्तति हसन हुसेन को दुःख देने लगे। इमाम हसन यहां तक दुःखी हुए कि चार लाख सात पिन्शन पर निराश हो कर खिलाफत से बाज आए। कुछ ऊपर छ महीने मात्र ये खलीफा थे। किन्तु इस पिन्शन के देने में भी मुआविया बड़ी देर और हुज्जत करता रहा। यहां तक कि सन् ४६ हिजरी (६७० ई०) में मुआविया के पुत्र यजीद ने इमाम हसन को एक दुष्ट स्त्री जादा के द्वारा उन को विष दिलवाया। कहते हैं कि दो बेर पहिले भी इस दुष्टा स्त्री ने इस लोभ से कि वह यजीद की स्त्री होगी इमाम को विष दिया था, किन्तु तीसरी बार का विष ऐसा था कि उस से प्राण न बच सके और इस असार संसार को छोड़ गए। पन्द्रह पुत्र और ८ कन्या इन को हुई थीं। अब लोग इन दुष्टों के धर्म्म को देखें कि साक्षात् परमाचार्य्य ईश्वर प्रिय 'वरञ्च ईश्वर तुल्य' अपने गुरु की सन्तति और गुरु पुत्र और स्वयं भी गुरु उस का इन लोगों ने कैसे आनन्द से वध किया।

इमाम हसन के मरने के पीछे यजीद बहुत प्रसन्न हुआ और अपने राज्य को निष्कण्टक समझने लगा। अब केवल इन लोगों की दृष्टि में इमाम हुसेन बचे जो कि रात दिन खटकते थे, क्योंकि धर्म्मी और श्रद्धालु लोग इन के पक्षपाती थे। मुआविया और

उस के साथी लोग अब इस सोच में हुए कि किसी प्रकार इन को भी समाप्त करो तो निर्द्वन्द्व राज्य हो जाय। सन् ४६ के अन्त में मुआविया मर गया और यदीज नारकी मुसलमानों का महन्त हुआ। यह मद्यप, परस्त्रीगामी और बेईमान था, इसी हेतु इस के महन्त अपने से अनेक लोगों ने अप्रसन्नता प्रकट की। मक्के और मदीने के सभ्य और अनेक प्राचीन लोग उस के धर्म्म-शासन से फिर गए और अनेक लोग नगर छोड़ छोड़ कर दूर जा बसे। इमाम हुसैन का तो मानो वह शत्रु ही था। मदीना के हाकिम को लिख भेजा कि या तो इमाम हुसैन हमारा शिष्यत्व स्वीकार करें या उन का सिर काट लो। मदीने के हाकिम ने यह वृत्त इमाम हुसेन से कहा और उन पर अधिकार जमाने को नाना प्रकार की उपाधि करने लगा। यह विचारे दुखी हो कर अपने नाना और मा की समाधि पर विदा होने गए और रो रो कर कहने लगे कि नाना तुम्हारे धर्म्म के लोग निरपराध हुसैन को कष्ट देते हैं, हसन को विष दे कर मार चुके पर अभी इन को सन्तोष नहीं हुआ। तुम्हारे एक मात्र पुत्र और उत्तराधिकारी दीन हुसेन को महन्तों का पद त्याग करने पर भी यह लोग नहीं जीना छोड़ा चाहते। इसी प्रकार अनेक विलाप कर के अपनी मा और भाई की समाधि पर से भी विदा हुए और अपनी सपत्नी नानियों और सम्बन्धियों से विदा हो कर मक्के की ओर चले। इसी समय कूफा के लोगों ने इमाम को एक पत्र लिखा। उस में उन लोगों ने लिखा कि " हम लोग यजीद मद्यप के धर्म्म-शासन से निकल चुके हैं, आप यहां आइए, आप ही वास्तव में

हमारे गुरु हैं, हम लोग आप के चरण के शरण में रहेंगे और प्राण पर्य्यन्त आप से अलग न होंगे। इस बात को हम शपथ करते हैं।" इस पत्र पर कूफा के हज़ारों मुख्य के हस्ताक्षर थे। इस पत्र को पाकर इमाम ने कूफा जाना चाहा। उन के बन्धुओं ने उन से बहुत कहा कि कूफे के लोग झूठे होते हैं, आप उन का विश्वास न कीजिए। पर उन के ईश्वर की शपथ खाने पर विश्वास कर के इमाम ने किसी का कहना न सुना और अपने मक्का की यात्रा की। उस समय अपने चचेरे भाई मुसलिम को कूफियों के पास भेजा कि उन को मक्का से लौटती समय इमाम के कूफा आने का सम्वाद पहिले से दे। इन को इधर भेज कर आप वन्दना के हेतु मक्के चले। मुसलिम जब कूफे में पहुंचे तो इन का वहां के लोगों ने बड़ा शिष्टाचार किया और इमाम हुसेन के गुरुत्व का सब ने स्वीकार किया। यह देख कर इन्हों ने इमाम को पत्र लिखा कि आप निश्शङ्क कूफा आइए; यहां के लोग सब आप के दासानुदास हैं और तीस हज़ार आदमियों ने आप को गुरु माना है। इस पत्र के विश्वास पर इमाम हुसेन कूफे की ओर और भी निश्चिन्त हो कर चले और बान्धवों का वाक्य स्वीकार न किया। किन्तु शोच की बात है कि बिचारे मुसलिम वहां मारे जा चुके थे। कारण यह हुआ कि यज़ीद ने जब सुना कि कूफा में मुसलिम इमाम हुसैन का आचार्य्यत्व चला रहे हैं तो उस ने वहां के हाकिम को बदल दिया और अबीदुल्लाह जियाद नन्दन को हाकिम बनाया और आज्ञा भेजा कि हुसैन को बकरे की भांति ज़िबह करो और मुसलिम को तो जाने दो मार डालो।

जब जियाद पुत्र शाम का हाकिम हुआ तो मुसलिम के पकड़ने की फिक्र में हुआ। पहिले तो कूफे के लोग मुसलिम के साथ उस के मकान पर चढ़ गए, परन्तु जब उस ने उन लोगों को धमकाया और लालच दिया तो एक एक कर के सब मुसलिम का साथ छोड़ कर चले गए और मुसलिम विचारे भाग कर एक घर में जा छिपे। परन्तु लोगो ने उन को वहां भी जाने न दिया और पकड़ लाए और इबने जियाद की आज्ञा से उन का सिर काटा गया और उन का साथी हानी भी मारा गया, वरञ्च उन के दो लड़को को भी मार डाला। महात्मा मुसलिम मरने के समय यही कहते थे कि मुझे अपने मरने का कष्ट नहीं, क्योंकि सत्य मार्ग स्थापन में मेरे प्राण जाते हैं। मुझे शोच यही है कि मेरे पत्र के विश्वास पर इन कृतघ्नी और विश्वासघाती कूफा वालों के विश्वास पर इमाम हुसैन यहां चले आवैंगे और उन महापुरुष के साथ भी ये कापुरुष कुपुरुष यही व्यवहार करैंगे और आचार्य मुहम्मद की सन्तान को निरपराध ये लोग वध कर डालैंगे। हाय! उन के भाई मुसलिम कूफे में यों अनाथ की भांति मारे गये, यह हुसैन को नही मालूम था और वे मंजिल मंजिल इधर ही वढ़े आते थे। यहां तक कि जब शाम के हाते के भीतर पहुंच चुके तब इन्हो ने मुसलिम का मरना सुना। उस समय आप ने अपने साथ के लोगों से कहा कि भाई अब सब लोग तुम अपने देश लौट जाओ, हम तो प्राण देने जाते हैं। उस समय वे सब लोग, जो अरब से साथ आए थे, प्राण के भय से अपने सच्चे स्वामी को छोड़ कर चले गये। यहां तक कि हज़ारों की जमात में केवल ७२

मनुष्य साथ रह गए। जब इन लोगों के साथ इमाम सरलफ नामक स्थान पर पहुंचे तो हुर नामी अबीदुल्लाल का सेनापति दो हज़ार सिपाहियो के साथ मिला और वह इन लोगों को घेर कर शाम की तरफ बढ़ता हुआ ले चला। इस समय इमाम ने फिर सब लोगों को जाने को कहा, परन्तु अब तो वे लोग साथ थे जो सच्चे बन्धु थे। ऐसे कठिन समय में कौन साथ छोड़ कर जा सकता था। इसी समय शाम से और भी फौजें आने लगी। इमाम ने उन लोगों को बहुत समझाया और कहा कि हम यजीद के राज्य के बाहर चले जायं, किन्तु किसी ने उन की बात न सुनी। जब इमाम का डेरा करबला नामक स्थान में पड़ा था उस समय शिमर नामक इबने जियाद के सैनापति ने फुरात नहर का पानी भी इन पर बन्द कर दिया। एक तो गरमी के दिन, दूसरे सफर की गरमी और उस पर यह आपत्ति कि पानी बन्द। शिमर और उमर इस लश्कर में मुख्य थे। यदि इन में से किसी को कभी दया और धर्म्म सूझता भी, लोभ उसे हटा देता। कहते हैं कि यजीद हिमदानी ने साद से जाकर इमाम के वास्ते पानी मांगा और कहा कि क्या तुम को ईश्वर को मुंह नहीं दिखलाना है जो अपने गुरुपुत्र को निरपराध वध करते हो? इस के उत्तर में उस दुष्ट ने कहा कि हम रै की हाकिमी को धर्म से अच्छी समझते हैं। अन्त में अबीदुल्लाह ने साद पुत्र को आज्ञा लिखा कि क्यों इतनी देर करते हो? या तो हुसैन का सिर लाओ या उन को यजीद के मत में लाओ। इस आज्ञा के अनुसार (सन् ६१ हिजरी के) ९ वीं मुहर्रम की सन्ध्या को

अट्ठाईस हज़ार सैना से उमर ने इमाम का लशकर घेर लिया। इमाम उस समय संध्या की वन्दना में थे। उठ कर सेना से कहा कि रात भर को मुझे और फुरसत दो। उमर ने इस बात को माना। इमाम ने साथ के लोगों से कहा कि अब अच्छा है चले जाओ और मेरे पीछे प्राण मत दो। परन्तु किसी ने न माना और सब मरने को उद्यत हुए। रात भर सब लोग ईश्वर की स्तुति करते रहे। सबेरे इमाम ने स्त्रियों को धैर्य्य और सन्तोष का उपदेश दिया और आप ईश्वर का स्मरण करते हुए सब हथियार बांध कर अपने साथियों के साथ मरने को निकले। इन के साथ जितने लोग मारे गए उन को संख्या बहत्तर है। इन में ३२ सवार और ४० पैदल थे। सरदारों में मुसलिम बिन उन का जरगाम, वहब उन्स, मालिक, हुज्जाज, जहीर, असदी, आमिर, उम्मग, उमरान, शईब यमर, शूदब, और हबीब इबने मजाहिर (एक वृद्ध मनुष्य) थे और इमाम के नातेदारों में इन की बहिन जेनब के दो लड़के मुहम्मद और ऊन, और तीन मुसलिम के भाई, पांच इमाम हुसैन के विमात्र भाई अब्बास, उसमान, मुहम्मद अब्दुल्लाह और जाफर और तीन पुत्र इमाम हसन के अब्दुल्लाह जेद और कासिम (किसी के मत से ५ अबूबकर और उम्र भी) और एक पुत्र इमाम हुसेन के अली अकबर (अठारह बरस के) इतने मनुष्य थे। युद्ध होने के पूर्व इमाम एक ऊंट पर बैठ कर सैना के सामने आए और मृदु और गम्भीर स्वर से बोले कि हम ने किसी की स्त्री छीनी या किसी का धन हरण किया या कोई और बात धर्म्म-विरुद्ध की? किस बात पर तुम लोग हम को निरपराध वध करते

हो? इस का उत्तर किसी ने न दिया, तब इमाम यह कह कर उस ऊंट पर से उतरे कि हम ने संसार में तुम से इज्जत समाप्त कर ली, अब ईश्वर के यहां हमारा तुम्हारा झगड़ा है, और घोड़े पर सवार हुए। युद्ध आरम्भ हुआ और बड़ी वीरता से इन के साथी सब मारे गए। अन्त में इमाम अपने एक छोटे बच्चे को, जो प्यास से व्याकुल हो रहा था, उन लोगों के सामने लाए और कहा कि इस नौ महीने के बच्चे पर दया कर के केवल इस के पीने को तो पानी दो। इस के उत्तर में उन दुष्टों मे से एक ने ऐसा तीर मारा कि वह बच्चा वहीं मर गया। और फिर चारो ओर से घेर कर हज़ारो वार लोगो ने किए, यहां तक कि वे घोड़े पर से गिरे। उस समय किसी ने उन का सिर काटा, किसी ने मरे पर भाला मारा, किसी ने हाथ की उंगली नोची। इस पर भी इन लोगों को सन्तोष न हुआ और उन लोगों के मरे शरीर पर घोड़े दौड़ाए। हाय! इतने बड़े मनुष्य की यह गति! भूख प्यास से दुखी और दीन मनुष्य को निरपराध बाल बच्चे समेत स्त्रिया के सामने मारना इन्हीं लोगों का काम है, उस पर भी गुरु-पुत्र को।

॥ इति ॥

न०	नाम	बाप का नाम	मा का नाम	जन्म का समय	अवस्था
१	मुहम्मद	अबदुल्लाह	अमीना	१२ रबीउलऔवल ५२ हिजरी के पूर्व	६३
२	फातिमा	मुहम्मद	खदीजा	६०४ ईसवी	२८
३	अली	अबीतालिब	फातिमा असद की बेटी	५९९ ईसवी ११ रजब मक्के में	२६
४	हसन	अली	फातिमा	१५ शाबानसन २ हिजरी ६२५ ई०	४५॥
५	हुसैन	अली	फातिमा	५ शाबानसन ४ हिजरी ६२६ ई०	५१ वर्ष ५ महीना ५ दिन
६	अबूबकर	अबीकहाफ	उमउल खैर	५७१ ईसवी	६३
७	उमर	खिताब	खतमा	५८२ ईसवी	६३
८	उसमान	अफान	अरदी	५७५ ईसवी	८२
९	इमामजैनलाबदीन	इमामहुसैन	शहरबान [नौशेरवा से पाचवीं	३६ हिजरी	५८
१०	इमामबाकर	हुसैन के पुत्र अली	उसमें अबदुल्लाहई हसन की बेटी	५८ हिजरी	६३
११	इमामजाफर सदिक	बाकर	उम्मे फरदा अबुबकर की पोती	८० वा ८३ हिजरी	६७

मृत्यु का समय	सन्तति	गाडेजानेकास्थान	विशेष विवरण
१२ रबीउलऔ० ६३२ ईसवी ११ हिजरी	४ पुत्र, ४ कन्या	मदीना	बहु देववादी भूतपिशाचोपासी अरब जाति में इन्हीं ने एकेश्वर वादस्थापन कर के मुसलमानी मत चलाया, ग्यारह विवाह किए। बुद्धि आशय कौशल सम्पन्न थी। किसी के मत में १४ विवाह १८ सन्तति।
११ हिजरी	३ पुत्र, २ कन्या	मदीना	महात्मा मुहम्मद की एक मात्र वंश रखने वाली प्यारी कन्या, थी। स्वभाव बहुत नम्र और दयालु था।
४० हिजरी १९ रमजान	१७ पुत्र, वा १९ १७ कन्या	कूफा० नजफ ठीक नहीं मालूम	सुन्नियो के चौथे खलीफा। शीयाओ के पहले इमाम। पांच बरस तीन महीना खिलाफत किया। माता और पिता दोनों सम्बन्ध में यह म० मुहम्मद के बहुत पास थे अर्थात् चचेरे और मौसेरे भाई थे। यह सैयदो के वंशकर्त्ता और फकीरों के मूल गुरु हैं। नौ विवाह किए थे।
१ रबीउल औवल ४९ हिजरी ६७० ईसवी	१५ पुत्र, ८ कन्या	मदीना	सुन्नियो के पांचवें खलीफा तथा शीयाओ के दूसरे इमाम थे। छ महीना खिलाफत किया। विष के शहीद हुए। पांच पुत्रों का वंश है।
१० मुहर्रम ६१ हिजरी ६८३ ई०	६ पुत्र, ८ कन्या	करबला	शीयाओ के तीसरे इमाम। करबला के प्रसिद्ध युद्ध में शहीद हुए।
१३ हिजरी ६३४ ई०	३ पुत्र, ३ कन्या	मदीना	सुन्नियो के पहले खलीफा थे। महात्मा मुहम्मद के पीछे २ बरस तीन महीना खलीफा रहे। महात्मा मुहम्मद की छोटी स्त्री आयशा के पिता थे।

मृत्यु का समय	सन्तति	गाडेजानेकास्थान	विशेष विवरण
			चार स्त्री थीं। और मुसलमानी धर्म्म फैलाने को इन्हो ने बहुत सा द्रव्य व्यय किया था।
२३ हिजरी ४४ ई०	९ पुत्र, ३ कन्या	मदीना	दूसरे खलीफा थे, १० बरस आठ महीने खलीफा रहे। शहीद हुए, छ पत्नी और दो उपपत्नी थीं।
३५ वा ३४ हि० ६५२ ई	३ पुत्र, ४ कन्या	मदीना	तीसरे खलीफा थे। १२ बरस खलीफा रहे। इन को महात्मा मुहम्मद की दो बेटिया ब्याही थीं किन्तु उन को सन्तति नहीं थी। आठ स्त्री थीं पूर्वोक्त तीनों खलीफा की सन्तति शेख कहलाते हैं।
४० हिजरी	९ पुत्र, ८ कन्या	मदीना	शीया लोग केवल इन्हीं की सन्तति को सैयद मानते हैं।
११८ वा ११७ हिजरी	११ पुत्र, ४ कन्या	मदीना	
१४८	६ पुत्र, ३ कन्या	मदीना	

न०	नाम	बाप का नाम	मा का नाम	जन्म का समय	अवस्था
१२	इमाम मूसाकाजिम	जाफर	हमीरा	१२८ हिजरी	४५ या ५
१३	अलीरजा	मूसाकाजिम	नकीम	१५३ हिजरी	४६ ८
१४	अबूजाफरनकी	अली	रहीना	१९५ हिजरी	२५
१५	अबुलहसन अस-करीनकी	नका	समाना	२१४ हिजरी	४०
१६	अबूमहम्मद	असकरी	सौमन	२३२ हिजरी	२८
१७	अबुलकासिममिहदी	अबूमुहजकी	नरजिम	२५५ हिजरी	०
१८	इ० अबुहनीफ	मावित		८०	७७
१९	इमाममालिक	उन्स	उमउलमहसिनइमाम-हसनके परपोतेकीबेटी	९५	८४
२०	इमामशाफई	इदरीम		१५०	५४
२१	इमामजुमन	मुहम्मद		१६५	७६
२२	इमामगौम आजम	अबासालिह इमामहुसेन, बीरशन	फातिमाउमउलखैर इमामहमन के वंश में	४७०हि	९१

मृत्यु का समय	सन्तति	गाडेजानेकास्थान	विशेष विवरण
१८३	२ पुत्र १ कन्या	बुगदाद	शीया कहते हैं कि सुन्नियों के उपद्रव से अरब छोड कर चले गये। किन्तु सुन्नी कहते हैं उस काल के खलीफा बुगदाद में रहते थे इससे आदर के हेतु इनको भी वहीं बुलाकर बसाया। ये बड़े भारी वंशकर्त्ता हुए हैं।
२०३	८ पुत्र २२ कन्या	बुगदाद	शीया मत का विशेष प्रचार किया। किन्तु सुन्नी लोग कहते हैं कि ये लोग भी सब सुन्नी थे।
२२०	४ पुत्र १ कन्या	बुगदाद	
२५४	२ पुत्र २ कन्या	सरमनराय	
२६०	२ पुत्र १ कन्या	सरमनराय	
२६७	१ पुत्र	बुगदाद	शीयाओं के मत से ९ वर्ष की अवस्था में पर्वतगुहा में चले गए फिर प्रलय के समय निकलेंगे। सुन्नियों के मत से अभी जन्म ही नहीं हुआ प्रलय में पैदा होंगे।
१५०	०	मदीना	
१७९	०	मिस्र	नं० १८ से २१ तक ये सुन्नी मतके चार इमाम हैं, शीया इनको नहीं मानते ये चारो पृथक मत के प्रवर्त्तक हैं यथा हानिफी मालिकी सफाई और जम्बूली
२०४	०	बुगदाद	अकबर के वंश के बादशाह हानिफा थे। दत्तात्रेय की भांति अबूहनीफा ने अनेक गुरु किये थे, जिनमें इमाम जाफर भी थे।
२४२	०	बुगदाद	सुन्नियों में इन्हीं चारों की चार मुख्य मत शाखा हैं। ये क्रम से एक के दूसरे शिष्य भी थे।
५६१	०	बुगदाद	सुन्नियों में ये एक प्रसिद्ध इमाम हुए हैं हसनी हुसैन सैयद थे और बड़े भारी विद्वान और सिद्ध थे। शीया लोग इन को नहीं मानते हैं वरंच सैयद भी नहीं कहते।

दिल्ली दरबार दर्प्पण ।

अर्थात्

श्रीमती राजराजेश्वरी के पदाभिषेक उत्सव में मिलित दिल्ली
के महत् दरबार का सविशेष वर्णन

और

राजा लोगों के सलामी की सोधी हुई नई फिहरिस्त

भारतभूषण भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र लिखित.

क्षत्रियपत्रिकासम्पादक म० कु० बाबू रामदीन सिंह सङ्कलित

राय साहिब रामरणविजय सिंह द्वारा प्रकाशित.



'खड्गविलास' प्रेस, बांकीपुर, पटना.
बाबू रामप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित.
ई० स० ३२—१९१७.

दूसरी बार।

THE

DELHI ASSEMBLAGE MEMORANDUM

दिल्ली दरबार दर्प्पण ।

—o:o—

सब राजाओं की मुलाकातों का हाल अलग २ लिखना आवश्यक नहीं, क्योंकि सब के साथ वही मामूली बातें हुईं। सब बड़े २ शासनाधिकारी राजाओं को एक २ रेशमी झंडा और सोने का तगमा मिला। झंडे अत्यन्त सुन्दर थे। पीतल के चमकीले मोटे २ डंडों पर राजराजेश्वरी का एक एक मुकुट बना था और एक २ पटरी लगी थी जिस पर झंडा पाने वाले राजा का नाम लिखा था, और फरहरे पर जो डंडे से लटकता था स्पष्ट रीति पर उन के शस्त्र आदि के चिन्ह बने हुए थे। झंडा और तगमा देने के समय श्रीयुत वाइसराय ने हरएक राजा से ये वाक्य कहे :—

"मैं श्रीमती महारानी की तरफ से यह झंडा खास आप के लिये देता हूं, जो उन के हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी की पदवी लेने का यादगार रहेगा। श्रीमती को भरोसा है कि जब कभी यह झंडा खुलेगा आप को उसे देखते ही केवल इसी बात का ध्यान न होगा कि इङ्गलिस्तान के राज्य के साथ आप के खैरखाह

राजसी घराने का कैसा दृढ़ सम्बन्ध है वरन यह भी कि सरकार की यह बड़ी भारी इच्छा है कि आप के कुल को प्रतापी, प्रारब्धी और अचल देखे। मैं श्रीमती महारानी हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी की आज्ञानुसार आप को यह तगमा भी पहनाता हूं। ईश्वर करे आप इसे बहुत दिन तक पहिनें और आप के पीछे यह आप के कुल में बहुत दिन तक रह कर उस शुभ दिन को याद दिलावे जो इस पर छपा है।"

शेष राजाओं को उन के पद के अनुसार सोने या चांदी के केवल तगमे ही मिले। किलात के खां को भी झंडा नहीं मिला, पर उन्हें एक हाथी, जिस पर ४००० की लागत का हौदा था, जड़ाऊ गहने, घड़ी, कारचोबी कपड़े, कमखाब के थान वगैरह सब मिला कर २५००० की चीज़ें तुहफे में मिली। यह बात किसी दूसरे के लिये नहीं हुई थी। इस के सिवाय जो सरदार उन के साथ आए थे उन्हें भी किश्तियों में लगा कर दस हज़ार रुपये की चीज़ें दी गईं। प्राय लोगों को इस बात के जानने का उत्साह होगा कि खां का रूप और वस्त्र कैसा था। निस्सन्देह जो कपड़ा खां पहने थे वह उन के साथियों से बहुत अच्छा था तो भी उन की या उन के किसी साथी की शोभा उन मुगलों से बढ़ कर न थी जो बाज़ार में मेवा लिये घूमा करते है। हां, कुछ फर्क था तो इतना था कि लम्बी गझिन दाढ़ी के कारण खां साहिब का चिहरा बड़ा भयानक लगता था। इन्हें झंडा न मिलने का कारण यह समझना चाहिये कि यह बिल्कुल स्वतन्त्र हैं। इन्हें आने और जाने के समय श्रीयुत वाइसराय गलीचे के किनारे

तक पहुंचा गए थे, पर बैठने के लिये इन्हें भी वाइसराय के चबूतरे के नीचे वही कुर्सी मिली थी जो और राजाओं को। खां साहिब के मिज़ाज में रूखापन बहुत है। एक प्रतिष्ठित बंगाली इन के डेरे पर मुलाकात के लिये गए थे। खां ने पूछा, क्यों आए हो ? बाबू साहिब ने कहा, आप की मुलाकात को। इस पर खां बोले कि अच्छा, आप हम को देख चुके और हम आप को, अब जाइये।

बहुत से छोटे २ राजाओं को बोल चाल का ढंग भी, जिस समय वे वाइसराय से मिलने आए थे, संक्षेप के साथ लिखने के योग्य है। कोई तो दूर ही से हाथ जोड़े आए, और दो एक ऐसे थे कि जब एड्डिकांग के बदन झुका कर इशारा करने पर भी उन्हों ने सलाम न किया तो एड्डिकांग ने पीठ पकड़ कर उन्हें धीरे से झुका दिया। कोई बैठ कर उठना जानते ही न थे, यहां तक कि एड्डिकांग को "उठो" कहना पड़ता था। कोई झंडा, तगमा, सलामी और खिताब पाने पर भी एक शब्द धन्यवाद का नहीं बोल सके और कोई विचारे इन में से दो ही एक पदार्थ पा कर ऐसे प्रसन्न हुए कि श्रीयुत वाइसराय पर अपनी जान और माल निछावर करने को तैयार थे। सब से बढ़ कर बुद्धिमान हमें एक महात्मा देख पड़े जिन से वाइसराय ने कहा कि आप का नगर तो तीर्थ गिना जाता है, पर हम आशा करते हैं कि आप इस समय दिल्ली को भी तीर्थ ही के समान पाते हैं। इस के जवाब में वह वेधड़क बोल उठे कि यह जगह तो सब तीर्थों से बढ़ कर है, जहां आप हमारे "खुदा" मौजूद हैं। नौवाब लुहारू की भी अंगरेज़ी

में वात चीत सुन कर ऐसे बहुत कम लोग होंगे जिन्हें हंसी न आई हो। नौवाव साहिब वोलते तो बड़े धड़ाके से थे, पर उसी के साथ कायदे और मुहावरे के भी खूब हाथ पांव तोड़ते थे। कितने वाक्य ऐसे थे जिन के कुछ अर्थ ही नहीं हो सकते, पर नौवाव साहिब को अपनी अंगरेज़ी का ऐसा कुछ विश्वास था कि अपने मुंह से केवल अपने ही को नहीं वरन अपने दोनों लड़कों को भी अङ्गरेज़ी, अरबी, ज्योतिष, गणित आदि ईश्वर जाने कितनी विद्याओं का पण्डित बखान गए। नौवाब साहिब ने कहा कि हम ने और रईसों की तरह अपनी उमर खेल कूद में नहीं गंवाई वरन लड़कपन ही से विद्या के उपार्जन में चित्त लगाया और पूरे पण्डित और कवि हुए। इस के सिवाय नौवाब साहिब ने बहुत से राजभक्ति के वाक्य भी कहे। वाइसराय ने उत्तर दिया कि हम आप की अंगरेज़ी विद्या पर इतना मुबारक-वाद नहीं देते जितना अंगरेज़ों के समान आप का चित्त होने के लिये। फिर नौवाब साहिब ने कहा कि मैं ने इस भारी अवसर के वर्णन में अरबी और फारसी का एक पद्य ग्रन्थ बनाया है जिसे मैं चाहता हूं कि किसी समय श्रीयुत को सुनाऊं। श्रीयुत ने जवाब दिया कि मुझे भी कविता का बड़ा अनुराग है और मैं आप सा एक भाई-कवि (Brother-poet) देख कर बहुत प्रसन्न हुआ, और आप की कविता सुनने के लिये कोई अवकाश का समय अवश्य निकालूंगा।

२६ तारीख को सब के अन्त में महारानी तंजोर वाइसराय से मुलाकात को आईं। ये तास का सब वस्त्र पहने थीं और

मुंह पर भी तास का नक़ाव पड़ा हुआ था। इस के सिवाय उन के हाथ पांव दस्ताने और मोजे से ऐसे ठंके थे कि सब के जी में उन्हे देखने की इच्छा ही रह गई। महारानी के साथ में उन के पति राजा सखाराम साहिब और दो लड़कों के सिवाय उन की अनुवादक मिसेस फर्थ भी थीं। महारानी ने पहले आकर वाइसराय से हाथ मिलाया और अपनी कुर्सी पर बैठ गईं। श्रीयुत वाइसराय ने उन के दिल्ली आने पर अपनी प्रसन्नता प्रगट की और पूछा कि आप को इतनी भारी यात्रा में अधिक कष्ट तो नही हुआ? महारानी अपनी भाषा की बोलचाल में बेगम भूपाल की तरह चतुर न थीं, इस लिये ज़ियादा बातचीत मिसेस फर्थ से हुई, जिन्हें श्रीयुत ने प्रसन्न हो कर "मनभावनी अनुवादक" कहा। वाइसराय की किसी बात के उत्तर में एक बार महारानी के मुंह से "यस" निकल गया, जिस पर श्रीयुत ने बड़ा हर्ष प्रगट किया कि महारानी अंगरेज़ी भी बोल सकती हैं, पर अनुवादक मेम साहिब ने कहा कि वे अंगरेज़ी में दो चार शब्द से अधिक नही जानतीं।

इस वर्णन के अन्त में यह लिखना अवश्य है कि श्रीयुत वाइसराय लोगों से इतनी मनोहर रीति पर बात चीत करते थे जिस से सब मगन हो जाते थे और ऐसा समझते थे कि वाइसराय ने हमारा सब से बढ़ कर आदर सत्कार किया। भेंट होने के समय श्रीयुत ने हर एक से कहा कि आप से दोस्ती कर के हम अत्यन्त प्रसन्न हुए, और तगमा पहिनाने के समय भी बड़े स्नेह से उन की पीठ पर हाथ रख कर बात की।

१ जनवरी को दरबार का महोत्सव हुआ।

यह दरबार, जो हिन्दुस्तान के इतिहास में सदा प्रसिद्ध रहेगा, एक बड़े भारी मैदान में नगर से पांच मील पर हुआ था। बीच में श्रीयुत वाइसराय का षटकोण चबूतरा था, जिसकी गुम्बदनुमा छत पर लाल कपड़ा चढ़ा और सुनहला रुपहला तथा शीशे का काम बना था। कंगुरे के ऊपर कलसे की जगह श्रीमति राजराजेश्वरी का सुनहला मुकुट लगा था। इस चबूतरे पर श्रीयुत अपने राजसिंहासन में सुशोभित हुए थे। उन के बगल में एक कुर्सी पर लेडी साहिब बैठी थीं और ठीक पीछे खवास लोग हाथों में चंवर लिये और श्रीयुत के ऊपर कारचोबी छत्र लगाए खड़े थे। वाइसराय के सिंहासन के दोनों तरफ़ दो पेज (दामन बरदार), जिन में एक श्रीयुत महाराज जम्बू का अत्यन्त सुन्दर सब से छोटा राजकुमार, और दूसरा कर्नेल बर्न का पुत्र था, खड़े थे और उन के दहने बाएं और पीछे मुसाहिब और सेक्रिटरी लोग अपने २ स्थानों पर खड़े थे। वाइसराय के चबूतरे के ठीक सामने कुछ दूर पर उस से नीचा एक अर्द्ध चंद्राकार चबूतरा था, जिस पर शासनाधिकारी राजा लोग और उन के मुसाहिब, मदरास और बम्बई के गवरनर, पंजाब, बंगाल और पश्चिमोत्तर देश के लेफटिनेन्ट गवरनर, और हिन्दुस्तान के कमान्डरइनचीफ़ अपने २ अधिकारियों समेत सुशोभित थे। इस चबूतरे की छत बहुत सुन्दर नीले रंग के साटन की थी, जिस के आगे लहरियादार छज्जा बहुत सजीला लगा था। लहरिये के बीच २ में सुनहले काम के चांद तारे बने थे। राजाओं की कुर्सियां भी नीली साटन से मढ़ी

थी और हर एक के सामने वे झंडे गड़े थे जो उन्हें वाइसराय ने दिये थे, और पीछे अधिकारियों की कुर्सियां लगी थी, जिन पर भी नीली साटन चढ़ी थीं। हर एक राजा के साथ एक २ पोलिटिकल अफसर भी था। इन के सिवाय गवर्नमेन्ट के भारी २ अधिकारी भी यहीं बैठे थे। राजा लोग अपने २ प्रान्तों के अनुसार बैठाए गए थे, जिस से ऊपर नीचे बैठने का बखेड़ा बिल्कुल निकल गया था। सब मिला कर ६३ शासनाधिकारी राजाओं को इस चबूतरे पर जगह मिली थी, जिन के नाम नीचे लिखे हैं :—

महाराज अजयगढ़ बड़ोदा, बिजावर, भरतपुर, चरखारी, दतिया, ग्वालियर, इन्दौर, जयपुर, जम्बू, जोधपुर, करौली, किशुनगढ़, पन्ना, मैसूर, रीवां, उर्छा; महाराना उदयपुर; महाराव राजा अलवर, बूंदी महाराज राना झलावर, राना धौलपुर; राजा बिलासपुर बमरा, चिरौंदा, चम्बा, छतरपुर, देवास, धार, फ़रीदकोट, जींद, खरोंद कूचबिहार, मन्डी, नाभा नाहन, राजपीपला, रतलाम, समथर, सुकेत, टिहरी; रावा जिगनी टोरी; नौवाब, टोंक, पटोदी, मलेरकोटला, लुहारू, जूनागढ़, जौरा, दुजाना, बहावलपुर; जागीरदार, अलीपुरा, बेगम भूपाल; निज़ाम हैदराबाद सरदार पालसिया; ठाकुर साहिब भावनगर, मुर्वी, पिपलोदा; जागीरदार पालदेव मीर खैरपुर; महन्त कौंदका, नन्दगांव; और जाम नवानगर।

वाइसराय के सिंहासन के पीछे, परन्तु राजसी चबूतरे की अपेक्षा उस से अधिक पास, धनुषखण्ड के आकार की दो श्रेणियां चबूतरों की ओर बनी थीं जो दस भागों में बांट दी गई थीं। इन

पर आगे की तरफ़ थोड़ी सी कुर्सियां और पीछे सीढ़ीनुमा बेन्चें लगी थीं, जिन पर नीला कपड़ा मढ़ा था। यहां ऐसे राजाओं को जिन्हें शासन का अधिकार नहीं है और दूसरे सरदारों, रईसों, समाचारपत्रों के सम्पादकों और यूरोपियन तथा हिन्दुस्तानी अधिकारियों को, जो गवर्न्मेन्ट के नेवते में आये थे या जिन्हें तमाशा देखने के लिये टिकट मिले थे, बैठने को जगह दी गई थी। ये ३००० के अनुमान होंगे। क़िलात के ख़ां, गोआ के गवरनर जेनरल, विदेशी राजदूत, बाहरी राज्यों के प्रतिनिधि समाज और अन्यदेश सम्बन्ध कान्सल लोगों की कुर्सियां भी श्रीयुत वाइसराय के पीछे सरदारों और रईसों की चौकियों के आगे लगी थीं।

दरबार की जगह के दक्खिन तरफ़ १५००० से ज़ियादा सरकारी फ़ौज हथियार बांधे लैस खड़ी थी, और उत्तर तरफ़ राजा लोगों की सजीली पलटनें भांति २ की वरदी पहने और चित्र विचित्र शस्त्र धारण किये परा बांधे खड़ी थीं। इन सब की शोभा देखने से काम रखती थी। इस के सिवाय राजा लोगों के हाथियों के परे जिन पर सुनहले अमारियां कसी थीं और कारचोबी झूलें पड़ी थीं, तोपों की क़तारें, सवारों की नंगी तलवारों और भालों की चमक, फरहरों का उड़ना, और दो लाख के अनुमान तमाशा देखने वालों की भीड़ जो मैदान में डटी थी ऐसा समा दिखलाती थी जिसे देख जो जहां था वहीं हक्का बक्का हो खड़ा रह जाता था। वाइसराय के सिंहासन के दोनों तरफ़ हाइलैन्डर लोगों का गार्ड आव आनर और बाजेवाले थे, और शासनाधिकारी राजाओं के चबूतरे पर जाने के जो रास्ते बाहर की तरफ़ थे

उन के दोनों ओर भी गार्ड आव आनर खड़े थे। पौने बारह बजे तक सब दरबारी लोग अपनी अपनी जगहों पर आ गए थे। ठीक बारह बजे श्रीयुत वाइसराय की सवारी पहुंची और धनुष्खण्ड आकार के चबूतरों की श्रेणियों के पास एक छोटे से खेमे के दरवाजे पर ठहरी। सवारी पहुंचते ही बिलकुल फ़ौज ने शस्त्रों से सलामी उतारी पर तोपें नहीं छोड़ी गईं। खेमे में श्रीयुत ने जाकर स्टार आव इन्डिया के परम प्रतिष्ठित पद के ग्रांड मास्टर का वस्त्र धारण किया। यहां से श्रीयुत राजसी छत्र के तले अपने राजसिंहासन की ओर बढ़े। श्री लेडी लिटन श्रीयुत के साथ थी और दोनों दामनबरदार बालक, जिन का हाल ऊपर लिखा गया है, पीछे दो तरफ से दामन उठाए हुए थे। श्रीयुत के आगे २ उन के स्टाफ़ के अधिकारी लोग थे। श्रीयुत के चलते ही बन्दीजन (हेरल्ड लोगों) ने अपनी तुरहियां एक साथ बहुत मधुर रीति पर बजाईं और फौजी बाजे से ग्रान्ड मार्च बजने लगा। जब श्रीयुत राजसिंहासनवाले मनोहर चबूतरे पर चढ़ने लगे तो ग्रान्डमार्च का बाजा बन्द हो गया और नैशनल ऐन्थेम अर्थात् (गौड सेव दि क्वीन—ईश्वर महारानी को चिरञ्जीवी रक्खे) का बाजा बजने लगा और गार्ड्स आव आनर ने प्रतिष्ठा के लिये अपने शस्त्र झुका दिये। ज्योंही श्रीयुत राजसिंहासन पर सुशोभित हुए बाजे बन्द हो गए और सब राजा महाराजा, जो वाइसराय के आने के समय खड़े हो गए थे, बैठ गए। इस के पीछे श्रीयुत ने मुख्यबन्दी (चीफ़ हेरल्ड) को आज्ञा की कि श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने के विषय में अंगरेज़ी में

राजाज्ञापत्र पढो। यह आज्ञा होते ही बन्दीजनों ने, जो दो पांती में राज्यसिंहासन के चबूतरे के नीचे खड़े थे, तुरही बजाई और उस के बन्द होने पर मुख्य बन्दी ने नीचे की सीढ़ी पर खड़े हो कर बड़े ऊंचे स्वर से राजाज्ञापत्र पढ़ा, जिस का उल्था यह है :—

महारानी विक्टोरिया।

ऐसी अवस्था में कि हाल में पार्लियामेन्ट की जो सभा हुई उन में एक ऐक्ट पास हुआ है जिस के द्वारा परम कृपालु महारानी को यह अधिकार मिला है कि यूनाइटेड किंगडम और उस के आधीन देशों की राजसम्बन्धी पदवियों और प्रशस्तियों मे श्रीमती जो कुछ चाहें बढ़ा लें और इस ऐक्ट में यह भी वर्णन है कि ग्रेट ब्रिटन और आयरलैण्ड के एक में मिल जाने के लिये जो नियम बने थे उन के अनुसार भी यह अधिकार मिला था कि यूनाइटेड किंगडम और उस के आधीन देशों की राजसम्बन्धी पदवी और प्रशस्ति इस संयोग के पीछे वही होगी जो श्रीमती ऐसे राजाज्ञापत्र के द्वारा प्रकाश करेंगी, जिस पर राज की मुहर छपी रहे। और इस ऐक्ट में यह भी वर्णन है कि ऊपर लिखे हुए नियम और उस राजाज्ञापत्र के अनुसार जो १ जनवरी सन् १८०१ को राजसी मुहर होने के पीछे प्रकाश किया गया, हम ने यह पदवी ली "विक्टोरिया ईश्वर की कृपा से ग्रेट ब्रिटन और आयरलैण्ड के संयुक्त राज की महारानी स्वधर्म रक्षिणी," और इस ऐक्ट में यह भी वर्णन है कि उस नियम के अनुसार जो हिन्दुस्तान के उत्तम शासन के हेतु बनाया गया था हिन्दुस्तान के राज का अधिकार, जो उस समय तक हमारी ओर से ईस्ट इण्डिया कम्पनी को सपुर्द था, अब हमारे

निज अधिकार में आ गया और हमारे नाम से उस का शासन होगा। इस नये अधिकार की हम कोई विशेष पदवी लें, और इन सब वर्णनों के अनन्तर इस ऐक्ट में यह नियम सिद्ध किया गया है कि ऊपर लिखी हुई बात के स्मरण निमित्त कि हम ने अपने मुहर किये हुए राजाज्ञापत्र के द्वारा हिन्दुस्तान के शासन का अधिकार अपने हाथ में ले लिया हम को यह योग्यता होगी कि यूनाइटेड किंगडम और उस के आधीन देशों की राजसम्बन्धी पदवियों और प्रशस्तियों में जो कुछ उचित समझें बढ़ा लें। इस लिये अब हम अपने प्रिवी काउन्सिल की सम्मति से योग्य समझ कर यह प्रचलित और प्रकाशित करते हैं कि आगे को, जहां सुगमता के साथ हो सके, सब अवसरों में और सम्पूर्ण राजपत्रों पर जिन में हमारी पदवियां और प्रशस्तियां लिखी जाती हैं, सिवाय सनद, कमिशन, अधिकारदायक पत्र, दानपत्र, आज्ञापत्र, नियोगपत्र, और इसी प्रकार के दूसरे पत्रों के जिन का प्रचार यूनाइटेड किंगडम के बाहर नहीं है, यूनाइटेड किंगडम और उस के आधीन देशों की राजसम्बन्धी पदवियों में नीचे लिखा हुआ वाक्य मिला दिया जाय, अर्थात् लैटिन भाषा में "इन्डिई एम्परेट्रिक्स" [हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी] और अंगरेजी भाषा में "एम्प्रेस आव इन्डिया"। और हमारी यह इच्छा और प्रसन्नता है कि उन राजसम्बन्धी पत्रों में जिन का वर्णन ऊपर हुआ है यह नई पदवी न लिखी जाय। और हमारी यह भी इच्छा और प्रसन्नता है कि सोने चांदी और तांबे के सब सिक्के, जो आज कल यूनाइटेड किंगडम में प्रचलित हैं और नीतिविरुद्ध नहीं गिने जाते और इसी प्रकार तथा

आकार के दूसरे सिक्के जो हमारी आज्ञा से अब छापे जायंगे, हमारी नई पदवी लेने से भी नीतिविरुद्ध न समझे जायंगे, और जा सिक्के यूनाईटेड किंगडम के आधीन देशों में छापे जायंगे और जिन का वर्णन राजाज्ञापत्र में उन जगहों के नियमित और प्रचलित द्रव्य करके किया गया है और जिन पर हमारी सम्पूर्ण पदवियां या प्रशस्तियां उन का कोई भाग रहे, और वे सिक्के जो राजाज्ञापत्र के अनुसार अब छापे और चलाए जायेंगे इस नई पदवी के बिना भी उस देश के नियमित और प्रचलित द्रव्य समझे जायंगे, जब तक कि इस विषय में हमारी कोई दूसरी प्रसन्नता न प्रगट की जायगी।

हमारी विन्डसर की कचहरी से २८ अपरेल को एक हजार आठ सौ छिहत्तर के सन् में हमारे राज के उनतालीसवें बरस में प्रसिद्ध किया गया।

ईश्वर महारानी को चिरजीवी रक्खे !

जब चीफ़ हेरल्ड राजाज्ञापत्र को अंगरेज़ी में पढ़ चुका तो हेरल्ड लोगों ने फिर तुरही बजाई। इस के पीछे फ़ारेन सेक्रेटरी ने उर्दू में तर्जुमा पढ़ा। इस के समाप्त होते ही बादशाही झंडा खड़ा किया गया और तोपख़ाने से, जो दरबार के मैदान में मौजूद था, १०१ तोपों की सलामी हुई। चौंतीस २ सलामी होने के बाद बंदूकों की बाढ़ें दगीं और जब १०१ सलामियां तोपों से हो चुकीं तब फिर बाढ़ छूटी और नेशनल ऐन्थेम का बाजा बजने लगा।

इस के अनन्तर श्रीयुत वाइसराय समाज को ऐड्रेस करने के अभिप्राय से खड़े हुए। श्रीयुत वाइसराय के खड़े होते ही सामने के चबूतरे पर जितने बड़े २ राजा लोग और गवरनर आदि अधिकारी थे खड़े हो गए, पर श्रीयुत ने बड़े ही आदर के साथ दोनों हाथों से हिन्दुस्तानी रीति पर कई बार सलाम करके सब से बैठ जाने का इशारा किया। यह काम श्रीयुत का, जिस से हम लोगों की छाती दूनी हो गई, पायोनीयर सरीखे अंगरेज़ी समाचार पत्रों के सम्पादकों को बहुत बुरा लगा, जिन की समझ में वाइसराय का हिन्दुस्तानी तरह पर सलाम करना बड़े हेठाई और लज्जा की बात थी। खैर, यह तो इन अंगरेज़ी अखबारवालों की मामूली बातें हैं। श्रीयुत वाइसराय ने जो उत्तम ऐड्रेस पढ़ा उस का तर्जमा हम नीचे लिखते हैं:—

सन् १८५८ ईसवी की १ नवम्बर को श्रीमती महारानी की ओर से एक इश्तिहार जारी हुआ था जिस में हिन्दुस्तान के रईसों और प्रजा को श्रीमती की कृपा का विश्वास कराया गया था जिस को उस दिन से आज तक वे लोग राजसम्बन्धी बातों में बड़ा अनमोल प्रमाण समझते हैं।

ये प्रतिज्ञा एक ऐसी महारानी की ओर से हुई थीं जिन्हों ने आज तक अपनी बात को कभी नहीं तोड़ा, इस लिये हमें अपने मुंह से फिर उन का निश्चय कराना व्यर्थ है। १८ बरस की लगातार उन्नति ही उन को सत्य करती है और यह भारी समागम भी उन के पूरे उतरने का प्रत्यक्ष प्रमाण है। इस राज के रईस और प्रजा जो अपनी २ परम्परा की प्रतिष्ठा निर्विघ्न भोगते

रहे और जिन को अपने उचित लाभों की उन्नति के यत्न में सदा रक्षा होती रही उन के वास्ते सरकार की पिछले समय की उदारता और न्याय आगे के लिये पक्की ज़मानत हो गई है।

हम लोग इस समय श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने का समाचार प्रसिद्ध करने के लिये इकट्ठे हुए हैं, और यहां महारानी के प्रतिनिधि होने की योग्यता से मुझे अवश्य है कि श्रीमती के उस कृपायुक्त अभिप्राय को सब पर प्रगट करूं जिस के कारण श्रीमती ने अपने परम्परा की पदवी और प्रशस्ति में एक पद और बढ़ाया।

पृथ्वी पर श्रीमती महारानी के अधिकार में जितने देश हैं—जिन का विस्तार भूगोल के सातवें भाग से कम नहीं है, और जिन में तीस करोड़ आदमी बसते हैं—उन में से इस बड़े और प्राचीन राज के समान श्रीमती किसी दूसरे देश पर कृपादृष्टि नहीं रखतीं।

सब जगह और सदा इंगलिस्तान के बादशाहों की सेवा में प्रवीण और परिश्रमी सेवक रहते आए हैं, परन्तु उन से बढ़ कर कोई पुरुषार्थी नहीं हुए, जिन की बुद्धि और वीरता से हिन्दुस्तान का राज सरकार के हाथ लगे और बराबर अधिकार में बना रहा। इस कठिन काम में जिस में श्रीमती की अंगरेज़ी और देशी प्रजा दोनों ने मिलकर भली भांति परिश्रम किया है श्रीमती के बड़े २ स्नेही और सहायक राजाओं ने भी शुभचिंतकता के साथ सहायता दी है; जिन की सेना ने लड़ाई की मिहनत और जीत में श्रीमती की सेना का साथ दिया है; जिन की बुद्धिपूर्वक

सत्यशीलता के कारण मेल के लाभ बने रहे और फैलते गए हैं, और जिन का वहां आज वर्त्तमान होना, जो कि श्रीमती के राज-राजेश्वरी की पदवी लेने का शुभ दिन है, इस बात का प्रमाण है कि वे श्रीमती के अधिकार की उत्तमता में विश्वास रखते हैं और उन के राज में एका बने रहने में अपना भला समझते हैं।

श्रीमती महारानी इस राज को जिसे उन के पुरखों ने प्राप्त किया और श्रीमती ने दृढ़ किया एक बड़ा भारी पैतृक धन समझती हैं जो रक्षा करने और अपने वंश के लिये सम्पूर्ण छोड़ने के योग्य है, और इस पर अधिकार रखने से अपने ऊपर यह कर्त्तव्य जानती हैं कि अपने बड़े अधिकार को इस देश की प्रजा की भलाई के लिये यहां के रईसों के हक़ों पर पूरा २ ध्यान रखकर काम में लावें। इस लिये श्रीमती का यह राजसी अभिप्राय है कि अपनी पदवियों पर एक और ऐसी पदवी बढ़ावें जो आगे सदा को हिन्दुस्तान के सब रईसों और प्रजा के लिये इस बात का चिन्ह हो कि श्रीमती के और उन के लाभ एक हैं और महारानी की ओर राजभक्ति और शुभचिंतकता रखनी उन पर उचित है।

वे राजसी घरानों की श्रेणियां जिन का अधिकार बदल देने और देश की उन्नति करने के लिये ईश्वर ने अंगरेज़ी राज को यहां जमाया, प्रायः अच्छे और बड़े बादशाहों से खाली न थीं परन्तु उन के उत्तराधिकारियों के राज्यप्रबन्ध से उन के राज्य के देशों में मेल न बना रह सका। सदा आपस में झगड़ा होता रहा और अंधेर मचा रहा। निबल लोग बली लोगों के शिकार थे और बल-

वान् अपने मद के। इस प्रकार आपस की काट मार और भीतरी झगड़ों के कारण जड़ से हिलकर और निर्जीव होकर तैमूरलंग का भारी घराना अन्त को मिट्टी में मिल गया, और उस के नाश होने का कारण यह था कि उस से पच्छिम के देशों की कुछ उन्नति न हो सकी।

आजकल ऐसी राजनीति के कारण जिस से सब जात और सब धर्म्म के लोगों को समान रक्षा होती है श्रीमती की हर एक प्रजा अपना समय निर्विघ्न सुख से काट सकती है। सरकार के समभाव के कारण हर आदमी विना किसी रोक टोक के अपने धर्म के नियमों और रीतो को बरत सकता है। राजराजेश्वरी का अधिकार लेने से श्रीमती का अभिप्राय किसी को मिटाने या दबाने का नहीं है बरन रक्षा करने और अच्छी राह बतलाने का। सारे देश की शीघ्र उन्नति और उस के सब प्रान्तों की दिन पर दिन वृद्धि होने से अंगरेज़ी राज के फल सब जगह प्रत्यक्ष देख पड़ते हैं।

हे अंगरेज़ी राज के कार्यकर्त्ता और सच्चे अधिकारी लोग,— यह आप ही लोगों के लगातार परिश्रम का गुण है कि ऐसे २ फल प्राप्त हैं, और सब के पहले आप ही लोगों पर मैं इस समय श्रीमती की ओर से उनकी कृतज्ञता और विश्वास को प्रगट करता हूं। आप लोगों ने इस भारी राज की भलाई के लिये उन प्रतिष्ठित लोगों से जो आप के पहले इन कामों पर नियत थे किसी प्रकार कम कष्ट नहीं उठाया है और आप लोग बराबर ऐसे साहस, परिश्रम और सचाई के साथ अपने तन, मन को अर्पण करके काम करते रहे जिस से बढ़कर कोई दृष्टान्त इतिहासों में न मिलेगा।

कीर्त्ति के द्वार सब के लिये नहीं खुले हैं परन्तु भलाई करने का अवसर सब किसी को जो उसकी खोज रखता हो मिल सकता है। यह बात प्राय कोई गवर्नमेन्ट नहीं कर सकती कि अपने नौकरों के पदों को जल्द २ बढ़ाती जाय, परन्तु मुझे विश्वास है कि अंगरेज़ी सरकार की नौकरी में 'कर्त्तव्य का ध्यान' और 'स्वामी की सेवा में तन, मन को अर्पण कर देना' ये दोनों बातें 'निज प्रतिष्ठा' और 'लाभ' की अपेक्षा सदा बढ़कर समझी जायंगी। यह बात सदा से होती आई है और होती रहेगी कि इस देश के प्रबन्ध के बहुत से भारी २ और लाभदायक काम प्राय बड़े २ प्रतिष्ठित अधिकारियों ने नहीं किये हैं वरन ज़िले के उन अफ़सरों ने जिन की धैर्यपूर्वक चतुराई और साहस पर सम्पूर्ण प्रबन्ध का अच्छा उतरना सब प्रकार आधीन है।

श्रीमती की ओर से राजकाज सम्बन्धी और सेना सम्बन्धी अधिकारियों के विषय में मैं जितनी गुणग्राहकता और प्रशंसा प्रगट करूं थोड़ी है क्योंकि ये तमाम हिन्दुस्तान में ऐसे सूक्ष्म और कठिन कामों को अत्यन्त उत्तम रीति पर करते रहे हैं और करते हैं जिन से बढ कर सूक्ष्म और कठिन काम सरकार अधिक से अधिक विश्वासपात्र मनुष्य को नहीं सौंप सकती। हे राजकाज सम्बन्धी और सेना सम्बन्धी अधिकारियो,—जो कमसिनी में इतने भारी जिम्मे के कामों पर मुक़र्रर होकर बड़े परिश्रम कराने वाले नियमों पर तन, मन से चलते हो और जो निज पौरुष से उन जातियों के बीच राज्य प्रबन्ध के कठिन काम को करते हो जिन की भाषा धर्म और रीतें आप लोगों से भिन्न हैं—मैं ईश्वर से

प्रार्थना करता हूँ कि अपने २ कठिन कामों को दृढ़ परन्तु कोमल रीत पर करने के समय आप को इस बात का भरोसा रहे कि जिस समय आप लाग अपने जाति की बड़ी कीर्त्ति को थामे हुए हैं और अपने धर्म के दयाशील आज्ञाओं को मानते हैं उसी के साथ आप इस देश के सब जाति और धर्म के लोगों पर उत्तम प्रबन्ध के अनमोल लाभों को फैलाते हैं।

इस पच्छिम की सभ्यता के नियमों को बुद्धिमानी के साथ फैलाने के लिये जिस से इस भारी राज का धन बराबर बढ़ता गया हिन्दुस्तान पर केवल सरकारी अधिकारियों ही का पहसान नही है, वरन यदि मै इस अवसर पर श्रीमती की उस यूरोपियन प्रजा को जो हिन्दुस्तान में रहती हैं पर सरकारी नौकर नही हैं, इस बात का विश्वास कराऊं कि श्रीमती उन लोगों के केवल उस राजभक्ति ही की गुणग्राहकता नही करती जो वे लोग उनके और उनके सिंहासन के साथ रखते हैं किन्तु उन लाभों को भी जानती और मानती हैं जो उन लोगों के परिश्रम से हिन्दुस्तान को प्राप्त होते हैं तो मैं अपनी पूज्य स्वामिनी के विचारों को अच्छी तरह न वर्णन करने का दोषी ठहरूंगा।

इस अभिप्राय से कि श्रीमती को अपने राज के इस उत्तम भाग की प्रजा को सरकार की सेवा या निज की योग्यता के लिये गुणग्राहकता देखाने का विशेष अवसर मिले श्रीमती ने कृपापूर्वक केवल स्टार आफ इन्डिया के परम प्रतिष्ठित पद वालों और आर्डर आफ बृटिश इन्डिया के अधिकारियों की संख्या ही में थोड़ी सी बढ़ती नहीं की है किन्तु इसी हेतु एक बिलकुल नया पद और

नियत किया है जो "आर्डर आफ दि इन्डियन एम्पायर" कहलावेगा।

हे हिन्दुस्तान की सेना के अंगरेज़ी और देसी अफ़सर और सिपाहियो,—आप लोगों ने जो भारी २ काम बहादुरी के साथ लड़ भिड़ कर सब अवसरों पर किये और इस प्रकार श्रीमती की सेना की युद्धकीर्त्ति को थामे रहे उस का श्रीमती अभिमान के साथ स्मरण करती हैं। श्रीमती इस बात पर भरोसा रखकर कि आगे को भी सब अवसरों पर आप लोग उसी तरह मिल जुल कर अपने भारी कर्त्तव्य को सचाई के साथ पूरा करेंगे, अपने हिन्दुस्तानी राज में मेल और अमन चैन बनाए रखने के विश्वास का काम आप लोगों ही को सपुर्द करती है।

हे वालन्टियर सिपाहियो,—आप लोगों के राजभक्ति पूर्ण और सफल यत्न जो इस विषय में हुए हैं कि यदि प्रयोजन पड़े तो आप सरकार की नियत सेना के साथ मिलकर सहायता करें इस शुभ अवसर पर हृदय से धन्यवाद पाने के योग्य हैं।

हे इस देश के सरदार और रईस लोग,—जिन की राजभक्ति इस राज के बल को पुष्ट करनेवाली है और जिन की उन्नति इस के प्रताप का कारण है, श्रीमती महारानी आप को यह विश्वास करके धन्यवाद देती हैं कि यदि इस राज के लाभों में कोई विघ्न डाले या उन्हें किसी तरह का भय हो तो आप लोग उस की रक्षा के लिये तैयार हो जायंगे। मैं श्रीमती की ओर से और उन के नाम से दिल्ली आने के लिये आप लोगों का जी से स्वागत करता हूं, और इस बड़े अवसर पर आप लोगों के इकट्ठे होने को इगलि-

स्तान के राजसिंहासन की ओर आप लोगों की उस राज भक्ति का प्रत्यक्ष प्रमाण गिनता हूं जो श्रीमान् प्रिन्स आफ वेल्स के इस देश में आने के समय आप लोगों ने दृढ़ रीत पर प्रकट की थी। श्रीमती महारानी आप के स्वार्थ को अपना स्वार्थ समझती है, और अंगरेज़ी राज के साथ उस के कर देने वाले और स्नेही राजा लोगों का जो शुभ संयोग से सम्बन्ध है उस के विश्वास को दृढ़ करने और उस के मेल जोल को अचल करने ही के अभिप्राय से श्रीमती ने अनुग्रह करके वह राजसी पदवी ली है जिसे आज हम लोग प्रसिद्ध करते हैं।

हे हिन्दुस्तान की राज राजेश्वरी के देसी प्रजा लोग,—इस राज की वर्त्तमान दशा और उस के नित्य के लाभ के लिये अवश्य है कि उस के प्रबन्ध को जांचने और सुधारने का मुख्य अधिकार ऐसे अंगरेज़ी अफसरों को सपुर्द किया जाय जिन्हों ने राज काज के उन तत्वों को भली भांति सीखा है जिन का बरताव राज राजेश्वरी के अधिकार स्थिर रहने के लिये अवश्य है। इन्हीं राजनीति जानने वाले लोगों के उत्तम प्रयत्नों से हिन्दुस्तान सभ्यता में दिन २ बढ़ता जाता है और यही उसके राजकाज सम्बन्धी महत्व का हेतु और नित्य बढ़नेवाली शक्ति का मुख्य कारण है और इन्हीं लोगों के द्वारा पच्छिम देश का शिल्प, सभ्यता और विज्ञान, (जिन के कारण आज दिन यूरोप लड़ाई और मेल दोनों में सब से चढ़ बढ़ कर है) बहुत दिनों तक पूरब के देशों में वहां वालों के उपकार के लिये प्रचलित रहेगा।

परन्तु हे हिन्दुस्तानी लोग! आप चाहे जिस जाति या मत के हों यह निश्चय रखिये कि आप इस देश के प्रबन्ध में योग्यता

के अनुसार अंगरेज़ों के साथ भली भांति काम पाने के योग्य हैं, और ऐसा होना पूरा न्याय भी है, और इंगलिस्तान तथा हिन्दुस्तान के बड़े राजनीति जानने वाले लोग और महारानी की राजसी पार्लमेन्ट व्यवस्थापकों ने बार बार इस बात को स्वीकार भी किया है। गवर्नमेन्ट आव इण्डिया ने भी इस बात को अपने सम्मान और राजनीति के सब अभिप्रायों के लिये अनुकूल होने के कारण माना है। इसलिये गवर्नमेन्ट आव इंडिया इन बरसो में हिंदुस्तानियों की कारगुज़ारी के ढंग में, मुख्यकर बड़े २ अधिकारियों के काम में, पूरी उन्नति देख कर संतोष प्रगट करती है।

इस बड़े राज्य का प्रबन्ध जिन लोगों के हाथ में सौंपा गया है उन में केवल बुद्धि ही के प्रबल होने की आवश्यकता नहीं है वरन उत्तम आचरण और सामाजिक योग्यता की भी वैसी ही आवश्यकता है। इस लिये जो लोग कुल, पद, और परम्परा के अधिकार के कारण आप लोगों में स्वाभाविक ही उत्तम हैं उन्हें अपने को और संतान को केवल उस शिक्षा के द्वारा योग्य करना अवश्य है जिस से कि वे श्रीमती महारानी अपनी राजराजेश्वरी की गवर्नमेन्ट की राजनीति के तत्वों को समझें और काम में ला सकें और इस रीत से उन पदों के योग्य हों जिन के द्वार उन के लिये खुले हैं।

राजभक्ति, धर्म, अपक्षपात, सत्य और साहस देश सम्बन्धी मुख्य धर्म हैं इन का सहज रीत पर बरताव करना आप लोगों के लिये बहुत आवश्यक है, और तब श्रीमती की गवर्नमेन्ट राज के

प्रबन्ध में आप लोगों की सहायता बड़े आनन्द से अंगीकार करेगी, क्योंकि पृथ्वी के जिन २ भागों में सरकार का राज है वहां गवर्नमेन्ट अपनी सेना के बल पर उतना भरोसा नहीं करती जितना कि अपनी सन्तुष्ट और एकजी प्रजा की सहायता पर जो अपने राजा के वर्त्तमान रहने ही में अपना नित्य मंगल समझकर सिंहासन के चारों ओर जी से सहायता करने के लिये इकट्ठे हो जाते हैं।

श्रीमती महारानी निगल राज्यों को जीतने या आसपास की रियासतों को मिला लेने से हिन्दुस्तान के राज की उन्नति नहीं समझती वरन इस बात में कि इस कोमल और न्याययुक्त राज-शासन को निरुपद्रव बराबर चलाने में इस देश की प्रजा क्रम से चतुराई और बुद्धिमानी के साथ भागी हो। जो हो उनका स्नेह और कर्त्तव्य केवल अपने ही राज से नहीं है वरन श्रीमती शुद्ध चित्त से यह भी इच्छा रखती हैं कि जो राजा लोग इस बड़े राज की सीमा पर हैं और महारानी के प्रताप की छाया में रहकर बहुत दिनों से स्वाधीनता का सुख भोगते आते हैं उनसे निष्कपट भाव और मित्रता को दृढ़ रक्खें। परन्तु यदि इस राज के अमन चैन में किसी प्रकार के बाहरी उपद्रव की शंका होगी तो श्रीमती हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी अपने पैतृक राज की रक्षा करना खूब जानती हैं। यदि कोई विदेशी शत्रु हिन्दुस्तान के इस महाराज पर चढ़ाई करे तो मानो उस ने पूरब के सब राजाओं से शत्रुता की, और उस दशा में श्रीमती को अपने राज के अपार बल, अपने स्नेही और कर देने वाले राजाओं की वीरता और

राजभक्ति और अपनी प्रजा के स्नेह और शुभ चिन्तकता के कारण इस बात की भरपूर शक्ति है कि उसे परास्त करके दंड दें।

इस अवसर पर उन पूरब के राजाओं के प्रतिनिधियों का वर्त्तमान होना जिन्हों ने दूर २ देशों से श्रीमती को इस शुभ समारम्भ के लिये बधाई दी है, गवर्नमेन्ट आव इन्डिया के मेल के अभिप्राय, और आस पास के राजाओं के साथ उस के मित्र का स्पष्ट प्रमाण है। मैं चाहता हूं कि श्रीमती की हिन्दुस्तानी गवर्नमेन्ट की तरफ से श्रीयुत ग्यानोकलाल, और उन राजदूतों को जो इस अवसर पर श्रीमती के स्नेही राजाओं के प्रतिनिधि हो कर दूर २ से अंगरेज़ी राज में आए हैं, और अपने प्रतिष्ठित पाहुने श्रीयुत गवरनर जेनरल गोआ, और बाहरी कान्सलों का स्वागत करूं।

हे हिन्दुस्तान के रईस और प्रजा लोग,—मैं आनन्द के साथ आप लोगों को वह कृपा पूर्वक संदेसा जो श्रीमती महारानी आप लोगों की राजराजेश्वरी ने आज आप लोगों को अपने राजसी और राजेश्वरीय नाम से भेजा है सुनाता हूं। जो वाक्य श्रीमती के यहां से आज सवेरे तार के द्वारा मेरे पास पहुंचे हैं ये हैं :—

"हम, विक्टोरिया ईश्वर की कृपा से, संयुक्त राज (ग्रेट ब्रिटन और आयरलैन्ड) की महारानी, हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी, अपने वाइसराय के द्वारा अपने सब राज काज सम्बन्धी और सेनासबंधी अधिकारियों, रईसों, सरदारों और प्रजा को जो इस समय दिल्ली में इकट्ठे हैं अपना राजसी और राजराजेश्वरीय आशीर्वाद भेजते हैं और उस भारी कृपा और पूर्ण स्नेह का विश्वास कराते हैं जो हम अपने हिन्दुस्तान के महाराज्य की प्रजा

की ओर रखते हैं : हम को यह देख कर जी से प्रसन्नता हुई कि हमारे प्यारे पुत्र का इन लोगों ने कैसा कुछ आदर सत्कार किया, और अपने कुल और सिंहासन की ओर उन की राजभक्ति और स्नेह के इस प्रमाण से हमारे जी पर बहुत असर हुआ। हमें भरोसा है कि इस शुभ अवसर का यह फल होगा कि हमारे और हमारी प्रजा के बीच स्नेह और दृढ़ होगा, और सब छोटे बड़े को इस बात का निश्चय हो जायगा कि हमारे राज में उन लोगों को स्वतन्त्रता, धर्म और न्याय प्राप्त हैं और हमारे राज का अभिप्राय और इच्छा सदा यही है कि उन के सुख की वृद्धि, सौभाग्य की अधिकता, और कल्याण की उन्नति होती रहे।"

मुझे विश्वास है कि आप लोग इन कृपामय वाक्यों की गुण-ग्राहकता करेंगे।

ईश्वर विक्टोरिया संयुक्त राज की महारानी और हिन्दुस्तान की राजराजेश्वरी की रक्षा करे।

इस ऐड्रेस के समाप्त होते ही नैशनल ऐन्थेम का बाजा बजने लगा और सेना ने तीन बार हुर्रे शब्द की आनन्दध्वनि की। दरबार के लोगों ने भी परम उत्साह से खड़े होकर हुर्रे शब्द और हथेलियों की आनन्दध्वनि करके अपने जी का उमंग प्रगट किया। महाराज सेंधिया, निज़ाम की ओर से सर सालारजंग, राजपुताना के महाराजों की तरफ से महाराज जयपुर, बेगम भूपाल, महाराज कश्मीर, और दूसरे सरदारों ने खड़े होकर एक दम में को बधाई दी और अपनी राजभक्ति प्रगट की। इस के अनन्तर श्रीयुत वाइसराय ने आज्ञा की कि दरबार हो चुका और अपनी चार घोड़े की गाड़ी पर चढ़कर अपने खेमे को रवाने हुए।

श्रीमती महारानी के राजराजेश्वरी की पदवी लेने के उत्सव में गवरन्मेन्ट आव इन्डिया ने हिन्दुस्तान के रईसों और साधारण लोगों पर जो अनेक अनुग्रह किये हैं उन्हें हम संक्षेप के साथ नीचे लिखते हैं।

सलामी

जम्बू, ग्वालियर, इंदौर, उदयपुर और त्रावणकोर के महाराजों की सलामी उनकी ज़िन्दगी भर के लिये १६ के बदले २१ तोप की हो गई, और महाराज जयपुर की १७ से बढ कर २१।

जोधपुर और रीवां के महाराजों के लिये उनकी ज़िन्दगी भर को १७ से बढ़कर १६ तोप की सलामी हो गई।

किशुनगढ़ और उर्छा के महाराजों को सलामी उनके जीवन समय के लिये १५ तोप के बदले १७ हो गई, और नौवाब टोंक की ११ से बढ़ कर १७। भूपाल की बेगम के पति और हैदराबाद के शम्सुल उमरा नामी दूसरे मंत्री की सलामी नए सिर से १७ तोप की नियत हुई।

नौवाब रामपुर की सलामी उमर भर के लिये १३ से १५ तोप हुई, और भाव नगर के ठाकुर, नवा नगर के जाम, जूनागढ़ के नौवाब और काठियावाड़ के राजा की ११ से बढ़ कर १५। आरकट के शहजादे और बेगम भूपाल की सम्बन्धिनी कुदसिया बेगम को १५ तोप की सलामी नए सिर से मुक़र्रर हुई।

महाराज पन्ना, राजा जींद और राजा नाभा की ११ से १३ तोप की सलामी जिन्दगी भर के लिये हो गई और महारानी

तंजोर और महाराज बर्दवान को नए सिर से १३ तोप की सलामी मिली।

मकला के नकीब और शिवहर के जमादार को १२ तोप की सलामी उमर भर के लिये मिली।

मलेरकोटला के नौवाब की सलामी ज़िन्दगी भर के लिये ६ से ११ हो गई, और मुरवी के ठाकुर साहिब और टिहरी के राजा के लिए नए सिर से ११ तोप की सलामी क़ायम हुई।

नीचे लिखी हुई जगहों के राजाओं, सरदारों या ठाकुरों को जीवन समय के लिये नये सिर से नौ २ तोप की सलामी मिली—

धरमपुर, ध्रोल, बलरामपुर, बलडा, बिरोदा, गोंदाल, जंजोरा, सरींद, किलचीपुर, लिमरी, मेहर पलिटाना, राजकोट, सुकेतरा (के सुलतान), सुचीन, वादवान और वंकानेर।

यहां यह भी लिखना आवश्यक है कि १ जनवरी सन् १८७७ से श्रीमती राजराजेश्वरी की आज्ञानुसार उनको सलामी १०१ तोप की और राजसी झंडे तथा हिन्दुस्तान के गवर्नर जेनरल को ३१ तोप की नियत हुई।

नीचे लिखेहुए राजा और अधिकारी लोग "काउन्सिलर आव दि एम्प्रेस" (राजराजेश्वरी के सलाहकार) नियत हुए :—

जीवन समय तक।

महाराज कश्मीर श्रीरणवीरसिंह जी० सी० एस० आई०।

,, बूंदी श्रीरामसिंह जी० सी० एस० आई०।

,, ग्वालियर, श्रीजयाजीराव सेंधिया जी० सी० एस० आई०।

,, इन्दौर, श्रीतुकाजीराव हुलकर जी० सी० एस० आई०।

,, महाराज जयपुर, श्रीरामसिंह जी० सी० एस० आइ० ।

,, ट्रावनकोर, श्रीरामवर्मा जी० सी० एस० आइ० ।

,, जींद, श्रीरघुबीर सिंह जी० सी० एस० आइ० ।

,, नौवाब रामपुर, कलबअलीखां जी० सी० एस० आइ० ।

पद का अधिकार रहने तक

श्रीयुत् रिचार्ड मान्नाजिनेट कैम्बेल जी० सी० एस० आइ० ड्यूक आव वकिंहैम ऐन्ड शान्डास, मदरास के गवरनर ।

सर फिलिप उडहाउस जी० सी० एस० आइ०, के० सी० बी०, बम्बई के गवरनर ।

सर एफ़० हेन्स के० सी० बी०, हिन्दुस्तान के कमाण्डरिनचीफ़ ।

सर रिचर्ड टेम्पल के० सी० एस० आइ० बंगाल के लेफ्टेनेन्ट गवरनर ।

सर जार्ज कूपर सी० बी० पश्चिमोत्तर देश के लेफ्टेनेन्ट गवरनर ।

सर राबर्ट डेवीस के० सी० एस० आइ०, पंजाब के लेफ्टेनेन्ट गवरनर ।

सर जान स्ट्रैची के० सी० एस० आइ० गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर ।

सर हेनरी नार्मन के० सी० बी० गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर ।

आनरबल ए० हाबहाउस क्यू० सी०, गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर ।

सर ए० क्लार्क के० सी० एम० जी०, सी० बी०, गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर ।

आनरेबल ई० बेली सी० एस०, आइ०, गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर।

सर ए० आरबुथनाट के० सी० एस० आइ०, गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर।

नीचे लिखे हुए राजाओं को प्रथम श्रेणी के स्टार आव इन्डिया (जी० सी० एस० आइ०) की पदवी मिली -

श्रीयुत् महाराज रामसिंह, बूंदी।

,, महाराज ईश्वरीप्रसादनारायण सिंह, बनारस।

,, महाराज जसवन्त सिंह, भरतपुर।

,, प्रिन्स अज़ीमजाह बहादुर, आर्काट।

इन लोगों को दूसरी श्रेणी के स्टार आव इन्डिया (के० सी० एस० आइ०) की पदवी मिली :—

श्रीशिवाजी छत्रपति, राजा कोल्हापुर।

राजा आनन्दराव पंवार, धारवाले।

श्रीमानसिंहजी, राजा ध्रांगध्रा।

श्रीविभवजी, जाम नवानगर।

आर० जे० मैकडोनल्ड, श्रीमती के ईस्ट इन्डीज की जहाजी फौजों के कमान्डरिनचीफ।

सर जार्ज कूपर सी० बी०, पश्चिमोत्तर देश के लेफ्टेनेन्ट गवरनर।

जेम्स स्ट्रीचन साहिब, गवरनर जेनरल की काउन्सिल के पहले मेम्बर।

आर्थर हावहाउस साहिब, गवरनर जेनरल की काउन्सिल में मेम्बर।

ई० सी० बेली साहिब सी० एस० आइ० गवरनर जेनरल की काउन्सिल के मेम्बर।

तीसरे दरजे के स्टार आव इंडिया [सी० एस० आइ०] की पदवी २५ आदमियों को मिली जिन में मथुरा के सेठ गोबिन्द दास, कश्मीर के दीवान ज्वाला सहाय, और ट्रावणकोर के दीवान शशिया शास्त्री का भी गिनना चाहिये। नीचे लिखे हुए राजाओं को उनके नाम के सामने लिखी हुई पदवियां मिली।

महाराज गाइकवाड़ बड़ोदा—"फरज़न्दि खास दौलति इंगलिशिया" (अंगरेज़ी सरकार के मुख्य बेटे)

महाराज ग्वालियर—"हिसामुस्सलतनत" [राज्य की तलवार]

महाराज कश्मीर—"इन्द्रमहेन्द्र बहादुर सिपरिसलतनत" (राज्य की ढाल)

महाराज अजयगढ़—"सवाई"

महाराज बिजावर—"सवाई"

महाराज चरखारी—"सिपहदारुलमुल्क" (देश के सेनापति)

महाराज दतिया—"लोकेन्द्र"

नीचे लिखे हुए सरदारों और रईसों को "महाराज" की पदवी अपनी ज़िन्दगी भर के लिये मिली :—

आनन्दराव पवार, धार के राजा।

दृग सिंह, रम्थर के राजा बहादुर।

धनुर्जय नारायणभंज देव, किलाक्योंझार के राजा, उड़ीसा।

देव्या सिंह देव, पुरी के राजा, उड़ीसा।

जगदेन्द्रनाथ राय, [राजा नाटौर के घराने की बड़ी औलाद]

राजा ज्योतिन्द्र मोहन ठाकुर।

कृष्णचन्द्र, मोरभंज वाले, उड़ीसा।

महीपत सिंह, पटना।

आनरेबल राजा नरेन्द्रकृष्ण, कलकत्ता।

राजा कृष्ण सिंह, सुसाग के राजा।

राजा रमानाथ ठाकुर, कलकत्ता।

नीचे लिखी हुई रानियों को उनके जीवन समय के लिये "महारानी" का पदवी मिली :—

रानी हरसुन्दरी देव्या, सिरसौल, वर्दवान।

रानी हीरान कुमारी, पैंदरा, मानभूम।

रानी सुरतसुन्दरी देव्या, राजशाही।

राजा सर दिनकरराव के० सी० एस० आइ० को "राजा मुशीरिखास बहादुर" [राजा मुख्य सलाहकार बहादुर] की पदवी उनकी ज़िन्दगी के लिये मिली।

नीचे लिखेहुए सरदारों और रईसों का उनकी ज़िन्दगी के लिये "राजा बहादुर" की पदवी मिली :—

रघुवीरदयाल सिंह, थिरांदा के राजा।

खड्गसिंह, गुरौला के राजा।

उदितप्रतापदेव, खरौंद के राजा।

राजा बिशेशर मालिया, सिरसौल, वर्दवान।

राजा हरिबल्लभसिंह, बिहार।

राजा हरनाथ चौधरी, दुवलहट्टी, राजशाही।

राजा मंगलसिंह, भिनाई, अजमेर।

राजा रामरंजन चक्रवर्त्ती, बीरभूम।

—:○:—

नीचे लिखे हुए मनुष्यों को उन के जीवन समय के लिये "राजा" की पदवी मिली :—

बाबू अजीत सिंह, तरौल, प्रतापगढ़।

बाबा बलवन्त राव, जबलपुर।

बलवन्त सिंह, गंगवाना।

डमरू कुमार वेंकटिया नयुडू, ज़मींदार कलाहस्थी, उत्तर आरकट।

देवा सिंह, राजगढ़।

दिगम्बर मित्र, कलकत्ता।

राव गंगाधरराम राव, ज़मींदार पितापुर, गोदावरी प्रान्त।

राव छत्रसिंह, ज़मींदार कल्याधन।

हरिश्चन्द्र चौधरी, मैमनसिंह।

कमलकृष्ण, कलकत्ता।

राय बहादुर क्षेत्रमोहनसिंह, दीनाजपुर।

कुंअर हरनरायण सिंह, हातरस।

कुंअर लछमन सिंह, डिप्टी कलेक्टर, बुलन्दशहर।

सर टी० माधवराव के० सी० एस० आई०, बड़ोदा के दीवान।

ठाकुर माधव सिंह, अजमेर।

प्रताप सिंह, अजमेर।

रामनरायन सिंह, मुंगेर।

श्यामनन्द दे, बलेसर।

श्यामशंकर राय, टिउटा।

सरदार सूरत सिंह मंजिठिया सी० एस० आइ०।

राव साहिब त्र्यम्बक जी नाना अहीर, नागपुर के राव।

कांद्रोकिशोर भूपति ज़मीदार सुकींदा, उड़ीसा।

पाद्रोलब राव, ज़मीदार भील, उड़ीसा।

३२ आदमियों को "राव बहादुर" की पदवी मिली जिन में गोपाल राव हरीदेशमुख, अहमदाबाद की स्मालकाज़कोर्ट के जज, और नारायण भाई दंडकर बरार के शिक्षाविभाग के डाइरेक्टर भी हैं।

२६ मनुष्यों को "राय बहादुर" की पदवी मिली जिन में डाक्टर राजेन्द्र लाल मित्र और बाबू कृष्णोदास पाल के नाम भी गिनने चाहियें।

८ आदमियों को "राव साहिब" की पदवी मिली, ४ को "राव" की और ५ को "राय" की। इन में से अजमेर के पांच आदमी "रावसाहिब" और तीन "राय" हुए। निस्संदेह अजमेर के चीफ़ कमिश्नर सिफारश करने में बड़े उदार जान पड़ते हैं क्योंकि और भी बहुत सी पदवियां उधरवालों के हिस्से में आई हैं। हमारे पश्चिमोत्तर देश से तो सिवाय दो एक के कोई पूछा ही नहीं गया है यद्यपि योग्य पुरुषों की यहां कमी नहीं है।

राय मुन्शी अमीचंद अजमेर के जुडिशल असिस्टेन्ट कमिश्नर को "सरदार बहादुर" की पदवी मिली, रतनसिंह मध्य भरतखंड के पुलीस सुपरिन्टेन्डेन्ट को "सरदार" की, देवर परगना के

ठाकुर हीरासिंह को "ठाकुर रावत" की; और लछमीनरायन सिंह केरावाले को "ठाकुर" की पदवी दी गई। ४ आदमी "नौवाब" हुए। ४० को "खां बहादुर" का खिताब मिला जिन में से एक मौलवी अबदुललतीफ़ खां कलकत्ते के डिपटी कलेक्टर भी हैं; और दो को "खां" का खिताब मिला।

इन सरदारों को उनके नाम के सामने लिखे हुए खिताब खानदानी मिले :—

महाराज सर जयमंगल सिंह बहादुर के० सी० एस० आई० गिद्धौर, मुंगेर—"महाराज बहादुर"।

धर्मजीत सिंह देव, सरदार उदैपुर, छोटानागपुर महाल—"राजा उदयपुर"।

नौवाब खाजा अबदुलगनी, ढाका—"नौवाब"

दीवान गयासुद्दीनअली खां सज्जादानशीन, अजमेर, को उन को जिन्दगी भर के लिये "शेखुलमशायख" का खिताब मिला, और सरदार अतरसिंह बहादुर, भदौर, को "मलाजुल उलमा उलफ़ीजला" का।

इस के सिवाय एक को "दीवान बहादुर" की, एक को 'दीवान" की, और १३ को "आनररी असिसटन्ट कमिशनर" की पदवी दी गई।

दो यूरोपियन महाशयों को फारिन डिपार्टमेंट के आनररी असिसटन्ट सेक्रिटरी का, और आनररी असिस्टेन्ट प्राइवेट सेक्रिटरी का पद भी अलग २ दिया गया।

सेना के कितने अधिकारी के साथ भी "सरदार बहादुर" और "बहादुर" की पदवियां लगा दी गईं, और सब छोटे २ अधिकारियों, जहाज़ी नौकरों, सेना के सिपाहियों और गोरों को एक २ दिन की तनख़ाह इनाम मिली और दूसरी रिआयतें भी इन के साथ की गईं। इस के सिवाय नेटिव कमिशन्ड आफ़िसर लोगों की तनख़ाह भी कुछ बढ़ा दी गई है।

रहीमख़ां ख़ां बहादुर, असिसृन्ट सर्जन लाहौर को "आनररी सर्जन" की पदवी मिली।

श्रीयुत रणवीर सिंह जी० सी० एस० आइ० महाराज जम्बू और कश्मीर, और श्रीयुत जयाजीराव सेंधिया जी० सी० एस० आइ० महाराज ग्वालियर को सेना के जेनरल [जरनैल] का पदप्रतिष्ठा की रीत पर श्रीमतीराजराजेश्वरी की ओर से दिया गया।

राजालोगों के सलामी की शोधी हुई नई फ़िहरिस्त।

राज की सलामी

२१

गाइकवाड़ बड़ोदा, निज़ाम हैदराबाद और महाराज मैसूर।

१६

महारानी मेवाड़, खान क़िलात, बेगम भूपाल; महाराज जम्बू, इन्दौर, ग्वालियर, ट्रैवंकोर और कोल्हापुर।

१७

बहावलपुर के नवाब, बूंदी के महाराव राजा, कोटा के महाराव, कोचीन के राजा, कच्छ के राव, और भरतपुर बीकानेर जैपुर करौली जोधपुर पटियाला और रीवां के महाराजा।

१५

धार, दतिया, ईडर, कृष्णगढ, शिकम और उर्छा के महाराजा, देवास के छोटे बड़े राजा, प्रतापगढ़ के राजा, अलवर के महाराव राजा, राजाधौलपुर, डूंगरपुर और जैसलमेर के महा रावल, झालावार के महाराज राना, खैरपूर के खां और सिरोही के राव।

१३

महाराजा बनारस, जावरा और रामपूर के नवाब, कोंच बिहार, रतलाम और त्रिपुरा के राजा।

११

चम्बा, छतरपुर, ध्रांगध्रा, फरीदकोट, झबुआ, जींद, कहंलूर, कपूरथला, मण्डी, नाभा, नरसिंहगढ़, राजपिम्पला, सीतामऊ, सिलाना, सिरमौर, और सुकेत के राजे। बावनी, कम्बे, जूनागढ़, राधनपूर, राजगढ़, और टोंक के नवाब। अजयगढ़, बिजावर, चरखारी, पन्ना और समथर के महाराजे; बांसवारा के महारावल, भाव नगर के ठाकुर, नवा नगर के जाम, पालनपुर के दीवान और पोर बन्दर के राना।

९

अली राजपूर, बढ़वानी और लुनवारा के राना; बैरिया, छोटा उदयपुर, नगोद और सोंठ के राजा; बालाशिनोर के बाबी, फुलदी

और लहज के सुलतान तथा सावन्तवाड़ी के देसाई और मालियर कोटला के नव्वाब।

शारीरिक सलामी।

२१

महाराज दिलीप सिंह, महाराज जीयाजी राव सेंधिया, महाराज तुकोजी राव होलकर, महाराना सज्जनसिंह जी उदयपुर महाराज राम सिंह सवाई जयपुर, महाराज रणवीर सिंह कश्मीर, महाराज श्रीरामबरमा ट्रयावेङ्कोर।

१६

मुरशिदाबाद के नवाब निज़ाम, महाराज जसवन्त सिंह जोधपुर, महाराज सरजङ्ग बहादुर वज़ीर नयपाल, महाराज रघुराज सिंह रीवां।

१७

बेगम भूपाल के पति, हैदराबाद के सालारजङ्ग और शमसुल-उम्रा, महाराज पृथ्वी सिंह कृष्णगढ़, महाराज महेन्द्रप्रताप सिंह पन्ना और नवाब इब्राहीम ख़ां टोंक।

१५

आर्कट के प्रिन्स अज़ीमजाह, ठाकुर तख़्तसिंह जी भाव नगर, कुदसिया बेगम भूपाल, राजा मानसिंह ध्रांगध्रा, नवाब महाबतख़ां जूनागढ़, जाम श्रीविभव जी नवा नगर, नवाब कलबलीख़ां रामपुर।

१३

महाराज महताबचन्द वर्द्धवान, महाराज जींद, महाराज पन्ना, महाराज विजयनगरम्, राजा नाभा और रानी विजय महिसी मुक्ताबाई तंजौर।

१२

उमर बिन अल्लाह बिन मुहम्मद नकीब मकला, औध बिन उमर जमादार शहरा।

११

नवाब मालियर कोटला, ठाकुर मोरवो और राजा टेहरो।

९

महारावल बांसवाड़ा, महाराजा बलरामपुर, महारावल धरमपुर, धोल गोंदल, लिमड़ी, पालीटाना, राजकोट और वादवान के ठाकुर, जंगीरा के और सुचीन के नवाब; खंरोढ़, बंकनीर विरोदा और सैदर के राजे और सुलतान सकोतरा तथा किलिचीपुर के राव।

विदित रहे कि महाराज नैपाल, सुलतान मसकत, सुलतान जंजीबार और अमीर काबुल की सलामी भी २१ है।

कालचक्र

अर्थात्

संसार में जो बड़ी बड़ी घटना हुई हैं उन का समय निर्णय

श्रीहरिश्चन्द्र लिखित,

—:*:—:*:—

क्षत्रिय पत्रिका सम्पादक-स० कु० बाबू रामदीन सिंह सङ्कलित

राय साहिब रामरणविजय सिंह द्वारा प्रकाशित



खड्गविलास प्रेस, बांकीपुर, पटना
बाबू रामप्रसाद सिंह द्वारा मुद्रित
ह० स० ३३—१६१८

ॐ कालात्मने भगवते श्रीकृष्णाय नमः

भूमिका।

हाय ! इस 'कालचक्र' को पूरा करके छपाने की भी नौबत न पहुंची कि पूज्यपाद भारतेन्दु जी आप ही कालचक्र के कराल गाल में जा फसे ! अस्तु भगवदिच्छा, अब कोई वश नहीं।

यह उन का परिश्रम आप लोगों की सेवा में भेंट किया जाता है, यदि इस से आप लोगों को कुछ भी सहायता मिलेगी तो सब परिश्रम सुफल हो जायगा।

बनारस	सेवक
वैशाख कृष्ण १ सं० १९४९.	श्रीराधाकृष्ण दास।

ॐ कालात्मने श्रीकृष्णाय नमः।

कालचक्र।

ईसवी के पूर्व का काल।

घटना	समय	विशेष
सृष्टि का प्रारम्भ	१९७२९४७१०१	आर्य्य लोगों के मत से।
सत्ययुग का प्रारम्भ	३८९११०१	आर्य्य लोगों के मत से।
त्रेतायुग का प्रारम्भ	२१६३१०१	आर्य्य लोगों के मत से।
द्वापरयुग का प्रारम्भ	८६७१०१	आर्य्य लोगों के मत से।
कलियुग का प्रारम्भ	३१०१	ज्योतिष के मत से
"	१८५७	भागवत "
"	१७७५	ब्रह्माण्ड पुराण "
"	१७२९	वायुपुराण "
"	१०७८०	बौद्ध लोग "
इक्ष्वाकु का जन्म और प्रथम बुद्ध	२१८३१०२	पौराणिक मत से
" "	५०००	जोन्स "
" "	२७००	विल्फर्ड "
" "	१५२८	बेन्टली "
" "	२२००	टाड "
" "	३५००	जोन्स ने स्थानान्तर में।

घटना	समय	विशेष
श्रीराम	८६७१०२	पौराणिक मत से
,, ...	२०२९	जोन्स ,,
,, ..	१३६०	विल्फर्ड ,,
श्रीराम ...	९५०	बेन्टली के मत से
,, ..	११००	टाड ,,
युधिष्ठिर ...	३१०२	पौराणिक मत से
,, .	५७६	बेन्टली ,,
,, ..	१४३०	विल्फर्ड ,,
,, ...	१३९१	डेविस ,,
,,	११८०	जोन्स और कोलब्रुक ,,
महाभारत का युद्ध ...	१३६७	विलसन के मत से
कश्मीर राज्य स्थापन	३७१४	
परीक्षित	३१०१	
श्री विष्णु स्वामी	३०००	
श्री निम्बार्क स्वामी	३०००	
जनमेजय	१३००	
सुमित्र और प्रद्योत	२१००	पौराणिक मत से
,, ...	१०२९	जोन्स ,,
,, .	७००	विल्फर्ड ,,
,,	११९	बेन्टली ,,
,, .	११५	विल्सन ,,
,, .	६००	बर्मावाले ,,
स्वायम्भुमनु ...	४००६	

घटना	समय	विशेष
जयगुप्त ने नैपाल राज्य की स्थापना की	२५६५	
सृष्टि का प्रारम्भ	४००४	हिब्रू धर्म पुस्तक के मत से
,, ...	५८७२	अन्य विद्वानों के मत से
,, ...	४७००	समारतिन मत से
,, ...	४७१०	जूलियन मत से
आदम की उत्पत्ति	४००४	
कायन की उत्पत्ति	४००३	
नूह का प्रलय	२३४६	
चीन राज स्थापन	२२०७	
मिश्र राज स्थापन	२१८८	
इब्राहीम का जन्म	१९९६	
हिन्दुस्तान से एथियोपियन लोगों का मिश्र में आना	१६१५	
मूसा की उत्पत्ति	१५७१	
यूनान की सभ्यता	१५००	
यूरोप में पहले पहल जहाज़ चलना	१४८५	
शाक्य सिंह	१०२७ ई० पू०	चीनियों के अनुसार
,,	९६२ ई० पू०	तिब्बत के अनुसार
दाऊद का काल	१०३५	

घटना	समय	विशेष
रुस्तम-हिन्दुस्तान में आकर कन्नौज में शिवराजवंश स्थापन किया	१०२७ ई० पू०	फरिश्ता
सलेमान का उदय	९९२	
क्वीन सैमीरेमिस अर्थात् शमीरामा देवी	८१०	तृतीय बलबश की स्त्री कहते हैं कि यह भारतवर्ष में आई थी।
शिशु नाग	९९६२	पौराणिक मत से
,,	८७०	जोन्स ,,
तिब्बत राज्यारम्भ	९६२ ई० पू०	तिब्बत के अनुसार।
विलायत में चांदी तथा सोने का सिक्का बनना	८९४	
मालवा का राज्य चला (धनंजयस)	८४०	
विलायत में चन्द्रग्रहण गिना जाना	७२१	किसी के मत से इसी साल गौतम का जन्म
शिशुनाग	७७७	
वलीद केकाल में मुसलमानों नेभारतवर्ष में उपद्रव मचाया	७११	
अन्हल चौहान	७००	

घटना	समय	विशेष
शंकर ने गौर (लखनौती नगर) बसाया	७३१ ई० पू०	
चौहान (राज्यस्थापन अन्हल चौहान)	७०० ई० पू०	दिल्ली अजमेर का राज्य इस वंश में अब निमराना के राजा हैं।
चीनी और तातारियों में बड़ी लड़ाई	६३६	
नन्द	१६००	पौराणिक मत से
"	६६६	जोन्स "
महावीर स्वामी (जैनों के)	६२६	
भारतवर्ष से विजयराज ने लंका में जाकर जीतकर राज स्थापन किये	५४३ ई० पू०	
प्रजाराज्य स्थापन	६६१ ई० पू०	
विलायत में गानविद्या का नियमित रूप से चलना	६००	
चन्द्रगुप्त	१५०२	पौराणिक मत से
"	६००	जोन्स "
गौतम (बौद्ध मत का प्रचार)	६०८ ई० पू०	बर्मा वालों के मत से
रोम नगर में पहिले पहले मर्दुम शुमारी	५६६	
नौशेरवां की सेना हिन्दुस्थान में आई।	५३०	

घटना	समय	विशेष
पथीन नगर में पहले पहल दुःखान्त नाटक खेला जाना	५३५	
पयथा गोरस मिशर में आया	५३४	
अशोक	१४७०	पौराणिक मत से
”	५४०	जोन्स ”
सिंहलद्वीप को भारतवर्ष से विजय राजा ने जा कर जीत कर राज्य स्थापन किया	५४३	
अरस्तू का अंत और सुकरात का उदय	४६८	
नन्द ...	४१५	नवीन विद्वानों के मत से।
दहलू ने दिल्ली बसाई	४७१ ई० पू०	
सिकन्दर का जन्म	३५६	
चन्द्रबीज (मगध का अन्तिम राजा)	४५२	पौराणिक मत से
”	३००	जोन्स ई० ”
चन्द्रगुप्त ...	३१५ ई० पू०	
अशोक ...	३३० ई० पू०	
सिकन्दर	३३४ ”	
सिकन्दर ने हिन्दुस्तान पर चढ़ाई की	३३१ ई० पू०	

भरतपुर के राजाओं का नाम ।

ाम रईस	गद्दी नशीनी का संवत्	देहान्त संवत् ।	मुद्दत हुकूमत
दनसिंह	संवत् १७७६ चैत सुदी १	संवत् १८१२ ज्येष्ठ सुदी १०	३३ बरस, २ महीने, १० दिन ।
सूरजमल	संवत् १८१२ ज्येष्ठ सुदी १२	संवत् १८२० पौष कृष्ण १२	८ साल, छ महीने, १४ दिन ।
जवाहिरसिंह	संवत् १८२० पौष कृष्ण १३	संवत् १८२५ श्रावण सुदी १४	४ साल, ७ माह, १७ दिन ।
तनसिंह	संवत् १८२५ भाद्रपद कृष्ण १	संवत् १८२६ चैत सुदी ५	७ माह, २० दिन
केहरीसिंह	संवत् १८२६ चैत्र सुदी ६	संवत् १८३४ चैत कृष्ण १४	७ साल, ११ माह, २४ दिन ।
रणजीतसिंह	संवत् १८३४ चैत सुदी १	संवत् १८६२ मृगशिर सुदी १४	२७ साल, ८ माह, १४ दिन ।
रणधीरसिंह	संवत् १८६२ पौष कृष्ण १	संवत् १८८० आश्विन सुदी ४	१७ साल, ६ माह, १६ दिन ।
बलदेवसिंह	संवत् १८८० आश्विन सुदी ५	संवत् १८८१ फागुन सुदी ११	१ साल, ४ माह, ११ दिन ।
दुर्जनसाल	संवत् १८८१ चैत्र कृष्ण ६	संवत् १८८२ पौष सुदी १०	६ माह, १७ दिन ।
बलवन्तसिंह	संवत् १८८२ पौष सुदी ११	संवत् १९०९ फाल्गुन सुदी १०	२७ साल, २ माह, २ दिन ।
ाराजजसवन्तसिंह	संवत् १९१० आषाढ कृष्ण २	संवत् १९४२ तक मौजूद ।	३२ साल जारी ।

उपसंहार।

—:o:—

श्री सर्वशक्तिमान् ईश्वर की असाधारण कृपा से आज श्री हरिश्चन्द्रकला का द्वितीय भाग भी निर्विघ्न समाप्त हुआ। अनुग्राहक ग्राहक तथा सज्जनमण्डली से प्रार्थना है कि इस में जो कुछ भूल चूक हो उसे क्षमा करें।

यह दूसरा भाग ऐतिहासिक विषय का अधिक उपयोगी होता, और इस में जो कुछ लिखा गया है उस से कहीं उत्तमोत्तम और आश्चर्यदायक प्रबन्ध मुद्रित हुए होते, परन्तु खेद है कि जितनी अलभ्य वस्तुएं माननीय भारतेन्दु जी ने अधिक व्यय तथा परिशोध से इतिहास सम्बन्धी संग्रह की थीं उन में से मुझे कुछ नहीं मिलीं। बाबू हरिश्चन्द्र जी ने भारत के अन्यान्य महाराज, राजाओं तथा बृटिश गवर्नमेन्ट के परस्पर सन्धिपत्र, बड़े २ प्रसिद्ध गवर्नरजेनरलों के शासनविषयक पत्र महाराज जयपुर तथा नयपाल प्रभृति के नाम जो भेजे गये थे, ५७ के राष्ट्रविप्लव की राजभक्ति प्रकट करने पर राजभक्तों को जो धन्यवाद पत्र दिये गये थे, सम्राट् अकबर आदि के पत्रव्यवहार, प्रधान २ महाराज, महात्मा, वीरपुरुषों के इतिवृत्त और जन्मपत्र इत्यादि, एशियाटिक सोसाइटी द्वारा निर्द्धारित तथा अन्य इष्ट मित्र द्वारा प्राप्त ताम्रपत्र आदि पर लिखी हुई प्रशस्तियां, अनेक भूपतियों के समय की मुद्रालिपि इत्यादि चमत्कार दिखलाने

घटना	समय	विशेष
दूसरे अरस्तू सुकरात सुकरात आदि का उदय	३३०	
सिकन्दर का भारतवर्ष में आगमन	३३७	
सिकन्दर की मृत्यु	३२३	
कहकहा दीवाल का बनना	३००	
बली	६०८ ई० पू०	पौराणिक मत से
" ...	१४६ ...	जोन्स "
जैसलमेर में यादवों का राज्य स्थापन	१५० ई० पू०	
विक्रमादित्य	५६ ई० पू०	

ईसवी सन् से पूर्व या ईसवी सन् में।

विक्रमादित्य गद्दी पर बैठा	५७	
कैसर का उदय	५०'	
ईसामसी फांसी पड़े	३३ ई०	
रोमवालों ने लन्डननगर बनवाया	५० ई०	
सौराष्ट्र में वल्लभी वंश	१ ई०	
मनीपुर राज्यारम्भ (पाखंबा)	३५ ई०	
पारस राज्य स्थापन (अर्द शेर)	२२६ ई०	

घटना	समय	विशेष
आमेर राज्य स्थापन (नल-नरवर गढ़)	२६४ ई०	
कर्णाट राज्यस्थापन	३०० ई०	
यूनान और एशिया में महाभूकम्प हुआ १५० नगर नष्ट हो गये	३५८ ई०	
राठौर राज्य कन्नौज में स्थापन (यवनाश्व)	३००	
भोज ...	४८३ ई०	
मुहम्मद ...	५६४ ई० जन्म ५६१ ई० मृत्यु ६३३ ई०	
भारतवर्ष से यूरप में रेशम गया	५५१ ई०	
पलोमार्चिश ...	६४८	Poulomeon of Chinese
अबूबकर ...	६३२ ई०	
उमर ...	६३४	
उसमान ..	६४४	
अली .	६५६	
हुसन	६६१	
करबला का युद्ध	६८१	
मुहम्मद का मदीने पलायन हिजरी सन् का स्थापन	६२२	

घटना	समय	विशेष
मुसलमानों ने इस कन्दरिया का प्रसिद्ध पुस्तकालय जला दिया जिस में केवल पुस्तकों की अग्नि से महीनों सब काम हुआ हा !	६४०	
गुजरात राज्य स्थापन (शैलदेव द्वारा)	६६६ ई०	
बापारावल	७१२ ई०	
हारूंरशीद	७८६	
ईसामसीह के जन्म से ईस्वी सम्वत की गणना चली	७४८	
पशील विद्या की यूनान और रोम में सृष्टि हुई	७८८	
मेवाड़ राज्य स्थापन	७५०	
रुरिक ने रूस राज्य बसाया	८६१	
इङ्गलेण्डके लोगोंने ईंटा और मोम बत्ती बनाना सीखा	८८९	
चालुक्य वंश राज्य	८१०	
सुबुक्तगीन की भारतवर्ष पर चढ़ाई	९७०	
जयपाल और सुबुक्तगीन का युद्ध	९७७ ई०	

घटना	समय	विशेष
दूसरे आरडोनों ने स्पेन में सत्तर हज़ार मुसलमानों को मारा।	९१८	
इङ्गलैंड में फ्रीमैसन चला	९२६	
यूरप में गणित विद्या चली	९५१	
तैलंग राज्य स्थापन (राजधानी वारंग गोला)	९५१	
महमूद गज़नवी की पहली चढ़ाई	१००१	
सोमनाथ का टूटना	१०२४	
यूरप में कागज़ मूदर से चला	१०००	
क्रूसेड का प्रसिद्ध धर्म युद्ध तीन लाख कृस्तानों ने आरम्भ किया	१०९६	
हारावती (हाड़ा) राज्य स्थापन	१०२४ ई०	अब कोटा बूंदी
वङ्गाल राज्य स्थापन (भूपाल)	१०००	
विजय नगर राज्य स्थापन (नन्द) विद्यानगर	१०३४	
पृथ्वीराज ·	११९२ ई०	
मुहम्मद गोरी ...	११९३	
श्री रामानुज	११३७	

विशेष	घटना	समय
	श्री शंकराचार्य	११२२
	शहाबुद्दीन की पहली चढ़ाई	११९१
	पृथ्वीराज की हार भारत स्वाधीनता का अन्त	११९२
	युलिड इङ्गलैंड में गई	
	पुस्तक बेचने की चाल इङ्गलैंड में चली	११३०
		११००
	इङ्गलैंड में कर में रुपया लेना चला अब तक अन्न आदि लिया जाता था	११३६
	कैंटरबरी राज्यस्थापन (पाटलसारि बेनाग)	११४०
	गया उद्धार के हेतु उद यपुर के नौ राजाओं का वीरगति पाना	१२०० ई०
लादा हुआ	रणथम्भोर का हम्मीर	
	चंगेजखान	१२११ ई०
	इलाक्	१२०६
	कुतुबुद्दीन ऐबक	१२५१
		१२०६
	चंगेज खा का भारत में उपद्रव	१२१२ ई०
	रजीया बेगम रुजी बाद-शाह हुई	१२३६ ई०

घटना	समय	विशेष
दक्षिण पर मुसलमानों की पहली चढ़ाई	१२९४	
हलाकू ने तातार राज्य स्थापन किया	१२५६	
बंगाले में (लखनौती गौर) मुसलमान राज्यारम्भ (बखतियार खिलजी	१२०३	इन लोगों ने अकबर के समय तक राज्य किया।
इङ्गलैंड से जिम्माग्रफी गई	१२१०	
प्रसिद्ध मेगनाचार्टा पर हस्ताक्षर हुए औरपार्लियामेंट इंगलैंड में चली	१२१५	२५ जून
कम्पनी बनाकर व्यापार करने की चाल चली	१२३२	
इङ्गलैंड में प्रतिष्ठित लोगों को इस्कायर कहने की चाल चली।	१२४८	
वहां राज कवि का पद प्रतिष्ठित हुआ	१२५१	
वहां पहले पहल सोने का सिक्का बना	१२५७	
राठौरों का जोधपुर में बसना	१२१०	

घटना	समय	विशेष
वीरबुक्कराज विजयपुर का राजा माधवाचार्य	१३३५ ई०	
तैमूर ...	१३९३	
श्रीमध्व ..	१३००	
जौनपुर की शाही स्थित हुई (ख्वाजा जहान)	१३९४	सन् १४७९ में यह राज बंगाले के मुसलमानी राज में मिल गया।
गुजरात राज नाश	१३०६ ...	अलाउद्दीन मुहम्मद शाह ने जीता।
कुलबर्गा की बहमनी बादशाहत का आरंभ	१३४७	
यूरप में चांदी के बरतन खिंचने चले और अल-जेबरा आया।	१३००	
घड़ी सुइयों की चाल चली।	१३०७	
गोटा किनारी चला (यूरप में)	१३२०	
छठे चार्लस फरासीस के बादशाह के वास्ते ताश का खेल बना	१३९१	
मालवाराज्यध्वंस	१२३० ई०	मुसलमानी राज्य में मिलगया।
गुरुनानक	१४१६	
गुर [illegible]	१४२०	

घटना	समय	विशेष
बीजापुर की बादशाहत का आरभ	१४८६	
इंगलैंड में बारूद बनी	१४१८	
काठ के टाइप से यूरोप में पहले पहल छापना चला	१४३०	
वहां शीशा बनाना चला	१४५७	
वहां तौल नियत हुई	१४९२	
वास्कोडिगामा का हिन्दुस्तान खोजने को चलना	१४९७	
कलम्बस के साथियों द्वारा अमेरिका का प्रादुर्भाव	१४९९	
बीकानेर राज्य स्थापन (बीका)	१४५८	
आसाम राज्यारम्भ	१४००	
मैसूर राज्य स्थापन (वट्टावाडियार)	१४९०	
सांगाराना का बाबर को जीतना।	१५०८	
राना प्रताप सिंह अकबर का घोर युद्ध।	१५८३	
गुरु अमरदास	१५५२	
गुरु रामदास	१५७४	

घटना	समय	विशेष
गुरुअर्जुन	१५८१	
श्रीवल्लभाचार्य	१५३५	
श्री कृष्ण चैतन्य	१५४२	
श्री हितहरिवंशजी	१५८२	
बाबर का दिल्ली राज्य पर बैठना	१५२६	
सक्के ने चमड़े का सिक्का चलाया	१५३९	
गोलकुंडा की बादशाही का आरम्भ	१५१२	
डिफेंडर आफ दी फेथ का पद हेनरी (७) को दिया गया जो अब भी महारानी को है।	१५२१	Defender of the faith
प्रोटेस्टेंट मत स्थापन	१५२९	
इङ्गलैंड में डाकखानों की सृष्टि	१५३१	
यहां के लोगों ने सूई बनाना सीखा।	१५४५	
मेरी स्काटलैंड की रानी का सिर काटा गया।	१५८७	एलिज़बेथ ने स्वयं यह पाप किया एलिज़बेथ बड़ी पापासक्त थी किन्तु प्रकट में धार्मिक बनी थी

घटना	समय	विशेष
इङ्गलिश मर्क्यूरी नामक प्रथम समाचारपत्र चला	१५८८	English Mercury
कवि शेक्सपीयर का उदय	१५६५	
शिवाजी	१६४७ ई०	
गुरु हरिगोविन्द	१६०६	
गुरु हरिराय	१६४४	
गुरु हरिकृष्ण	१६६१	
गुरु तेगबहादुर	१६६४	
गुरु गोविन्दसिंह	१६७५	
व्यास जी	१६१२	
अकबर का मरना	१६०५	
शिवा जी का जन्म	१६२७	
ईस्ट इण्डिया कम्पनी स्थापित हुई	१६००	
मदरास में अंगरेज़ जमे	१६२०	
तथा बम्बई में	१६६१	
बन्दा साहब	१७०८	
लंका का राज्य अंगरेज़ों ने लिया	१७६८	
हैदराबाद का राज्य आसिफ़जाह ने स्थापन किया	१७१७	
बाजीराव का अन्त	१७१८ ई०	

घटना	समय	विशेष
लखनऊ राज्यारम्भ	१७००	
पानीपत में भाऊ की हार	१७५९	
शाह आलम को गुलाम कादिर ने अन्धा किया	१७८८	
सिंहल (लंका) का अंतिम राजा श्रीविक्रमराजसिंह	१७९८ ई०	अंगरेज़ों ने लिया
सर न्यूटन जोतसी	१७००	
इंगलिस्तान में सूत की कल तथा फारस में प्रथम बेल्यून	१३५०	
कलकत्ता अंगरेज़ों ने स्वाधीन किया	१७५६	
बकसर की सिराजुद्दौला की लड़ाई	१७६४	
यह बात जानी गई की जल दो वायु मिलकर बनता है	१७८१	
अमेरिका स्वतन्त्र हुआ सवा अरब रुपया पचास हज़ार प्राणी और कई टापू गवां कर अंगरेज़ शांत हुए	१८७२	

घटना	समय	विशेष
विद्युत्शक्ति प्रचारक वेनजामिनफ्रैंकलिन मरा	१७९०	
नेपोलियन बोनापार्ट		उदय १७६४ अन्त १८२१
वारन हेस्टिंग्स-जिस ने राजा चेत सिंह से महा अन्याय पूर्वक बनारस का राज्य छीना था, सात लाख रुपया पार्लियामेंट में व्यय कर के सात बरस में उन लोगों की दृष्टि में दोष मुक्त हुआ।	१७९५	किन्तु न्यायकर्त्ता परमेश्वर के सामने से दोष मुक्त कब हो हो सकता है।
फरासीस में अंगरेज़ों को अति दुःखित जान कर दयालु आर्य्यों ने केवल बंगदेश से पन्द्रह लाख और अन्य २ देश में से करोड़ों रुपया भेजा।	१७९८	इलबर्टबिल विद्वेष। इस को पढ़ कर भी हमलोगों से कृतघ्नता करने में न चूकेंगे?
टीपू द्वारा अंगरेज़ों ने श्रीरंगपट्टन लिया।	१७९९	

घटना	समय	विशेष
हैदराबाद में निज़ाम राज्य स्थापन (कालि-फ़जाह)	१७१७	
बनारस में सरकार का राज्य	१७६३	राजा चेतसिंह को निकाल दिया १७८१
वज़ीर अली का उपद्रव	१७६८	
मथुरा में क़त्लेआम	१७५८	
नादिरशाही	१७३६ ई० १७३५	
कलकत्ता सर्कार ने लिया	१७५८	
पलासी की लड़ाई	१७६३	
विजयनगर (विद्या-नगर) राज्य नाश	१७५६	राजा तिमल्ल राव को सुलतान ख़ां ने राज्य से उतारा।
पेशवा राज्यारम्भ (बाला जी)	१७४०	
नागपुर राज्यारम्भ (रघु जी)	१७३४	भोंसले
सेंधिया राज्यारम्भ (रानू जी)	१७२४	

घटना	समय	विशेष
हुलकर राज्यारम्भ (मलहार राव)	१७२४	
गाइकवाड़ राज्यारम्भ (दामाजी)	१७२०	
महाराज रणजीतसिंह	१८०५	
लखनऊ में बादशाही पद गाजिउद्दीन	१८१४	
लखनऊ का नाश	१८४७	
लार्ड लेक ने दिल्ली ली	१८०३	
तार की खबर का प्रचार	१८००	
इन्जीन से नाव चलाना चला	१८१२	
शाहसुजा से महाराज रणजीत सिंह ने कोह-नूर हीरा लिया।	१८१८	
महारानी विक्टोरिया का जन्म	१८१६ मै २०	
लार्ड वेंटिंक ने सती होना बन्द किया।	१८२१	

घटना	समय	विशेष
अमेरिका से पहले पहल जहाज़ में बरफ भर के कलकत्ते में आया।	१८३३	
अंगरेज़ी राज्य के सब टापू में लौंडी गुलाम स्वतन्त्र कर दिये गए।	१८३४	
महारानी विक्टोरिया राज्य पर बैठी	१८३७ २० जून	उस समय अंगरेजी राज्य की आमदनी साढ़े छियालिस करोड़ थी।
महारानी विक्टोरिया का विवाह। दोस्तमहम्मद का पकड़ा जाना। रेल का नियमित रूप से चलना	१८४० फर्वरी १०	
प्रिन्स आफ वेल्स का जन्म	१८४१	
प्रिन्सेस आफ वेल्स का जन्म	१८४४	
हिन्दुस्तान में बलवा	१८५७	
महारानी का ईस्टइंडिया कम्पनी से राज्य अपने हाथ में लेना	१८५८	

घटना	समय	विशेष
ड्यूक आफ एडिनबरा का भारतवर्ष में आना	१८७० ई०	
प्रिन्स आफ वेल्स का शुभागमन	१८७५ ई०	
स्वामी दयानन्द का उदय	१८७०	
महारानी का इम्प्रेस आफ इंडिया का पद धारण करना	१८७७	
हिन्दी में प्रथम नाटक (नहुष नाटक)	१८५६	
तथा द्वितीय—(शकुंतला)	१८६३ ई०	
तथा तृतीय (विद्यासुन्दर)	१८७१	
हिन्दी नए चाल में ढली	१८७३	
हिन्दी का प्रथम समाचारपत्र (सुधाकर)	१८५०	
तीर्थों का कर छूटा	१८३७	
बनारस में पसेरी का उपद्रव	१८४२	

घटना	समय	विशेष
काशी में दो महीने का महा भूकम्प	१८३७	
पीपे में आग लगी	१८५०	
लाट भैरो की हिन्दू मुसलमान की लड़ाई	१८०६	
पेशवा राज्यान्त बाजीराव	१८१८	
नागपुरराज्यान्त (मूडाजी)	१८१८	
इलबर्ट बिल और स्त्रियों में इन्दर का बील	१८८३	
गवर्नरजेनरल वारेन हेष्टिंग्स	१७७४—१७८५ ई०	
मेक फर्सन ब्यारानेट	१७८६—१७८६ ई०	
कार्नवालिस ..	१७८६—१७९३ ई०	
सरजान शोर	१७९३—१७९८ ई०	
एलियर्ड क्लार्क ...	१७९८—१७९८ ई०	
वेलसली	१७९८—१८०० ई०	
मार्क्विस कार्नवालिस	१८००—१८०५ ई०	
बार्लो	१८०५—१८०७ ई०	
मिन्टो	१८०७—१८१३ ई०	
हेष्टिंग्स ...	१८१३—१८२३ ई०	
जान एडम ..	१८२३—१८२३ ई०	

घटना		समय	विशेष
अमहर्स्ट	·	१८२३—१८२८ ई०	
बेली	...	१८२८—१८२८ ई०	
बेन्टिंग	..	१८२८—१८३५ ई०	
मेटकाफ	...	१८३५—१८३६ ई०	
आकलैंड		१८३६—१८४२ ई०	
एलेनबरा	...	१८४२ —१८४४ ई०	
हार्डिंग्ज	...	१८४४—१८४८ ई०	
डलहौसी		१८४८—१८५६ ई०	
कैनिंग	...	१८५६—१८६२ ई०	
एलगिन		१८६२—१८६३ ई०	
राबर्ट नेपियर	...	१८६३—१८६३ ई०	
विलियम डेम्सिल	...	१८६३—१८६४ ई०	
लारेन्स	...	१८६४—१८६६ ई०	
मेयर	..	१८६६—१८७२ ई०	
स्ट्राट	·	१८७२—१८७२ ई०	
मार्चिस्टन		१८७२—१८७२ ई०	
नार्थब्रुक	·	१८७२—१८७६ ई०	
लिटन		१८७६—१८८० ई०	
रिपन	..	१८८०—१८८४ ई०	
ब्राह्म मत का प्रचार	..	१८२७ —	ई०
पहिली पुस्तक छपी		१४५७ —	ई०
एशियाटिक सोसाइटी स्थापन		१७४८—	ई०

घटना	समय	विशेष
काबुल युद्ध	१८४२—	ई०
भारत में प्रथम ईस्टइन्डियन रेल का खुलना	१८५४—	ई०
महाराज जंगबहादुर की मृत्यु	१८७७—	ई०
मिस्टर ग्लेडस्टन का जन्म	१८०६ —	ई०
गारी बाल्डी का जन्म	१८०७—	ई०
,, मृत्यु	१८८२—	ई०
बौद्ध का जन्म	५५०—	ई० पू०
कुष्ठ की बीमारी भारतवर्ष में देखी गयी।	१२००ई०पू०। डाक्टर राजेन्द्रलालमित्र लिखते हैं कि कुष्ठ की बीमारी वेद ऋषि के समय में प्रथम भारतवर्ष में दिखाई दी जिसे आज ३२ सौ वर्ष हुए होंगे।	

—(o.o)—